IAS 100

A Civil Services Chronicle Initiative

विज्ञान व प्रौद्योगिकी

Civil Services CHRONICLE

24yrs. of Guiding Success

Add : D/108, Sec-2, Noida (U.P.), Pin - 201 301
Email id : helpdesk@campus100.in
Call : 09582948810, 09953007628, 0120-2440265

विषय सूची

1. भारत के वैज्ञानिक तथा विज्ञान संबंधी उपलब्धि 5

2. भारत में विज्ञान व प्रौद्योगिकी: संस्थागत ढांचा 15

3. कंप्यूटर एवं सूचना-पौद्योगिकी 22

4. जैव प्रौद्योगिकी 51

5. परमाणु प्रौद्योगिकी 85

6. अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी 102

7. नैनोप्रौद्योगिकी 119

8. रक्षा प्रौद्योगिकी 124

9. बौद्धिक सम्पदा 144

10. रोबोटिक्स 166

© CHRONICLE IAS ACADEMY

NORTH CAMPUS 2520, Hudson Lane, Vijay Nagar
(Near G.T.B. Nagar Metro Station), Delhi-9
91-8800495544, + 91-9953120676 www.chronicleias.com

भारत के वैज्ञानिक तथा विज्ञान संबंधी उपलब्धि

CHRONICLE
IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

गणित और नक्षत्र विज्ञान

भारत में प्राचीन काल में उच्च कोटि का विज्ञान और गणित विकसित हो चुका था। प्राचीन भारतीयों ने गणित और विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के अंतर्गत अभूतपूर्व योगदान किया। इस खण्ड में हम गणित में हुए विकास और उन विद्वानों के विषय में पढ़ेंगे, जिन्होंने इस कार्य में योगदान किया। आप यह जानकर हैरान हो जाएंगे कि आधुनिक गणित के कई सिद्धांत वस्तुत: उस समय के प्राचीन भारतीयों को ज्ञात थे। फिर भी क्योंकि प्राचीन भारतीय गणितज्ञ आधुनिक पश्चिमी जगत के उन जैसे वैज्ञानिकों के समान आलेखन और प्रसारण में इतने चतुर नहीं थे, उनके योगदानों को वह स्थान नहीं मिल पाया जिसके वे योग्य थे। वास्तव में पश्चिमी दुनिया ने अधिकांश विश्व पर बहुत समय तक शासन किया जिससे उन्हें हर प्रकार से, यहां तक कि ज्ञान के क्षेत्र में भी, अपने को श्रेष्ठ सिद्ध करने का अवसर मिल गया। आइए अब हम प्राचीन भारतीय गणितज्ञों के कुछ योगदानों पर दृष्टिपात करें।

बौधायन

बौधायन पहले विद्वान थे जिन्होंने गणित में कई अवधारणाओं को स्पष्ट किया जो बाद में पश्चिमी दुनिया द्वारा पुन: खोजी गयी। 'पाई' के मूल्य की गणना भी उन्हीं के द्वारा की गई। जैसा कि आप जानते हैं पाई वृत्त के क्षेत्रफल और परिधि को निकालने में प्रयुक्त होती है। जो आज पाइथोगोरस प्रमेय के नाम से जानी जाती है वह बौधायन के शुल्व सूत्रों में पहले से ही विद्यमान है, जो पाइथोगोरस के जमाने से कई वर्ष पूर्व लिखे गये थे।

आर्यभट्ट

आर्यभट्ट पांचवीं शताब्दी के गणितज्ञ, नक्षत्रविद्, ज्योतिर्विद और भौतिकी के ज्ञाता थे। वह गणित के क्षेत्र में पथप्रदर्शक थे। 23 वर्ष की उम्र में उन्होंने आर्यभट्टीयम् लिखा जो उस समय के गणित का सारांश है। इस विद्वत्तापूर्ण कार्य में 4 विभाग हैं। पहले विभाग में उन्होंने बड़ी दशमलव संख्याओं को वर्णों में प्रकट करने की विधि वर्णित की। दूसरे विभाग में आधुनिक काल के गणित के विषयों के कठिन प्रश्न दिए गए हैं जैसे संख्या सिद्धान्त रेखागणित, त्रिकोणमिति और बीजगणित (एल्जेब्रा)। शेष दो विभाग नक्षत्र विज्ञान से सम्बद्ध हैं।

आर्यभट्ट ने बताया कि शून्य एक संख्या मात्र नहीं हैं बल्कि एक चिह्न है, एक अवधारणा है। शून्य के आविष्कार से ही आर्यभट्ट पृथ्वी और चन्द्रमा के बीच की दूरी का सही सही मापन कर पाए। शून्य की खोज से ही ऋणात्मक संख्याओं की एक नई दिशा का भी द्वार खुल गया।

जैसा कि हमने देखा, आर्यभट्टीय के अंतिम दो विभाग नक्षत्र विज्ञान से सम्बद्ध हैं। स्पष्टतया आर्यभट्ट ने विज्ञान के क्षेत्र में, विशेष रूप से नक्षत्र विज्ञान में बहुत बड़ा योगदान किया।

प्राचीन भारत में नक्षत्र विज्ञान बहुत उन्नत था। इसे खगोलशास्त्र कहते हैं। खगोल नालन्दा में प्रसिद्ध नक्षत्र विषयक वेधशाला थी जहां आर्यभट्ट पढ़ते थे। वस्तुत: नक्षत्र विज्ञान बहुत ही उन्नत था और हमारे पूर्वज इस पर गर्व करते थे। नक्षत्र विज्ञान की इतनी उन्नति के पीछे शुद्ध पञ्चांग के निर्माण की आवश्यकता थी।

जिससे वर्षा चक्र के अनुसार फसलों को चुना जा सके, फसलों की बुआई का सही समय निर्धारित किया जा सके, त्योहारों और ऋतुओं की सही तिथियां निर्धारित की जा सकें; समुद्री यात्राओं के लिए, समय के ज्ञान के लिए और ज्योतिष में जन्म कुण्डलियां बनाने के लिए पर्याप्त जानकारी प्राप्त हो सके। नक्षत्र विज्ञान का ज्ञान विशेष रूप से नक्षत्रों और ज्वार-भाटा का ज्ञान व्यापार के लिए बहुत आवश्यक था क्योंकि उन को रात के समय समुद्र और रेगिस्तानों को पार करना पड़ता था।

हमारी पृथ्वी नामक ग्रह अचल है इस लोक प्रसिद्ध विचार को तिरस्छत करते हुए आर्यभट्ट ने अपना सिद्धांत बताया कि पृथ्वी गोल है और अपनी धुरी पर घूमती है। उसने उदाहरण देते हुए स्पष्ट किया कि सूर्य का पूर्व से पश्चिम की ओर जाना मिथ्या है, उनमें से एक उदाहरण था- जब एक मनुष्य नाव में यात्रा करता है, तब किनारे के पेड़ उल्टी दिशा में दौड़ते हुए मजर आते हैं। उसने यह भी सही बताया कि चांद और अन्य ग्रह सूर्य की रोशनी के प्रतिबिम्ब के कारण ही चमकते हैं। उसने चन्द्र ग्रहण और सूर्यग्रहण का भी वैज्ञानिक स्पष्टीकरण दिया और कहा कि ग्रहण केवल राहु या केतु या किसी अन्य राक्षस के कारण नहीं होते। अब आप स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं कि क्यों भारत के प्रथम उपग्रह का नाम जो आकाश में छोड़ा गया, आर्यभट्ट रखा गया।

ब्रंगुप्त

सातवीं शताब्दी से ब्रंगुप्त ने गणित को अन्य वैज्ञानिकों की अपेक्षा कहीं अधिक ऊंचाइयों पर पहुंचा दिया। उन्होंने अपने गुणन की विधियों में स्थान का मूल्य उसी प्रकार निर्धारित किया जैसा कि आजकल किया जाता है। उन्होंने ऋणात्मक संख्याओं का भी परिचय दिया और गणित में शून्य पर अनेक प्रक्रियाएं सिद्ध कीं। उन्होंने ब्रंस्फुट-सिणंत लिखा जिसके मध्यम से अरब हमारी गणितीय व्यवस्थाओं से परिचित हो सके।

भास्कराचार्य

भास्कराचार्य 12वीं शताब्दी के विख्यात व्यक्ति थे। वह कर्णाटक में बीजापुर में पैदा हुए। वह अपनी पुस्तक सिणंतशिरोमणि के कारण प्रसिद्ध हैं। इसके भी चार खण्ड हैं- लीलावती (गणित), बीजगणित (एल्जेब्रा), गोलामयाय और ग्रहगणित (ग्रहों का गणित)

भास्कराचार्य ने बीजगणितीय समीकरणों को हल करने के लिए चक्रवात विधि का परिचय दिया। यही विधि छः शताब्दियों बाद यूरोपीय गणितज्ञों द्वारा पुनः खोजी गई जिसे वे चक्रीय विधि कहते हैं। 19वीं शताब्दी में एक अंग्रेज-जेम्स टेलर ने 'लीलावती' का अनुवाद किया और विश्व को इस महान छति से परिचित करवाया।

महावीराचार्य

जैन साहित्य में (ई.पू. 500 से 100 शताब्दी तक) गणित का व्यापक वर्णन है। जैन गुरुओं को द्विघाती समीकरणों को हल करना आता था। उन्होंने, भिन्न, बीजगणितीय समीकरण, श्रृंखलाएं, सेट सिद्धांत, लघुगणित (legarithms) घाताक (मगचव. दमदजे) आदि को बड़ी रोचक विधि से समझाया। जैन गुरु महावीराचार्य ने 850 (ई.पू.) में गणित सार संग्रह लिखा, जो आधुनिक विधि में लिखी गई पहली गणित की पुस्तक है। दी गई संख्याओं का लघुतम निकालने का आधुनिक तरीका भी उनके द्वारा वर्णित किया गया है। अतः जॉन नेपियर के विश्व के सामने इसे प्रस्तुत करने से बहुत पहले यह विधि भारतीयों को ज्ञात थी।

विज्ञान

गणित की ही तरह, प्राचीन भारतीयों ने विज्ञान के विषय में भी अपना योगदान किया। आइए अब हम प्राचीन भारत के कुछ वैज्ञानिकों के योगदानों के विषय में जानें।

कणाद

कणाद, छः भारतीय दर्शनों में से एक वैशेषिक दर्शन के छठी शताब्दी के वैज्ञानिक थे। उनका वास्तविक नाम औलूक्य था। बचपन से ही वे बहुत सूक्ष्म कणों में रुचि रखने लगे थे। अतः उनका नाम कणाद पड़ गया। उनके आणविक सिद्धांत किसी भी आधुनिक आणविक सिद्धांतों से मेल खाते हैं। कणाद के अनुसार, यह भौतिक विश्व कणों अणु/एटम) से बना है जिसको मानवीय चक्षुओं से नहीं देखा जा सकता। इनका पुनः विखण्डन नहीं किया जा सकता। अतः न इनको विभाजित किया जा सकता है न ही इनका विनाश हो सकता है। निस्संदेह यह वही तथ्य है जो आधुनिक आणविक सिद्धांत भी बताता है।

वराहमिहिर

भारत में प्राचीन काल के एक अन्य सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक थे वराहमिहिर। वह गुप्त काल में हुए। वराहमिहिर ने जलविज्ञान, भूगर्भीय विज्ञान और पर्यावरण विज्ञान के क्षेत्र में महान योगदान किया। वह पहले वैज्ञानिक थे जिन्होंने यह दावा किया कि दीमक और पौधे भी भूगर्भीय जल की पहचान के निशान हो सकते हैं। उसने छः पशुओं और तीस पौधों की सूची दी जो पानी के सूचक हो सकते हैं। उन्होंने दीमक (जो लकड़ी को बर्बाद कर देती है) के विषय में बहुत महत्त्वपूर्ण सूचना प्रदान की कि वे बहुत नीचे पानी के तल तक जाकर पानी लेकर आती हैं और अपनी बांबी (घर) को गीला करती है। एक अन्य सिद्धान्त, जिसने विज्ञान की दुनिया को आकृष्ट किया वह है भूचाल मेघ सिद्धांत जो वराहमिहिर ने अपनी बृहत्संहिता में लिखा। इस संहिता का 32वां अध्याय भूचालों के चिह्नों को दर्शाता है। उन्होंने भूचालों का संबंध नक्षत्रों के प्रभाव, समुद्रतल की गतिविधियों, भूतल के जल, असामान्य मेघों के बनने से और पशुओं के असामान्य व्यवहार से जोड़ा है।

एक अन्य विषय जहां वराहमिहिर का योगदान उल्लेखनीय है वह है ज्योतिष/नक्षत्र विज्ञान/प्राचीन भारत में फलित ज्योतिष को बहुत उच्च स्थान दिया जाता था और वह प्रथा आज तक भी जारी है। ज्योतिष का, जिसका अर्थ है प्रकाश की विद्या, मूल वेदों में है। आर्यभट्ट और वराहमिहिर के द्वारा एक व्यवस्थित रूप में वैज्ञानिक ढंग से इस विद्या का प्रस्तुतीकरण किया गया। आर्यभट्ट की आयभटीयम् के दो विभाग नक्षत्र विज्ञान पर आधारित हैं जो वस्तुतः फलितज्योतिष का आधार हैं। फलित ज्योतिष भविष्यवाणी करने की विद्या है। विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्नों में वराहमिहिर का स्थान था। वराहमिहिर की भविष्यवाणियां इतनी शुद्ध होती थीं कि विक्रमादित्य ने उन्हें 'वराह' की उपाधि दी।

नागार्जुन

नागार्जुन दसवीं शताब्दी के वैज्ञानिक थे। उनके परीक्षणों का प्रमख उद्देश्य था मूल धातुओं को सोने में बदलना जैसाकि पश्चिमी दुनिया में कीमियागर करते थे। यद्यपि वह अपने उद्देश्य में सफल नहीं हुआ। फिर भी वह एक ऐसा तत्त्व बनाने में सफल हुआ जिसमें सोने जैसी चमक थी। आज तक यही तकनीक नकली जेवर बनाने के काम आती है। अपने ग्रंथ रसरत्नाकर में उन्होंने सोना, चांदी, टीन और तांबा निकालने का विस्तार से वर्णन किया है।

प्राचीन भारत में चिकित्सा विज्ञान/आयुर्वेद और योग

जैसाकि आप ने पढ़ा; प्राचीन भारत में वैज्ञानिक उपलब्धियां बहुत उन्नत स्तर की थीं। अपने युग के अनुसार, चिकित्सा विज्ञान भी बहुत उन्नत था। प्राचीन भारत में विकसित चिकित्सा विज्ञान की देसी व्यवस्था आयुर्वेद है। आयुर्वेद शब्द का शाब्दिक अर्थ है अच्छा स्वास्थ्य लंबी आयु। औषधि को प्राचीन भारतीय व्यवस्था न केवल बीमारियों की चिकित्सा करने में सहायता करती है बल्कि यह बीमारियों का कारण और लक्षण भी मालूम करने का प्रयत्न करती है। यह स्वस्थ और बीमार दोनों की ही मार्गदर्शिका है। यह स्वास्थ्य को तीनों दोषों की समवस्था और इन्हीं तीनों दोषों की विषमता का बीमारी के रूप में परिभाषित करती है। जड़ीबूटियों की औषधियों से किसी बीमारी की चिकित्सा करते हुए यह बीमारी की जड़ पर प्रहार करके उसके कारणों को दूर करने का उद्देश्य रखती है। आयुर्वेद का प्रमुख उद्देश्य स्वास्थ्य और दीर्घायु है। यह हमारी पृथ्वी का प्राचीनतम चिकित्सा शास्त्र है। आयुर्वेद का एक अन्य ग्रन्थ 'आत्रेय संहिता' विश्व की प्राचीनतम पुस्तकों में से है। चरक को आयुर्वैदिक औषधि का जनक कहा जाता है और सुश्रुत को शल्यचिकित्सा का। सुश्रुत, चरक, माधव; वाङ्भट्ट और जीवक प्रसिद्ध आयुर्वेदिक चिकित्सक थे। क्या आप जानते हो कि आयुर्वेद अब पिछले कुछ समय से पश्चिमी जगत में भी लोकप्रिय होता जा रहा है। इसका प्रधान कारण यह है कि पश्चिमी मूल की आधुनिक एलोपेथी के मुकाबले इसके कई लाभ हैं।

सुश्रुत

सुश्रुत शल्यचिकित्सा के क्षेत्र में अग्रणी हुए। वह शल्य चिकित्सा को चिकित्साकला की सर्वोत्तम शाखा समझते थे जिसका बहुत कम निष्फल होने का भय है। उसने एक मृत शरीर की सहायता से शरीर की रचना का अध्ययन किया। सुश्रुत संहिता में प्रायः 1100 से भी अधिक बीमारियों का वर्णन है जिनमें 26 प्रकार के मूत्र-रोग दिए गए हैं। 760 से भी अधिक क जड़ीबूटियों

का वर्णन किया गया है। पौधों की जड़ें, छाल, रस, फूल आदि सभी का प्रयोग किया जाता था। दालचीनी, तिल, काली मिर्च, इलायची, अदरक आदि आज भी घरेलू औषधियों के रूप में प्रयोग की जाती हैं।

सुश्रुत संहिता में विस्तृत अमययन के लिए किसी शव को चुनने और सुरक्षित रखने की भी विधि बताई गई है। किसी वृद्ध मनुष्य का शरीर या जो किसी भयंकर बीमारी से मृत्यु को प्राप्त हुआ हो, उसका शरीर मुख्यत: अमययन के लिए नहीं चुना जाता था। शव को पहले पूरी तरह साफ करके फिर पेड़ की छाल में सुरक्षित रखा जाता था। फिर इसे एक पिंजरे में बंद करके नदी में किसी स्थान पर सावधानीपूर्वक छुपा दिया जाता था। नदी के जल के प्रवाह से शरीर नरम पड़ जाता था। सात दिन के बाद फिर इसे नदी से निकालते थे। तदुपरान्त घास की जड़ों, बालों और बांस की तीलियों से बने ब्रश से इसे साफ करते थे। ऐसा करने के पश्चात् शरीर के अंदर और बाहर के अंग साफ साफ नजर आने लगते थे।

सुश्रुत का सबसे बड़ा योगदान सुनम्य चिकित्सा (प्लास्टिक सर्जरी) और आंखों के आपरेशन (मोतिया बिंद निकालना) के क्षेत्र में हुआ। उस समय में नाक या कान काटना एक सामान्य दण्ड था। इन अंगों का लगाना या युद्ध में कटे अंगों का जोड़ना किसी वरदान से कम न था। सुश्रुत संहिता में इन शल्यक्रियाओं का क्रमश: बहुत शुद्ध विवरण दिया गया है। आश्चर्य की बात है कि जो क्रम सुश्रुत द्वारा इस शल्य चिकित्सा के विषय में अनुपालन किया जाता था वही व्म आज के आधुनिक प्लास्टिक सर्जरी के चिकित्सकों द्वारा भी अपनाया जा रहा है। सुश्रुत संहिता में शल्यचिकित्सा में प्रयोग होने वाले यन्त्रों का भी वर्णन है। कुछ गंभीर प्रकार की शल्यव्यिा के उदाहरण हैं–गर्भ में से शिशु को निकालना, जख्मी मलाशय को ठीक करना, मूत्राशय से पत्थरी निकालना आदि। क्या यह रोचक और साथ ही आश्चर्यजनक नहीं प्रतीत होता?

चरक

चरक प्राचीन भारतीय औषध विज्ञान का जनक माना जाता है। वह कनिष्क के दरबार में राजवैद्य था। उसकी औषमाविज्ञान पर लिखी पुस्तक चरकसंहिता अतिप्रशंसनीय ग्रंथ है। इसमें बहुत बड़ी संख्या में रोगों का वर्णन किया गया है और साथ ही उनके कारणों का पता लगाने की विधियों और उनके इलाज के तरीके भी बताए गए हैं। उसी ने सर्वप्रथम पाचन क्रिया, चयापचय (metabolism) रोगों की निवारक क्षमता को स्वास्थ्य के लिए महत्त्वपूर्ण माना है और इसीलिए चरकसंहिता में चिकित्सा विज्ञान में रोग की चिकित्सा करने की अपेक्षा रोग के कारण को दूर करने पर अधिक बल दिया गया है। चरक वंशप्रक्रिया के भी मूल सिद्धांतों को जानता था। क्या यह तथ्य आपको मंत्रमुग्ध नहीं कर देता कि हजारों वर्ष पूर्व चिकित्सा विज्ञान भारत में इतनी उन्नत अवस्था में था?

योग और पातंजलि

आयुर्वेद से सम्बद्ध एक अन्य विज्ञान प्राचीन भारत में विकसित हुआ जिसे योग कहते हैं और जिसके द्वारा औषधि के बिना ही शारीरिक और मानसिक धरातल पर चिकित्सा की जाती है। योग शब्द संस्कृत के योक्त शब्द से बना है इसका शाब्दिक अर्थ है मन को आत्मा के साथ जोड़ना और बाहरी इन्द्रियों के विषयों से विरक्त करना। अन्य विज्ञानों के समान इसकी जड़े भी वेदों में ही हैं। यह चित्त को परिभाषित करता है अर्थात् विचारों, भावों और मनुष्य की चेतना को पवित्र करके एक संतुलन की स्थिति को पैदा करना। योग वह शक्ति है जो चेतना को पवित्र करके दिव्य अनुभूति के स्तर तक पहुंचाती है। योग शारीरिक भी है और मानसिक भी। शारीरिक योग हठयोग कहलाता है। सामान्यतया इसका उद्देश्य होता है बीमारियों को दूर करना और शरीर को स्वास्थ्य प्रदान करना। राजयोग मानसिक योग है। इसका उद्देश्य है आत्म प्राप्ति और शारीरिक, मानसिक भावनात्मक और आध्यात्मिक संतुलन के द्वारा बंन्धनों से मुक्ति।

योग एक ऋषि से दूसरे ऋषि तक मौखिक रूप से पहुंचा। इस विज्ञान को सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का श्रेय पतंजलि को जाता है। पतंजलि के योग सूत्रों में ॐ ईश्वर का प्रतीक बताया गया है। वह ॐ को एक अंतरिक्षीय ध्वनि बताता है जो हर समय आकाश में निरंतर व्याप्त रहती है और केवल प्रबुद्ध को ही पूरी तरह ज्ञात होती है। योग सूत्रों के अतिरिक्त पतंजलि ने एक ग्रंथ औषधविज्ञान पर भी लिखा और पाणिनि के व्याकरण पर भाष्य लिखा जो महाभाष्य के नाम से प्रसिद्ध है।

मध्यकाल में विज्ञान

जैसा कि आप जानते हैं, मध्यकाल में मुस्लिम भारत में आए। इस समय तक परम्परागत स्वदेशी शास्त्रीय शिक्षा पहले ही पिछड़ चुकी थी। इस काल में शिक्षा की वह व्यवस्था जो अरब देशों में प्रचलित थी, धीरे-धीरे अपनाई जाने लगी। परिणामस्वरूप मदरसों और मकतबों की स्थापना हुई। इन संस्थाओं को शाही संरक्षण प्राप्त था। कई स्थानों पर खोले गए इन मदरसों की शृंखला में समान पाठ्यचर्या सामग्री पढ़ाई जाती थी। दो-भाई शेख अब्दुल्ला और शेख अजीजुल्लाह जो तार्किक विज्ञान में विशेषज्ञ थे, सम्बल और आगरा के मदरसों के प्रधान बने। देश में स्थानीय रूप से प्राप्त विद्वत्ता के अलावा अरब, पर्शिया और मध्य एशिया से भी विद्वानों को मदरसों में शिक्षा का कार्यभार सम्भालने के लिए बुलाया गया।

क्या आप जानते हैं कि मुस्लिम शासकों ने प्राथमिक विद्यालयों की पाठ्यचर्चा को सुधारने का प्रयत्न किया। कुछ आवश्यक विषय जैसे गणित, मापन विज्ञान, रेखागणित, नक्षत्रविज्ञान, लेखा जोखा, लोकप्रशासन और कृषि आदि विषय प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम में समाहित किए गए। यद्यपि शासकों द्वारा शिक्षाओं में सुधार लाने के लिए विशेष प्रयत्न किए गए थे, लेकिन विज्ञान में कुछ विशेष प्रगति नहीं हुई। भारतीय पारिभाषिक वैज्ञानिक संस्कृति और अन्य देशों में प्रचलित मध्ययुगीन विज्ञान के प्रति उपागम में एक प्रकार की संगति बिठाने के प्रयत्न किए गए। आइए अब हम देखें कि इस अवधि में विभिन्न क्षेत्रों में क्या क्या प्रगति हुई।

शाही घरानों और सरकारी विभागों में खाद्यसामग्री, भण्डारण और अन्य साधन प्रदान करने के लिए बड़ी-बड़ी कार्यशालाएं जिन्हें कारखाना कहा जाता था, बनाई गई। ये कारखाने केवल उत्पादन की संस्थाओं के रूप में ही नहीं कार्य करते थे बल्कि युवा वर्ग को तकनीकी और व्यावसायिक प्रशिक्षण भी प्रदान करते थे। इन कारखानों ने विभिन्न शाखाओं में कलाकार और हस्तशिल्प में प्रशिक्षित युवा तैयार किए जिन्होंने बाद में अपने स्वतंत्र कारखाने भी स्थापित कर लिए।

गणित

इस अवधि में गणित के क्षेत्र में अनेक ग्रंथ लिखे गए। नरसिंह दैवज्ञ के पुत्र नारायण पंडित गणित में अपने ग्रंथ के लिए सुप्रसिद्ध हुए-गणितकौमुदी और बीजगणितावतंस। गुजरात में गंगाधर ने लीलावती करमदीपिका, सिणन्तदीपिका और लीलावती व्याख्या लिखी। ये प्रसिद्ध ग्रंथ थे जिन्होंने त्रिकोणमितिक पद जैसे साइन, कोसाइन, टेन्जेन्ट और कोटेन्जेन्ट निकालने के नियम बनाए। नीलकण्ठ सोमसुतवन ने तंत्रसंग्रह लिखा जिसमें भी त्रिकोणमितिक प्रक्रियाओं के लिए नियम दिये गए हैं।

गणेश दैवज्ञ ने लीलावती पर व्याख्या बुणिविलासिनी लिखी थी और जिसमें अनेक उदाहरण दिए गए थे। वल्लाल परिवार के छष्ण ने 'नवांकुर' की रचना की जो भास्कर द्वितीय के बीजगणित पर व्याख्या थी और जिसमें प्रथम और द्वितीय क्रम के अंतर्ममय सरणियों (Intermediate equations) पर नियमों की व्याख्याएं दी गई थीं। नीलकण्ठ ज्योतिर्विद ने 'तांत्रिक' ग्रंथ लिखा जिसमें अनेक पर्शियन तकनीकी पदों का परिचय दिया गया था। अकबर के कहने पर फैजी ने भास्कराचार्य के बीजगणित का अनुवाद किया। शिक्षा व्यवस्था में अन्य विषयों के साथ अकबर ने गणित के भी पढ़ाये जाने पर बल दिया। नसीरुद्दीन तुसी गणित का एक अन्य विद्वान था।

जीवविज्ञान

इसी प्रकार जीवविज्ञान के क्षेत्र में भी उन्नति हुई। 13वीं शताब्दी में हंसदेव ने 'मृगपक्षिशास्त्र' नामक ग्रंथ का निर्माण किया। यह ग्रंथ शिकार के कुछ पशुपक्षियों के विषय में जानकारी देता है यद्यपि वे सभी तथ्य विज्ञान-परक नहीं हैं। मुस्लिम शहंशाह जो योद्धा और शिकारी हुआ करते थे, अपने पास शिकार के लिए बहुत से पशु रखते थे जैसे घोड़े, कुत्ते, चीते और बाज। इसमें जंगली और पालतू दोनों ही प्रकार के पशुओं का वर्णन किया गया है। बाबर और अकबर यद्यपि दोनों ही राजनैतिक गतिविधियों में उलझे रहते थे फिर भी उन्होंने इस ग्रंथ को पढ़ने के लिए समय निकाला। अकबर को हाथी और घोड़े जैसे पालतू पशुओं की अच्छी नसल पैदा करवाने का बेहद शौक था। जहांगीर ने अपनी कृति तुजुके जहांगीरी में नसल को सुधारने और संकर नस्ल पैदा करने के अपने परीक्षण और अनुभव अंकित किए हैं। उन्होंने पशुओं की 36 नस्लों का वर्णन किया है। उनके दरबारी कलाकार विशेषत: मंसूर ने पशुओं के भव्य और सही चित्र बनाए। इनमें से कुछ तो अभी भी कई संग्रहालयों और निजी संग्रहों में सुरक्षित हैं। प्रकृति प्रेमी होने के कारण जहांगीर पौधों के अध्ययन में भी रुचि रखता था। उसके दरबारी कलाकारों ने फूलों के चित्रों में प्राय: 57 पौधें को चित्रित किया है।

रसायन विज्ञान

क्या आप जानते है कि मध्यकाल में कागज का प्रयोग भी प्रारंभ हो गया था। कागज के उत्पादन में रसायन शास्त्र का महत्त्वपूर्ण प्रयोग होता था। कश्मीर, सियालकोट, जाफराबाद, पटना, मुर्शिदाबाद, अहमदाबाद, औरंगाबाद और मैसूर कागज़ बनाने के सुप्रसिद्ध केन्द्र थे। कागज बनाने की तकनीक प्राय: पूरे देश में समान थी केवल विभिन्न कच्चे माल से लुगदी बनाने का तरीका अलग अलग था

मुगलों को बारूद और तोपों में उसके प्रयोग की तकनीक का ज्ञान था। भारतीय हस्तशिल्पियों ने इस तकनीक को सीखा और समुचित विस्फोटक पदार्थों की रचना की। शुक्राचार्य द्वारा रचित शुक्रनीति में कैसे शोरा, गंधक और कोयले को विभिन्न अनुपातों में मिलाकर विभिन्न प्रकार की बंदूकों में प्रयोग करने के लिए बारूद बनाया जा सकता है, इसका वर्णन दिया गया है। मुख्य प्रकार की आतिशबाजी में वे बम्ब सम्मिलित है जो तेजी से आकाश में जाते हैं, अग्नि के स्फुलिंग पैदा करते हैं, जो विभिन्न रंगों में चमकते हैं और धमाके के साथ फट जाते हैं। आइने अकबरी में अकबर के इत्र कार्यालय के नियमों का वर्णन है। गुलाब का इत्र एक बहुप्रसिद्ध इत्र था जो सम्भवत नूरजहां द्वारा खोजा गया था।

नक्षत्रविज्ञान

नक्षत्र एक अन्य क्षेत्र था जो इस काल में खूब विकसित हुआ। नक्षत्रविज्ञान में पहले से सुस्थापित नक्षत्र विषयक अवधारणाओं पर अनेक टीकाएं लिखी गईं। महेन्द्र सूरी ने जो बादशाह फीरोज शाह का दरबारी नक्षत्र-वैज्ञानिक था, एक नक्षत्र विषयक यंत्र 'यन्त्रज' बनाया। परमेश्वर और महाभास्करीय, दोनों ही केरल में प्रसिद्ध नक्षत्रविज्ञानियों के कुल से थे और पंचांग बनाते थे। नीलकण्ठ सोमसुतवन ने आर्यभटीय पर टीका लिखी। कमलाकर ने इस्लामिक नक्षत्रविज्ञान विषयक विचारों का अमययन किया। वह इस्लामिक ज्ञान के विषय में प्रमाण माना जाता था। जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह नक्षत्रविद्या के संरक्षक थे। उन्होंने दिल्ली उज्जैन, वाराणसी, मथुरा और जयपुर में पांच नक्षत्रविषयक वेधशालाएं बनवाई।

औषधविज्ञान

शाही संरक्षण के अभाव में आयुर्वैदिक चिकित्सा पद्धति प्राचीन काल के समान इतनी उन्नति नहीं कर पाई, फिर भी आयुर्वेद पर कुछ महत्वपूर्ण ग्रंथों की रचना हुई जैसे शार्गधर संहिता और चिकित्सा संग्रह की रचना वंगसेन ने, यगर्तवज्र और भावप्रकाश की रचना भावमिश्र ने की। 13वीं शताब्दी में शार्गधर संहिता लिखी गई जिसमें औषध बनाने की सामग्री में अफीम का भी उपयोग सम्मिलित है और निदानात्मक उद्देश्यों से मूत्र परीक्षण का भी जिक्र है। रसचिकित्सा व्यवस्था के धातु-मिश्रण सहित मादक द्रव्यों तथा आयातित द्रव्यों का भी वर्णन है।

रसचिकित्सा व्यवस्था में अनेक प्रकार की धातुज औषधियों का वर्णन है जिनमें कुछ पारे से बनाई जाती थीं और कुछ बिना पारे के। सिद्ध व्यवस्था जो तमिलनाडु में सर्वाधिक प्रचलित थी, उसका श्रेय उन सिद्धों को जाता है जिन्होंने धातुज औषधियों से युक्त अनेक प्रकार के आयुवर्धक नुस्खों को तैयार किया।

मध्यकाल में यूनानी तिब्ब औषध व्यवस्था भी खूब पनपी। अली बिन रब्बन ने संपूर्ण यवन औषध ज्ञान और साथ ही भारतीय औषध विज्ञान का सारांश अपनी रचना 'फिरदौसे हिकमत' में दिया है। प्राय: 11वीं शताब्दी में मुसलमानों के साथ यूनानी चिकित्सा पद्धति भी भारत में आई और अपने विकास के लिए संरक्षण भी प्राप्त किया। हकीम दिया मुहम्मद ने एक पुस्तक 'मजिन्ये दिये' लिखी जिसमें अरबी, पर्शियन और आयुर्वैदिक औषधीय विज्ञान को समाहित किया। फीरोज शाह तुगलक ने भी एक पुस्तक तिब्बे-फीरोजशाही लिखी। तिब्बे औरंगजेबी जिसका श्रेय औरंगजेब को दिया जाता है, आयुर्वैदिक स्रोतों पर आमाारित है। नूरुद्दीन मुहम्मद की मुसलजाति दाराशिकोही जो दाराशिकोह को समर्पित है, ग्रीक औषध विज्ञान का वर्णन करती है और अंत में प्राय: पूरी की पूरी आयुर्वैदिक औषधियों का निर्देश करती है।

कृषि

मध्यकाल में कृषि के तरीके प्राय: वैसे ही थे जैसे प्रारंभिक भारत में थे। विदेशी व्यापारियों के कारण कुछ नई फसलों के उत्पादन में, वृक्षों और उद्यान संबंधी पौधों के रोपने में कुछ आवश्यक परिवर्तन किए गए। प्रमुख फसलें थीं- गेहूं, चावल, जौ,

बाजरा, दालें, तिलहन, कपास, गन्ना और नील। पश्चिमी घाटों पर उनम कोटि की काली मिर्च उगाई जाती थी और कश्मीर केसर और फलों के लिए पूर्ववत् प्रसिद्ध था। तमिलनाडु से अदरक और दालचीनी, केरल से इलायची, चन्दन और नारियल अधिक प्रसिद्ध होते जा रहे थे। तम्बाकू, मिर्चे, आलू, अमरूद, शरीफा, काजू और अनानास आदि वे महत्त्वपूर्ण पौधे थे जो भारत में 16वीं और 12वीं शताब्दी में भारत में आए। इसी काल में ही मालवा और बिहार क्षेत्रों में पोस्त के पौधों से अफीम की पैदावार भी प्रारंभ हो गई। संशोधित उद्यान संबंधी तरीकों का बहुत सफलतापूर्वक प्रयोग होने लगा। 16वीं शताब्दी के मध्य में गोआ के येशु-सम्राजियों द्वारा विधिपूर्वक आम की कलम भी लगानी प्रारंभ की गई। शाही मुगल उद्यान समुचित क्षेत्र थे जहां व्यापक तौर पर फलों के बाग लगाए जाने लगे। सिंचाई के लिए कुँए, तालाब, नहर, रहट, चरस और देकली (चमड़े की बनी एक प्रकार की बाल्टी जिसका जुते हुए बैलों की सहायता से पानी ले जाने के लिए किया जाता था) आदि का प्रयोग होता था। आगरा क्षेत्र में रहट का प्रयोग किया जाता था। मध्यकाल में भूमि मापन और भूमि श्रेणीकरण की व्यवस्था द्वारा राज्य में कृषि को एक मजबूत आधार प्रदान किया गया जो शासकों और किसानों दोनों के ही लिए लाभदायक था।

आधुनिक भारत के वैज्ञानिक

आधुनिक भारत में वैज्ञानिक विचारों के विकास का श्रेय इस काल के वैज्ञानिकों को जाता है। 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में सर सी वी रमन भारतीय वैज्ञानिक चिंतन धारा में अभूतपूर्व परिवर्तन लाए। डा. होमी जे भाभा ने, जिन्हें हमारी आणविक भौतिकी का जनक कहा जाता है, भारतीय विज्ञान का भविष्य पहले ही लिख डाला था। वनस्पति शास्त्र के क्षेत्र में जे सी बोस, परमाणु ऊर्जा और औद्योगीकरण के क्षेत्र में डा. विक्रम साराभाई, रक्षा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में डा. ए.पी.जे. अब्दुलकलाम आदि वैज्ञानिकों के क्रान्तिकारी परिवर्तनों ने आधुनिक भारत का गौरव बढ़ाया।

श्रीनिवास रामानुजन (1887-1920 ई.)

श्रीनिवास रामानुजन जो श्रीनिवास आयंगर रामानुजन के नाम से विख्यात हैं, भारत के प्रतिभाशाली इस गणितज्ञ का जन्म 22 दिसंबर, 1887 को तमिलनाडु में इरोड नामक स्थान पर हुआ। बाद में इनके माता-पिता चेन्नई से 160 किलोमीटर दूर कुम्बकोणम चले गए। रामानुजन ने कुम्बकोणम में टाउन हॉल स्कूल में अमययन किया जहाँ उन्होंने अपने आप को प्रत्येक क्षेत्र में अग्रणी सिद्ध किया। उनकी गणित में अद्वितीय रुचि थी। गणितीय आपों से उनका स्वाभाविक लगाव था। स्कूल में 13 वर्ष की आयु में उन्हें एक पुस्तक मिली जिसका नाम था- 'सिनोप्सिस ऑफ एलीमेन्टेरी रिजल्टस इन प्योर मेथेमेटिक्स', जिसके लेखक थे जी.एस. कर। पुरानी होने पर भी इस पुस्तक ने उनको गणित की दुनिया से परिचित करवाया। उन्होंने गणित के क्षेत्र में अपने विचार विकसित करना और आगे कार्य करना प्रारंभ कर दिया। वह अपने विचारों और परिणामों को नोट करने लगे और अपने परिणामों पर अपने नोट्स बनाने लगे। ऐसी तीन शोधपरक डायरियाँ जिनमें उनका अन्वेषण कार्य भरा हुआ है, आज हमें उपलब्ध हैं। उन्हें रामानुज की फ्रेंड नोटबुक्स कहा जाता है। वह अपनी कालेज की पढ़ाई भी पूरी नहीं कर पाये क्योंकि उनका सारा समय गणित में ही बीत जाता था। वे अपने विचारों को विकसित करते रहे और नई-नई समस्याओं को प्रस्तुत करके उनके समाधान 'जर्नल ऑफ इण्डियन मैथेमेटिक्स' पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित करते रहे। 1911 में उन्होंने इसी पत्र में 'बरनौली संख्याएँ' विषय पर एक बहुमुल्य अनुसंधान-पत्र प्रकाशित किया। इस पत्र से उन्हें पहचान मिली और वह मद्रास के शिष्टजनों में एक गणित विषयक विशिष्ट प्रतिभा के रूप में प्रसिद्ध हो गए। औपचारिक शिक्षा के अभाव में उन्हें गुज़ारा चलाना कठिन हो गया। बड़ी मुश्किल से उन्हें मद्रास पोर्ट ट्रस्ट (Madras Port Trust) में एक क्लर्क की नौकरी मिली जो अंत में उनके लिए भाग्यशाली सिद्ध हुई। यहाँ वे अनेक ऐसे लोगों के संपर्क में आए जिन्होंने गणित में प्रशिक्षण प्राप्त किया था। उन्हें जी एच् हार्डी (G.H. Hardy) द्वारा लिखित एक पुस्तक 'आर्डरज ऑफ इनफिनिटि' प्राप्त हुई। उन्होंने हार्डी को एक पत्र लिखा जिसमें उन्होंने 120 प्रमेय और सूत्र लिखे। हार्डी ने तुरंत उनकी प्रतिभा को पहचान लिया और इसके जवाब में उन्होंने लंदन तक की यात्रा की व्यवस्था कर दी। अपेक्षित योग्यता न होने पर भी उन्हें ट्रिनिटी कालेज में प्रवेश की अनुमति मिल गई जहाँ उन्होंने दो साल से भी कम अवधि में ही बैचलर ऑफ साइंस की उपाधि प्राप्त कर ली। उन्होंने हार्डी और जे ई लिटलवुड के साथ एक उत्तम टीम बनाई और गणित के क्षेत्र में आश्चर्यजनक योगदान किए। उन्होंने लंदन में अनेक शोधपत्र प्रकाशित किए। वह लंदन की रायल सोसाइटी के फेलो चुने जाने वाले दूसरे भारतीय थे और ट्रिनिट कालेज के फैलो चुने जाने वाले प्रथम भारतीय थे।

रामानुजन का संख्याओं से अत्यधिक लगाव था। 1917 में वह बहुत अधिक बीमार पड़ गये लेकिन संख्याएँ अभी भी उनकी मित्र बनी रहीं यद्यपि उनका शरीर धोखा देता जा रहा था। दुर्भाग्यवश उनका स्वास्थ्य बिगड़ता ही चला गया और वह 1919 में भारत लौट आए। एक वैज्ञानिक पहचान और प्रतिष्ठा के साथ वे 1920 में मृत्यु को प्राप्त हो गए। उनकी गणितीय प्रतिभा इस बात का प्रमाण है कि भारत वास्तव में महान गणितीय विचारों का जन्म स्थान और स्रोत रहा है।

चन्द्रशेखर वी रमन (1888-1970 ई.)

चन्द्रशेखर वी रमन जो सी वी रमन के नाम से प्रसिद्ध हैं, न केवल एक महान वैज्ञानिक थे बल्कि मानव कल्याण और मानवीय सम्मान की वृद्धि में विश्वास करते थे। उन्होंने 1930 में भौतिकी में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया और यह पुरस्कार प्राप्त करने वाले वह पहले एशियाई थे।

श्री सी वी रमन का जन्म 7 नवंबर, 1888 ई. में तमिलनाडु में तिरूचिरापल्ली नगर में हुआ था। उनके पिता भौतिकी और गणित के प्रोफेसर थे। वह संस्कृत साहित्य, संगीत और विज्ञान के वातावरण में पले बड़े हुए। प्रकृति ने उन्हें तीव्र एकाग्रता, बुद्धि और अन्वेषण की प्रवृत्ति प्रदान की थी। बचपन में भी वह बाल प्रतिभा के रूप में प्रसिद्ध थे। वह भारतीय ऑडिट और अकाउन्ट्स परीक्षा में प्रथम आए और 19 वर्ष की आयु में ही कलकत्ता में वित्त विभाग में सहायक अकाउन्टेंट जनरल के पद पर नियुक्त कर दिए गए। उन्होंने विज्ञान के प्रति अपनी रूचि के कारण इस उच्च पद का भी बलिदान कर दिया और कलकत्ता विश्वविद्यालय के सांइस कालेज में भौतिकी के प्रोफेसर के रूप में कार्य करने लगे। संगीत में गहरी रुचि होने के कारण उन्होंने संगीत के वाद्ययंत्रों, वीणा, वायलिन, तबला और मृदंग पर काम करना शुरू कर दिया। उन्होंने लंदन की रायल सोसाइटी में तार वाद्य यंत्रों के सिद्धांत पर एक शोध पत्र प्रस्तुत किया। 1924 में वह रायल सोसायटी के फेलो बना दिए गए।

लंदन की ओर अपनी यात्रा के समय वह समुद्र के नीले रंग से बहुत अधिक प्रभावित हुए। वह यह जानने को उत्सुक हो उठे कि इतनी विशाल तरंगों के उछाल के उपरांत भी पानी का रंग नीला ही क्यों रहता है। तब उन्हें अंतर्ज्ञान की झलक प्राप्त हुई कि यह पानी के अणुओं द्वारा सूर्य के प्रकाश के बिखरने के कारण होता है। उन्होंने अनेक अनुसंधान किए और प्रकाश के आणविक बिखराव पर लंबा शोध प्रबंध तैयार करके लंदन की रायल सोसायटी को भेज दिया। विज्ञान जगत उनके मस्तिष्क की प्रतिभा की चमक से आश्चर्यचकित रह गया।

रमन प्रभाव

जब एक रंग का प्रकाश पुंज एक पारदर्शी पदार्थ से गुजरता है, तो वह बिखर जाता है। रमन ने इस बिखरे हुए प्रकाश का अध्ययन किया। उन्होंने देखा कि पानी में डाली गई एक प्रमुख प्रकाश की रेखा के समानान्तर दो बहुत कम चमक वाली रेखाएँ दृष्टिगोचर होती हैं। इससे यह ज्ञात होता है यद्यपि पानी में डुबोया गया प्रकाश एकवर्णी था परंतु बिखरा हुआ प्रकाश एकवर्णी नहीं था। इस प्रकार प्रकृति का एक बहुत बड़ा रहस्य उनके समक्ष उद्घाटित हो गया। यह परिवर्तन रमन प्रभाव के नाम से ही प्रसिद्ध हो गया और बिखरे हुए प्रकाश की विशेष रेखाएँ भी 'रमन रेखाएँ' के नाम से प्रसिद्ध हो गईं। यद्यपि वैज्ञानिक इस प्रश्न पर विवाद करते रहे हैं कि क्या प्रकाश लहरों के समान हैं अथवा कणों के? लेकिन रमन प्रभाव ने यह सिद्ध कर दिया कि प्रकाश छोटे-छोटे कणों से मिल कर बनता है जिन्हें फोटोन कहा जाता है।

डा. रमन एक महान शिक्षक और एक महान पथप्रदर्शक भी थे। वह अपने छात्रों में अत्यधिक आत्मविश्वास भर देते थे। उनका एक विद्यार्थी बहुत ही निराश था क्योंकि उसके पास केवल एक किलो वाट की शक्ति वाला एक्सरे यंत्र था जबकि उस समय इंग्लैण्ड में वैज्ञानिक 5 किलोवाट की शक्ति वाले एक्सरे यंत्र से कार्य कर रहे थे। डा. रमन ने उसे प्रोत्साहित करते हुए, बदले में 10 किलोवाट की शक्ति वाला मस्तिष्क प्रयोग करने का सुझाव दिया।

डा. रमन का जीवन हम सबके लिए अनुकरणीय है। जब भारत अंग्रेजों के अधीन था और शोध कार्य के लिए भौतिक संसाधन बहुत सीमित थे, उन्होंने अपनी प्रतिभाशाली मस्तिष्क रूपी प्रयोगशाला का ही प्रयोग किया। उन्होंने अपने जीवन का उदाहरण प्रस्तुत करते हुए सिद्ध कर दिखाया कि किस तरह हमारे पूर्वजों ने मस्तिष्क के बल पर बड़े-बड़े सिद्धांतों की खोज कर डाली।

जगदीशचन्द्र बोस (1858-1937)

भारत में एक अन्य सुविख्यात वैज्ञानिक जे सी बोस हुए जिन्होंने देश को गौरव और सम्मान प्राप्त करवाया। इनका जन्म 30 नवम्बर, सन् 1858 ई. में मेमनसिंह नामक जगह पर हुआ जो कि अब बंगलादेश में है। यहीं पर इन्होंने प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त की। कलकत्ता के सेंट जेवियर कॉलेज से उच्च शिक्षा प्राप्त की। 1885 ई. में इनको प्रेसीडेंसी कालेज कलकत्ता में भौतिकी के सहायक प्राध्यापक के पद पर नियुक्त किया गया, पर इन्होंने वेतन लेने से मना कर दिया क्योंकि यह वेतन अंग्रेज प्राध्यापक के वेतन का आधा था। बाद में इन्होंने वैज्ञानिक बनने का फैसला किया जिससे वे भारत के उस सम्मान को वापस ला सकें जो उसे प्राचीन काल में प्राप्त था। उन्होंने विद्युतीय किरणों की खूबियों का अध्ययन करने के लिए एक यंत्र बनाया। उन्हें 1917 ई. में सरदार 'नाइट' और 1920 ई. में लंदन की रायल सोसाइटी का फेलो भी बनाया गया। यह सम्मान प्राप्त करने वाले वे प्रथम भारतीय भौतिक शास्त्रवेत्ता थे।

डा. बोस पूरे विश्व में अपने यंत्र क्रेस्कोग्राफ के आविष्कारक के रूप में प्रसिद्ध हैं। यह यंत्र पौधे की वृद्धि और गति के एक मिलीमीटर उन्नति के दसलाखवें हिस्से को भी दर्ज कर सकता है। उन्होंने अपने क्रेस्कोग्राफ के द्वारा लिए गए रेखाचित्रों से यह प्रमाणित किया कि पौधों में भी संचार व्यवस्था होती है। क्रेस्कोग्राफ ने यह भी सिद्ध किया कि पौधों में वृद्धि उनमें स्थित जीवित कोशिकाओं के कारण होती है। डॉ. बोस ने अनेक यन्त्र भी बनाए जो विश्व में बोस यन्त्रों के नाम से विख्यात हैं। वे यन्त्र यह सिद्ध करते हैं कि धातुएँ भी बाहरी प्रेरक के प्रति प्रतिक्रिया करती हैं और कैंची और मशीन के पुर्जे भी थकान अनुभव करते हैं और कुछ समय विश्राम करने के बाद पुनः कुशलतापूर्वक कार्य करना प्रारम्भ कर देते हैं। रस की ऊपर की ओर गति उनकी जीवित कोशिकाओं के फलस्वरूप है।

क्रेस्कोग्राफ तथा बोस यंत्रों के अलावा, उनके बेतार आविष्कारों ने मारकोनी के आविष्कारों को भी पीछे छोड़ दिया। उन्होंने ही सर्वप्रथम एक बेतार कोहरर (रेडियो सिग्नल डिटेक्टर) तथा एक अन्य यंत्र बनाया जिससे विद्युतीय तरंगों का परिवर्तन ज्ञात होता है। जब किसी व्यक्ति ने उनका इस ओर ध्यान आकर्षित किया तो उन्होंने सरलता से उत्तर दिया कि यह ऐसा आविष्कार है जो मानवता के लिए आविष्कारक से भी अधिक उपयोगी है।

होमी जहांगीर भाभा (1909-1966 ई.)

डा. होमी जहांगीर भाभा एक महान वैज्ञानिक थे। वे भारत को आणविक युग में ले गये। वे भारतीय नाभिकीय विज्ञान के जनक कहलाते हैं। उनका जन्म 30 अक्टूबर, 1909 ई. को एक प्रसिद्ध पारसी परिवार में हुआ था। अपने बाल्यकाल में ही उन्होंने अपनी प्रखर बुद्धि का परिचय देना प्रारंभ कर दिया था और अनेक पुरस्कारों को प्राप्त किया। उनका प्रारंभिक अध्ययन मुंबई में हुआ। उन्होंने कैम्ब्रिज से प्रथम श्रेणी में मेकेनिकल इंजीनियरिंग की उपाधि प्राप्त की, वहीं शोध कार्य पूरा किया और 1935 तक कॉस्मिक रेडिएशन से संबंधित महत्त्वपूर्ण मौलिक शोध कार्य किया। जब द्वितीय विश्वयुद्ध प्रारंभ हो गया तब वे भारत वापस आ गए।

डा. भाभा ने डा. सी वी रमन के अनुरोध पर इण्डियन इंस्टीटयूट ऑफ साइसेंज संस्था में, जो बंगलूरू में स्थित थी, एक प्रवाचक के पद पर कार्य करना प्रारंभ कर दिया। शीघ्र ही वे भौतिकी के प्रोफेसर बन गए। इसी समय उन्हें भौतिकी में कुछ नवीन क्षेत्रों में शोध कार्य हेतु एक शोध संस्थान बनाने का विचार आया। उन्होंने एक महान निर्णय लिया और एक पत्र सर डोराब जी टाटा को लिखा जिसमें भारत की विश्व आणविक शक्ति की नींव बनाने के लिए एक नवीन शोध संस्थान खोलने का सुझाव दिया गया था। यह संस्थान अपने विशेषज्ञ पैदा करेगा जिससे भारत को बाहरी स्रोतों पर निर्भर न रहना पड़े। परिणामस्वरूप 'टाटा इंस्टीट्यूट आफ फण्डामेंटल रिसर्च' नामक संस्थान 1965 में डा. भाभा के पैतृक निवास पर खोल दिया गया।

भारत का प्रथम आणविक शोध केन्द्र जो अब भाभा एटमिक रिसर्च सेंटर (BARC) कहलाता है, ट्राम्बे में स्थापित है। उन्हीं के विशेष मार्गदर्शन में भारत का प्रथम आणविक रिएक्टर 'अप्सरा' स्थापित हुआ। भाभा 1948 में स्थापित भाभा एटोमिक एनर्जी कमिशन के प्रथम अध्यक्ष बने। आणविक शक्ति के क्षेत्र में उनके अध्ययन अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बहुमूल्य समझे जाते हैं। उन्होंने आणविक शक्ति के शांतिपूर्ण उपयोगों के लिए यू एन द्वारा प्रायोजित अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन की भी अध्यक्षता की। भारत सरकार ने उन्हें 1966 में पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया। डा. भाभा की मृत्यु एक विमान दुर्घटना में हुई।

डा. विक्रम अम्बालाल साराभाई (1919-1970 ई.)

डॉ. विक्रम अम्बालाल साराभाई आधुनिक भारत की एक अन्य विशिष्ट प्रतिभा है। भारत के प्रथम उपग्रह 'आर्यभट' के प्रक्षेपण में उनका प्रमुख योगदान था। उन्होंने प्रारंभिक शिक्षा अपने माता-पिता द्वारा चलाए गए एक विद्यालय में प्राप्त की। उन्होंने डा. सी

वी रमन के मार्गदर्शन में कॉस्मिक किरणों का अध्ययन किया और कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पीएचडी की उपाधि प्राप्त की। उनके कॉस्मिक किरणों के अध्ययन ने यह स्पष्ट कर दिया कि कास्मिक किरणें बाहरी अंतरिक्ष से आने वाली शक्ति कणों की एक धरा है। पृथ्वी तक आते-आते वे रास्ते में सूर्य से, पृथ्वी के वातावरण से और चुंबकीय शक्ति से प्रभावित होती जाती हैं।

डा. साराभाई एक बहुमुखी व्यक्तित्व के धनी थे। वह एक महान उद्योगपति थे। आज बहुत से उद्योग उन्हीं के द्वारा स्थापित किए गए हैं जैसे साराभाई कैमिकल्ज, साराभाई ग्लास, साराभाई गेजी लिमिटेड, साराभाई मर्क लि. तथा अन्य। उन्होंने सैनिक संयंत्र और एंटीबायोटिकल तथा पेंसिलीन का भारत में निर्माण का आयोग स्थापित करके भारत के करोड़ों रुपये बचाये। इन वस्तुओं का अभी तक विदेशों से ही आयात किया जाता था। वे अहमदाबाद टैक्सटाइल इण्डस्ट्रियल एसोसिएशन तथा अहमदाबाद मनी एसोसिएशन के भी संस्थापक रहे। इस प्रकार उन्होंने एक बड़ी संख्या में सफल उद्योगों की स्थापना की।

डा. विक्रम अम्बालाल साराभाई ने कई अंतर्राष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त संस्थान स्थापित किये जिनमें से कुछ इण्डियन इन्स्टीटयूट् आफ मेनेजमेंट के नाम से विश्वस्तर पर प्रबंध शास्त्र के अध्ययन के लिए प्रसिद्ध हैं।

वह इण्डियन नेशनल कमीशन फॉर स्पेसरिसर्च (INGOSPAR) तथा एटमिक रिसर्च कमीशनके अध्यक्ष थे। उन्हीं के मार्गदर्शन में धुम्बाइ क्विटेरियल रॉकेट लॉचिंग स्टेशन (TERLS) की स्थापना हुई। उन्होंने सेटेलाइट संचार माध्यम से गांवों तक शिक्षा को पहुंचाने की योजनाएं बनाई। उन्हें 1966 में पद्मभूषण और उनकी मृत्यु के बाद पद्म विभूषण की उपाधि प्रदान की गई। उनकी मृत्यु भारत के लिए एक महान क्षति थी।

डा. ए.पी.जे अब्दुल कलाम

भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे अब्दुल कलाम का जन्म 15 अक्टूबर 1931 ई. में तमिलनाडु के द्वीपीय नगर रामेश्वरम में हुआ। विज्ञान और अभियान्त्रिकी के क्षेत्र में उनके अभूतपूर्व योगदान हेतु उन्हें भारत की सर्वोच्च उपाधि 'भारत रत्न' से 1997 में सम्मानित किया गया।

डा. कलाम की प्रारंभिक शिक्षा रामेश्वरम में ही हुई। उन्होंने रामनाथपुरम् के श्वार्ज हाई स्कूल से दसवीं कक्षा उत्तीर्ण की और मद्रास इंस्टीट्यूट आफ टेक्नोलोजी से एयरोनोटिकल इंजीनियरिंग की उपाधि प्राप्त की। डॉ. कलाम ने 1963-1982 तक इण्डियन स्पेस रिसर्च ऑरगेनाइजेशन (ISRO) में कार्य किया। विक्रम साराभाई स्पेस सेंटर में उन्होंने उपग्रह छोड़ने के लिए सेटेलाइट लांच विहीकल (SLV3) को विकसित किया जिसके द्वारा 1982 में 'रोहिणी' उपग्रह आकाश में छोड़ा गया। डिफेंस रिसर्च डिवेलपमेंट ऑरगेनाइजेशन (DRDO) के निदेशक के पद पर उन्हें इन्टीग्रेटेड गाइडेड मिसाइल डिवलपमेंट प्रोग्राम (IGMDP) का उत्तरदायित्व सौंपा गया। उन्होंने सुरक्षा सेवाओं के लिए पांच परियोजनाएँ विकसित की- पृथ्वी, त्रिशूल, आकाश, नाग और अग्नि।

उन्होंने भारत को आत्मनिर्भरता के युग में पहुंचा दिया। सतह से सतह पर मार करने वाली मिसाईल अग्नि एक अतुलनीय उपलब्धि है। इसके सफलतापूर्वक निर्माण ने भारत को अत्यधिक विकसित देशों के क्लब का सदस्य बना दिया। 'अग्नि' के लिए जो हल्के भार वाला कार्बन तैयार किया गया था, उसका प्रयोग पोलियो के पीड़ितों के कृत्रिम अंग बनाने के लिए किया जा रहा है। इसके कारण उस उपकरण का वजन 4 किलोग्राम से घट कर 400 ग्राम रह गया है। मनुष्यों के लिये यह एक बड़ी नियामत है। इस सामग्री का उपयोग हृदयरोग के बीमारों के लिए बैलून एन्जियोप्लास्टी के अंतर्गत प्रयुक्त किये जाने वाले स्प्रिंग जैसे छल्लों के जिन्हें स्टेन्ट (Stent) कहा जाता है, निर्माण में भी किया जाता है।

डा. कलाम का जीवन भारत की आत्मा का जीवंत प्रतीक है। वह भारतीय परम्पराओं और धर्म को सच्चे अर्थों में मानने वालों में हैं। उन्होंने विज्ञान को धर्म और दर्शन के साथ जोड़ दिया। वे अंत: प्रेरणा से मार्गदर्शन प्राप्त करने में विश्वास रखते हैं अर्थात बाहरी निर्देशों के स्थान पर अन्तरात्मा की पुकार को सुनना और निष्काम भावना से अपने कर्त्तव्य का निर्वाह करना। डॉ. कलाम कहते हैं- मेरे पास वास्तविक अर्थों में कोई सामग्री नहीं है। मैंने कुछ भी नहीं कमाया है, कुछ भी नहीं बनाया है और मेरे पास कोई पुत्र-पुत्रियों आदि का परिवार भी नहीं है।

❖❖❖

भारत में विज्ञान व प्रौद्योगिकी: संस्थागत ढांचा

CHRONICLE
IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

प्राचीन काल से लेकर वर्तमान शताब्दी तक विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की उपलब्धियों की एक व्यापक और अद्वितीय परंपरा रही है। जब भारत को स्वतंत्रता प्राप्त हुई तब देश का वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी ढांचा, विकसित देशों के समान सशक्त नहीं था। इसी कारण विज्ञान व प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अन्य देशों पर भारत की आश्रितता कुछ अधिक ही थी। परंतु विगत पांच दशकों में भारत में विज्ञान व प्रौद्योगिकी क्षेत्र के विकास हेतु एक सशक्त संस्थागत ढांचे की स्थापना की गई है। इसी के परिणाम स्वरूप अन्य समृद्ध देशों पर भारत की निर्भरता घटी है। वर्तमान में भारत में वस्तुओं, उत्पादों और सेवाओं हेतु लघु उद्योग से लेकर अत्याधुनिक परिष्कृत उद्योगों तक की स्थापना की गई है। भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकीय कार्यकलाप केंद्र सरकार, राज्य सरकारों, उच्चतर शैक्षणिक संस्थानों, सार्वजनिक व निजी क्षेत्र के उद्योगों और गैर लाभकारी संस्थानों के एक विस्तृत तंत्र के अंतर्गत संचालित किए जाते हैं।

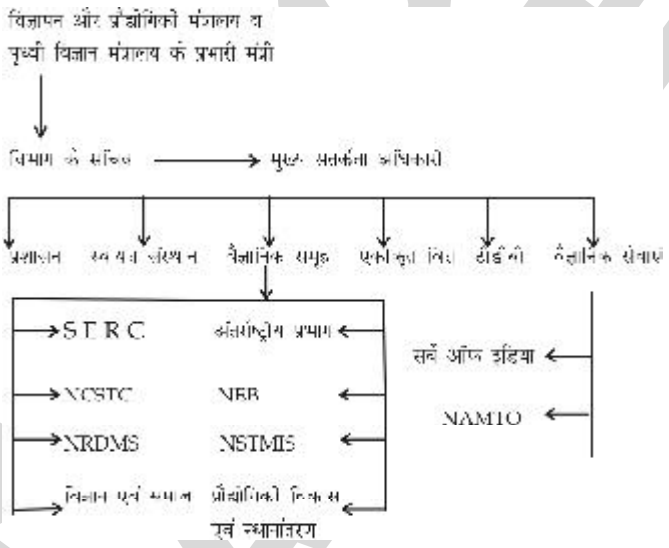
विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की स्थापना, विज्ञान और प्रौद्योगिकी के नये क्षेत्रों में अनुसंधान को बढ़ावा देने और देश भर में विज्ञान और प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों के आयोजन, समन्वय और प्रोत्साहन के लिए नोडल विभाग के रूप में मई 1971 को की गई। विशिष्ट परियोजनाओं और कार्यक्रमों के संदर्भ में विभाग के प्रमुख उत्तरदायित्व निम्नलिखित हैं-

1. विज्ञान और प्रौद्योगिकी से संबंधित नीतिओं का निर्माण।
2. कैबिनेट की वैज्ञानिक परामर्श समिति से जुड़े मामलों को देखना।
3. उभरते हुए क्षेत्रों पर विशेष जोर के साथ विज्ञान और प्रौद्योगिकी के नवीन क्षेत्रों का उन्नयन।
4. अंत: संस्थागत सहयोग वाले विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों का समन्वयन और एकीकरण।
5. जहां आवश्यक हो वहां वैज्ञानिक और तकनीक सर्वे, अनुसंधान डिजाइन और विकास कार्यों को देखना या वित्तीय रूप से उन्हें प्रायोजित करना।
6. वैज्ञानिक अनुसंधान संस्थानों, वैज्ञानिक संघों और निकायों को सहायता व अनुदान देना।
7. निम्नलिखित से संबंधित मामलों को देखना-
   - विज्ञान और इंजीनियरिंग रिसर्च परिषद।
   - प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड तथा संबंधित अधिनियम जैसे- रिसर्च एंड डेवलेपमेण्ट सेस एक्ट, 1986 तथा प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड अधिनियम, 1995।
   - विज्ञान और प्रौद्योगिकी संचार हेतु राष्ट्रीय परिषद।
   - राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी उद्यमिता विकास बोर्ड
   - अंतर्राष्ट्रीय विज्ञान व प्रौद्योगिकी सहयोग।
   - एस्ट्रोफिजिक्स संस्थान और जिओ मैग्नेटिज्म संस्थानों के समेत विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के तहत कार्य करने वाले स्वायत्त वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थान।
   - सर्वे ऑफ इंडिया, नेशनल एटलस, थेमेटिक मैपिंग ऑर्गेनाइजेशन
   - राष्ट्रीय नवप्रवर्तन फाउंडेशन, अहमदाबाद।

8. वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विभागों/संगठनों/संस्थानों को समान रूप से प्रभावित करने वाले मुद्दे उदाहरण स्वरूप: वित्तीय, कार्मिक, क्रय और आयात नीतियां और व्यवहार।
9. विज्ञान व प्रौद्योगिकी के लिए प्रबंधन सूचना तंत्र
10. विज्ञान व प्रौद्योगिकी मिशनों के लिए अंतर्विभागीय समन्वय संबंधी मामले।
11. विज्ञान और प्रौद्योगिकी के उन्नयन के लिए आवश्यक अन्य सभी मापदण्ड तथा विकास
12. राज्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी परिषदों और अन्य तंत्रों के माध्यम से जमीनी स्तर पर विकास को सुनिश्चित कराने के लिए राज्य, जिला और ग्रामीण स्तर पर विज्ञान व प्रौद्योगिकी का उन्नयन।
13. कमजोर, वर्गों, महिलाओं और समाज के अन्य वंचित वर्गों के हित में विज्ञान व प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग का संगठनात्मक ढांचा



समानता, सशक्तिकरण और विकास के लिए विज्ञान (**Science for Equity, Empowerment and Development-SEED):** 'समानता सशक्तिकरण और विकास के लिए विज्ञान का उद्देश्य है कि उत्साही वैज्ञानिकों व क्षेत्रीय स्तर के कर्मचारियों को ऐसे अवसर प्रदान किए जाए ताकि वे विशेष तौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में समुचित वैज्ञानिक और तकनीक उपायों द्वारा समाज के निर्धन और अपवंचित वर्गों के सामाजिक आर्थिक उत्थान के संदर्भ में क्रिया एवं स्थान आधारित परियोजनाओं को प्रारंभ कर सकें। इसी उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए समानता, सशक्तिकरण और विकास के लिए विज्ञान (SEED) प्रभाग की स्थापना विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के तहत की गई। इस प्रभाग के तहत प्रत्येक प्रमुख कार्यक्रम के संदर्भ में संबंधित राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं तथा अन्य विज्ञान व प्रौद्योगिकी संबंधी विशेषज्ञ संस्थाओं के सहयोग को सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है ताकि एक विशेषज्ञता भण्डार को निर्मित किया जा सके, राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी अवसंरचना का उपयोग किया जा सके, राष्ट्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी अवसंरचना का उपयोग किया जा सके तथा इसको जमीनी स्तर पर भी की जा रही विज्ञान व प्रौद्योगिकी संबंधी पहलों से जोड़ा जा सके।

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद (**National Council for science and Technology communication-NCSTC):** राष्ट्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी संचार परिषद (NCSTC), भारत सरकार का वह प्रमुख संगठन है जो विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रचार व प्रसार के कार्य में संलग्न है तथा लोगों में वैज्ञानिक मनोवृत्ति को बढ़ावा दे रहा है। इसके लिए परंपरागत और गैर-परंपरागत दोनों प्रकार के जनसंचार माध्यमों के उपयोग द्वारा विभिन्न संचार प्रौद्योगिकियों के विकास, अनुकूलन,

प्रोत्साहन और उपयोग पर बल दिया जा रहा है। कुछ प्राकृतिक और विशिष्ट घटनाओं पर आधारित गतिविधियों के माध्यम से विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी संचार को बढ़ावा दिया जा रहा है। परिषद के सर्व प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- विज्ञान व प्रौद्योगिकी कार्यक्रमों के उन्नयन के क्षेत्र में उत्साह के वातावरण को निर्मित करना।
- जमीनी स्तर पर सूचना युक्त निर्णय निर्माण को सुनिश्चित करना।
- विकास संबंधी मुद्दों पर बौद्धिक विचार-विमर्श को प्रोत्साहन देना।

राष्ट्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संचार परिषद की प्रमुख गतिविधियां निम्नलिखित हैं-

1. विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार के आवश्यक क्षेत्रों में अनुसंधान
2. विज्ञान व प्रौद्योगिकी के चयनित क्षेत्रों में फिल्म, वीडियो, रेडियो कार्यक्रम, पुस्तकें, स्लाइड सेट इत्यादि का विकास।
3. विज्ञान संचार के क्षेत्र में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित एच्छिक संगठनों के शिक्षकों व कार्यकर्ताओं के लिए लघु अवधि के प्रशिक्षण का आयोजन।
4. विज्ञान व प्रौद्योगिकी संचार के क्षेत्र में विश्वविद्यालयी पाठ्यक्रमों के माध्यम से विज्ञान पत्रकारों का विकास।
5. उल्लेखनीय विज्ञान संचारकर्ताओं के लिए विशेष पुरस्कारों की व्यवस्था।
6. राज्य स्तरीय परिषदों व विज्ञान व प्रौद्योगिकी आधारित संगठनों के साथ समन्वय।
7. विज्ञान संचार के माध्यम से क्षमता निर्माण
8. विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के नवाचारी उपायों का प्रदर्शन जैसे- राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस, विज्ञान दिवस समारोह, एच्छिक रक्त दान कार्यक्रम, पर्यावरणीय जागरूकता कार्यक्रम इत्यादि।
9. पारस्परिक लाभ के लिए अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा।

राष्ट्रीय बाल विज्ञान कांग्रेस एक महत्वपूर्ण कार्यक्रम है जिसमें देश भर के 10-17 आयु वर्ग के बच्चे भाग लेते हैं। इस कार्यक्रम का उद्देश्य बच्चों को अपने आस-पास के वातावरण से विज्ञान का सीखने हेतु प्रोत्साहित करना तथा ऐसा मंच प्रदान करना जहां पर बच्चे वैज्ञानिकों से मिलकर अपने प्रश्नों के समाधान पा सके तथा सृजनशील बन सकें। सामान्य तौर पर इस कार्यक्रम के दौरान बच्चों को पांच-पांच के समूह में बांटा जाता है। ये समूह स्थानीय मुद्दों से जुड़ी वैज्ञानिक परियोजनाओं पर काम करते हैं। वे अध्यापकों/विज्ञान कार्यकर्ताओं के मार्गदर्शन में काम करते हैं और अपनी खोज को स्कूल/ब्लॉक, राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर की कांग्रेस में प्रस्तुत करते हैं।

स्वेच्छा से रक्तदान करने वाले लोगों के माध्यम से रक्त की मांग को पूरा करने के लिए एक स्वैच्छिक रक्तदान कार्यक्रम तैयार किया गया है। इसके अतिरिक्त विगत 150 वर्षों के दौरान प्रकाशित विभिन्न भारतीय भाषाओं की लोकप्रिय विज्ञान पुस्तकों की सूची तैयार कर ली गई है। पर्यावरण तथा निरंतर विकास के मुद्दों पर जागरूकता के प्रसार हेतु अनेक इच्छुक व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया गया है जो कि विद्यालयों के विज्ञान क्लबों के समन्वयकों और विज्ञान व प्रौद्योगिकी आधारित संस्थाओं के क्रियाकलापों को आयोजित करेंगे।

राष्ट्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी उद्यमिता विकास बोर्ड (नेशनल साइंस एंड टेक्नोलॉजी एंटरप्रेनरशिप डेवलेपमेण्ट बोर्ड-**NSTEDB**): राष्ट्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी उद्यमिता विकास बोर्ड की स्थापना भारत सरकार द्वारा वर्ष 1982 में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत की गई। यह बोर्ड एक संस्थागत तंत्र है जो ज्ञानाधारित व तकनीक संचालित उद्यमों के प्रोन्नयन में सहायता प्रदान करता है। इस बोर्ड में सामाजिक-आर्थिक और वैज्ञानिक विभागों के प्रतिनिधि शामिल होते हैं। इसका मूल उद्देश्य वैज्ञानिक व तकनीकी उपायों के माध्यम से 'रोजगार-खोजकर्ताओं को 'रोजगार-सृजनकर्ताओं में परिवर्तित करना है।

राष्ट्रीय विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी उद्यमिता विकास बोर्ड, विज्ञान व प्रौद्योगिकी के प्रयोग द्वारा स्थायी रोजगार प्रदान करने और उद्यमशीलता को बढ़ावा देने के लिए अनेक योजनाएं और कार्यक्रम लागू कर रहा है। बोर्ड द्वारा चलाए जा रहे उद्यमशीलता विकास कार्यक्रम के अंतर्गत विज्ञान व प्रौद्योगिकी से जुड़े व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिया गया है ताकि वे अपना काम-काज प्रारंभ कर सकें। बोर्ड अनेक व्यवसायों में कौशल-संवर्द्धन कार्यक्रमों का भी आयोजन करता है ताकि बेरोजगार युवाओं को स्थायी नौकरी अथवा स्वरोजगार के अवसर प्राप्त हो सकें।

संक्षेप में बोर्ड के सर्व-प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- विज्ञान व प्रौद्योगिकी श्रम शक्ति के मध्य उच्च स्तरीय उद्यमशीलता का उन्नयन और विकास तथा विज्ञान व प्रौद्योगिकी अवसंरचना का प्रयोग करते हुए 'स्व-रोजगार' को प्रोत्साहन।
- उद्यमिता के विकास हेतु विभिन्न प्रकार की प्रोन्नयन सेवाओं को उपलब्ध कराना।
- पिछड़े वर्गों पर भी विशेष ध्यान देते हुए विज्ञान व प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हुए उद्यमशीलता व स्व-रोजगार का विकास करने हेतु शैक्षिक संस्थानों तथा अनुसंधान व विकास संगठनों के मध्य नेटवर्क की स्थापना।

देश के विभिन्न विज्ञान व प्रौद्योगिकी संस्थानों में तथा उनके आस-पास विज्ञान व प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता पार्क (स्टैप) स्थापित किए गए हैं ताकि नवीन व मौजूदा उद्यमियों को प्रौद्योगिकी विकास, परीक्षण तथा अंशांकन, प्रलेखन और गणना, प्रशिक्षण आदि की सुविधाएं प्राप्त हो सकें। प्रौद्योगिकी व्यापार इंक्यूबेटर (टीबीआई) की स्थापना की योजना वर्ष 2000-01 में प्रारंभ की गई ताकि प्रौद्योगिकी आधारित उद्यमों को बढ़ावा दिया जा सके और अनुसंधान और विकास के नतीजों का तीव्रता से व्यवसायीकरण हो सके। इंक्यूबेटरों की स्थापना देश में शैक्षिक और अनुसंधान व विकास संस्थाओं में अथवा उनके निकट की जा रही है। उद्यमशीलता विकास प्रकोष्ठों (एंटरप्रेनरशिप डेवलेपमेंट सेल-म्क्ब्) की स्थापना शैक्षिक संस्थानों में की गई है ताकि योग्य विज्ञान और प्रौद्योगिकी कार्मिकों को उद्यम लगाने और स्वरोजगार/वेतन वाले रोजगार के अन्य तरीके प्राप्त करने में सहायता प्राप्त हो सके। पिछड़े जिलों में विज्ञान और प्रौद्योगिकी उद्यमशीलता विकास योजना के अंतर्गत परियोजनाएं चलाई जा रही हैं। इन परियोजनाओं का उद्देश्य संबंधित जिलों में छोटे उद्यम स्थापित करना है। ऐसे व्यक्ति जो नियमित उद्यमशीलता विकास कार्यक्रमों में भाग नहीं ले पाते उनके लिए वर्ष 1994-95 से अहमदाबाद के भारतीय उद्यमशीलता विकास संस्थान के साथ मिलकर मुक्त उद्यमशीलता प्रशिक्षण कार्यक्रम (ओपन लर्निंग प्रोग्राम इन एंटरप्रेनरशिप- ओएलपीई) चलाया गया है।

वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद (**Council of Scientific and Industrial Research - CSIR):** सर्वोच्च औद्योगिक अनुसंधान एवं विकास संगठन के रूप में भारत में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद की स्थापना वर्ष 1942 में तत्कालीन केंद्रीय विधायी एसेम्बली (Central Legislative Assembly) के प्रस्ताव पर हुई। यह एक स्वायत्त निकाय है जो वर्ष 1860 के सोसायटीज पंजीकरण अधिनियम के तहत पंजीकृत है। इसका मुख्य उद्देश्य विज्ञान में विशिष्ट उपलब्धि हासिल करना, उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धि हासिल करना, उच्च प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में अंतर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्द्धात्मक क्षमता अर्जित करना तथा विज्ञान व प्रौद्योगिकी से जुड़ी सभी गतिविधियों के प्रबंधन से लेकर वित्त पोषण तक में नवीनता लाना है। यह परिषद औद्योगिक प्रतिस्पर्धा, सामाजिक क्षेत्र के लिए विज्ञान और प्रौद्योगिकीय आधार, ज्ञानवर्द्धन के लिए विज्ञान तथा समाज कल्याण के लिए सक्रिय रूप से प्रौद्योगिकी उपलब्ध कराती है। यहां पर उल्लेखनीय है कि वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद के अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं।

विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग

विज्ञान एवं अभियांत्रिकी अनुसंधान परिषद . (**Science and Engineering Research Council -SERC):** विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग, विज्ञान तथा अभियांत्रिकी के क्षेत्रों में विभिन्न विषयों में अनुसंधान तथा विकास क्षेत्रों की पहचान व उनके विकास में सराहनीय भूमिका निभा रहा है। यह कार्य विज्ञान एवं अभियांत्रिकी अनुसंधान परिषद (SERC) के माध्यम से किया जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो वर्ष 1974 में स्थापित विज्ञान एवं अभियांत्रिकी अनुसंधान परिषद (एसईआरसी) सर्वोच्च निकाय है जिसके माध्यम से भारत सरकार का विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग विज्ञान व अभियांत्रिकी के नए उभरते व चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में अनुसंधान व विकास कार्यक्रमों को बढ़ावा देता है। परिषद में विभिन्न विश्व विद्यालयों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं और उद्योगों के प्रसिद्ध वैज्ञानिक, तकनीकीविद् इत्यादि शामिल होते हैं। विज्ञान व अभियांत्रिकी की विभिन्न शाखाओं में परिषद की सहायता हेतु कार्यक्रम परामर्शदात्री समितियां (Programme Advisory committees-PACs) होती हैं। परिषद अपनी परामर्शदात्री समितियों के माध्यम से विभाग को विभिन्न प्रस्तावों को विश्लेषण में सहायता देने के साथ-साथ अनुसंधान व विकास के ऐसे नए और अंतर विषयक क्षेत्रों की पहचान भी करती है जिनमें समन्वित प्रयासों की आवश्यकता है। परामर्शदात्री समितियों की ही सहायता से परिषद विभिन्न विषयों में प्रायोजित प्रत्येक परियोजना की प्रगति की निगरानी भी करती है और देखती है कि समन्वित

व ठोस प्रयासों में कितनी प्रगति हुई है। प्रत्येक वर्ष विभाग को लगभग 1000 अनुसंधान प्रस्ताव प्राप्त होते हैं जिनमें से अधिकांश मूलभूत विज्ञान व अभियांत्रिकी अनुसंधान की श्रेणी में आते हैं।

संक्षेप में विज्ञान एवं अभियांत्रिकी अनुसंधान परिषद के सर्वप्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित हैं-

- बहुअनुशासनात्मक क्षेत्रों समेत विज्ञान और अभियांत्रिकी के नवीन उभरते हुए और चुनौतीपूर्ण क्षेत्रों में अनुसंधान को प्रोत्साहित करना।
- विज्ञान व अभियांत्रिकी के प्रासंगिक क्षेत्रों में संस्थानों की सामान्य अनुसंधान क्षमता का चयनात्मक उन्नयन करना।
- अनुसंधान व विकास की चुनौतियों से निपटने में युवा वैज्ञानिकों को प्रोत्साहन देना
- सापेक्षतया लघु संस्थानों या विश्वविद्यालयी विभागों से प्राप्त प्रस्तावों पर विशेष ध्यान देना।
- देश में वैज्ञानिकों व तकनीकविदों को पेटेंट की सुविधा मुहैया कराना।

प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड (**Technology Development Boadrd):** प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड अधिनियम, 1995 के प्रावधानों के तहत सितंबर, 1996 में गठित प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड, सरकार के अधीन अपने प्रकार का एक मात्र संगठन है जिसका एकमेव उद्देश्य विभिन्न अनुसंधानों के परिणामों को व्यावसायिक उत्पादों या सेवाओं में परिवर्तित करना है। यह बोर्ड औद्योगिक इकाइयों तथा अन्य संस्थाओं को स्वदेशी तकनीक के विकास तथा व्यावसायिक उपयोग करने अथवा आयातित तकनीक के वृहत घरेलू उपयोग को अपनाने के लिए आर्थिक सहायता प्रदान करता है। बोर्ड ने जिन क्षेत्रों को आर्थिक सहायता दी है वे हैं: चिकित्सा तथा औषधियां, दूरसंचार, ऊर्जा, वायु परिवहन, बिजली की तार, सड़क, अपशिष्ट प्रयोग, अभियांत्रिकी तथा इलेक्ट्रॉनिक, कृषि तथा जैव प्रौद्योगिकी, रसायन तथा स्नेहक, सूचना प्रौद्योगिकी। राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, शैक्षिक संस्थानों तथा उद्योग में मान्यता प्राप्त इन हाउस अनुसंधान व विकास इकाइयों द्वारा प्रौद्योगिकी प्रदान की जाती है। जिन उत्पादों का सफलतापूर्वक उत्पादन और विपणन किया जा रहा है उनमें अनुवांशिक विधि से विकसित हैपेटाइटिस-बी टीका, मक्का के अपशिष्ट से जैव-उर्वरक, सूर्यामिन नाम से ग्लूटेन, क्षयरोग के उपचार में प्रयुक्त औषधि के निर्माण में प्रयोग होने वाली महत्वपूर्ण प्रतिस्थानिक औषधि डी एल -2 अमीनो ब्यूटोनोल, खाने योग एंटी बायोटिक सेफेलोस्पोरिन औषधि-सेफक्सिम, रिकाम्बिनेंट हैपेटाइटिस-बी टीका, बैक्टीरियल इंडोटॉनिक्स का पता लगाने हेतु सी ए एल री एजेंट, कपड़ा मिलों के लिए वार्डिंग मशीन, निकोटिनेमाइड, अरंडी के तेल से अन्डीसेनिओइक अम्ल और शहरी कचरे से ईंधन इत्यादि।

संक्षेप में कहें तो प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड सक्रिय रूप से निम्नलिखित भूमिका निभाता है-

- किसी भी क्षेत्र में तकनीक प्रेरित परियोजना पर बल देना।
- पहचान प्राप्त विशेषज्ञों द्वारा विशिष्ट मूल्यांकन प्रविधि।
- परियोजना संबंधी आवेदन को प्रस्तुत करने हेतु आवेदक को पूर्ण अवसर।
- परियोजनाओं के दस्तावेजों/प्रविधियों के सम्मानपूर्वक गुप्तता बरतता है।
- परियोजनाओं के संदर्भ में आवेदनों के विश्लेषण में पारदर्शिता।
- उन्नत प्रौद्योगिकी व उच्च जोखिम के संदर्भ में उद्योगों को प्रोत्साहन।
- रोजगार के नवीन अवसरों का सृजन।

प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड वर्ष 1999 से प्रत्येक वर्ष 11 मई को प्रौद्योगिकी दिवस के अवसर पर किसी एक औद्योगिक इकाई को 'स्वदेशी प्रौद्योगिकी के सफल व्यवसायीकरण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार' प्रदान करता है।

राष्ट्रीय पुरस्कार के दो भाग होते हैं-

1. औद्योगिक इकाई जिसने स्वदेशी प्रौद्योगिकी का सफल व्यवसायीकरण किया हो
2. ऐसी प्रौद्योगिकी का विकासकर्ता/प्रदाता

प्रत्येक भाग की पुरस्कार राशि दो लाख रुपए है जो कि प्रौद्योगिकी आधारित उत्पाद का सफल व्यवसायीकरण करने वाली लघु इकाई को दी जाती है।

राष्ट्रीय प्रमाणन बोर्ड (**National Accrediation Board):** परीक्षण तथा अंशांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रमाणन बोर्ड, भारत सरकार के विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग के तहत एक स्वायत निकाय है तथा सोसाइटीज अधिनियम के तहत पंजीकृत है। यह बोर्ड परीक्षण, अंशाकन और चिकित्सा प्रयोगशालाओं की तकनीकी क्षमता के लिए औपचारिक मान्यता प्रदान करता है। बोर्ड की मान्यता परीक्षण और अंशाकन प्रयोगशालाओं के लिए सामान्य तौर पर आईएसओ। आईईसी 17025-2005 तथा चिकित्सा प्रयोगशालाओं के लिए आईएसओ 15189:2003 पर आधारित है। बोर्ड की प्रमाणन प्रणाली आईएसओ/आईईसी 17011:2004 और एशिया पैसिफिक लेबोरेटरी एक्रेडिटेशन कार्पोरेशन एम आर 001 के प्रावधानों के अनुसार है। वर्ष 2000 में एशिया पैसिफिक लेबोरेटरी एक्रेडिटेशन कार्पोरेशन (एपीएलसी) द्वारा बोर्ड के कार्यों के मूल्यांकन के पश्चात एपीएलसी और इंटरनेशनल लेबोरेटरी एक्रेडिटेशन कार्पोरेशन ने बोर्ड को पारस्परिक मान्यता व्यवस्था के तहत हस्ताक्षरकर्ता सदस्य देश का दर्जा दे दिया है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के विकास के लिए परियोजनाएं

भारत सरकार का विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी विभाग नई प्रतिभाओं की पहचान के लिए विभिन्न कार्यक्रमों को सहयोग देता है और विज्ञान व प्रौद्योगिकी के अग्रणी क्षेत्रों में अनुसंधान के लिए फैलोशिप के रूप में वित्तीय सहायता देता है। विभाग, शोधकर्ताओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम, ग्रीष्म विद्यालय तथा संपर्क कार्यक्रम चलाता है। भारत की स्वतंत्रता की 50वीं वर्षगांठ के अवसर पर सरकार ने स्वर्ण जयंती शोधवृत्ति योजना शुरू की जिसका उद्देश्य प्रतिभावान युवा वैज्ञानिकों को विज्ञान में विश्व स्तरीय क्षमता हासिल करने में सहायता करना है। यह फैलोशिप 30-40 वर्ष के आयुवर्ग वाले ऐसे भारतीय वैज्ञानिकों के लिए है जिन्होंने अनुसंधान के क्षेत्र में बेहतरीन काम किया है और अपनी विशेषज्ञता के क्षेत्र में नवीन ऊंचाइयों को हुआ है।

रामानुजन फैलोशिप: भारत सरकार द्वारा रामानुजन फैलोशिप की स्थापना विश्व भर के सुयोग्य वैज्ञानिक और अभियंताओं के लिए की गई है ताकि वे भारत में वैज्ञानिक अनुसंधानों को नेतृत्व प्रदान करें। इसमें विशेष बल वैसे वैज्ञानिकों पर दिया जाता है जो विदेश से भारत आने की इच्छा रखते हैं। फैलोशिप, अत्यधिक प्राप्त वैज्ञानिक देश के किसी भी वैज्ञानिक संस्थान या विश्व विद्यालय में कार्य कर सकता है तथा ऐसा वैज्ञानिक, भारत सरकार की विभिन्न विज्ञान व प्रौद्योगिकी एजेंसियों द्वारा प्रदत्त अनुसंधान सहायता को प्राप्त करने का पात्र होगा। रामानुजन फेलोशिप के अंतर्गत चयनित वैज्ञानिक को 75000 रुपए प्रतिमाह देय होता है।

जे.सी.बोस नेशनल फेलोशिप: भारत सरकार द्वारा स्थापित जे.सी. बोस नेशनल फेलोशिप उन सक्रिय वैज्ञानिकों व अभियंताओं के लिए है जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान दिया हो। इस फेलोशिप से संबंधित विषयों का प्रशासन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा किया जाता है। फैलोशिप अत्यधिक चयनात्मक व वैज्ञानिक विशेष आधारित है। इसके अंतर्गत चयनित वैज्ञानिक को 25000 रुपए प्रतिमाह देय होता है।

रामन्ना फेलोशिप: रामन्ना फैलोशिप का उद्देश्य वैसे अनुसंधानकर्ताओं को वित्तीय प्रोत्साहन प्रदान करना है जिन्होंने वैज्ञानिक और अभियांत्रिकी परिषद के अंतर्गत चल रही परियोजनाओं में उल्लेखनीय प्रदर्शन किया हो।

इंस्पायर (**Innovation in Science Pursuit for inspired Research - INSPIRE):** इनोवेशन इन साइसं परस्यूट फॉर इंस्पायर्ड रिसर्च (इंस्पायर), प्रतिभाओं को विज्ञान की ओर आकर्षित करने के लिए विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा संचालित व प्रायोजित नवाचारी कार्यक्रम है। इंस्पायर (INSPIRE) कार्यक्रम का मूल्य उद्देश्य विज्ञान के रचनात्मक आकर्षण को देश के युवाओं तक पहुंचना, कम आयु में ही प्रतिभाओं को विज्ञान की ओर आकर्षित करना और विज्ञान व प्रौद्योगिकी तंत्र और अनुसंधान व विकास के सशक्तिकरण व प्रसार हेतु आवश्यक मानव संसाधन पूल की रचना करना। इस कार्यक्रम की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि यह किसी भी स्तर पर प्रतिभाओं की पहचान हेतु किसी प्रकार की प्रतियोगी परीक्षा का सहारा नहीं लेता। प्रतिभाओं की पहचान हेतु यह कार्यक्रम निवर्तमान शैक्षिक तंत्र पर ही विश्वास करता है। इंस्पायर (प्छैच्प्त्) के तीन घटक हैं-

प्रतिभाओं को शीघ्र आकर्षित करने की स्कीम: इसके तहत 10-15 आयु वर्ग के दस लाख बच्चों को 5000 रुपए का पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके अतिरिक्त हाईस्कूल की परीक्षा में घोषित टॉपर्स को विज्ञान के क्षेत्र के वैश्विक नेताओं से मिलने का अवसर प्रदान किया जाता है। देश में 100 से भी अधिक स्थानों पर करीब 50,000 युवाओं के लिए वार्षिक विज्ञान कैम्पों का भी आयोजन किया जाता है।

2. उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति: उच्च शिक्षा हेतु छात्रवृत्ति का उद्देश्य प्रतिभावान युवाओं को विज्ञान सघन कार्यक्रमों में उच्चतर शिक्षा हेतु छात्रवृत्तियों व कैंपों के माध्यम से आकर्षित करना। योजना के तहत प्रत्येक वर्ष 17-22 आयुवर्ग के युवाओं को दस हजार छात्रवृत्तियां, 0.80 लाख रुपए की प्रदान की जाती है, ताकि ये युवा प्राकृतिक एवं आधारभूत विज्ञान के क्षेत्र में स्नातक व परास्नातक स्तर की शिक्षा प्राप्त कर सके।
3. रिसर्च कैरिअर के लिए अवसर की सुनिश्चिता: इस कार्यक्रम का उद्देश्य आधारभूत व अनुप्रयोग विज्ञान (इंजीनियरिंग व औषधि समेत) 22-27 वर्ष आयु वर्ग के युवा वैज्ञानिकों को डॉक्टोरल इंस्पायर फेलोशिप प्रदान करना है ताकि अनुसंधान व विकास अवसंरचना को सशक्त किया जा सके।

युवा वैज्ञानिकों हेतु फास्ट ट्रैक स्कीम (**FAST):** फास्ट ट्रैक युवा वैज्ञानिक कार्यक्रम वर्ष 2000 में प्रारंभ किया गया। इसका उद्देश्य युवा वैज्ञानिको को शीघ्र अनुसंधान सहायता उपलब्ध कराना है ताकि वे विज्ञान और अभियांत्रिकी के उभरते हुए क्षेत्रों में अपने विचारों व दृष्टिकोण का उपयोग कर सके। यह स्कीम युवा वैज्ञानिकों को जोड़ने हेतु वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी कार्यक्रमों का विकास करने के लिए वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी संस्थानों, व्यवसायिक निकायों तथा राज्य विज्ञज्ञन व प्रौद्योगिकी परिषदों समेत अन्य संस्थानों को प्रोत्साहन देती है। इस स्कीम के तहत युवा वैज्ञानिक वर्ष के किसी भी समय अपने प्रस्तावों को प्रस्तुत कर सकते हैं। इस स्कीम के तहत प्रोजेक्ट समयावधि की ऊपरी सीमा 3 वर्ष तथा कुल लागत सीमा 17 लाख रुपए हैं। अभी तक 600 युवा वैज्ञानिक, विज्ञान व अभियांत्रिकी की विविध शाखाओं में फास्ट ट्रैक स्कीम के तहत लाभान्वित हो चुके हैं।

किशोर वैज्ञानिक प्रोत्साहन योजना: किशोर वैज्ञानिक प्रोत्साहन योजना, भारत सरकार के विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा वर्ष 1999 में प्रारंभ की गई। इस योजना का उद्देश्य आधारभूत विज्ञान, अभियांत्रिकी और औषधि विज्ञान के छात्रों को प्रोत्साहन देना है ताकि ये छात्र इन्हीं क्षेत्रों में अनुसंधान को कैरिअर के रूप में अपना सके। वस्तुत: इस योजना का लक्ष्य ही है कि अनुसंधान की ओर अभिवृत्ति रखने वाले प्रतिभावान छात्रों की पहचान और उनको प्रोत्साहन दिया जाए। यह योजना छात्रों को अपनी क्षमताओं को पूर्ण रूपेण साकार करने का अवसर प्रदान करती है तथा साथ ही यह सुनिश्चित करती है कि देश की सर्वोत्तम वैज्ञानिक प्रतिभा का विकास हो ताकि देश में अनुसंधान को बढ़ावा मिल सके। योजना के तहत चयनित विद्यार्थियों को सामान्य व आकस्मिक छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त चयनितों के लिए देश के प्रतिष्ठित अनुसंधान और शैक्षिक संस्थानों में ग्रीष्म कालीन कार्यक्रमों का भी आयोजन होता है।

किशोर वैज्ञानिक प्रोत्साहन योजना का वित्तीयन भारत सरकार के विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा किया जाता है जबकि योजना का प्रशासन भारतीय विज्ञान संस्थान बंगलुरू द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त योजना के क्रियान्वयन पर दृष्टि रखने के लिए एक राष्ट्रीय परामर्शदात्री समिति की भी स्थापना की गई है। एक बेसिक समिति और एक राष्ट्रीय वैज्ञानिक समिति, योजना के प्रशासकीय व शैक्षिक पहलुओं पर दृष्टि रखती है।

अंतर्राष्ट्रीय ट्रैवेल सपोर्ट सिस्टम: अंतर्राष्ट्रीय ट्रैवेल सपोर्ट सिस्टम योजना का उद्देश्य किसी अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक सम्मेलन, सेमिनार/ वर्कशॉप इत्यादि में किसी रिसर्च पत्र को प्रस्तुत करने या सम्मेलन का आयोजन करने इत्यादि में वित्तीय सहयोग प्रदान करना है। इस योजना के तहत 35 वर्ष से कम आयु वाले युवा वैज्ञानिकों को प्रशिक्षण कार्यक्रमों तथा लघु अवधि की वर्कशापों/पाठ्यक्रमों में शामिल होने हेतु सहायता प्रदान की जाती है।

❖❖❖

कंप्यूटर एवं सूचना-पौद्योगिकी

CHRONICLE IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

कंप्यूटर की प्रत्येक पीढ़ी (Computer and their Generations) प्रमुख तकनीकी विकास को प्रदर्शित करता है जो मौलिक रूप से कंप्यूटर के काम, उनके आकार का छोटा होना, सस्ता तथा अधिक शक्तिशाली, कुशल और विश्वसनीय उपकरणों में परिवर्तन है।

पहली पीढ़ी(1940-1956): वैक्यूम ट्यूब

पहला कंप्यूटर वैक्यूम ट्यूब का इस्तेमाल Circuitry के लिए तथा मैगनेटिक ड्रम का मेमोरी के रूप में इस्तेमाल करता था। ये वजन में काफी भारी तथा आकार में कमरे के साइज में था। पहली पीढ़ी के कंप्यूटर मशीन लैंग्वेज पर निर्भर थे तथा कम स्तर की भाषा, प्रोग्रामिंग के रूप में समझ पाते थे। इनपुट के लिए पंच कार्ड और कागज टेप इस्तेमाल किए जाते थे तथा आउटपुट प्रिंट आउट के रूप में आते थे। उदाहरण- UNIVAC, ENIAC

दूसरी पीढ़ी(1956-63): ट्रांजिस्टर आधारित

वैक्यूम ट्यूब की जगह ट्रांजिस्टर का इस्तेमाल करके दूसरी पीढी में कंप्यूटर को हल्का, सस्ता, तेज तथा ऊर्जा कुशल बनाया जा सका। कंप्यूटर अब एसेंबली लैंग्वेज समझने लगा तथा उच्च स्तरीय प्रोग्रामिंग भाषाओं का विकास हुआ। कोबोल और फोरट्रान का विकास इसी दौरान हुआ।

तीसरी पीढ़ी(1974-71): एकीकृत परिपथ

तीसरी पीढ़ी में एकीकृत परिपथों (IC-Integrated Circuits) के विकास, जो सिलिकॉन चिप्स, अर्धचालकों पर आधारित था, ने कंप्यूटर की कुशलता तथा क्षमता दोनों को आश्चर्यजनक ढंग से बढ़ाया। इनपुट में पंचकार्ड की जगह की-बोर्ड, आ गए, मॉनीटर आउट-पुट में आ गए तथा ऑपरेटिंग सिस्टम का इस्तेमाल शुरू हो गया।

चौथी पीढ़ी: माइक्रोप्रोसेसर (1971-वर्तमान)

माइक्रोप्रोसेसर आधारित कंप्यूटर में हजारों एकीकृत परिपथों को एक सिलिकॉन चिप पर बनाया गया। इससे पहले के कमरे के साइज का कंप्यूटर हाथ की हथेली में फिट हो सकने योग्य हो गया। Intel 4004 चिप में CPU, I/O सभी एक चिप में समेटे जा सकने योग्य हो गए।

पांचवीं पीढ़ी (वर्तमान और भविष्य में): आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस

पांचवी पीढ़ी के कंप्यूटर उपकरणों का आधार कृत्रिम बुद्धि है जिस पर अभी अब भी काम चल रहा है जबकि आवाजों की पहचान हो सकने योग्य डिवाइस प्रयोग में है। समानांतर प्रोसेसिंग तथा अतिचालकों का प्रयोग आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस को संभव बनाएगा।

कंप्यूटर के प्रकार

मुख्य रूप से ये तीन प्रकार के होते हैं:

1. एनालॉग कंप्यूटर: यह उस डाटा पर कार्य करता है, जो सतत् पैमाने (ब्वदजपदनवनेबंसम) पर मापे गये हों, जैसे- कमरे का तापक्रम। एनालॉग कंप्यूटर का सबसे सरल उदाहरण गाड़ियों में लगे 'स्पीडोमीटर' हैं।

2. डिजिटल कंप्यूटर: ये अंकीय डाटा के आधार पर कार्य करने वाले कंप्यूटर होते हैं। यह अंकगणित की मौलिक व तार्किक क्रियाओं को संपन्न करता है। यह दो प्रकार का होता है: (a) विशेष प्रयोजन, तथा (b) सामान्य प्रयोजन के लिए। विशेष प्रयोजन कंप्यूटर केवल एक विशेष प्रकार की ही संक्रिया संपन्न कर सकते हैं। इस संक्रिया के लिए 'प्रोग्राम' कंप्यूटर की 'मेमोरी' में संचयित रहता है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण सामान्य 'कैलकुलेटर' है। दूसरी ओर, सामान्य प्रयोजन कंप्यूटर में विभिन्न प्रोग्राम संचयित रहते हैं और इसमें नये प्रोग्राम भी डाले जा सकते हैं।
3. हाइब्रिड कंप्यूटर: इसमें उपरोक्त दोनों कंप्यूटरों की सुविधाएं उपलब्ध होती हैं। उदाहरणार्थ, इन्टेंसिव केयर यूनिट (आई. सी.यू.) में एनालॉग कम्प्यूटर रोगी की हृदय गति व तापमान माप सकता है। साथ ही, कंप्यूटर के डिजिटल भाग में यह सूचना प्रदान कर उपयुक्त चिकित्सकीय सुविधा हेतु परामर्श भी दे सकता है।

सुपर कंप्यूटर

वर्तमान में वे कंप्यूटर जिनकी कार्य करने की क्षमता 500 मेगा फ्लाप्स (Floating Points Operations per Second-FLOPS) तथा स्मृति भंडार कम से कम 52 मेगा बाइट हो, उन्हें सुपर कंप्यूटर कहा जाता है। सुपर कंप्यूटर में साधारणत: समानांतर प्रोसेसिंग तकनीक का प्रयोग किया जाता है। समानांतर प्रोसेसिंग तकनीक में बहुत सारे माइक्रोप्रोसेसरों का प्रयोग एक दूसरे से जोड़कर किया जाता है। ये माइक्रोप्रोसेसर किसी समस्या को उनके मांगों में विभाजित करके उन मांगों पर एक साथ कार्य करते हैं। सुपर कंप्यूटर में 32 या 64 समानांतर परिपथों में कार्य कर रहे माइक्रोप्रोसेसरों के सहयोग से विभिन्न सूचनाओं पर एक साथ कार्य किया जाता है। सुपर कंप्यूटर की खोज 1960 में सेमुर क्रे (Seymour Cray) द्वारा कंट्रोल डाटा कार्पोरेशन (Control Data Corporation), जो कि बाद में क्रे अनुसंधान में परिवर्तित हो गया, में की गई थी।

भारत में सुपर कंप्यूटर विकसित करने की जरूरत उस समय महसूस की गयी, जब क्रे.एक्स.एम.पी.-14' नामक सुपर कंप्यूटर अमेरिका से काफी कठिनाई व अधिक कीमत अदा करने के बाद प्राप्त किया जा सका। इस कंप्यूटर से यद्यपि कई तरह की गणनाएं की जा सकती हैं, लेकिन भारत को सिर्फ मौसम संबंधी गणना की ही अनुमति प्राप्त थी। इस स्थिति से उबरने के लिए 1988 में पुणे (महाराष्ट्र) में स्थित सी-डैक (C-DAC) की स्थापना की गयी तथा इसके मात्र 3 वर्ष के बाद ही भारतीय वैज्ञानिकों ने 'परम' नामक व्यावसायिक स्तर के सुपर कंप्यूटर को बना डाला। अपने प्रथम मिशन में ही इसके द्वारा विकसित 'परम-6000' तथा 'परम 6600' श्रृंखला के 30 सुपर कंप्यूटर विभिन्न शैक्षिक एवं शोध संस्थानों में लगाये गये। अपने दूसरे मिशन के तहत 'सी-डैक' ने 'परम-9000' श्रृंखलाओं के सुपर कंप्यूटर विकसित किये, जो अमेरिकी सुपर कंप्यूटर 'क्रे.एक्स.एम.पी.-14' से अक्षिक सक्षम थे।

28 मार्च, 1998 को भारत ने एशिया के सबसे बड़े सुपर कंप्यूटर का सफल निर्माण करके इस क्षेत्र में अमेरिका एवं अन्य विकसित देशों के वर्चस्व को कड़ी चुनौती दी। अत्यधिक क्षमता वाले सुपर कंप्यूटर 'परम-10,000' का विकास भी सी-डैक ने ही किया है। एशिया में जापान के अतिरिक्त भारत ही एक ऐसा देश है, जिसने ऐसा कंप्यूटर विकसित किया है। वर्तमान में भारत का सबसे तेज सुपर कंप्यूटर इसरो द्वारा SAGA.220 का निर्माण किया गया है। यह 220 टेराफ्लाप (Trillion Floating Point Operations per Second) की गणना कर सकता है। यह ग्राफिक प्वाइंट यूनिट (ळच्च्) आधारित सुपर कंप्यूटर है जिसका उपयोग अंतरिक्ष वैज्ञानिकों तथा एयरोस्पेस कंडीशन के लिए होगा।

हैकिंग (**Hacking**): यह शब्द नकारात्मक अर्थ वाला है जिसका मतलब है बिना अधिकार के कंप्यूटर से जानकारी चुराना। इसमें चोर कंप्यूटर प्रयोगकर्ता की असावधानी का लाभ उठाता है।

स्पूफिंग (**Spoofing**): अनावश्यक ई-मेल को कंप्यूटर प्रयोगकर्ता के पते पर भेजा जाता है परंतु ई-मेल का स्त्रोत एवं नाम को बदलने के बाद, इससे ई-मेल की वास्तविक पहचान छुप जाती है।

फिसिंग (**Pishing**): इसमें भी जानकारी को गलत ढ़ंग से प्राप्त किया जाता है। किसी वैध संस्था जैसे बैंक या बीमा कंपनी का झूठा प्रयोग करके उपभोक्ता से उसका कोड, अकाउंट नं. जैसे महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त कर लिए जाते हैं।

फार्मिंग (**Pharming**): जब कंप्यूटर प्रयोगकर्ता किसी संस्था को अपनी जानकारी दे रहा होता है, तो चोर बीच में इन सूचनाओं को चुराता रहता है तथा कंप्यूटर प्रयोगकर्ता को इस बात का पता भी नहीं चलता है।

विशिंग (**Vishing**): इसमें कॉल करने वाला व्यक्ति जब कस्टमर केयर से तथ्यों का आदान-प्रदान कर रहा होता है तो चोर बीच में ही कंप्यूटर (कस्टमर केयर के) पर आने वाली सूचनाओं को चुरा लेता है।

बिट: 'बाइनरी इकाई' के आरंभिक एवं अन्तिम अक्षरों से बने संक्षिप्त शब्द, 0 से 1 को 'बिट' कहा जाता है। यह कम्प्यूटर सूचना की सबसे छोटी इकाई है।

बाइट: आठ बिटों से बनने वाले अक्षरों को 'बाइट' कहा जाता है। एक किलोबाइट में 1024 बाइट होते हैं एवं 10,48,576 बाइटों का एक मेगाबाइट होता है। कम्प्यूटर के स्मृति भंडार को मेगाबाइट (डमहंइपजम) में मापा जाता है।

मेमोरी

सभी कंप्यूटरों में आजकल जानकारी को रक्षित करने के लिए कुछ चीजों का इस्तेमाल होता है जिनको मेमोरी कहा जाता है। यह कम्प्यूटर के वे साधन, जिन पर सूचनायें एवं प्रोग्राम संचित रहते हैं।

ROM (Read Only Memory): यह एक स्थायी मेमोरी (स्मृति) भंडार है, जो विद्युत आपूर्ति समाप्त होने पर भी लोप नहीं होता है।

RAM (Random Access Memory): यह स्मृति तात्कालिक उपयोग के लिए होती है एवं अचानक विद्युत आपूर्ति बन्द होने पर यह लुप्त हो जाती है।

1. सॉफ्टवेयर (**Software**): ऐसे प्रोग्राम, जिन्हें 'हार्डवेयर' अर्थात् कंप्यूटर पर चला सकते हैं। प्रोग्राम, एप्लीकेशन अथवा सॉफ्टवेयर एक ही चीज के विभिन्न नाम हैं। दूसरे शब्दों में, प्रोग्राम तथा आंकड़े, जो कंप्यूटर को इच्छित काम करने के लिए दिये जाते हैं, सॉफ्टवेयर कहलाते हैं।
2. हार्डवेयर (**Hardware**): कंप्यूटर की समस्त मशीनरी ऑपरेशंस कंप्यूटर 'हार्डवेयर' के अंतर्गत आती है। कंप्यूटर तथा उससे जुड़ी अन्य मशीनें 'हार्डवेयर' कहलाती हैं। जैसे-प्रिंटर, स्क्रीन, कंप्यूटर आदि।
3. प्रोग्राम (**Programme**): संकेतों का संग्रह, जो कि कंप्यूटर को बताता है कि किसी विशेष काम को कैसे किया जायेगा?
4. बाइट (**Bite**): कंप्यूटर में किसी शब्द की लंबाई मापने की इकाई।
5. बायोचिप्स (**Biochips**): सिलिकॉन माइक्रोचिप्स की तकनीक के आधार पर कंप्यूटरों का विकास हुआ है। सिलिकॉन चिप्स पर कंप्यूटर परिपथ के लिए आवश्यक अनेक छोटे-छोटे परिपथ बनते हैं, लेकिन इसकी सीमाओं को देखते हुए वैज्ञानिकों ने अब बायोटेक्नोलॉजी (जैव प्रौद्योगिकी) का सहारा लेकर माइक्रोचिप्स की क्षमता बढ़ाने का प्रयास किया है, जिससे 'बायोचिप्स' का विकास संभव हो सका है। इस आधार पर 'बायो-कंप्यूटर' की संकल्पना की गयी है।
6. रैम (**Random Access Memory; (RAM):** वह कंप्यूटर स्मृति, जिसे आंकड़ों तथा प्रोग्राम के अल्पकालिक संग्रहण हेतु प्रयोग किया जाता है। इसके डाटा को पढ़ा एवं सुधारा जा सकता है। ये तथ्य कंप्यूटर को बंद करने पर समाप्त हो जाते हैं।
7. रोम (**ROM : Read Ony Memory**): इसमें स्थायी रूप से रिकॉर्ड किया गया निर्देश होता है, जिसे पढ़ा तो जा सकता है, परन्तु इसे सुधारा नहीं जा सकता। इसके निर्देश कंप्यूटर को बंद किये जाने के बावजूद समाप्त नहीं होते हैं।
8. चिप (**Chip**): अर्द्धचालक पदार्थ का वह छोटा-सा टुकड़ा, जिस पर इलेक्ट्रॉनिक सर्किट खुदा होता है। सिलिकॉन जैसी किसी अर्द्धचालक चिप पर बना संपूर्ण इलेक्ट्रॉनिक सर्किट 'एकीकृत सर्किट' (Integrated Circuit) कहलाता है। इसका उपयोग कंप्यूटरों, रेडियो, टेलीविजन तथा अन्य आधुनिक इलेक्ट्रॉनिक युक्तियों में किया जाता है।
9. डाटा बेस (**Data Base**): कंप्यूटर में संग्रहित सूचनाओं का भंडार। डाटा-बेस में से इच्छित जानकारी ढूंढ़ी जा सकती है और उसे कंप्यूटर की स्क्रीन पर दिखलाया जा सकता है।
10. प्रोग्राम (**Program**): कार्य पूरा करने हेतु दिये गये निर्देशों की सूची।
11. माइक्रो-प्रोसेसर (**Micro-processor**): सिलिकॉन चिप पर बना वह एकीकृत सर्किट, जिस पर कंप्यूटर का अधिकांश भाग होता है। इनका उपयोग छोटे कंप्यूटर बनाने तथा कैमरे, कपड़े सीने की मशीनों, कपड़े धोने की मशीनों आदि जैसे घरेलू उपकरणों में किया जाता है और उद्योगों में इनसे रोबोट तथा स्वचालित मशीनों को नियंत्रित किया जाता है।

12. मॉडेम (**Modem**): *Modulator-Demodulator* का संक्षिप्त रूप, जिसके द्वारा कंप्यूटर को टेलीफोन लाइन से जोड़ा जाता है। इसकी मदद से कंप्यूटर सूचनाएं टेलीफोन लाइनों द्वारा दूर-दूर तक भेजी जा सकती हैं। यह कंप्यूटर डिजिटल संकेतों को ध्वनि संकेतोंमें बदल देता है और उन्हें टेलीफोन लाइनों द्वारा भेज दिया जाता है। इसका उपयोग रेडियो प्रसारण में भी होता है।
13. सूचना प्रौद्योगिकी (**Information Technology**): इलेक्ट्रॉनिक विधि से सूचना भेजने, प्राप्त करने तथा संग्रहित करने की पद्धति। इसमें कंप्यूटरों, डाटा-बेसों तथा मॉडेमों का उपयोग किया जाता है।
14. मेमोरी (**Memory**): कंप्यूटर का वह भाग, जहां निर्देश अथवा प्रोग्राम एवं सूचनाएं एकत्रित रहती हैं। दो तरह की स्मृतियां होती हैं- *RAM* एवं *ROM*

नेटवर्क तथा उसके प्रकार

जब दो या उससे ज्यादा कंप्यूटर जानकारी तथा संसाधनों का आदान-प्रदान करते हैं तो इसे कंप्यूटर नेटवर्क कहते हैं। इस प्रोसेस में एक डिवाइस डेटा प्रेषण/प्राप्त करने में सक्षम हो तथा दूसरा डिवाइस डेटा प्राप्त/प्रेषण सकने में सक्षम हो तो इसे दो उपकरणों का नेटवर्क कहते हैं।

कंप्यूटर नेटवर्क का वर्गीकरण भौतिक तथा संगठनात्मक स्तर पर अनेक प्रकार से हो सकता है, जिनमें प्रमुख हैं:

(क) स्थानीय क्षेत्र नेटवर्क (**Local Area Network-LAN**): लैन, कंप्यूटर को सीमित भौगोलिक क्षेत्र जैसे-स्कूल, घर, कंप्यूटर लैब, ऑफिश की इमारतों आदि को जोड़ सकता है। इसमें प्रत्येक डिवाइस एक नोड की तरह होता है। वर्तमान में यह ईथरनेट प्रौद्योगिकी पर आधारित है।

(ख) वाइड एरिया नेटवर्क (**Wide Area Network-WAN):** वैन विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र जैसे-शहर, देश तथा अंतरमहाद्वीपिय दूरी तक के विशाल नेटवर्क को कवर करता है। यह कवरेज के लिए टेलीफोन लाइन, केबल तथा वायु तरंगों का उपयोग करता है। वैन नेटवर्क प्रोटोकॉल कनेक्टिविटी के लिए ।ज्डए ग्25 एवं फ्रेम रिले उपयोग करता है।

(ग) मेट्रोपोलिटन एरिया नेटवर्क **(Metropolitan Area Network-MAN):** इन नेटवर्क का उपयोग सरकारी संस्थाओं और संगठनों के द्वारा उपयोग किया जाता है। इसका क्षेत्र लैन (स।छ) से ज्यादा तथा वैन से कम अर्थात् यह इन दोनों के बीच का नेटवर्क है।

(घ) कैम्पस एरिया नेटवर्क **(Campus Area Network-CAN):** कैम्पस नेटवर्क एक सीमित भौगोलिक क्षेत्र में लैन के इंटरकनेक्शन से निर्मित होता है। नेटवर्किंग उपकरण हैं- स्विच, राउटर, ऑप्टिकल फाइबर इत्यादि। इस नेटवर्क का प्रशासन पूरी तरह से नेटवर्क स्वामित्व वाले व्यक्ति के पास होता है।

(च) होम नेटवर्क: होम नेटवर्क (Home network) घर में कंप्यूटर तथा उसके उपसाधन के बीच कनेक्शन के लिए प्रयोग किया जाता है।

(छ) निजी क्षेत्र नेटवर्क (पैन): निजी क्षेत्र नेटवर्क (Personal Area Network-PAN) एक कंप्यूटर नेटवर्क है। यह एक व्यक्ति के कंप्यूटर तथा उसके विभिन्न सूचना प्रौद्योगिकी उपकरणों के बीच संचार के लिए इस्तेमाल होता है। यह एक पैन वायर्ड और वायरलेस उपकरण हो सकता है। इसकी पहुंच सामान्यत: 10 मी. की दूरी तक फैली हुई है।

इंटरनेट

इंटरनेट कंप्यूटर नेटवर्क के कनेक्शन की एक वैश्विक प्रणाली है जो इंटरनेट प्रोटोकॉल सुइट (TCP/IP) मानक का उपयोग कर विश्व के अरबों लोगों को जोड़ता है। यह नेटवर्क का एक नेटवर्क है। इंटरनेट सूचना एवं संसाधनों की विस्तृत रेंज, आपस में जुड़े हुए हाइपरटेक्स्ट के दस्तावेज जिनमेंwww तथा ई-मेल के लिए बुनियादी सुविधाएं शामिल है, उन्हें रखता है। आम बोलचाल में इंटरनेट तथा वर्ल्ड वाइड वेब (www) दोनों को समानार्थक मानकर चर्चा की जाती है। इंटरनेट कंप्यूटर के बीच एक वैश्विक डेटा संचार प्रणाली है जबकि वेब इस संचार प्रणाली में से एक सेवा है जो हाइपरलिंक्स औरURL जुड़े हुए संसाधनों का संग्रह है।

इंटरनेट का उद्भव एवं विकास अमेरिका के प्रतिरक्षा विभाग के मुख्यालय पेंटागन स्थित 'एडवांस्ड रिसर्च प्रोजेक्ट्स एजेंसी-एरपा' (ARPA) की संकल्पना से हुआ था।

कार्यपद्धति: इंटरनेट ऑप्टिकल फाइबर तारों से जुड़े कंप्यूटरों का एक व्यापक नेटवर्क है। इस प्रणाली में कंप्यूटरों के जाल को एक मुख्य कंप्यूटर आपस में टेलीफोन लाइन के द्वारा जोड़ता है। यहां जोड़ने का कार्य जब टेलीफोन लाइन की जगह आम तारों के द्वारा किया जाता है तो यह पद्धति नेटवर्किंग कहलाती है। कंप्यूटर तथा टेलीफोन आपस में मोडेम के माध्यम से जुड़े होते हैं। यह मोडेम कंप्यूटर के डिजिटल सिग्नल को टेलीफोन के मैग्नेटिक सिग्नल तथा मैग्नेटिक को डिजिटल सिग्नल में बदलता है।

भारत में इंटरनेट: सीमित रूप से इंटरनेट का प्रवेश 1987-88 में हो गया था। परन्तु जनसामान्य के लिए विदेश संचार निगम लिमिटेड (VSNL) द्वारा 15 अगस्त, 1995 से 'गेटवे इंटरनेट' सेवा द्वारा आरंभ की गई।

वर्ल्ड वाइड वेब **(www):** यह पूरे विश्व में फैला एक प्रकार का डाटाबेस है जिससे कोई भी इंटरनेट यूजर सूचनाएं प्राप्त कर सकता है। इसमें सूचनाओं को विषय के अनुसार शीर्षकों और उप-शीर्षकों में विभाजित करके रखा गया है। वर्ल्ड वाइड वेब को ब्रिट टिम बर्नर्स-ली ने 1989 में विकसित किया था।

हाइपरटेक्स्ट ट्रांस्फर प्रोटोकॉल **(HTTP):** www पर HTTP का प्रयोग 1990 से हो रहा है। यह क्लाइंट सरवर प्रोटोकॉल है जिसके माध्यम से दो कंप्यूटर TCP/IP कनेक्शन पर कम्यूनिकेट कर सकते हैं।

यूनिफार्म रिसोर्स लोकेटर **(URL):** यह इंटरनेट पर किसी भी वेबसाइट/पेज/फाइल का यूनिक एड्रेस है। जैसे-http://www.google.co.in

हाइपरटेक्स्ट मार्कअप लैंग्वेज **(HTML):** www पर इस्तेमाल में होने वाला लैंग्वेज है जिसे दिए हुए तरीके से लिखने पर पेज ले-आउट तथा शब्द फार्मेट नजर आते हैं।

इंटरनेट प्रोटोकॉल एड्रेस **(IP address):** यह संख्यात्मक लेबल होता है जो कंप्यूटर नेटवर्क में इंटरनेट प्रोटोकॉल का इस्तेमाल करने वाले हर डिवाइस को दिया जाता है। यह IP_V4 में चार ब्लाकों में फुलस्टॉप से बंटा होता है वही IP_V6 में हेक्साडेसीमल से बंटा होता है।

आईपीवी-**6:** इंटरनेट प्रोटोकॉल-6 (IP_V6) नई पीढ़ी का ऐसा इंटरनेशनल प्रोटोकॉल है जो इस्तेमाल किए जा रहे इंटरनेट प्रोटोकॉल-4 (IP_V4) का स्थान लिया है।

इंटरनेट पर फाइल को साझा करने के लिए मशीन द्वारा समझा जाने योग्य एक पता होता है जिसे IP Address कहते हैं। या Address मानक इंटरनेट प्रोटोकॉल पर आधारित होते हैं। IP_V4 वर्जन में ये ।ककतमे फुलस्टॉप के जरिए चार हिस्सों में विभाजित होते थे जैसे 217.11.138.148। जबकि नया IP_V6 डाटा नेटवर्किंग प्रोटोकॉल का उन्नयन है जो संख्या को हेक्साडेसिमल सिस्टम (Hexadecimal System) में बदलता है। नया मानक 8 हिस्सों में फुलस्टॉप के द्वारा विभाजित होंगे जैसे- 12 : क 8 : 1 : 1 : 1 : 1428 : 57क

हार्डवेयर की आवश्यकता

- विंडो विस्टा या उसके बाद के वर्जन (XP में कुछ परिवर्तन के साथ सुविधा)।
- मैक 10.2
- Linux

क्वांटम कंप्यूटर

परम्परागत कंप्यूटरों की सीमाओं के कारण होने वाली परेशानियों से छुटकारा पाने के लिए क्वांटम कंप्यूटर की आवश्यकता के बारे में सर्वप्रथम रिचर्ड फिनमैन नामक वैज्ञानिक ने 1981 में अपना तथ्य प्रस्तुत किया। 1985 में डेविड डाउच ने इसकी सैद्धांतिक संरचना का विकास किया। ऐसे कंप्यूटरों के सामने एक सेकेंड में 1000 खरब बार ऑन व ऑफ होने वाले परम्परागत कंप्यूटर भी सामान्य लगेंगे। इसी से इनकी स्मरण-क्षमता का पता चल जाता है। जहां तक परंपरागत कंप्यूटरों का प्रश्न है, तो ये

1 तथा 0 की सहायता से ही सारी गणनाएं निपटाते हैं, जबकि क्वांटम कंप्यूटरों में ऐसा नहीं होता है। इनमें क्वांटम यांत्रिकी (Quantum Mechanics) का उपयोग होता है। इनमें समस्त कंप्यूटेशनल मार्ग एक अकेले हार्डवेयर में लिया जाता है, जो कि इनकी सबसे बड़ी विशेषता होती है। इस मार्ग में क्वांटम यांत्रिकी के अनुसार सुपरपोजीशन (Super-position) होता है, जिसके तहत अनावश्यक अंश धनात्मक व ऋणात्मक होकर समाप्त हो जाते हैं तथा गणना के लिए सिर्फ आवश्यक अंक ही बचे रह जाते हैं। लेकिन इस प्रक्रिया में कठिनाई यह है कि कई बार अनावश्यक व्यवधानों से गणना सीधी दिशा में नहीं चल कर वापसी की ओर चलने लगती है। अत: क्वांटम कंप्यूटर में इसका ध्यान रखना अत्यावश्यक है, क्योंकि यदि इसमें अनावश्यक अंश प्रभावी हो गये, तो फिर आवश्यक अंक की गणना में इसकी उपयोगिता ही समाप्त हो जायेगी। लेकिन परंपरागत कंप्यूटरों में ऐसा नहीं होता है, क्योंकि इनमें 1 और 0 को ही प्रभावशाली बनाया जाता है।

गणना में अनावश्यक अंश न आने पायें, इसके लिए ऊर्जा स्तरों में स्पष्टता होनी चाहिए। अत: पहले इसके लिए सुस्पष्टता से रखे गये परमाणु या किसी अन्य कण का पूर्ण अध्ययन आवश्यक होता है। जहां तक क्वांटम कंप्यूटरों की कार्यविधि का प्रश्न है, तो इनके लिए पूर्ण पृथक्करण आवश्यक होता है। कोई भी परिभ्रमणशील अकेला फोटॉन (Photon), इलेक्ट्रॉन (Electron) या परमाणु (Atom) इन्हें गंभीर रूप से प्रभावित कर सकता है, जिससे क्वांटम पैटर्न ही नष्ट हो सकता है। अत: ऐसे कंप्यूटरों के लिए वैज्ञानिक फोटॉन, इलेक्ट्रॉन तथा परमाणु जैसे कणों के व्यवहार का अध्ययन कर रहे हैं। यदि इसे पूर्णत: व्यावहारिक बनाना संभव हो सका, तो यह कंप्यूटर की दुनिया में एक जबर्दस्त मील का पत्थर साबित हो सकेगा।

आईपी टेलीफोनी (इंटरनेट प्रोटोकॉल टेलीफोनी)

आईपी टेलीफोनी इंटरनेट प्रोटोकॉल प्रौद्योगिकियों का उपयोग करने के लिए समान्य शब्द है जिसमें आवाज फैक्स, SMS, वायस मैसेज भेजने के लिए इंटरनेट के पैकेट स्विच नेटवर्क का इस्तेमाल किया जाता है न कि पारंपरिक पब्लिक स्विचित टेलीफोन नेटवर्क (PSTN) का।

एक आई पी टेलीफोन प्रक्रिया को संपन्न करने के लिए आवश्यक है सिग्नलिंग तथा मीडिया चैनल की स्थापना, एनालॉग आवाज का डिजिटलीकरण, कूटबंधन, पैकेटाइजेशन तथा इंटरनेट प्रोटोकॉल के माध्यम से इन पैकेटों का पैकेट-स्विचित नेटवर्क पर संचरण। वहीं दूसरी तरफ प्राप्तकर्ता के पास इसी तरह के कदम (विपरीत रूप में) आई पी पैकेट को प्राप्त करना, पैकेट को डिकोड करना तथा मूल आवाज को प्राप्त करने के लिए डिजिटल से एनालॉग में रूपांतरण। आई पी फोन की सबसे बड़ी खासियत इसका न्यूनतम लागत मूल्य है।

सामाजिक नेटवर्किंग सेवा

एक सामाजिक नेटवर्किंग सेवा एक ऑनलाइन सेवा मंच या साइट है जो सामाजिक नेटवर्क या सामाजिक संबंध के निर्माण और दर्शाने का कार्य करती है जिन लोगों के समान हित या गतिविधियां होती हैं।

वेब आधारित सामाजिक नेटवर्किंग सेवा लोगों को राजनीतिक, आर्थिक और भौगोलिक सीमा के पार आपस में जुड़ने का मौका देते हैं। यह ई-मेल तथा त्वरित संदेशों के माध्यम से ऑनलाइन समुदाय बनाता है जहां एक गिफ्ट अर्थव्यवस्था तथा पारस्परिक परोपकारिता के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। कई वेबसाइट सोशल नेटवर्किंग का उपयोग परोपकार (Philanthropy) के लिए कर रहे हैं। इस तरह के प्रयोग छोटे-छोटे तथा बंटे हुए उद्योगों को जिनके पास संसाधनों की कमी है इच्छुक उपयोगकर्ता तक पहुंचने में मदद करती है। सामाजिक नेटवर्क व्यक्तियों को डिजिटल संवाद करने का नया तरीका प्रदान कर रही है। प्रमुख सामाजिक नेटवर्किंग वेबसाइट हैं; ऑरकुट, फेसबुक, माईस्पेस, गूगल+, लिंक्ड एलएन।

इन वेबसाइटों के प्रयोग से वर्ल्ड वाइड वेब दुबारा परिभाषित हुआ है। यह वेब तकनीक के जरिए उपयोग की जाने वाली सुविधाओं का एक बड़ा हिस्सा बन गया है।

फैक्स: फैक्स (FAX)] एक ऐसी अत्याधुनिक मशीन है, जिसकी सहायता से ग्राफ चार्ट, हस्तलिखित अथवा मुद्रित दस्तावेजों को टेलीफोन नेटवर्क द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ऐसे प्रेषित किया जा सकता है, जैसे प्राप्त करने वाले सिरे पर संदेश की मूलप्रति की फोटो कॉपी मिल रही हो। संदेश भेजने की यह प्रणाली काफी त्वरित एवं सस्ती होती है। इसमें प्रेषक अपने दस्तावेज को फैक्स मशीन में डाल कर प्रेषित किये जाने वाले स्थान का कोड नम्बर डायल (Dial) करता है। फैक्स मशीन के 'प्रकाशीय

स्केनर' सदृश उपकरण द्वारा प्रेषित दस्तावेज का निरीक्षण होता है तथा तुलनात्मक अध्ययन करने वाले एक यंत्र 'कम्पेरेटर' की सहायता से उस दस्तावेज पर छपी श्याम-श्वेत (Black & White) जानकारी को विद्युत संकेतों में परिवर्तित कर देती है। इन विद्युत संकेतों को पुन: टेलीफोन लाइन द्वारा पूर्व निर्धारित स्थान पर भेज दिया जाता है, जिसे प्रिंटर पर छाप कर प्रेषित मूल दस्तावेज की प्रतिलिपि संबद्ध व्यक्ति या स्थान को उपलब्ध करा दी जाती है।

डाटाबेस सिस्टम **(Database System):** 'डाटाबेस' एक प्रकार की च्तवहतंउउपदह होती है, जिसके अंतर्गत किसी भी प्रकार के आंकड़े कम्प्यूटर में सुव्यवस्थित ढंग से संग्रहित किये जा सकते हैं। आवश्यकतानुसार, इन्हें विभिन्न रूपों में मुद्रित किया जा सकता है। ब्वउचनजमते में ये डाटा शाखावली (भ्पमतंबील) के रूप में संग्रहित रहते हैं। देश में बड़े पैमाने पर अच्छे कंजेंइमे तैयार करना आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इलेक्ट्रॉनिक मेल **(Electronic Mail):** ई-मेल के अंतर्गत एक कम्प्यूटर में कोई संदेश टाइप करके उसे उससे जुड़े किसी भी कम्पयूटर तक भेजा जा सकता है। इस सूचना प्रणाली की सबसे बड़ी विशेषता अधिकाधिक सूचनाओं को अल्प समय में ही सही पते पर भेजना है। भारत सरकार ने NET तथा RABMN जैसी ई-मेल सुविधाएं विकसित की हैं, जो सुदूर क्षेत्रों में भी सूचनाएं भेजती हैं। निजी क्षेत्र की Courier Services की तरह ही निजी ई-मेल नेटवर्क भी उपलब्ध हैं। फैक्स की तुलना में ई-मेल अधिक प्रचलित होती जा रही है, क्योंकि यह निजी कम्प्यूटर पर आधारित है तथा उद्योग व्यापार में इससे कम लोगों को लगाकर ही अधिक सूचनाएं भेजी जा सकती हैं।

विकीपीडिया

विकीपीडिया एक 'इंटरनेट इंसाइक्लोपीडिया' है, जिसे ज्ञान-विज्ञान का अब तक का सबसे बड़ा खजाना माना जा रहा है। वैसे तो इस विश्व-ज्ञानकोष का जन्म हुए महज पांच वर्ष ही हुए हैं लेकिन कम समय में ही यह विश्व का सबसे बड़ा और समग्र संदर्भ ग्रंथ बन चुका है। करीब 8 करोड़ लोग 72 सर्वरों के सहारे इस सेवा का लाभ उठा रहे हैं। पांच वर्ष पूर्व विकीपीडिया के जन्मदाता जिमी वेल्स ने इस नयी ज्ञानगंगा को इंटरनेट के जरिए प्रवाहित किया था। विकीपीडिया दूसरे विश्वकोशों की तुलना में इस मायने में अनुठा है जोकि दिन-प्रतिदिन अद्यतन होता रहता है।

इसकी सबसे प्रमुख विशेषता है, इसकी सहज नि:शुल्क उपलब्धता और पूरी तरह से लोकोन्मुखता जहां आप किसी भी आलेख में संशोधन, परिवर्तन के लिए पूरी तरह स्वतंत्र हैं, जबकि दूसरे विश्वकोशी के सृजन एवं संशोधन के अधिकार कुछ गिने चुने विशेषज्ञों तक ही सीमित होते हैं। विकीपीडिया का पहला लेख जनवरी, 2001 में अस्तित्व में आया था।

विकीपीडिया का 'विकी' शब्द एक ऐसे सॉफ्टवेयर से लिया गया है जो कंप्यूटर उपभोक्ता को पूरी स्वतंत्रता देता है और वेब पेज सामग्री में मनचाहा संशोधन कर सकता है। इस तरह जब भी कोई विकीपीडिया पर किसी लेख में कोरे बदलाव करता है तो संबंधित लेख का एक नया स्वरूप तैयार हो जाता है।

वॉयस मेल **(Voice Mail):** टेलीफोन संचार में वह प्रणाली जिससे टेलीफोन की आवाज को रिकॉर्ड किया जा सकता है, ताकि उसको पुन: सुना जा सके, वॉयस मेल कहलाती है। Modern Digital Electronic Telephone Exchanges, जो कम्प्यूटर द्वारा नियंत्रित होते हैं, को वॉयस मेल सिस्टम के साथ उचित प्रोग्राम द्वारा जोड़ा जा सकता है। इसमें टेलीफोन उपभोक्ताओं कोMain Telephone Exchange की ओर से एक ध्वनि डाक पेटी प्रदान की जाती है, जिसके लिए एक Code Word भी दिया जाता है। जिस किसी व्यक्ति से बात करनी होती है, वह अगर फोन पर उपलब्ध नहीं होता है, तो भी टेलीफोन का प्रेषी 'कॉलर' अपना संदेश कह सकता है। यह संदेश क्पहपजंस पहदंसे में बदल जाता है तथा अनुपस्थित उपभोक्ता के Main Telephone Exchange में दर्ज हो जाता है। इस संदेश को Telephone पर सुनिश्चित कोड डायल कर पुन: सुना जा सकता है।

वीडियो कांफ्रेंसिंग **(Video-Conferen-cing):** यह Television Broadcast से इस बात में भिन्न है कि इसमें वक्ता एवं श्रोता दोनों की आवाज एवं तस्वीरें एक-दूसरे तक पहुंचती रहती हैं। सही निर्णय लेने के लिए यदि वार्तालाप में सम्मिलित व्यक्तियों की प्रतिक्रिया, हाव-भाव तथा मुखाकृति देख-सुनकर जान लिया जाये, तो सुविधा होती है। आवाज के साथ-साथ आकृति का यह समन्वय सूचना को अधिक गहनता, विश्वसनीयता एवं उपयोगिता प्रदान करता है। वीडियो कांफ्रेंसिंग के लिए सुदृढ़ एवं निरंतर electronic devices, जैसे- उपग्रह, सूक्ष्म तरंग अथवा fibre optic device का प्रयोग करने की बाध्यता होती है।

फैक्स **(Fax):** अंग्रेजी के शब्द Fascimile का अर्थ प्रतिलिपि होता है। व्यावहारिक रूप में इलेक्ट्रॉनिक संचार द्वारा मूल प्रति की प्रतिलिपि दूर भेजने वाली मशीन फैक्स कहलाती है। फैक्स नेटवर्क को 'POTS' कहते हैं, जिसमें दस्तावेज को डालकर, जिस स्थान पर प्रतिलिपि भेजनी होती है, उसका Code No. फैक्स मशीन में लगे टेलीफोन जैसे बटनों द्वारा दबाया जाता है। फिर फैक्स मशीन उस दस्तावेज पर छपी जानकारी को मसमबजतपब`पहदंसे में परिवर्तित कर देती है। इस मसमबजतपब`पहदंसे को पुनः telephone line द्वारा लक्षित स्थान पर भेजा जाता है, जहां एक अन्य मशीन इन`पहदंसे को मूल रूप में ले आती है। इनसे मूल दस्तावेज की प्रतिलिपि छपकर प्राप्त हो जाती है।

Electronic Data Inter Change (EDI): EDI की शुरुआत अमेरिका में 1970 के दशक में हुई थी, जबकि भारत में इसे 1990 के दशक में ही लाया गया। इस सेवा का उपयोग आयात, निर्यात के कागजातों के शीघ्र निपटारा करने में किया जाता है। इसके माध्यम से कागज के दस्तावेजों को लाने-ले जाने की असुविधाओं, दूरियों एवं अनिश्चितताओं से उत्पन्न विलंबों को काफी हद तक दूर किया जा सका है।

इनमरसैट **(INMARSAT):** *International Maritime Satellite* 65 देशों की एक सामूहिक उपग्रह प्रणाली है, जिसका प्रधान कार्यालय लंदन में स्थित है। इसके हिंद महासागर एवं प्रशांत महासागर में एक-एक तथा अटलांटिक महासागर में दो उपग्रह हैं। उनका उपयोग समुद्री जहाजों एवं वायुयानों तथा जमीनी वाहनों को सूचना देने के लिए होता है। T.Vs. के 532 ट्रांसमीटर तथा रेडियो के सौ से भी अधिक ट्रांसमीटर उपग्रह के माध्यम से संचार नेटवर्क से जुड़े हुए हैं।

Fibre Glass System: प्रकाश संचरण की एक ऐसी प्रणाली बड़ी तेजी से विकसित हुई है, जिसके माध्यम से उच्च गति पर सूचनाओं को दूर तक भेजना संभव हो पाता है। इसमें सूचनाओं को एक विशेष electric signal में बदल दिया जाता है, जिसे 'एनकोडिंग' कहते हैं। फिर उनको प्रेषक Transmeter द्वारा light signals में बदल कर Fibre Glass में से गुजारते हुए दूसरी जगह तक पहुंचाया जाता है। Receiver द्वारा इन light signals को electric signals में बदल दिया जाता है, जिसे *decoding* कहते हैं।

साइबर क्राइम

पिछले दो दशकों से भी कम समय में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी से जुड़े क्षेत्रों में हुई प्रगति ने सरकारी, वैज्ञानिक, शैक्षणिक और व्यावसायिक अवसंरचनाओं में क्रांति ला दी है। इंटरनेट के इस्तेमाल ने अलग-थलग पड़े सिस्टम्स तथा अत्यधिक निकटवर्ती नेटवर्क के साथ आपस में जुड़ गया है। इससे पूरी दुनिया एक वैश्विक गांव बन गया है।

भारत में 'आईटी कानून-2000' लागू होने के बाद साइबर अपराधों को पहली बार व्यवस्थित ढंग से परिभाषित किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार 'कोई भी ऐसा गैर कानूनी कृत्य जिसमें कंप्यूटर एक औजार के रूप में इस्तेमाल किया गया हो या उसे लक्ष्य बनाया गया हो या वह लक्ष्य तथा औजार दोनों हो, साइबर अपराध कहलाता है।

अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञों द्वारा कंप्यूटर अपराध को भी अलग-अलग तरीके से परिभाषित किया गया है जिसमें प्रमुख है-कंप्यूटर नेटवर्क को हैक करके उसमें संगृहीत आंकड़ों को चुराना और फिर अपने सामाजिक-राजनैतिक तथा व्यावसायिक प्रतिद्वन्द्वियों के खिलाफ उनका इस्तेमाल करना। पीसी हैकिंग, साइबर-फ्रॉड, साइबर-टेररिज्म, साइबर- ब्लैकमेलिंग, साइबर हैकिंग इत्यादि कंप्यूटर अपराध के ही रूप हैं।

कंप्यूटर वायरस

कंप्यूटर तकनीक में वायरस (Computer Viruses) की प्रकृति ठीक जैविक वायरस की तरह होती है। यह एक खास तरह का प्रोग्राम होता है जिसे इस तरह विकसित किया जाता है ताकि वह कंप्यूटर के डाटा को नुकसान पहुंचा सके। यह जैविक वायरस की तरह स्वयं को अन्य कंप्यूटर के संपर्क में आने पर उन्हें संक्रमित कर लेता है जिससे मूल प्रोग्राम सुचारू रूप से कार्य नहीं करता है। वर्ष 1950 में 'जॉन वान न्यमेन' ने सर्वप्रथम कंप्यूटर वायरस की कल्पना की थी

वायरस के प्रकार

1. निवासी वायरस **(Resident Virus):** वायरस का यह एक स्थायी रूप है जो रैम (RAM) में रहता है। यह वहां से कंप्यूटर द्वारा की जाने वाली सभी कार्यों को नियंत्रित करता है। उदाहरण- Randex, CMJ, Meve

2. प्रत्यक्ष कार्यवाही वायरस **(Direct Action Viruses)**: इस वायरस का मुख्य कार्य इसके चलाने पर दोहराना है तथा कार्यवाही करना। जब उचित दशा आते हैं तो यह वायरस फाइल और फोल्डर को संक्रमित कर देते हैं। यह बैच फाइल हार्ड डिस्क के रूट डायरेक्टरी में स्थित होता है तथा कंप्यूटर के बूट करने पर यह कार्य करता है।

   उदाहरण- Vienna Virus

3. ओवरराइट वायरस **(Overwrite Viruses):** इस वायरस की प्रकृति होती है संक्रमण वाले फाइल को पूरी तरह से मिटा देने की। इस प्रकार के वायरस को हटाने का एकमात्र उपाय फाइल को Delete करना ही है जिससे फाइल की मूल सामग्री नष्ट हो जाती है। उदाहरण- Way, Tri, Reboot

4. बूट सेक्टर वायरस **(Boot Sector Virus):** वायरस का यह प्रकार फ्लॉपी या हार्ड डिस्क के बूट सेक्टर को प्रभावित करता है। यह डिस्क का एक महत्वपूर्ण हिस्सा होता है जिसमें डिस्क के बारे में तथा प्रोग्राम की सारी जानकारियां स्थित होती है। उदाहरण- Plyboot.B, AntiExE

5. मैक्रो वायरस **(Macro Virus)**: मैक्रो वायरस वैसे फाइलों को निशाना बनाता है जिनका निर्माण मैक्रोज के प्रयोग करके बनाया गया है। उदाहरण- relax, Bablas

6. निर्देशिका वायरस **(Directory Virus)**: निर्देशिका वायरस फाइल के पाथ को बदल देता है। जब हम .EXE या .COM से संक्रमित प्रोग्राम फाइल को रन करते हैं तो यह स्वयं रन करने लगता हैं। उदाहरण- क्पत.2 टपतने

7. फैट वायरस **(FAT Virus):** फाइल आवंटन तालिका (File Allocation Table-FAT) डिस्क का एक भाग होता है जिसमें फाइलों का स्थान, खाली स्थान, बिना इस्तेमाल का स्थान आदि की जानकारी होती है। फैट वायरस इस सेक्शन पर हमला करते हैं तथा महत्वपूर्ण जानकारियों को नष्ट कर देते हैं।

ऑनलाइन सामग्री पर विवाद

केन्द्र सरकार ने सोशल नेटवर्किंग साइट्स पर गैर धार्मिक एवं असामाजिक सामग्री प्रदर्शित करने की घटना पर कड़ा फैसला लेते हुए इन पर मुकदमा चलाने को अपनी मंजूरी प्रदान की हैं। इस संबंध में केन्द्र सरकार ने गूगल, फेसबुक, माइक्रोसॉफ्ट समेत 21 वेबसाइट्स के खिलाफ निचली अदालत में रिपोर्ट दाखिल की। इस रिपोर्ट में सरकार की ओर से बताया गया है कि सोशल साइट्स पर विभिन्न धर्मों के बीच विद्वेष फैलाने वाली आपत्तिजनक सामग्री पाई गई है। ये वेबसाइट 'सूचना तकनीक प्रावधान 2011' का उल्लंघन कर रहे हैं। अत: केन्द्र सरकार ने सीआरपीसी की धारा 196 के तहत इन 21 वेबसाइटों के खिलाफ राष्ट्रीय सम्मान, अखंडता और राष्ट्रीय हित को नुकसान पहुंचाने के मुद्दे पर मुकदमा चलाने की मंजूरी दी है।

डिजिटल हस्ताक्षर

एक डिजिटल हस्ताक्षर, इलेक्ट्रॉनिक कागज को उसी प्रकार से प्रमाणित करता है जैसे हाथ से किए गए हस्ताक्षर प्रिंटेड कागज को। यह दस्तावेज भेजने वाले की पहचान तथा दस्तावेज का मूल रूप में होना सुनिश्चित करता है कि भेजने के दौरान इसमें कहीं भी किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ है। डिजिटल हस्ताक्षर का निर्गम सर्टिफिकेशन अर्थारिटी(CA) द्वारा किया जाता है तथा उस पर सर्टिफिकेशन अर्थारिटी के प्राइवेट की (Private Key) का हस्ताक्षर होता है। डिजिटल हस्ताक्षर में शामिल हैं-धारक(Owner), पब्लिक की, धारक का नाम, पब्लिक की की समाप्ति की तारीख, पब्लिक की के इश्यूकर्ता का नाम, डिजिटल हस्ताक्षर का क्रम संख्या तथा इश्यूकर्ता का डिजिटल हस्ताक्षर। डिजिटल हस्ताक्षर पब्लिक की इंफ्रास्टक्चर (PKI) टेक्नॉलाजी के द्वारा लागू होता है।

डिजिटल हस्ताक्षर सामान्यत: तीन प्रकार Class-1, Class-2 तथा Class-3 का होता है तथा तीनों Class में अलग-अलग स्तर के सुरक्षात्मक उपाय होते हैं। जैसे- MCA-21 के तहत काम करने वाली कंपनियों को Class-2 हस्ताक्षर करना होता है वहीं CA/CS/CW। को इलेक्ट्रॉनिक डाटा MCA-21 के तहत फाइल करने पर Class-2 का हस्ताक्षर करना अनिवार्य है। डिजिटल हस्ताक्षर को निर्गत करने के लिए भारत में 7 सर्टिफिकेशन अथॉरिटी कार्य कर रहे हैं।

आधार योजना

आधार 12 अंकों वाला एक अद्वितीय नंबर है जिसे भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण (यूआईडीएआई) देश के नागरिकों के लिए जारी करता है तथा इसकी सहायता से शासकीय एवं अर्ध-शासकीय एजेंसियां आवेदकों एवं लाभार्थियों की सही पहचान कर सकेगी। आधार के पंजीयन के लिए निवासियों की दस ऊंगलियों और आंख की बायोमैट्रिक स्कैनिंग की जाती है। इसके बाद उनकी तस्वीर खींची जाती है और प्रक्रिया पूरी होने पर एक नामांकन संख्या दी जाती है। नामांकन करने वाले एजेंसी द्वारा निवासियों को 20 से 30 दिन के भीतर आधार संख्या आवंटित की जाती है। यह आंकड़ा एक केन्द्रीकृत डेटाबेस में संग्रहीत की जाती है तथा उसे बुनियादी जनसांख्यिकी और बॉयोमीट्रिक जानकारियों से लिंक कर दी जाती है।

स्वचालित टेलर मशीन **(ATM)**

एटीम मशीन का आविष्कार जॉन शेफर्ड बैरन (John Shepherd-Barron) द्वारा 1967 में किया गया था तथा इसे सर्वप्रथम बार्कलेज बैंक के एनफील्ड, ब्रिटेन शाखा में स्थापित किया गया था। आधुनिक एटीम पर उपभोक्ता की पहचान प्लास्टिक स्मार्ट कार्ड पर मैग्नेटिक पट्टी या चिप वाली स्मार्ट कार्ड का प्रयोग करने से होती है। इसमें कार्ड का विशिष्ट अंक, कार्ड समाप्ति की तारीख, उपभोक्ता का एकाउंट नंबर होता है जिसकी पुष्टि उपभोक्ता अपना व्यक्तिगत पहचान संख्या (पिन) डालकर करता है। विभिन्न एटीम मशीन अलग-अलग तथा मिश्रण में ग्लोबल रियल-टाइम पेमेंट का उपयोग करते है जैसेVisa या Master Card। भारत सरकार की नेशनल पेमेंट कार्पोरेशन ने Visa या Master Card का विकल्प स्वदेशीय Rupay सिस्टम को 2011 में लांच किया है।

कृत्रिम बुद्धि **(Artificial Intelligence-AI)**

कृत्रिम बुद्धि का तात्पर्य है कंप्यूटर के माध्यम से मनुष्य की बुद्धि और उसकी विचार प्रक्रिया का मॉडल बनाना ताकि कंप्यूटर भी मनुष्य के समान सोच-विचार कर सके। इसका आधार वाक्य है 'मनुष्य की बुद्धि का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है- समस्याओं को हल करने की क्षमता'। व्यवहारिक दृष्टिकोण से वर्तमान में कृत्रिम बुद्धि का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है- विशेषज्ञ प्रणाली का विकास। इसके अंतर्गत ऐसी कंप्यूटर प्रणाली का विकास किया जाता है जो मानव-विशेषज्ञों का स्थान ले सकें। यह निम्नलिखित दो तथ्यों पर आधारित है-

1. विशेषज्ञों की जानकारी एवं सूचना को एकत्रित करना।
2. विशेषज्ञों की तार्किक प्रक्रिया एवं उनके निर्णय करने के तरीकों का अध्ययन करके उसके नियम तैयार करना।

कृत्रिम बुद्धि शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम 1956 में सजॉन मैक कार्थी ने किया था।

डिजिटल कनवर्जेस

डिजिटल कनवर्जेन्स (Digital Convergence) चार उद्योगों (सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार, उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक्स और मनोरंजन) को एक में अभिसरण (Conglomerate) को संदर्भित करता है।

यह उपभोक्ता और व्यापार उपयोगकर्ता के लिए नए अभिनव समाधान प्रदान करता है। डिजिटल प्रौद्योगिकी और डिजीटल सामग्री से बने संयुक्त उपकरण (जैसे स्मार्टफोन, लैपटॉप, इंटरनेट सक्षम मनोरंजन उपकरण तथा सेट टॉप बॉक्स), मिश्रित अनुप्रयोग (जैसे पीसी में गाना को डाउनलोड करना तथा मिश्रित नेटवर्क) (आईपी नेटवर्क) शामिल हैं।

इस स्थानांतरण प्रवृति के उदाहरण हैं माइक्रोसॉफ्ट के ग्इवग (आईटी से मनोरंजन के लिए), एप्पल प्चीवदम (आईटी से टेलिकॉम) और सोनी टंपव (उपभोक्त इलेक्ट्रॉनिक्स से आईटी)।

राष्ट्रीय सूचना प्रौद्योगिकी नीति-2011

राष्ट्रीय सूचना प्रौद्योगिकी नीति- 2011 की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं;

1. IT तथा ITES क्षेत्र से आय को 88 अरब USD से बढ़ाकर 2020 तक 300 अरब डॉलर करना तथा निर्यात लक्ष्य वर्तमान 59 अरब डॉलर से बढ़ाकर 2020 तक 200 अरब डॉलर करना।

2. क्लाउड आधारित सेवाओं में भारत की वैश्विक भागीदारी को बढ़ाना तथा मोबाइल आधारित VAS (Value Added Services) को भी वैश्विक स्तर तक बढ़ाना।
3. सूचना आधारित 10 मिलियन नए पेशेवरों को तैयार करना।
4. प्रत्येक घर में कम से कम एक व्यक्ति को म. साक्षर करना।
5. टियर-2 और टियर-3 शहरों में आईटी उद्योगों को बढ़ावा देना।
6. इस नीति का उद्देश्य लघु एवं मध्यम उपक्रमों तथा नए वेंचर्स को आईटी अपनाने के लिए वित्तीय लाभ उपलब्ध कराना।

क्लाउड कंप्यूटर

क्लाउड कंप्यूटर (Cloud Computing) इंटरनेट आधारित कंप्यूटर प्रक्रिया है जिसमें यूजर को अपने कंप्यूटर पर सभी सॉफ्टवेयरों और ऑपरेटिंग सिस्टम को लोड करने की आवश्यकता नहीं होती। ये सभी इंटरनेट के माध्यम से आवश्यकता के समय तुरंत उपलब्ध हो जाते हैं। क्लाउड कंप्यूटर से आंकड़ों ओर सूचनाओं को अप्रत्यक्ष रूप से इंटरनेट पर सेव कर सकते हैं। 'गूगल एक्स' क्लाउड कंप्यूटर का बढ़िया उदाहरण है जो बिजनेस एप्लीकेशन को ऑनलाइन उपलब्ध कराता है।

I Cloud- यह एप्पल की क्लाउड आधारित सेवा है जो यूजर को 5 GB तक क्लाउड में डाटा सेवा करने की मुफ्त सुविधा देता है जिसे यूजर किसी भी एप्पल उपकरण से इंटरनेट के माध्यम से प्राप्त कर सकता है।

इंटरनेट बैंकिंग

इंटरनेट बैंकिंग को ऑनलाइन या नेट बैंकिंग भी कहते हैं। इंटरनेट बैंकिंग संबंधी मिलने वाली एक सुविधा है जिसके माध्यम से कोई भी व्यक्ति घर या कार्यालय या कहीं से भी कंप्यूटर का इस्तेमाल कर बैंक सुविधाओं; जैसे घर बैठे ही खरीददारी, पैसे का स्थानांतरण के अलावा अन्य तमाम कार्यों और जानकारी के लिए बैंक से मिलने वाली सुविधा का लाभ उठा सकता है। इंटरनेट बैंकिंग सुविधाओं का लाभ उठाते समय बेहद सावधानियों की आवश्यकता होती है। आजकल 'फिशिंग' के द्वारा तकनीक के दुरूपयोग से इंटरनेट के जालसाज लोग खातों को हैक कर उन्हें हानि पहुंचा रहे हैं। इसके लिए बैंक के निर्देशों का पालन अनिवार्य रूप से करना चाहिए।

ई-लर्निंग

ई-लर्निंग सभी रूपों में सीखने और सिखाने की इलेक्ट्रॉनिक विधि है। सूचना तथा संचार प्रणालियां चाहे नेटवर्क लर्निंग हो या न हो सीखाने की प्रक्रिया को लागू करने के लिए एक विशिष्ट माध्यम के रूप में कार्य करते हैं। ई-लर्निंग अनुप्रयोगों और प्रक्रियाओं में शामिल है-वेब आधारित शिक्षा, कंप्यूटर आधारित शिक्षा, आभासी शिक्षा(Virtual Education) तथा डिजिटल सहयोग। इसके तहत शिक्षा सामग्री को इंटरनेट, इंटरानेट/एम्स्ट्रानेट, ऑडियो-वीडियो टेप, उपग्रह टीवी तथाCD-ROM द्वारा पहुंचाया जाता है।

राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र

राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र (एनआईसी-National Informatics Centre-NIC) भारत सरकार का एक प्रमुख वैज्ञानिक एवं तकनीकी संस्थान है जिसकी स्थापना 1976 में सरकारी क्षेत्र में बेहतर पद्धतियों, एकीकृत सेवाओं तथा विश्वव्यापी समाधानों को अपनाने वाली ई-सरकार/ ई-शासन संबंधी समाधानों को प्रदान करने के लिए स्थापित किया गया था। वर्ष 1976 में तथा उसके बाद संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) की 4.1 मिलियन यू.एस.डॉलर की सहायता से यह (एनआईसी) योजना कार्यरत है। रा. सू.वि. केन्द्र सूचना-प्रौद्योगिकी परियोजनाओं को केन्द्र तथा राज्य सरकारों के निकट सहयोग से निम्न क्षेत्रों में लागू कर रही है:

क) केन्द्र प्रायोजित योजना तथा केन्द्रीय क्षेत्र की योजना।

ख) राज्य प्रायोजित तथा राज्य सरकार की योजनाओं।

ग) जिला-प्रशासन द्वारा प्रायोजित योजना।

राष्ट्रीय सूचना-विज्ञान यह सुनिश्चित करने का प्रयास करता है कि उसके सभी प्रयोक्ताओं को सूचना प्रौद्योगिकी के सभी क्षेत्रों में नवीनतम प्रौद्योगिकी उपलब्ध हो। यह सरकार के समग्र समाधान प्रदायकों में से एक है तथा बहुत से सूचना प्रौद्योगिकी समर्थित अनुप्रयोगों में सक्रिय रूप से शामिल है।

रोबोटिक्स

इलेक्ट्रॉनक्सि, माइक्रोइलेक्ट्रॉनिक्स और विभिन्न यांत्रिकी उपकरणों की मदद से कठिन और बार-बार किए जाने वाले कार्यों को बिना मानव की सहायता से किए जाने को रोबोटिक्स कहते हैं। तकनीकी भाषा में यांत्रिक मानव को रोबोट कहते हैं। कंप्यूटर को रोबोट में परिवर्तित करने के लिए निम्न तीन गुण होने चाहिए-

1. वातावरण से सूचना प्राप्त करने वाले सेंसर
2. प्राप्त हुए सूचनाओं को नवीन रूप में परिवर्तित करने वाले माइक्रोप्रोसेसर
3. एक एक्टुएटर्स जो वातावरण में परिवर्तन के लिए आवश्यक ऊर्जा को नियंत्रित करे।

सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम भारत इलेक्ट्रॉनिक लिमिटेड भारत की स्वदेशी रोबोट उत्पादन इकाई है।

अर्धचालक

अर्धचालक (Semiconductors) विद्युत चालकता युक्त एक सामग्री है जो परिमाण में चालक एवं विसंवाहक (Insulator) के मध्य पाया जाता है। इसका तात्पर्य है कि इसकी चालकता 10^3 से 10^8 सीमेंस प्रति सेंटीमीटर होती है। अध ्चालक आधुनिक उपकरणों जैसे- ट्रांजिस्टर, सोलर सेल, अनेक प्रकार के डायोड जिसमें एलईडी भी शामिल है, डिजिटल और एनालॉग एकीकृत परिपथों (Integrated Circuit) के निर्माण का आधार है। इसी तरह अर्धचालक (Semiconductor) सौर फोटोवोल्टिक पैनलों में प्रयुक्त होकर प्रकाश ऊर्जा को सीधे विद्युत ऊर्जा में परिवर्तित कर लेते हैं।

सामान्यत: अर्धचालक क्रिस्टलीय ठोस होते हैं लेकिन एमॉरफश और लिक्विड अर्धचालक भी पाए जाते हैं। व्यावसायिक रूप से उपयोग होने वाले अर्धचालकों को बनाने के लिए सिलिकॉन का प्रयोग किया जाता है।

फोटोवोल्टिक (Photovoltaics-PV) उपकरण

फोटोवोल्टिक एक विधि है जो सौर विकिरण को सीधे प्रत्यक्ष विद्युत शक्ति में अर्धचालकों की मदद से परिवर्तित कर देता है। फोटोवोल्टिक विद्युत उत्पादन के लिए सोलर पैनल की आवश्यकता होती है जिसमें अनेक सौर कोशिकाएं युक्त होती है।

नवीकरणीय ऊर्जा की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए सोलर सेल और फोटोवोल्टिक एरे (।ततंले) की मांग बढ़ती जा रही है। वर्ष 2011 के अंत तक 67GW सौर फोटोवोल्टिक का उत्पादन हुआ था जो कुल विश्व ऊर्जा की मांग का 0.5% है। फोटोवोल्टिक प्रभाव को सर्वप्रथम एलेक्जेंडर- एडमंड-बेकवेरल (Alexandre-Edmond Becqueral) ने 1839 में दर्शाया था।

एलईडी और ओएलईडी **(LED and OLED)**

प्रकाश उत्सर्जक डायोड (एलईडी) एक अर्धचालक (Semiconductor) प्रकाश का स्रोत है। एलईडी का उपयोग मुख्यत: संकेतक लाइटों के रूप में किया जाता है जबकि इसका उपयोग अन्य प्रकार के लाइटों के रूप में बढ़ रहा है। एलईडी की शुरूआत 1962 में एक व्यवहारिक इलेक्ट्रानिक घटक के रूप में शुरू की गई थी जो कम तीव्रता का लाल प्रकाश उत्सर्जित कर सकता था। जबकि आधुनिक संस्करणों में दृश्य, पराबैंगनी तथा अवरक्त तरंगदैर्ध्य की उच्च क्षमता से युक्त प्रकाश उत्सर्जित कर सकते हैं। जब एक एलईडी को स्वीच ऑन किया जाता है तो इसके इलेक्ट्रान, इलेक्ट्रान छिद्र के सामने फिर से जुड़ने लगते हैं तथा फोटॉन के रूप में ऊर्जा को मुक्त करते हैं। इस प्रभाव को इलेक्ट्रो इमल्शन कहा जाता है तथा प्रकाश का रंग अर्धचालक के अंदर ऊर्जा-अंतराल के द्वारा निर्धारित होता है।

ओएलईडी

जैविक प्रकाश उत्सर्जक डायोड (Organic Light-Emitting diode) एक प्रकाश उत्सर्जक डायोड है जिसमें जैविक यौगिकों की एक परत लगी होती है जिसमें विद्युत के प्रवाहित होने पर प्रकाश उत्पन्न होता है। यह जैविक अर्धचालकों पदार्थ दो इलेक्ट्रोड के बीच स्थित होते हैं जिसमें कम से कम एक पारदर्शी होता है।

। ओएलईडी परिवार के दो घटक हैं; प्रथम वे जो छोटे अणुओं पर आधारित होते हैं तथा दूसरा जो पॉलिमर को रखते हैं।

प्लाज्मा

प्लाज्मा डिस्प्ले पैनल एक प्रकार का फ्लैट पैनल डिस्प्ले है जो बड़ी टीवी 30 इंच (76 सेमी.) या उससे बड़े में आमतौर पर प्रयोग होता है। इनकों विद्युत चार्ज आयनित गैसों के छोटे कोशिकाओं को उपयोग में लाने के कारण इन्हें प्लाज्मा कहते हैं। इसका मुख्य घटक सामान्यत: फ्लोरोसेंट लैप के नाम से जाना जाता है।

प्लाज्मा डिसप्ले के फायदे और नुकसान

फायदे: 1. बेहतर पिक्चर

2. एलसीडी की तुलना में ज्यादा बड़े एंगल से देखने की सुविधा तथा उच्च कोणों पर पिक्चर गुणवत्ता में गिरावट नहीं।

नुकसान: एलसीडीटीवी की तुलना में अत्यधिक विद्युत की खपत, अत्यधिक ऊंचाई पर गैसों के स्क्रीन के अंदर तथा बाहर के दबाव में अंतर के कारण बेहतर ढंग से काम नहीं करना।

लिक्विड क्रिस्टल डिस्प्ले (एलसीडी)

एलसीडी एक फ्लैट पैनल डिस्प्ले, इलेक्ट्रॉनिक विजुअल डिस्प्ले तथा वीडियो डिस्प्ले है जो लिक्विड क्रिस्टल के प्रकाश मॉडुलेटिंग (Modulating) के गुणों का उपयोग करता है। लिक्विड क्रिस्टल स्वयं सीधे प्रकाश उत्सर्जित नहीं करता है।

एलसीडी का व्यापक रूप से उपयेाग कंप्यूटर मॉनीटर बनाने, टेलीविजन उपकरणों के निर्माण, घड़ियों तथा वीडियो गेम के स्क्रीन निर्माण में उपयोग होता है। एलसीडी ने कैथोड के ट्यूब (ब्ज) डिस्प्ले को उपयोग में पूरी तरह से हटाने में कामयाब रहा है।

कॉम्पैक्ट फ्लोरोसेंट लैंप (सीएफएल)

सीएफएल एक फ्लोरोसेंट लैंप है जो पारंपरिक विद्युत बल्ब की जगह प्रकाश उत्पन्न करने के लिए प्रयोग किया जाता है। लैंप में एक ट्यूब होता है जो या तो सीधा या मुड़ा हुआ हेाता है जिसके आधार में कॉम्पैक्ट इलेक्ट्रॉनिक ब्लास्ट होते हैं।

सभी फ्लोरोसेंट लैंपों की तरह सीएफएल में पारा (Mercury) होता है। ये विद्युत के प्रयेाग से पारा वाष्प को तैयार करते हैं जो छोटी-तरंगों का पराबैंगनी प्रकाश उत्पन्न करते हैं जिससे दृश्य प्रकाश उत्पन्न होता है। पारंपरिक बल्ब टंगस्टन फिलामेंट से बने होते हैं, और ये 100 वाट विद्युत को केवल 2% प्रकाश में परिवर्तित करते हैं वहीं फ्लोरोसेंट लैंप 22 प्रतिशत प्रकाश में परिवर्तित होते हैं। इनकी आयु भी पारंपरिक बल्ब की तुलना में 10 से 20 गुणा अधिक होते है।

हालांकि फ्लोरोसेंट लैंप से अल्प मात्रा में पराबैंगनी किरणों के उत्सर्जन से स्वास्थ्य को खतरा उत्पन्न होता है। जो व्यक्ति पराबैंगनी किरणों से संवेदनशील होते हैं उन्हें गंभीर बीमारी होने का खतरा उत्पन्न हो जाता है।

कैथोड रे ट्यूब (सी.आर.टी.)

कैथोड रे ट्यूब एक वैक्यूम ट्यूब है जिसमें एक इलेक्ट्रॉन गन (इलेक्ट्रॉनों का एक स्रोत) तथा एक छवियों को देखने के लिए फ्लोरोसेंट स्क्रीन होता है। इसमें इलेक्ट्रॉन बीम को कम या ज्यादा करके फ्लोरोसेंट स्क्रीन पर दृश्यों को लाया जाता है। दृश्य विद्युत वेबफॉर्म, पिक्चर रूप में प्रदर्शित होते हैं। सीआरटी का इस्तेमाल मेमोरी उपकरणों के रूप में भी होता है। सीआरटी को उपभोक्ता वस्तुओं में इस्तेमाल होने पर इसमें मोटे ग्लास का उपयोग होता है जो उत्पन्न होने वाले अधिकतर एक्स-रे को रोक लेता है।

उच्च स्पष्टता टेलीविजन (एच.डी.टी.वी.)

यह एक प्रकार का वीडियो है जिसका रिजॉल्यूशन परंपरागत टेलीविजन की तुलना में काफी अधिक होता है। एच.डी.टी.वी. में प्रति फ्रेम एक या दो मिलियन पिक्सल होता है जो कि परंपरागत टेलीविजन से 5 गुणा अधिक है। (1280 ञ 720 ञ 921ए600ए 720च के लिए तथा 1920 × 1080 = 2.073,600,1080p के लिए)। प्रारंभ में एच.डी.टी.वी. प्रसारण के लिए एनॉलाग सिग्नल का प्रयोग करता था जबकि आजकल वीडियो संपीड़न तकनीक का उपयोग करते हुए डिजिटल प्रसारण कर रहा है।

ट्रिपल प्ले

दूरसंचार के क्षेत्र में ट्रिपल प्ले एक मार्केटिंग शब्द है जिसमें एक ही ब्राडबैंड कनेक्शन में उच्च गति इंटरनेट, टेलीविजन तथा फोन की सुविधा को उपलब्ध कराने से है। ट्रिपल प्ले संयुक्त व्यापार मॉडल (Combined Business model) पर ध्यान केन्द्रित करता है न कि तकनीकि मुद्दों को हल करने या समान मानक सुनिश्चित करने पर। पहली बार ट्रिपल प्ले का उपयोग इतालवी (Itatian) वेब ऑपरेटर, फास्ट वेब (Fastweb) द्वारा 2001 में किया गया था।

लेसर

लाइट एम्प्लिफिकेशन बाई स्टीमुलेटेड एमिशन ऑफ रेडिएशन (Light Amplibication by Stimulated Emission of Radiation) को संक्षिप्त रूप में लेसर(LASER) कहते हैं। प्रकाश तरंगों पर आधारित 'लेसर' एक ऐसी युक्ति है जिसमें विकिरण के प्रेरित उत्सर्जन द्वारा एकवर्णी प्रकाश (Monochromatic Light) प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार लेसर तरंगों की आवृति समान होती है तथा इसके विभिन्न तरंगों की कला (चैंम)भी स्थिर होती है। इसके मूलभूत सिद्धांतों की चर्चा सर्वप्रथम 1917 में आइंस्टीन द्वारा की गई थी परंतु वास्तविक खोज 1960 में अमेरिका की हेजेज अनुसंधान प्रयोगशाला में थियोडोर मेमैन द्वारा की गई।

लेसर की उपयोगिता

दूरी मापने में: लेसर की सहायता से लम्बाई तथा समय के मात्रकों का अत्यंत शुद्ध एवं स्थायी निर्धारण किया जाता है। इसके द्वारा लम्बी दूरियां अत्यंत शुद्धता के साथ नापी जा सकती हैं। इसके अलावा, इसकी सहायता से अणु एवं परमाणुओं की आन्तरिक संरचनाओं को भी आसानी से समझा जा सकता है।

होलोग्राफी में: साधारण फोटोग्राफी से किसी वस्तु का केवल द्विविमीय चित्र (Two- dimensional photography) प्राप्त होता है। इसके लिए सामान्य प्रकाश का उपयोग किया जाता है। परन्तु, लेसर प्रकाश के उपयोग से एक विशेष प्रकार की त्रिविमीय फोटोग्राफी (Three- dimensional photography) का प्रादुर्भाव हो सका है, जिसे होलोग्राफी (Holography) कहा जाता है। इसका उपयोग सिनेमा, दूरदर्शन तथा उच्च कोटि के माइक्रोस्कोप में किया जाता है।

संगीत के क्षेत्र में: वर्तमान में लेसर का उपयोग डिस्को संगीत रिकॉर्डिंग में भी हो रहा है।

सूचना-सम्प्रेषण में: लेसर में सूचना-सम्प्रेषण की असीमित क्षमता होती है। इस क्षेत्र में यह प्रकाश रेडियो तरंगों एवं सूक्ष्म तरंगों की अपेक्षा काफी अधिक उपयोगी साधन सिद्ध हो रहा है।

औद्योगिक क्षेत्रों में: औद्योगिक क्षेत्र में डाटा नेटवर्क उपलब्ध कराने में लेसर की भूमिका सराहनीय है। लेसर एक संकेन्द्रित एवं आसानी से नियंत्रित करने लायक ऊर्जा स्रोत है। इसका उपयोग वेल्डिंग करने में किया जाता है। इस दौरान वेल्डिंग किये गये क्षेत्र के बगल में कोई क्षति नहीं होती है। इसके अलावा, काफी कठोर वस्तुओं को काटने, कपड़ा काटने एवं इंजीनियरों द्वारा मकानों एवं पुलों का सर्वेक्षण करने, टूटे बर्तनों का पता लगाने आदि में भी लेसर का उपयोग किया जा रहा है।

नाभिकीय संलयन में: लेसर के प्लाज्मा हीटिंग (Plasma Heating) का उपयोग रिएक्टरों में प्रयुक्त ईंधनों के कृत्रिम निर्माण में होता है। इस विधि में ऊर्जा उत्पन्न करने के लिए लेसर एक प्रमुख साधन है।

दूरी मापने में: लेसर बीम बिना किसी बिखराव (Divergence) के काफी दूर तक संचरित होते हैं। माप परिशुद्धता के कारण इनके द्वारा ऊंचाई की माप, मानचित्र निर्माण तथा सर्वेक्षण कार्य सरलतापूर्वक किये जाते हैं। सेना द्वारा दुश्मनों के ठिकानों का पता लगाने में भी यह उपयोगी है।

मौसम संबंधी जानकारी में: इसके लिए 'लिडार' (Lidar) नामक एक यंत्र प्रयुक्त होता है, जिसमें लेसर बीम का प्रयोग किया जाता है। इससे प्राप्त आंकड़ों के आधार पर हवा एवं बादलों की गति के बारे में भविष्यवाणी की जाती है।

'लेसर मेमोरी' (Laser Memory) नामक उपकरण द्वारा विमानचालक रास्तों का चयन उचित ढंग से कर पाते हैं। 'स्टार वार' (Star War) में भी लेसर का ही प्रयोग होता है तथा उपग्रह आदि को अंतरिक्ष में ही नष्ट करना संभव हो पाता है।

समुद्री अध्ययन में: समुद्र के अंदर की चीजों का अध्ययन करने के लिए लेसर युक्त कैमरों का प्रयोग किया जाता है। लेसर युक्त उपकरणों से भूकंप के बारे में भी भविष्यवाणी की जाती है।

सफाई कार्य में: स्मारकों, भवनों, पुरातात्विक अवशेषों आदि को साफ-सुथरा रखने तथा उनको नवीनता प्रदान करने के लिए हाल ही में लेसर तकनीक का विकास किया गया है।

संचार के लिए लेसर का उपयोग: टेलीफोन की तारों द्वारा सूचना संचारण में यह समस्या है कि एक समय में केवल एक ही सूचना संचारित होती है। लेसर टेक्नोलॉजी पर आधारित ऑप्टिकल फाइबर की केबलों की सहायता से करीब 2,000 टेलीफोन संदेशों को एक साथ संचारित किया जा सकता हैं इनका भार भी तांबे की तारों की अपेक्षा काफी कम होता है। 50 मीटर ऑप्टिकल फाइबर का भार करीब 25 किलोग्राम होता है जबकि इसी लंबाई के तांबे के तार वजन लगभग 5 टन होता है।

चिकित्सा के क्षेत्र में: चिकित्सा के क्षेत्र में लेसर का उपयोग मुख्यत: सर्जरी के लिए होता है। लेसर का प्रयोग सर्जरी में तीन प्रकार से हो सकता है, काटने के लिए, कोशिकाओं को जलाकर नष्ट करने के लिए तथा कोशिकाओं को जोड़ने के लिए। ऑपरेशन के समय स्कालपेल प्रयोग करने का नुकसान यह है कि इसमें रुधिर वाहिनियों के कट जाने के कारण खून बहने लगता है, परन्तु यदि ऑपरेशन के लिए लेसर का प्रयोग किया जाये तो रक्त नहीं बहता, क्योंकि लेसर किरणें रुधिर वाहिनियों को कटने पर तुरंत ही सील कर देती हैं। इस प्रकार कटा हुआ भाग हमेशा सूखा रहता है। कार्बन डाई ऑक्साइड लेसर का प्रयोग हानिकारक कैंसर कोशिकाओं को जला कर नष्ट करने के लिए किया जाता है।

लेसर का प्रयोग मेडिकल वेल्डिंग में भी होता है जिसे कोएग्युलेशन कहते हैं। इसमें ऑर्गन लेसर की नीली-हरी किरणों को घाव को स्थान पर डाला जाता है जो त्वचा की भूरी कोशिकाओं और लाल रुधिर कणिकाओं द्वारा अवशोषित कर ली जाती है और ये कोशिकाएं आपस में चिपक कर रक्त का थक्का बना लेती हैं जिससे रक्त बहना तुरंत बंद हो जाता है। लेसर का सबसे मुख्य उपयोग आंखों की सर्जरी में होता है। कुछ लोगों में आंखों के पीछे का रेटिना अपने स्थान से हट जाता है उसे फिर से चिपकाने के लिए लेसर का प्रयोग किया जाता है। लेसर रेडियल केरेटोटोमी प्रक्रिया द्वारा लेन्स के आकार को ठीक किया जाता है। हृदय की बाइपास सर्जरी, न्यूरासर्जरी आदि अतिसंवेदनशील शल्यचिकित्सा में भी लेसर अत्यंत उपयोगी हैं फाइबर ऑप्टिकल एन्डोस्कोपी भी लेसर पर आधारित है जिसमें बिना ऑपरेशन किये शरीर के आंतरिक अंगों की जांच-पड़ताल और इलाज किया जाता है। लेसर का उपयोग गॉल ब्लैडर तथा किडनी के पत्थर को तोड़ने में भी किया जाता है।

अंतरिक्ष विज्ञान में लेसर का प्रयोग: लेसर का अंतरिक्ष विज्ञान में सबसे महत्वपूर्ण उपयोग विभिन्न ग्रहों एवं उपग्रहों की दूरी मापने में किया जाता है। लेसर का प्रयोग पृथ्वी के सतह पर होने वाली गतिविधियों का सही-सही पता लगाने के लिए किया जाता है। विभिन्न महाद्वीपों का पृथ्वी की सतह पर घूमने का अध्ययन बहुत ही सूक्ष्मता से किया जा सकता है। पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले किसी उपग्रह के प्रयोग से लेसर किरण को पृथ्वी के किसी स्थान पर डाला जाता है और उसे पृथ्वी पर किसी दूसरे स्थान पर प्राप्त किया जाता है। इस प्रकार इन महाद्वीपों की सापेक्षित गति का अनुमान लगाया जाता है।

प्रतिरक्षा के क्षेत्र में: सामरिक दृष्टि से लेसर का प्रयोग काफी महत्वपूर्ण हो गया। युद्ध स्थल में टैंकों और तोपों की सही स्थिति की जानकारी के लिए एवं उनको लक्ष्य बनाने के लिए लेसर का प्रयोग होता है। मार्क्ड टारगेट सीकर नामक संयंत्र भी लेसर पर आधारित है। इसमें सैनिक अपने लक्ष्य को लेसर डेजिग्नेटर की सहायता से मार्क कर देता है फिर एक मिसाइल टारगेट की दिशा में छोड़ दी जाती है जिसमें टारगेट सीकर नामक संयंत्र लगा रहाता है। सीकर लक्ष्य से टकरा कर लौटने वाली लेसर किरणों के आधार पर जाकर सीधे लक्ष्य पर वार करता है।

लेसर का उपयोग अन्य क्षेत्रों में भी किया जा रहा है। एक ओर जहां लेसर किरणों का उपयोग दूरसंचार साधनों एवं उपभोक्ता इलेक्ट्रॉनिक में किया जा रहा है, वहीं दूसरी तरफ पर्यावरणीय प्रदूषण को नियत्रिंत करने में भी इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। आजकल प्रतिरक्षा के क्षेत्र में भी लेसर का उपयोग काफी अधिक हो रहा है। ऐसी आशा की जाती है कि निकट भविष्य में लेसर मानव जीवन का एक अभिन्न साथी बन जायेगा।

भारत में लेसर प्रौद्योगिकी

भारत में लेसर प्रौद्योगिकी की शुरुआत काफी पूर्व में ही हो गयी थी। सर्वप्रथम 1964 में भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र द्वारा गैलियम-आर्सेनिक (Ga -As) लेसर का विकास किया गया। बार्क (V^{a}kWEcs) एवं टी.आई.एफ.आर. द्वारा 20 किलोमीटर की दूरी में प्रकाशीय संचार लिंक स्थापित करने (1965-66) में इसका उपयोग किया गया था। इसके बाद से लेसर एवं इससे संबंधित अध्ययन लगातार जारी है। इन लेसर किरणों की गुणवत्ता भी काफी अधिक हैं। वर्तमान में भारत में लेसर के क्षेत्र में काफी प्रगति हो रही है। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की लेसर स्पेक्ट्रोस्कोपी प्रयोगशाला तथा ऐसे ही कई अन्य शोध संस्थानों में लेसर के क्षेत्र में अनुसंधान हो रहे हैं। देश के कुछ प्रमुख चिकित्सा संस्थानों में लेसर थिरेपी तथा लेसर सर्जरी आरंभ हो चुकी है। लेसर के उपयोग से कैंसर का उपचार भी किया जा रहा है। केन्द्रीय सरकार के संस्थान के रूप में स्थापित मध्य प्रदेश के इन्दौर शहर में CAT (Centre for Advanced Technology) संस्थान में लेसर किरणों के उत्पादन एवं इनके विभिन्न उपयोगों पर सतत अनुसंधान कार्य चल रहे हैं। बार्क ने 500 केईवी का डीसी एक्सेलेरेटर सफलतापूर्वक विकसित किया है जो वाशी, नवी मुंबई के ब्रिट (बीआरआईटी) कॉम्पलेक्स में लगा है। यह एक्सेलेरेटर सतह सुधार अध्ययनों तथा प्रयोगों में इस्तेमाल होता रहा है। मैसर्स रिलायंस इंडस्ट्रीज जैसे उद्योग इसे प्लास्टिक शीट्स और ग्रेन्यूल्स की क्रासलिंकिंग के लिए इस्तेमाल कर रहे हैं। मैसर्स हिन्दुस्तान लीवर्स लिमिटेड इस सुविधा का उपयोग करके अपने यहां उत्पादित गेहूं के आटे को विकिरण विहीन करने की योजना बना रही है। इस एक्सेलेरेटर की मदद से बार्क और चेन्नई के वैज्ञानिक आई.आई.टी मद्रास डाई इलेक्ट्रिक्स और इंसुलेटरों पर विकिरण से होने वाले नुकसान का अध्ययन कर रहे हैं।

लेसर की कार्य प्रणाली

लेसर के तीन मुख्य भाग होते हैं:

(i) उर्जा स्रोत: जो बिजली, साधारण प्रकाश या लेजर किरण में से कोई एक हो सकता है।

(ii) सक्रिय माध्यम: यह वह माध्यम है जिससे लेसर की उत्पत्ति होती है। यह ठोस हो सकता है जैसे-रूबी क्रिस्टल, द्रव हो सकता है जैसे-कुछ डाई, गैस हो सकता है जैसे - कार्बन डाई ऑक्साइड।

(iii) रिजोनेटर **(Resonator):** यह दो आंशिक रूप से परावर्तक दर्पणों से बना होता है जो इस नली के दोनों किनारों पर स्थित होते हैं, जिसमें सक्रिय माध्यम स्थित होता है। ये परावर्तक दर्पण सक्रिय माध्यम में उत्पन्न लेसर बीम की तीव्रता को बढ़ाने का कार्य करते हैं।

सक्रिय माध्यम में उपस्थित परमाणुओं को जब ऊर्जा स्रोत से ऊर्जा दी जाती है, तो वे एक सीमा तक उस ऊर्जा को अवशोषित कर लेते हैं परन्तु इस सीमा के पश्चात से अतिरिक्त ऊर्जा को प्रकाश के रूप में उत्सर्जित करते हैं। इस प्रकार ज्यों ही एक परमाणु प्रकाश का उत्सर्जन करता है वह अपने आस-पास के परमाणुओं को भी प्रकाश उत्सर्जन के प्रेरित करता है और इस प्रकार उत्सर्जन की एक श्रृंखला बन जाती है जो उत्तरोत्तर बड़ी होती जाती है। नली के किनारों पर लगे परावर्तक दर्पण इस प्रकार उत्पन्न प्रकाश को बार-बार भीतर की ओर परावर्तित करते रहते हैं और अंत में एक समय ऐसा आता है जब प्रकाश की इन सारी किरणों का तरंगदैर्घ्य एक समान हो जाता है। इस स्थिति को एम्लीफिकेशन कहते हैं। नली के एक सिरे पर एक छोटा छिद्र होता है, जिसमें से लेसर किरण बाहर निकल सकती है।

राष्ट्रीय लेसर कार्यक्रम (एन.एल.पी.) का मुख्य लक्ष्य महत्वपूर्ण लेसर विकास एवं उत्पादों पर ध्यान केंद्रित करना है, जिससे देश में सस्ते मूल्य पर स्वदेशी लेसर तथा लेसर-आधारित उपकरण सुगमता से उपलब्ध हो सकें और इनके आयात में कमी लाकर राजकोषीय घाटे को कम किया जा सके और लेसर प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की प्राप्ति की जा सके। चेन्नई के क्रिस्टल संवृद्धि केंद्र ने कुछ लेसर उत्पादन क्रिस्टल का उत्पादन के लिए चयन किया है। सी.एस.ओ. ने विभिन्न उपकरणों के लिए विविध प्रकार के होलोग्राम विकसित किए हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक समाज का कोई भी पहलू लेसर के प्रयोग से अछूता नहीं रह गया है। चाहे वह सिनेमा का पर्दा हो या युद्ध का मैदान, हॉस्पीटल हो या डांस क्लब हर जगह आज लेसर लाइटों का प्रयोग हो रहा है। लेसर हमारे आधुनिक जीवन शैली का एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है।

3.D

3.D अर्थात तीन आयामी जिसमें लंबाई, चौड़ाई तथा ऊंचाई हो। 3D फिल्म में इन्हीं चीजों के भ्रम का एहसास कराया जाता है। एक नियमित कैमरा से त्रिविम फोटोग्राफी के लिए छवियों को रिकार्ड दो दृष्टिकोणों से उत्पन्न किया जाता है तथा विशेष प्रक्षेपण हार्डवेयर आईवेयर भ्रम की गहराई उत्पन्न करते हैं। निम्नलिखित कुछ तकनीक हैं जिनकी सहायता से 3D फिल्मों को विकसित किया जाता है:

Anaglyph- त्रिविम फिल्मों के निर्माण के लिए यह शुरूआती तकनीक है। इस तकनीक से पहली फिल्म 1915 में प्रदर्शित हुई थी।

Polarization System - ध्रुवीकरण सिस्टम से एक त्रिविम गति फिल्म को पेश करने के लिए दो छवियों को पेश कर रहे अलग-अलग माध्यमों को एक ही स्क्रीन पर आरोपित कर दिया जाता है। इसमें दर्शक जो चश्मा पहनता है उनमें ध्रुवीकरण की एक जोड़ी विभिन्न कोणों पर स्थित होती है। (दक्षिणावर्त/परिपत्र ध्रुवीकरण 90 डिग्री के कोण पर तथा 45 और 135 डिग्री में वामवर्त रैखिक ध्रुवीकरण के साथ)

Eclipse विधि- इस विधि में एक एलसीडी शटर चश्मा प्रयोग किया जाता है।

हस्तक्षेप फिल्टर प्रौद्योगिकी **(Interberence Filter Technology) Dolby 3D** दाएं और बाएं आंखों के लिए अलग-अलग तरंगधैर्य की लाल, हरे और नीले रंग के प्राकश का उपयोग करता है। चश्मा जो प्रत्येक तरंगधैर्य को फिल्टर करते हैं 3क छवि उत्पन्न करता है।

एनीमेशन

एनीमेशन 2D या 3D कलाकृति या मॉडल का तेजी से प्रदर्शन होने वाला क्रम है जिससे गति का भ्रम उत्पन्न होता है। 2D एनीमेशन को बनाने के लिए कम्प्यूटर में 2D बिटमैप ग्राफिक्स का प्रयोग किया जाता है या 2D वेक्टर ग्राफिक्स के द्वारा संपादित किया जा सकता है।

अतिचालक

ऐसे पदार्थ जिनमें विशेष परिस्थिति में विद्युत प्रतिरोध शून्य हो जाता है तथा वे विद्युत के पूर्ण चालक बन जाते है अर्थात् उनमें यदि विद्युत धारा प्रवाहित की जाए तो बिना किसी ऊर्जा क्षय के निरंतर प्रवाहित होती रहेगी, वे अतिचालक पदार्थ (Super Conductors) कहलाते हैं, तथा उनका यह विशेष गुण अतिचालकता कहलाता है। अतिचालकता की खोज 1911 में नीदरलैंड के एक भौतिकशास्त्री हाइके कैमरलिंघ ओंस ने की थी।

अतिचालकों के प्रकार

अतिचालक दो प्रकार के होते हैं- टाईप-1 और टाईप-2। सीसा, पारा और टिन के अत्यंत शुद्ध नमूने टाईप-1 प्रकार के अतिचालक हैं और उच्च तापमान वाले सेरेमिक अतिचालक जैसे- $Ba_2Cu_3O_7$, YBCO vkSj $Bi_2CaSr_2Cu_2O_7$ टाईप-2 प्रकार के अतिचालक है।

उपयोगिता: चालकों में प्रतिरोधक गुण के कारण ऊर्जा का काफी बड़ा भाग अनुप्रयुक्त रह जाता है। अतिचालक पदार्थ के उपयोग से ऊर्जा का अधिकाधिक प्रयोग किया जा सकता है। यह अतिचालकता की प्रथम व सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। अतिचालकों का विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किया जा सकता है, जिनका विवरण निम्नलिखित है:

i) दूर-दूर तक विद्युत का वितरण (Transmission) बिना ऊर्जा क्षय के संभव हो सकेगा।

ii) परम्परागत चालकों में विद्युत प्रवाह से ताप ऊर्जा का निर्माण होता है। परन्तु, अतिचालकों के उपयोग से इस गर्मी से इनसुलेटरों के गलने की संभावना समाप्त हो जायेगी, क्योंकि प्रतिरोध रहित अतिचालकों से विद्युत धारा के प्रवाह के समय ताप ऊर्जा का निर्माण होगा।

iii) छोटे विद्युत चुम्बकीय अतिचालक की सहायता से शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्रों का निर्माण हो सकता है।

iv) इन्टीग्रेटेड सर्किटों (ICs) के लिए तापमान घातक होता है, लेकिन अतिचालकों में धारा के प्रवाह के समय ताप उत्पन्न नहीं हो सकेगा। अत: इन्टीग्रेटेड सर्किटों के निर्माण में अतिचालक का उपयोग क्रांतिकारी सिद्ध हो सकता है।

v) स्क्विड (अतिचालकीय क्वांटम इन्टरफेरेन्स डिवाइसेज) का उपयोग हृदय रोग के उपचार में सहायक हो सकता है। मैग्नेटो-कार्डियोग्राम की सहायता से हृदय में उत्पन्न विद्युत धारा का अध्ययन किया जा सकता है।

vi) अतिचालक विद्युत चुम्बकीय वलयों का उपयोग कर किसी भी वस्तु को पृथ्वी पर अथवा पृथ्वी से आकाश में प्रेषित किया जा सकता है।

vii) न्यूक्लियर मैग्नेटिक रेजोनेन्स (एन.एम.आरण) अथवा मैग्नेटिक रेजोनेन्स इमेजिंग (एम.आर.आई) की मदद से शरीर के किसी भी आंतरिक अंग का विस्तृत चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है, जो अनेक रोगों के इलाज में काफी सहायक सिद्ध होगा।

viii) मैग्नेटिकली लेमिनेटेड ट्रेन्स (एम.एल.टी.) परिवहन क्षेत्र में क्रांति ला सकता है। इस तरह की गाड़ियों में पहिये नहीं होते हैं। ये रेलगाड़ियां अन्य वाहनों की अपेक्षा काफी तेज चलती हैं, क्योंकि ये रेलगाड़ियां पटरियों से 4 ईंच ऊपर हवा में टंगी हुई चलती हैं, जिससे घर्षण उत्पन्न नहीं होता है और गति सीमा में बाधा भी नहीं आती है। इस प्रकार की रेलगाड़ियां जापान एवं जर्मनी में चलायी जा रही हैं। जापान में इसकी गति-सीमा 350 किलोमीटर से भी अधिक है। इसके अलावा, अतिचालकता का उपयोग उच्च शक्ति वाले छोटे विद्युत कारों एवं कम्प्यूटरों में भी किया जा रहा है।

राष्टीय इलेक्टॉनिक नीति – 2011

केन्द्रीय संचार एवं सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय ने 3 अक्टूबर, 2011 को राष्ट्रीय इलेक्ट्रॉनिक नीति का प्रारूप जारी किया, जिसकी निम्नलिखित विशेषताएं हैं;

1. वर्ष 2020 तक 100 अरब अमेरिकी डॉलर निवेश के साथ 400 अरब अमेरिकी डॉलर के व्यापार का लक्ष्य। इसमें 55 अरब अमेरिकी डॉलर का चिप डिजाइन कारोबार तथा 80 अरब डॉलर का सॉफ्टवेयर उद्योग से नियति भी शामिल है।
2. वर्ष 2020 तक 2.8 करोड़ रोजगारों का सृजन का लक्ष्य
3. देश की आवश्यकताओं की पूर्ति व अंतर्राष्ट्रीय बाजार हेतु नैनो इलेक्ट्रॉनिक्स सहित वैश्विक प्रतिस्पर्धा इलेक्ट्रानिक प्रणाली डिजाइन एवं विनिर्माण का सृजन।
4. भारत को इलेक्ट्रानिक विनिर्माण हब बनाने हेतु प्रारूप नीति में देश में 200 इलेक्ट्रानिक विनिर्माण क्लस्टर की स्थापना तथा ग्रीन फील्ड इलेक्ट्रानिक क्लस्टर की स्थापना के लिए आर्थिक सहायता का प्रस्ताव है।
5. परास्नातक शिक्षा को बढ़ावा देना तथा वर्ष 2020 तक प्रतिवर्ष 2500 पीएचडी डिग्री प्रदान करना।

सुपर कम्प्यूटर के निर्माण में अतिचालक पदार्थों के उपयोग से उसमें उत्पन्न होने वाले तापीय ऊर्जा की मात्रा बहुत कम की जा सकती है। इसके उपयोग से सुपर कम्प्यूटरों का आकार भी छोटा किया जा सकता है तथा उसकी क्षमता बढ़ायी जा सकती है। इस प्रकार ऐसे सुपर कम्प्यूटर विकसित किए जा रहे हैं जिनको अंतरिक्ष वाहनों में रखकर बाह्य अंतरिक्ष के खोज के कार्यों में उपयोग में लाया जा सकता है। बी.एच.ई.एल. द्वारा एक अतिचालकीय उच्च श्रेणी की चुम्बकीय विभाजक प्रणाली का विकास किया गया है इसके उपयोग से मूल खनिज अयस्कों से सूक्ष्म आकार के दुर्बल चुम्बकीय अशुद्धियों को दूर करने में महत्वपूर्ण सफलता मिली है।

भारत में संरक्षणात्मक अतिचालकीय चुम्बकीय विभाजकों का उपयोग कुद्रेमुख परियोजना में जिरकोनियम प्रसंसकरण में किया जाता है। अतिचालकों का उपयोग करके विद्युत सर्किटों को अत्यंत कठोरता से बंद किया जा सकता है। भारत हैवी इंजीनियरिंग लिमिटेड (BHEL) ने अन्य संस्थानों की मदद से अतिचालक पदार्थों का उपयोग करके एक छोटे आकार तथा कम क्षमता का विद्युत जनरेटर बनाया है। इसके व्यावसायीकरण के लिए संभावनाओं का पता लगाया जा रहा है।

भारत में अतिचालकता: अतिचालकता के क्षेत्र में विकास के मद्देनजर 1987 में एक प्रोग्राम मैनेजमेंट बोर्ड (पी.एम.बी.) की स्थापना की गयी। 1991 में इसे परिवर्तित कर राष्ट्रीय अतिचालकता विज्ञान व तकनीकी बोर्ड (एन.एस.एस.टी.बी.) का रूप प्रदान किया गया। अनुसंधान के प्रथम चरण (1988-91) में राष्ट्रीय अतिचालकता कार्यक्रम के अंतर्गत 65 प्रोजेक्ट चलाये गये,

जिनकी प्रयोगशालायें डी.ए.ई., सी.एस.आई.आर. एवं आई.आई.टी. तथा अन्य प्रमुख विश्वविद्यालयों में स्थित थीं। इसके दूसरे चरण (1991-95) के अनुसंधानों के अंतर्गत 6 नये प्रोजेक्ट प्रारंभ किये गये। इसके अंतर्गत वायट्रियम, बिस्मथ एवं थैलियम जैसे अतिचालकों के विशेष एवं उच्चस्तरीय प्रयोग किये गये। बंगलौर स्थित भारतीय विज्ञान संस्थान (आई.एस.आई.) के ठोस अवस्था संरचनात्मक रासायनिक इकाई में उच्च तापमान वाले अतिचालकों पर शोधकार्य किये जा रहे हैं। यहां अतिचालकों के पतले फिल्मों के निर्माण पर कार्य जारी है। हाल ही में भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा एक त्रिवीमीय कॉपर ऑक्साइड अतिचालक की खोज की गयी है। अभी तक इस ऑक्साइड के उच्च तापीय अतिचालकों का द्विवीमीय उपयोग ही संभव था। वायट्रियम ऑक्साइड नामक एक अन्य अतिचालक की खोज भी की गयी है, जो उच्च तापमान पर भी अतिचालकता का गुण प्रदर्शित करता है।

राष्ट्रीय अतिचालक अनुसंधान कार्यक्रम: भारत में विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा 'राष्ट्रीय अतिचालक अनुसंधान कार्यक्रम' शुरू किया गया है। इस कार्यक्रम में संलग्न प्रमुख भारतीय संस्थाएं निम्नलिखित हैं;

1. राष्ट्रीय भौतिक प्रयोगशाला (NPL), दिल्ली
2. केन्द्रीय इलेक्ट्रॉनिक्स अभियांत्रिकी अनुसंधान संस्थान- पिलानी
3. केन्द्रीय कांच एवं सैरेमिक अनुसंधान संस्थान- कोलकाता
4. क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला-त्रिवेन्द्रम
5. टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च (TIFR), मुंबई
6. इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस (IISC), बंगलौर
7. भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (BARC),
8. भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (IIT), चेन्नई।

इलेक्ट्रानिक हार्डवेयर प्रौद्योगिकी पार्क योजना **(EHTP)**

निर्यातोन्मुखी इलेक्ट्रॉनिक क्षेत्र की विशेष आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए इलेक्ट्रॉनिक हार्डवेयर प्रौद्योगिकी पार्क (EHTP) योजना 1 अप्रैल 1993 को आरंभ की। इसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है-

1. केंद्र सरकार की पहल के बिना भी राज्य सरकारें सार्वजनिक या निजी प्रतिष्ठान तथा व्यक्ति अधोसंरचना हेतु ईएचटीपी की स्थापना कर सकते हैं।
2. ईएचटीपी में घरेलू बाजार गमन निम्नवत होगा;
   (क) उपकरणों के संदर्भ में 25%
   (ख) अवयवों के संबंध में 30%
   (ग) पदार्थों के संबंध में 15.20%
3. हालांकि ईएचटीपी इकाई मूल्य परिवर्द्धन हेतु स्वतंत्र होगा तथापि उच्च मूल्य परिवर्धन उच्चतर बाजार गमन घटक के द्वारा प्रोत्साहित होगा।
4. ईएचटीपी इकाई के अंतर्गत समस्त आयात जैसे पूंजीगत वस्तुएं, कच्चे माल और अवयव शुल्क मुक्त होंगे।

निर्याप्त प्रोत्साहन पूंजीगत वस्तु (EPCG- Export Promotion Capital Goods Scheme) योजना सरकार द्वारा वैसे इलेक्ट्रॉनिक उद्योग जो निर्यातोन्मुख हैं उनके लिए निर्याप्त प्रोत्साहन के लिए ईपीसीजी योजना प्रस्तुत की हैं;

1. जीरो ड्यूटी ईपीसीजी: इसके लिए वे इकाइयां पात्र होंगी जो शून्य शुल्क देकर पूंजीगत वस्तुओं का आयात करती है तथा उनके द्वारा बचाए गए आयात शुल्क का 6 गुणा अगले 6 वर्ष में पूरा करना होगा।
2. 3% ईपीसीजी: इसके अन्तर्गत इकाइयां 3% आयात शुल्क देकर बचाए गए आयात शुल्क का 8 गुणा अगले 8 वर्ष में पूरा करना होगा।

राष्ट्रीय क्षमता विकास

इलेक्ट्रानिक उद्योग के क्षमता विकास के लिए निजी तथा सरकारी पर्यास के अन्तर्गत एनएसडीसी एक गैर मुनाफे वाली कंपनी है। इसका प्रमुख उद्देश्य भारतीय श्रमिक वर्ग की कुशलता को बनाना तथा पहले से कुशल श्रमिकों की कुशलता में इजाफा करना है। एनएसडीसी की मुख्य भूमिकाएं निम्नलिखित हैं;

1. वित्त प्रदान करना तथा वित्तीय प्रोत्साहन देना
2. सम्बद्ध सुविधाएं देना।
3. प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन करना।

मल्टीप्लेक्सिंग

दूरसंचार तथा कंप्यूटर नेटवर्क में मल्टीप्लेक्सिंग कई एनॉलाग तथा डिजीटल संदेशों को जोड़कर एकल परिपथ में संयुक्त कर साझा माध्यम द्वारा प्रयोग किया जाता है। इसका प्रमुख उद्देश्य महंगे संसाधनों को साझा करने में हैं। इसकी शुरूआत टेलीग्राफ से होती हैं।

मल्टीप्लेक्सिंग के प्रकार

1. स्पेश-डिवीजन मल्टीप्लेक्सिंग
2. फ्रीक्वेंशी-डिवीजन मल्टीप्लेक्सिंग
3. टाइम-डिवीजन मल्टीप्लेक्सिंग
4. कोड-डिवीजन मल्टीप्लेक्सिंग

ऑप्टिकल फाइबर

ऑप्टिकल फाइबर पारदर्शी, लचीला, फाइबर है जो शुद्ध ग्लास (सिलिका) से बना होता है, इसकी मोटाई मानव बाल के बराबर होती हैं। यह वेबगाइड या प्रकाश टाइप के रूप में कार्य करता है जो प्रकाश को फाइबर के दोनों सिरों पर संचारित करता है। अभियांत्रिकी तथा एप्लाइड विज्ञान जो इसके निर्माण, और विकास से संबंधित होते है, फाइबर ऑप्टिक्स कहा जाता है। ऑप्टिकल फाइबर का व्यापक रूप से इस्तेमाल फाइबर-ऑप्टिकल कम्यूनिकेशन के लिए किया जाता है जो लंबे दूरी तक ज्यादा बैंडविड्थ के साथ प्रसारण की सुविधा प्रदान करता है।

मोडेम

मोड्यूलेटर-डी-मोड्यूलेटर अर्थात मोडेम कंप्यूटर को बाहरी सूचना एवं दूरसंचार उपकरण से जोड़ने का कार्य करता है। इसका मुख्य कार्य बाहरी एनालॉग सिग्नल को डिजिटल सिग्नल में बदलना व आंतरिक डिजिटल सिग्नल को एनॉलाग में बदलना है। यह सिग्नल मोड्यूलेशन प्रवृत्ति पर आधारित है।

ISDN - इंटीग्रेटेड सर्विसेज डिजिटल नेटवर्क: इसके अंतर्गत डिजिटल सूचना को सामान्य टेलीफोन नेटवर्क पर 128 इचे की रफ्तार पर प्रेषित किया जा सकता है। इसमें डाटा, विडियो और आवाज का एक साथ प्रसारण संभव है।

भारत में बी.एस.एन.एल., रिलांयस तथा एयरटेल, आई.एस.डी.ए. की सुविधा उपलब्ध कराने वाली प्रमुख कंपनी है।

PSTN - पब्लिक स्विच्ड टेलीफोन नेटवर्क (पीएसटीएन): यह विश्व का सार्वजनिक सर्किट स्विच टेलीफोन नेटवर्क है। इसमें शामिल होते हैं टेलीफोन लाइन, फाइबर ऑप्टिकल केबल, माइक्रोवेब ट्रांसमिशन, संचार उपग्रहों, सेल्यूलर नेटवर्क, तथा समुद्र के नीचे बिछे केबल, जो किसी भी टेलीफोन को किसी भी तरह के संचार उपक्रम से संवाद करने की सुविधा प्रदान करते हैं। यह मूलत: फिक्सड-लाइन एनॉलाग प्रणालियों का एक नेटवर्क है जो अब पूरी तरह से डिटिजल हो गया है।

मोबाइल फोन काम कैसे करता है: मोबाइल फोन या सेल फोन एक इलेक्ट्रॉनिक उपकरण है जिसे विशेष बेस स्टेशनों के एक नेटवर्क के आधार पर आवाज या डेटा को पूरे भौगोलिक क्षेत्र में भेजा और प्राप्त किया जा सकता है। इसके लिए पूरे भौगोलिक क्षेत्र को कई छोटे क्षेत्रों में बांट कर प्रत्येक क्षेत्र में एक एंटीना स्थापित कर दिया जाता है। जब व्यक्ति मोबाइल फोन को लेकर एक सेल से दूसरे सेल में जाता है तो MTSO (मोबाइल टेलीफोन स्वीचींग ऑफिश) के तहत उसका सिग्नल ट्रॉसफर हो जाता है।

जीएसएम

जीएसएम (ग्लोबल सिस्टम फॉर मोबाइल कम्यूनिकेशन) जिसे शुरू में ग्रुप स्पेशल मोबाइल के नाम से जाना जाता था, यूरोपीयन टेलिकम्यूनिकेशन स्टेन्डर्ड इन्स्टीट्यूट के द्वारा 2जी तकनीक के लिए बनाया गया था। यह 1जी एनॉलाग सेल्यूलर नेटवर्क की जगह पर लाया गया था। यह स्टैण्डर्ड बाद में सर्किट स्वीच के द्वारा डाटा हस्तांतरण में तथा बाद में ळच्त्रै (ग्लोबल पैकेट रेडियो सर्विस) द्वारा डाटा हस्तांतरण में प्रयोग की जाने लगी। बाद में डाटा हस्तांतरण की दर को म्क्ळम् (इन्हैंस्ड डाटा रेट फॉर जीएसएम इवाल्यूशन) तकनीक के द्वारा बढ़ाया गया।

जीएसएम सेल्यूलर नेटवर्क अपने क्षेत्र के पास के एन्टीना से कनेक्ट हो जाता है जिसकी अधिकतम दूरी 35 km (22 मील) है। जीएसएम नेटवर्क के पांच अलग-अलग तरह के सेल एन्टीना होते हैं जो हैं- मैक्रो, माइक्रो, पीको, फेमटा और अम्ब्रेला सेल। इन सभी एन्टीना का कवरेज क्षेत्र कार्यान्वयन वातावरण के अनुसार बदलता रहता है।

जीएसएम की प्रमुख विशेषताओं में सिम (SIM-सब्सक्राइबर आइडेंटीफिकेशन मॉडयूल) है। यह बदला जा सकने वाला एक स्मार्ट कार्ड होता है जिसमें यूजर की पहचान तथा उसका फोन बुक होता है।

विश्व का पहला जीएसएम कॉल फिनलैंड के प्रधानमंत्री हैरी हॉल्केरी के द्वारा टाम्परे के महापौर को 1 जुलाई, 1991 को किया था। पहला ळैड नेटवर्क टेलीनोकिया और सीमेंस द्वारा बनाया गया था तथा रेडियोलिजा के द्वारा चालू किया गया था। एसएमस सेवा का आरंभ 1992 में किया गया था। भारत में ळैड नेटवर्क की शुरूआत अगस्त 1995 में टेलस्ट्रा (आस्ट्रेलिया तथा बी.के. मोदी ग्रुप के संयुक्त उपक्रम) द्वारा किया गया था। यह मोबाइल क्रांति कोलकाता से आरंभ हुई थी। उस समय एक हैंडसेट की कीमत 40,000 रु. तथा कॉल दर 17रु. मिनट था। इसका शुभारंभ पश्चिम बंगाल के पूर्व मुख्यमंत्री ज्योति बसु ने कॉल करके किया था।

सीडीएमए

सीडीएम यानी कोड डिवीजन मल्टीपल एक्सेस (**CDMA)** एक चैनल अभिगम विधि है जो विभिन्न रेडियो संचार प्रौद्योगिकी के लिए प्रयोग किया जाता है। डेटा संचार की कई अवधारणाओं में एक अवधारणा है कई टांसमीटरों पर संदेश एक साथ भेजने की। इस अवधारणा को बहुअभिगम कहा जाता है। एक से अधिक लोग जब एक ही समय में जब एक दूसरे से बात करते हैं तो उस समस्या से बचने के लिए समय विभाजन, आवृत्ति विभाजन और कोड डिवीजन का प्रयोग किया जाता है। सीडीएमए कोड डिवीजन का एक उदाहरण है।

- सीडीएमए वन कुआलकोम के द्वारा विकसित पहली डिजिटल सेलुलर मानक है इसे Interim standard 95 (IS-95) कहा जाता है तथा इसका ब्रांड नाम बकउंवदम है।
- **CDMA** 2000: इसे IMT multi-carrier (IMT-MC) के नाम से भी जाना जाता है। यह 3G परिवार का सदस्य है जो आवाज, डेटा और संदेश भेजने के लिए ब्क्ड। तकनीक का प्रयोग करता है। CDMA-2000 टेलिकॉम इंडस्ट्री एसोसिएशन-अमेरिका का पंजीकृत ट्रेडमार्क है।
- **WCDMA (UMTS):** वाइड बैंड सीडीएमए वायु अंतरफलक में पाया जाने वाला 3G मोबाइल तकनीक है। यह 5MHz के रेडियो चैनल के जोड़े पर प्रसारित होता है।

मोबाइल की पीढ़ियां

पीढ़ियों का नामाकरण सेवाओं के मौलिक स्वभाव में हुए परिवर्तनों को व्यक्त करता है जो कि बैंडविड्थ, नई आवृत्ति ब्रैंड आदि में होता है। नई पीढ़ी की सेवाएं लगभग हर 10 साल में बदलकर अपने उच्च स्तर की ओर चली जाती है। ये 1981 में

एनॉलाग 1G से शुरू होकर डिजिटल 2G जो कि 1992 में शुरू हुआ, 2001 में 3G तथा 10 से कम वर्ष में 2009 में 4G का आरंभ तक की कहानी है।

- **1G**: 1G तकनीकी विकास, जो 1G तकनीक को अपने पहले के तकनीक से अलग करती थी वह है बात करते हुए यात्रा करने के दौरान एक साइट से अगले साइट में कॉल हस्तांतरण। यह 1979 में जापान की NTT कंपनी द्वारा शुरुआत किया गया था।
- **2G**: 1990 के दशक में 2**G** तकनीक की शुरूआत हुई थी। यह ळैड मानकों का प्रयोग करता था। यह 1**G** के एनालॉग तकनीक की जगह डिजिटल तकनीक का प्रयोग करता है। 1991 में पहला ळैड तकनीक रेडियोलिजा नाम से फिनलैंड में शुरू हुआ था। इसमे SMS Message भेजने की व्यवस्था थी जो आगे चलकर डाटा हस्तांतरण में परिवर्तित हो गया। इसका अन्य लेवल 2.5**G** तथा 2.75 है।
- **3G:** 2G में डाटा हस्तांतरण की धीमी सुविधा जो कि वर्तमान में त्वरित हस्तांतरण की मांग है। इस कमी को पूरा करने के लिए 3ळ तकनीक का प्रयोग होता है। 3ळ डाटा हस्तांतरण के लिए पैकेट स्वीचिंग का प्रयोग करता है जबकि 2जी में सर्किट स्वीचिंग का इस्तेमाल किया जाता है। इसमें त्वरित डाटा हस्तांतरण के कारण यह विडियो कॉल की सुविधा प्रदान करता है। 3 ळ तकनीक 2100 MHz के रेंज पर काम करता है तथा इसका बैंडविंड्थ 15-20 MHz है। यह HSDPA+ तकनीक का उपयोग करते हुए अधिकतम 42 डइचे का स्पीड दे सकता है।
- **4G:** 4G मोबाइल तकनीक चौथी पीढ़ी की मोबाइल तकनीक है जो गति की स्थिति में 100 डइपजधे की स्पीड प्रदान करती है तथा कम गति या स्थिर होकर उपयोग करने की स्थिति में 1 हइपजधे की स्पीड प्रदान करती है।

दुनिया का पहला LTE (Long Term Evolution) पर आधारित 4G सेवा 2009 में दो स्कैंडिनोवियाई शहर स्टॉकहोम और ओस्लो में खोला गया। 4G प्रणाली के द्वारा व्यापक और सुरक्षित आई.पी. आधारित सभी मोबाइल ब्रांडवैंड, वायरलेस मॉडेम, स्मार्ट फोन आदि को प्रदान करने की उम्मीद की जा रही है।

मोबाइल बैटरी

बैटरी मोबाइल की जीवन है। इसके बिना मोबाइल के प्रयोग को संभव नहीं बनाया जा सकता। यही कारण है कि मोबाइल फोन के डिजाइनरों का प्रयास होता है कि हल्के से हल्का तक पावर को कम से कम क्षति के साथ उनका लंबे समय तक इस्तेमाल किया जा सके।

मोबाइल फोन में निम्नलिखित चार प्रकार के रिचार्जेबल बैटरी का प्रयोग होता है। इनमें से प्रत्येक के कुछ फायदे तथा नुकसान हैं:

1. लिथियम पॉलिमर (ली-पॉली) **Li-poly)** बैटरी: ली-पॉली सेल फोन के लिए सबसे आधुनिक एवं सबसे उन्नत प्रौद्योगिकी है। यह सबसे ज्यादा हल्के होते हैं तथा 'मेमोरी इफेक्ट' से प्रभावित नहीं होते हैं तथा 40 प्रतिशत तक ज्यादा उर्जा प्रदान करते हैं निकल हाइब्रिड बैटरी से।

   'मेमोरी इफेक्ट' के तहत रिचर्जिबल बैटरी चार्जिंग को खत्म दिखाने के बाद भी अपनी क्षमता को कम करके कुछ समय के लिए आंकड़ों को याद रख सकता है।

2. लिथियम आयन (ली-आयन) **(Li-ion)** बैटरी: ली-आयन बैटरी सेल फोन के लिए वर्तमान में सर्वाधिक लोकप्रिय तकनीक है। इसकी केवल एक ही खराबी है कि वे महंगे होते हैं जिसके कारण ये केवल शीर्ष मोबाइल कंपनियों के द्वारा ही प्रयोग में लाए जाते हैं।

   लिथियम आयन बैटरी को ज्यादा ओवर चार्ज (लगातार 24 घंटे तक चार्जेर में लगा रहना) पर बैटरी को नुकसान पहुंचाता है।

3. निकेल कैडमियम - **(Nicd)** बैटरी: Nicd बैटरी सेल फोन की पुरानी तकनीक है। यह एक रिचार्जेबल बैटरी है जिससे अधिकतर लोग परिचित हैं। इसकी एक बहुत बड़ी समस्या है इसका 'मेमोरी इफेक्ट' जो चार्जिंग के खत्म होने पर पूरी तरह डिस्चार्ज हो जाता है तथा आंकड़े संरक्षित नहीं रह पाते हैं। इसके निर्माण में जो रसायनों का प्रयोग होता है वे पर्यावरण के अनुकूल नहीं है तथा उनका निपटान एक बढ़ती हुई समस्या हैं।

   यह मोबाइल बैटरी की एक सस्ती किस्म है जो मोबाइल की कुल लागत को कम करने में मदद करती हैं।

4. निकेल मेटल हाइब्रीड बैटरी: NIMH बैटरी Nicd बैटरी से उन्नत होने का दावा करते है क्योंकि इनमें कैडमियम शामिल नहीं है। इनका निर्माण गैर-विषैले सामग्री से होता है जो पर्यावरण के अनुकूल हैं। ये आकार और वजन की तुलना में उच्च क्षमता को प्रदान करते हैं तथा बहुत सीमित मात्रा में 'मेमोरी इफेक्ट' भी प्रदान करते हैं।

Wi-Fi : वाई फाई एक तंत्र है जो इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को बिना भौतिक संपर्क के डेटा के हस्तांतरण की सुविधा प्रदान करता है। 'वाई-फाई', वाई-फाई एलांयस का ट्रेड मार्क है जो कि IEEE 802-11 मानक का उपयोग करता है।

यह डेटा हस्तांतरण के लिए रेडियो फ्रीक्वेंशी तकनीक का प्रयोग करता है। जब RF तरंगों को ऐंटीना में प्रवाहित किया जाता है तो इलेक्ट्रोमैग्नेटिक फील्ड तैयार होता है। यह फील्ड एक्सेस प्वाइंट (AP) के माध्यम से वायरलेस तरंगों के द्वारा प्राप्त करने वाले उपकरण के कनेक्ट होने पर हस्तांतरण शुरू करता है।

एक Wi-Fi के द्वारा 30 क्लाइन्ट को 103मी. के परिधि में डेटा हस्तांतरण कर सकता है जो कि घर के अंदर 20 मी. तक करता है

Wi max- Worldwide interoperability for microwave Access एक संचार तकनीक है जो एक बड़े भौगोलिक क्षेत्र में उच्च गति से इंटरनेट सेवा को प्रदान करती है। यह 2011 में अपने प्रविर्धित रूप में 1gbit निश्चित स्टेशन से बिट रेट प्रदान करता है। यह एक चौथी पीढ़ी (4G) का संचार तकनीक है जो 50 km की त्रिज्या में सेवा प्रदान करता है। इसके बैंडविड्थ को भी कई क्लाइंटों में विभाजित किया जा सकता है। इसके प्रयोग से शहरों में मोबाइल ब्राडबैंड कनेक्टिविटी, आईपीटीवी (IPTV) दूरसंचार (VOIP) तथा व्यापार की निरंतरता के लिए इंटरनेट कनेक्टिविटी का एक प्रमुख स्रोत है।

ब्लूटूथ: यह कम दूरी के लिए संचार हस्तांतरण तकनीक है जो कि कम दूरी 10m में 1 mbps के स्पीड से 2.4GHz फ्रीक्वेंशी का उपयोग करता है। ब्लूटूथ स्कोंडिनेवियाई शब्द Biantand/Blatann का इंगलिश रूप है। यह सम्मान 10वीं सदी के राजा हेराल्ड-I को डेनिश पिछड़ी हुई जनजातियों को एक ही साम्राज्य में मिलाने के लिए दिया गया था।

WiB: (Wireless Broadband) यह एक वायरलेस ब्राडबैंड इंटरनेट तकनीक है जिसे दक्षिण कोरियाई दूरसंचार उद्योग द्वारा विकसित किया गया। वाइब्रो के द्वारा 2012 के अंत तक 10उइपजधे की ब्राडबैंड कनेक्टिविटी प्रदान हो पाएगी।

WAP: Wireless Application protocol (वायरलेस एप्लीकेशन प्रोटोकॉल) एक तकनीक मानक है जिसका प्रयोग वारयलेस मोबाइल नेटवर्क के लिए किया जाता है। वैप ब्राउजर एक वेब ब्राउजर है जो मोबाइल उपकरणों में डेटा सेवा की सुविधा प्रदान करता है जिससे इंटरनेट की सुलभता मोबाइल उपकरणों पर संभव हुई है। जैसे:

- मोबाइल फोन से इ-मेल भेजना।
- न्यूज हेडलाइन
- गानों का डाउनलोड
- खेलों के समाचार
- स्टॉक-मार्केट प्राइस की ट्रकिंग।

वैप मानक प्रोटोकॉल सूट को विभिन्न (CDMA) IS-95 तथा GSM तकनीकों को साफ्टवेयर के रूप में प्रयोग करता है।

GPRS: जनरल पैकेट रेडियो सेवा General Packet Radio Service) एक पैकेट आधारित वायरलेस संचार सेवा है जो 56kbps की दर से मोबाइल फोन और कम्प्यूटरों को डेटा सेवा की सुविधा प्रदान करती हैं। ळच्चै का उपयोग चार्ज डेटा की मात्रा पर निर्भर करता है जो सर्किट स्वीच में चार्टिज प्रति सेकेंड या प्रति मिनट पर निर्भर करता है।

ब्राडबैंड तथा इसके उपयोग: ब्राडबैंड दूरसंचार सिग्नल को व्यक्त करता है जिसमें दूसरे सिंग्नल की अपेक्षा ज्यादा बैंडविड्थ होता है। भारत में दूरसंचार विभाग द्वारा 256 इचे से उपर की पहुंच वाला इंटरनेट एक्सेस ब्राडबैंड कहलाता है। ब्राड बैंड के प्रमुख उपयोग हैं-

1. हाई स्पीड इंटरनेट
2. केबल टीवी नेटवर्क इंटरनेट के द्वारा
3. ऑन लाइन क्लासरूम की सुविधा
4. गांवों में पंचायत स्तर पर उनके कामों के निपटारे के लिए क्योस्क की सुविधा।

सैटेलाइट फोन: सैटेलाइट फोन एक वायरलेस फोन है जो साधारण मोबाइल फोन के सेल साइटों की जगह ऑरबिट सैटेलाइट या परिक्रमा करते उपग्रहों से जोड़ता है। ये भी साधारण मोबाइल फोन की तरह आवाज हस्तांतरण, एसएमएस तथा कम-बैंडविड्थ की इंटरनेट सेवा देता है। मोबाइल नेटवर्क में पूरे क्षेत्र को कई छोटे-छोटे भागों में बांट दिया जाता है तथा प्रत्येक क्षेत्र में एक एंटीना लगा होता है। इसे टॉवर भी कहते हैं। जब एक व्यक्ति बात करते हुए एक सेल से दूसरे सेल में जाता है तो वह डज्ै (मोबाइल टेलिफोन स्वीचिंग ऑफिस) का प्रयोग करता है। सैटेलाइट फोन इसी जगह स्म्ै (लो अर्थ ऑरबिट) उपग्रह का प्रयोग करता है। जब सैटेलाइट फोन को ऑन किया जाता है तो यह जितने सैटेलाइट या ग्रुप सैटेलाइट के साथ जुड़ा होता है सभी तक सिग्नल चला जाता है। जब व्यक्ति कॉल करता है तो उसके नजदीकी परिक्रमित उपग्रह तक सिग्नल जाता है जो जमीन के द्वारा जुड़े गेटवे से कनेक्ट होता है। तब गेटवे अपने पहुंच तक कॉल संभव बनाता है।

सैटेलाइट फोन का उपयोग अधिकतर आपात काल के समय उपयोगी होता है, जब स्थानीय सेल नेटवर्क एंटीना प्राकृतिक आपदाओं आदि से क्षतिग्रस्त हो जाता है। सैटेलाइट फोन उपग्रहों से जुड़कर तब भी काम कर रहे होते हैं।

आईफोन व आईपोड

आईफोन एप्पल कंपनी का इंटरनेट और मल्टीमीडिया युक्त स्मार्टफोन है जिसे एप्पल कंपनी के सीईओ स्वर्गीय स्टीव जॉब्स ने 9 जनवरी 2007 को पहले आईफोन को प्रस्तुत किया था। एप्पल ने अपनी 5वीं पीढ़ी का आईफोन iphone 4s को 4 अक्टूबर 2011 को लांच किया।

आईफोन में ios ऑपरेटिंग सिस्टम पाया जाता है जोMac OSX ऑपरेटिंग सिस्टम परिवार का सदस्य है। ऑपरेटिंग सिस्टम के कारण हाई स्पीड इंटरनेट, सोशल नेटवर्किंग साइट, वेब ब्राउजिंग तथा एप्पल एप्लीकेशन स्टोर से अनेकों एप्प डाउन लोड कर सकते हैं।

आईपैड: आई.पैड एक टैबलेट कंप्यूटर है जिसका निर्माण, विकास तथा विपणन एप्पल कंपनी के द्वारा किया जाता है। मुख्यत: ऑडियो-विजुअल मीडिया के रूप में किताब, पत्रिकाओं, फिल्म गाने तथा खेल आदि को यह बेहतर तरीके से संभव बनाता है। इसका आकार और वजन स्मार्टफोन और लैपटॉप कंप्यूटर के बीच आता है। पचंक में भी पवे ऑपरेटिंग सिस्टम का प्रयोग होता है जो डंब ब्वे परिवार का सदस्य है। इसमें केवल प्रोग्राम रन कर सकता है जो एप्पल के द्वारा स्वीकार्य हो या एप्पल स्टोर से डाउनलोड किए गए हों। यह LAN और इंटरनेट के लिए वाई-फाई कनेक्शन का उपयोग करता है।

ग्लोबल पोजशनिंग सिस्टम

ग्लोबल पोजशनिंग सिस्टम (GPS) एक अंतरिक्ष आधारित उपग्रह नेविगेशन प्रणाली है जो सभी मौसम में पृथ्वी पर या पृथ्वी के पास समय एवं स्थान की जानकारी प्रदान करती है। इसे अमेरिका के द्वारा संचालित किया जाता है तथा जीपीएस रिसीवर द्वारा प्राप्त किया जा सकता हैं।

अमेरिकी रक्षा विभाग द्वारा 1973 में इसे बनाया गया था तथा पूरी तरह से 24 उपग्रहों से युक्त होकर 1994 में चालू हो गया था। यह वैश्विक हवाई यातायात के लिए रीढ़ की हड्डी है।

जीपीएस की तरह अन्य देशों की भी कुछ नेविगेशन प्रणाली है जैसे रूस की ग्लोनास (GLONASS), यूरोपीय यूनियन की गैलीलियो पोजिशनिंग सिस्टम, चीन की कंपास नेविगेशन सिस्टम तथा इंडियन रीजनल नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम।

मोबाइल विकिरण

मोबाइल संचार एक माध्यम के रूप में रेडियो आवृत्ति का प्रयोग करता है और जिस दर पर आरएएफ ऊर्जा (Radio frequency-RF) शरीर द्वारा अवशोषित होती है उसे विशिष्ट अवशोषण दर यानी एसएआर (Specific Absorption Rate-SAR) कहा जाता है।

वैश्विक अध्ययन के अनुसार आरएएफ ऊर्जा का अधिक अवशोषण जो एसएआर की सीमा से परे हो, स्वास्थ्य से संबंधित गंभीर विकारों को जन्म दे सकती है। वर्तमान में भारत अंतर्राष्ट्रीय गैर-आयनीकृत विकिरण संरक्षण एसोसिएशन आयोग (International Commission on Non-Ionising Radiation Protection Association-ICNIRP) मानदंडों के

तहत 2 वाट/किलोग्राम एसएआर का अनुसरण करता है। हाल ही में एक अंतर मंत्रालयी समिति ने मोबाइल टावरों से होने वाले विकिरण के प्रभावों को लेकर कुल 9 अनुशंसाएं की है। ये निम्नलिखित हैं;

1. मोबाइल टावरों से होने वाले विकिरण घनत्व की स्वीकार्य सीमा को 1/10 कम किया जाए।
2. घनी आबादी वाले क्षेत्रों, स्कूलों और अस्पतालों के निकट मोबाइल टावर लगाना प्रतिबंधित किया जाए।
3. बड़े शहरों में विकिरण स्तर की लगातार जांच और निगरानी की जाए और इसकी सारी जानकारी केन्द्रीय स्तर पर रखी जाए।
4. दूरसंचार मंत्रालय देश के हर मोबाइल बेस स्टेशन और उससे होने वाले विकिरण की जानकारी रखे और इसे सार्वजनिक करें।
5. मोबाइल कंपनियां शहर के प्रमुख स्थानों पर विकिरण का स्तर जांच कर जनता के लिए प्रदर्शित करें।
6. भविष्य में अधिक क्षमता के ऊंचे टावरों की जगह कम क्षमता के छोटे टावरों को लगाने की अनुमति दी जाए।
7. विकिरण के स्वास्थ्य पर दुष्प्रभावों पर विस्तृत अध्ययन करवाया जाए।
8. मोबाइल हैंडसेट के इस्तेमाल के समय हैंडस फ्री का इस्तेमाल प्रोत्साहित किया जाए।
9. दूरसंचार मंत्रालय विकिरण के खतरे को देखते हुए एक पुस्तिका छपवानी चाहिए, जिसमें जनता को 'क्या करे और क्या न करे' की जानकारी दी जाए।

वैसे सरकार ने नवीनतम मानदंडों के तहत मोबाइल हैंडसेट पर एसएआर को दर्शाना अनिवार्य कर दिया है।

भारत में दूरसंचार उद्योग

भारत में दूरसंचार उद्योग की स्थापना 1881-82 में कोलकाता में हुई थी तथा 700 लाइनों में क्षमता वाला पहला स्वचालित टेलीफोन एक्सचेंज 1913-14 में शिमला में चालू किया गया था।

1 अक्टूबर, 2000 को नए सार्वजनिक उपक्रम बीएसएनएल का गठन किया गया तथा पहले के सभी दूरसंचार सेवा विभाग के कार्य इसे सौंप दिए गए। भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण (ट्राई) नामक स्वतंत्र विनियामक की स्थापना 1997 में की गई थी।

राष्ट्रीय दूरसंचार नीति- 1994

1. मांग के अनुसार टेलीफोन की उपलब्धता।
2. उचित दरों पर विश्वस्तर की सेवाओं की व्यवस्था।
3. दूरसंचार उपकरण के प्रमुख निर्माता एवं नियतिक के रूप में पहचान बनाना।
4. गांवों में बुनियादी दूरसंचार सेवाएं उपलब्ध कराना।

राष्ट्रीय दूरसंचार नीति- 1999

1. उचित दरों पर कारगर सेवा उपलब्ध कराना।
2. ग्रामीण, पिछड़े, पर्वतीय क्षेत्रों में सेवाओं का विस्तार
3. अनुसंधान और विकास प्रयासों को बढ़ावा देना।
4. ऑपरेटरों की संख्या और उनके चयन का तरीका ट्राई की सिफारिशों के आधार पर निर्धारित होना।
5. प्रवेश शुल्क और राजस्व का हिस्सा ाई की सिफारिश पर लागू होना।

राष्ट्रीय दूरसंचार नीति-2011

1. ग्रामीण क्षेत्रों में टेलीफोन घनत्व को वर्तमान 35 से बढ़ाकर 2017 तक 60 और 2020 तक 100 करना।
2. वर्ष 2014 तक ऑटिकल फाइबर के माध्यम से सभी ग्राम पंचायतों को उच्च स्पीड के ब्राडबैंड उपलब्ध कराना।
3. एक देश एक लाइसेंस की धारणा बनाने का प्रयास करना।

4. मोबाइल फोन को केवल संचार उपक्रम के रूप में बदलकर सुरक्षित वित्तीय लेन-देन की सुविधा से युक्त करना।
5. वर्तमान ब्राडबैंड स्पीड की 256 इचे से बढ़ाकर 2011 तक 512 इचे और 2015 तक 2 उइचे और उसके बाद 100 उइचे तक करना।
6. प्रौद्योगिकी तटस्थ एकीकृत लाइसेंसों को दो अलग श्रेणियों में रखा जाएगा।

(क) नेटवर्क सर्विस ऑपरेटर व कम्युनिकेशन नेटवर्क सर्विस ऑपरेटर

(ख) सर्विस डिलीवरी ऑपरेटर व कम्युनिकेशन सर्विस डिलीवरी ऑपरेटर

भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण: भारतीय दूरसंचार विनियामक प्राधिकरण भारतीय दूरसंचार उद्योग के नियंत्रण के लिए एक स्वतंत्र संस्था है। इसकी स्थापना 20 फरवरी, 1997 को संसद के अधिनियम द्वारा हुआ था।

दूरसंचार नीति 1994 को लागू करने के बाद इसने अत्यधिक मात्रा में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश तथा घरेलू निवेश को आकर्षित किया। इनको नियंत्रित करने के लिए ट्राई की स्थापना की गयी थी। ट्राई का नियंत्रण शुल्क दरों, क्ष्भ्ए मोबाइल नंबर पोर्टेबिलिटी, इंटरकनेक्शन आदि पर विस्तृत रूप से दशिा-निर्देश देने से होता है।

मोबाइल नंबर पोर्टेबिलिटी

मोबाइल नंबर पोर्टेबिलिटी (एमएनपी) मोबाइल फोन उपयोगकर्ताओं को मोबाइल नेटवर्क ऑपरेटर बदलने के समय अपने मोबाइल नंबर को बनाए रखने की सुविधा प्रदान करता है।

दूरसंचार मंत्री कपिल सिब्बल ने 25 नवंबर, 2010 को हरियाणा के रोहतक में (एमएनपी) की शुरूआत की।

दूरसंचार विधेयक

दूरसंचार विधेयक (The Telecom Commercial Communications Customer Preference Regualation-2010) रेग्यूलेशन व्यवसायिक कॉल तथा SMS दोनों पर लागू होता है। पिछला रेग्यूलेशन जो पूरी तरह से क्छक लागू होता था, वहीं इस रेग्यूलेशन के लागू होने के बाद पूरी तरह से व्यवसायिक प्रतिबंधों के साथ-साथ कुछ व्यवसायिक कॉल तथा SMS की सुविधा से युक्त होगा। उपभोक्ता का रजिस्ट्रेशन पहले के 45 दिनों की जगह मात्र 7 दिनों में होगा, जो 1909 नंबर पर कॉल या ैडै करके किया जा सकता है।

यूनिवर्सल सर्विस ऑबलिगेशन फंड

यूनिवर्सल सर्विस ऑबलिगेशन फंड (USOF) ग्रामीण और दूरस्थ क्षेत्रों में वहनीय और तर्कसंगत मूल्य पर लागों को टेलीफोन सेवा को प्रदान करना है। इसे 27 मार्च, 2002 को लागू किया गया था। दूरसंचार नीति-1999 के अनुसार (यूएसओएफ) के लिए संसाधन यूनिवर्सल एक्सेस लेवी के द्वारा किया जाता है। जो कि विभिन्न ऑपरेटरों द्वारा अर्जित धन पर लगाया जाता है।

दूरसंचार का सामाजिक-आर्थिक पहलू

जहां पहले भारत में गांव की अवधारणा को सामाजिक, आर्थिक, संरचनात्मक विकास के क्रम में पिछड़ेपन का पर्यायवाची माना जाता था वहीं दूरसंचार के प्रभाव से क्रान्तिकारी परिवर्तन नजर आ रहे है। इस परिवर्तन को लाने में सूचना क्रांति की महती भूमिका रही है। संचार लोगों को सूचनाओं से सुसज्जित करने में अहम भूमिका निभाता है। आज ग्रामीण और किसानों को संचार के माध्यम से सूचनाएं प्राप्त करने के विभिन्न कार्यक्रम हैं जो ग्रामीणों को उनके कार्यों में सुगमता लाने सहायक सिद्ध हो रहे है। इनमें प्रमुख हैं;

1. किसान कॉल सेंटर
2. ई-चौपाल
3. ग्राम ज्ञान केन्द्र

4. कल्याणी
5. कृषि दर्शन
6. विभिन्न कमोडिटी एक्सचेंजों के त्वरित रेट।

गांवों को इन सुविधाओं के अलावा शहरी क्षेत्रों में दूरसंचार सुविधाओं का उपयोग कर व्यापार की सुविधा, ऑनलाइन क्लासरूम, टेलीमेडिसीन, वी-सैट ऐंटीना के द्वारा एटीएम सेवा आदि प्रमुख है। दूरसंचार क्षेत्र में प्रगति आज भ्रष्टाचार को कम करने में भी प्रमुख भूमिका निभा रहा है।

स्पेक्ट्रम

स्पेक्ट्रम, इलेक्ट्रोमैग्नेटिक स्पेक्ट्रम का छोटा रूप है। यह उस विकिरण ऊर्जा को कहते हैं, जो धरती को घेरे रहती है। इस इलेक्ट्रोमैग्नेटिक रैडिएशन (ईएमआर) का मुख्य स्रोत सूरज है। साथ ही, यह ऊर्जा तारों और आकाशगंगाओं से भी मिलती है। इसके अलावा, यह ऊर्जा धारती के नीचे दबे रेडियोएक्टिव तत्वों से भी मिलती है। ईएमआर का एक रूप दिखाई देने वाली रोशनी है, जबकि दूसरा रूप रेडियो फ्रिक्वेंसी (आरएफ) स्पेक्ट्रम होता है। साथ ही, ईएमआर में इन्फ्रारेड और अल्ट्रावायलेट किरणों जैसी कई दूसरे प्रकार और असर वाली वेवलेंथ भी होती हैं। हर देश को एक समान ही आरएफ स्पेक्ट्रम मिलता है। इसका इस्तेमाल निम्नलिखित तरीके से होता है;

- एक वेव या तरंग की लंबाई, उसकी फ्रिक्वेंसी (वेवलेंथ या साइकल प्रति सेकंड) और उसकी ऊर्जा से इसका इस्तेमाल तय होता है।
- रेडियो वेव तुलनात्मक रूप से काफी लंबे होते हैं। इनकी वेवलेंथ 1 किलोमीटर से लेकर 10 सेंटीमीटर तक की होता है। इसकी फ्रिक्वेंसी भी 3 किलोहर्ट्ज (3,000 साइकिल प्रति सेकंड) से लेकर 3 गीगाहर्ट्ज (3 अरब साइकिल प्रति सेकेंड) तक के बीच होती है। इसे माइक्रोवेव्स के नाम से भी जाना जाता है। वहीं, बिजली के मामले में वेव की लंबाई कई-कई किलोमीटर तक की होती है।
- सेंटीमीटर और मिलीमीटर की रेंज वाले माइक्रोवेव्स की फ्रिक्वेंसी 300 गीगाहर्ट्ज तक की हो सकती है। इसके अलग-अलग प्रकार के इस्तेमाल को देखते हुए इसे अलग-अलग नामों से पुकारा जाता है। खाना पकाने वाले माइक्रोवेव में सैकड़ों वॉट बिजली का इस्तेमाल आरएफ वेवलेंथ को पैदा करने में होता है।

  ये वेवलेंथ 32 सेमी (915 मेगाहर्ट्ज) से लेकर 12 सेमी (2.45 मेगाहर्ट्ज) तक के होते हैं। छोटी ऊर्जा स्रोतों वाले उपकरणों से पैदा होने वाले माइक्रोवेव का इस्तेमाल संचार के साधानों के रूप में होता है और ये काफी कम ऊर्जा पैदा करते हैं।
- इन्फ्रारेड वेव छोटी होती हैं और वे काफी गर्म होती हैं। लंबी दूरी वाले इन्फ्रारेड बैंड्स का इस्तेमाल रिमोट कंट्रोल के लिए होता है। साथ ही, इनका इस्तेमाल बहुत कम गर्मी पैदा करने वाले बल्बों में होता है।
- 700-400 नैनोमीटर के वेवलेंथ (करीब 430-750 टेराहर्ट्ज) का इस्तेमाल सफेद रोशनी पैदा करने के लिए होता है।

छोटी वेवलेंथ से अल्ट्रावॉयलेट किरणों का निर्माण होता है, जो आपको पहुंचा सकती हैं। समुद्र के किनारे की धूप में 53 फीसदी इन्फ्रारेड, 44 फीसदी दिखाई देने वाली रोशनी और 3 फीसदी अल्ट्रावॉयलेट किरणें होती हैं।

- कुछ छोटी वेव को एक्सरे कहते हैं और सबसे छोटी को गामा किरणें कहते हैं, जिनका इस्तेमाल चिकित्सा और उद्योगों में होता है।

आरएफ स्पेक्ट्रम का सबसे फायदेमंद इस्तेमाल दूरसंचार और इंटरनेट में होता है। दूरसंचार और ब्रॉडबैंड के लिए 700-900 मेगाहर्ट्ज की छोटी फ्रिक्वेंसी काफी फायदेमंद होती हैं। इससे लंबी दूरी तय की जा सकती हैं और वह भी बिना किसी दिक्कत के। रेडियो तरंगों को सबसे ज्यादा असर भाप और आयन से होता है। साथ ही, इन पर सोलर फ्लेयर और एक्सरे किरणों के विस्फोट का भी असर होता है। साथ ही, पहाड़ों की वजह से भी रेडियो तरंगों से संचार में काफी असर पड़ सकता है। छोटी फ्रिक्वेंसी मकानों और पेडों को भी पार कर सकती हैं। साथ ही, ये पहाडों के किनारे से भी निकल सकती हैं। बडी फ्रिक्वेंसी को वातावरण वापस प्रतिबिंबित या सोख सकता है। उन पर दूरी और बारिश का भी असर होता है। छोटी फ्रिक्वेंसी के नेटवर्क के लिए ज्यादा टावर की जरूरत होती है।

स्पेक्ट्रम प्रबंधन हेतु नयी योजना

केन्द्रीय संचार व सूचना प्रौद्योगिकी मंत्री ने 30 सितंबर, 2011 को 'राष्ट्रीय आवृति आवंटन योजना' (national FrequencyAllocation Plan-NFAP-2011) 2011 जारी किया। यह दस्तावेज देश में सरकारी व निजी क्षेत्रकों में विकास, विनिर्माण, व स्पेक्ट्रम के उपयोग से जुड़ी गतिविधियों के लिए आधार प्रदान करता है। एनएफएपी-2011 की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित है;

1. यह अंतरराष्ट्रीय दूरसंचार संघ के रेडियो विनियमन के अनुरूप है।
2. इसका विकास अल्ट्रा वाइड बैंड (UWB) इंटेलिजेंट ट्रांसपोर्ट सिस्टम, शार्ट रेंज डिवाइसेज इत्यादि जैसी नई प्रौद्योगिकियों की आवश्यकता के आलोक में किया गया है।
3. स्थानिक विकास व विनिर्माण हेतु कुछ फ्रीक्वेंसी बैंड में इस योजना द्वारा कुछ प्रावधान किए गए हैं।
4. एनएफएपी-2011 में पहले से मौजूद सेवाओं की सुरक्षा सुनिश्चित करने के लिए पूरी सावधानी बरती गई है।
5. सभी हिस्सेदारियों की प्रायोजित मांगों को भी इसमें शामिल की गई है।

इनमारसेट

अंतर्राष्ट्रीय सामुद्रिक उपग्रह प्रणाली–इनमारसेट 72 देशों की एक सामुद्रिक उपग्रह प्रणाली है, जो समुद्री जहाजों, वायुयानों तथा भूमि पर चलने वाले वाहनों को सूचनाएं भेजने एवं उनके संबंध में सूचनाएं एकत्र करने का कार्य करती है। भारत सरकार ने सामुद्रिक और आकाशीय संचार सुविधा के लिए स्वयं को इनमारसेट से संबद्ध कर लिया है। इसके अंतर्गत पूजा के निकट आर्वी में लैंड अर्थ स्टेशन की स्थापना की गयी है, जिसका नाम 'विक्रम इनमारसेट भूमि भू-केंद्र' रखा गया है। इस भू-केंद्र का विकास इनमारसेट-सी सुविधा प्रदान करने हेतु किया गया है। वर्तमान समय में इनमारसेट की तीन प्रणालियां कार्यरत हैं, जो निम्नलिखित हैं–

(i) इनमारसेट-ए: यह मुख्यतया दूरभाष की सुविधा उपलब्ध करता है।

(ii) इनमारसेट-बी: यह मोबाइल फोन की सुविधा उपलब्ध करता है।

(iii) इनमारसेट-सी: यह संपूर्ण विश्व के आंकड़ों का आदान-प्रदान करता है।

इनमारसेट के चार उपग्रह-भू-स्थैतिक कक्षा में स्थित हैं, जिनमें दो अटलांटिक महासागर में तथा एक-एक हिंद महासागर व प्रशांत महासागर में स्थित हैं। इस उपग्रह प्रणाली के अंतर्गत विद्युत संकेतों को उच्च आवृत्ति पर प्रेषित किया जाता है और उच्च आवृति पर संचार के लिए ट्रांसमीटर एवं रिसीवर को इस प्रकार स्थित किया जाता है कि हवा में एक सीधी रेखा द्वारा उनको जोड़ा जा सके। ऐसा इसलिए किया जाता है, क्योंकि उच्च आवृत्ति की चुंबकीय तरंगों का गमन सीधी रेखा में ही होता है और साथ ही लंबी दूरी तक संचार सुविधा उपलब्ध कराने के लिए ट्रांसमीटर और रिसीवर को काफी ऊंचाई पर स्थित करना आवश्यक होता है। इस प्रणाली के अंतर्गत पृथ्वी पर स्थित ट्रांसमीटर से प्रेषित संवादों को उपग्रह द्वारा ग्रहण करके पुनः उसे पृथ्वी पर स्थित किसी रिसीवर तक भेज दिया जाता है, जिससे काफी लंबी दूरी तक संवादों का संप्रेषण हो सकता है और सुदूर पर्वतीय क्षेत्रों में भी संचार सुविधा उपलब्ध करायी जा सकती है। इन उपग्रहों को निजी दूरसंचार तंत्र से जोड़ने के लिए संपूर्ण विश्व में बहुत सारे भूतलीय भू-स्टेशनों की स्थापना की गयी है। विश्व में मोबाइल टेलीफोन के माध्यम से संचार संपर्क प्रदान करने के लिए इनमारसेट 'पी' सेवा का विकास किया गया है। इस सेवा के विकास में महानगर टेलीफोन निगम लिमिटेड (एम.टी.एन.एल) ने भी अपना अंशदान दिया है।

मल्टी मीडिया

यह श्रव्य, दृश्य और कम्प्यूटरों का समायोजन है। मल्टी मीडिया की शुरुआत लेसर डिस्क और पर्सनल कम्प्यूटर के आविष्कारों से हुई। आधुनिक मल्टी मीडिया के आधार सी॰डी॰ में लेसर किरणों का इस्तेमाल होता है। इसमें डिजिटल सूचनाएं भरी होती हैं। ये सूचनाएं संगीत, टेक्स्ट, दृश्य और संकेत के रूप में होती हैं। सी॰डी॰ – रोम का इस्तेमाल इस समय प्रकाशन संस्थाओं, समाचार-पत्रों और पुस्तकों के प्रकाशन में होता है। आई॰एम॰ए॰ (इन्टरक्रिएटिव मल्टीमीडिया एसोसिएशन) नामक एक अंतर्राष्ट्रीय संगठन मल्टी मीडिया को सुचारु रूप से चलाने हेतु निर्धारकों का विकास कर रहा है। इन निर्धारकों को एम॰पी॰सी॰ के नाम से जाना जाता है तथा इनके मानक को विश्वभर में स्वीकार किया जा रहा है। डेस्कटॉप मल्टी मिडिया दो प्रकार के होते हैं- इंटरएक्टिव

तथा नॉन इंटरएक्टिव। व्यापारिक रूप से नॉन इंटरएक्टिव प्रोग्राम ही बनाये जाते हैं। इसमें सूचनाएं वीडियो, ध्वनि, चित्रों इत्यादि द्वारा दिये जाते हैं, जिनका प्रोजेक्शन डेस्कटॉप से सीधे एक बड़े पर्दे पर एल॰सी॰सी॰ प्रोजेक्टर की सहायता से किया जाता है। इंटरएक्टिव मल्टी मीडिया का उपयोग निजी उपभोक्ता करते हैं।

डिजीटल डिवाइड

'डिजीटल डिवाइड' को सूचना प्रौद्योगिकी सम्पन्न और सूचना प्रौद्योगिकी विहीन देशों के बीच आर्थिक शक्ति के अंतर की उत्पत्ति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। यह अनेक अर्थव्यवस्थाओं, देशों, समुदायों तथा व्यक्तियों के बीच व्याप्त है। यह विभिन्न देशों में सूचना प्रौद्योगिकी जैसे पी.सी, मोबाइल, टेलीफोन तथा इंटरनेट आदि के उपयोग से स्पष्ट है। घटती-बढ़ती दरों से सूचना तकनीकी को अपनाने तथा 'डिजीटल डिवाइड' की उत्पत्ति का कारण प्रायः आर्थिक है। विभिन्न देशों तथा समुदायों में लोगों की खरीद शक्ति भिन्न-भिन्न है। संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय तथा पी.सी.की कीमत के बीच 30. 1 का अनुपात है जबकि भारत में यह अनुपात 1:1 है। उसका तात्पर्य यह है कि एक पी.सी खरीदने के लिए भारत में एक वर्ष की आय के मुकाबले में संयुक्त राज्य अमेरिका में 12 दिन की आय खर्च करनी पड़ती है।

प्रौद्योगिकी विभाजन

सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकियों द्वारा शुरू की गयी वर्तमान सूचना क्रांति, आर्थिक विकास की प्रेरक शक्ति है। नयी प्रौद्योगिकियां तेजी के साथ पुरानी प्रौद्योगिकियों का स्थान लेती जा रही हैं तथा उनके उपयोग की तरीका भी बड़ी शीघ्रता से बदलता जा रहा है। क्रय शक्ति तथा आधारभूत ढ़ाचें का अभाव नई प्रौद्योगिकी न अपनाने के अन्य कारण हैं। ये बाधाएं विकासशील देशों में सूचना तथा संचार प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रसार में रूकावट पैदा करती हैं। यह सर्वविदित है कि समय के साथ प्रौद्योगिकी में सुधार होता है तथा कीमत नीचे गिरती है, जिसके फलस्वरूप प्रौद्योगिकी का व्यापक प्रसार होता है। सरकारी हस्तक्षेप तथा नीति भी प्रौद्योगिकी के प्रसार में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। किसी प्रौद्योगिकी के व्यापक प्रसार में सरकारी नीतियों का काफी योगदान होता है। तीव्र प्रौद्योगिकीय परिवर्तन से विकासशील देशों के कारोबार के भविष्य के बारे में काफी अनिश्चिता पैदा हो जाती है।

आर्थिक विभाजन

विभिन्न देशों ने भिन्न-भिन्न समय पर 'औद्योगिक अर्थव्यवस्था' से 'सूचना अर्थव्यवस्था' में प्रवेश किया तथा अब भी अनेक देशों में यह परिवर्तन जारी है। अनेक विशेषज्ञों का मानना है कि सूचना अर्थव्यवस्था औद्योगिक अर्थव्यवस्था को उसी तरीके से प्रभावित करेगी जैसे औद्योगिक अर्थव्यवस्था ने कृषि अर्थव्यवस्था को प्रभावित किया था। सूचना प्रौद्योगिकीयों ने वैश्वीकरण की प्रक्रिया में प्रमुख भूमिका निभाई है जिससे निर्माण इकाइयों को सस्ते श्रमिक उपलब्धता के कारण गरीब तथा विकासशील देशों में स्थानांतरित किया गया। इस प्रकार श्रमिक वर्ग को एक अधिक हानिकारक या खतरनाक 'डिजीटल डिवाइड' 'सूचना उत्पादक' तथा 'सूचना उपभोक्ता' के रूप में विभाजित किया गया है। हमारा समाज भी दो समूहों यथा सूचना प्रौद्योगिकी के उत्पादक तथा उपभोक्ता में विभाजित हो रहा है। कुछ विकसित देश ज्ञान के उत्पादन तथा प्रबंध में सक्रिय होंगे, जबकि अविकसित और पिछड़े राष्ट्र उपभोक्ता होंगे। प्रौद्योगिकी के उत्पादकों व उपभोक्ताओं के बीच यह असमानता समय के साथ और बढ़ेगी।

सामाजिक विभाजन

सूचना अर्थव्यवस्था में आर्थिक विकास के लिए कार्य शक्ति का विकास करना एक निर्णायक कारक है। आज प्रत्येक देश को मानव संसाधन विकास की चिंता है जिसके द्वारा सूचनाकरण की चुनौतियों का सामना किया जा सके। शिक्षा, साक्षरता तथा कुछ हद तक भाषा कार्य शक्ति के विकास में बहुत महत्वपूर्ण होती हैं। केवल उच्च योग्यता वाले व्यक्ति ही सूचनाकरण का लाभ उठा सकेंगे। वर्तमान सूचना युग में साक्षरता दूसरा परिवर्तनकारी अभिकर्ता है। आज के साक्षरों में न केवल आंकड़ा संभालने की योग्यता शामिल है, बल्कि उनके आकलन की भी योग्यता है। पढ़ने, लिखने तथा अंकगणित के बुनियादी ज्ञान के अतिरिक्त उसमें कम्पयुटर कौशल, दृश्य कौशल, तकनीकी कौशल, गणित तथा तर्कशक्ति योग्यता, अंतर भाषीय तथा अंतर संस्कृति योग्यता भी शामिल है।

❖❖❖

जैव प्रौद्योगिकी

CHRONICLE
IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

जैव प्रौद्योगिकी विज्ञान की वह शाखा है जिसमें जीव सम्बन्धी अभिकर्ताओं द्वारा पदार्थों और सेवाओं का निर्माण किया जाता है जैसे शराब बनाना, दूध से दही या पनीर बनाना आदि ये सभी क्रियाएं जैव प्रौद्योगिकी से सम्बन्धित हैं। जैव प्रौद्योगिकी की वैश्विक पहचान, त्वरित रूप से उभरती, व्यापक विस्तार वाली प्रौद्योगिकी के रूप में हुई है। यह विज्ञान का अग्रणी क्षेत्र है जो राष्ट्र की वृद्धि और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका आशय किसी भी प्रौद्योगिकीय अनुप्रयोग से है जो जैव-विज्ञानी रूपों का उपयोग करता और प्रणालियों का प्रयोग करता है वह भी नियंत्रण योग्य तरीके से, जिससे कि नए और उपयोगी उत्पादों और प्रक्रियाओं का उत्पादन किया जा सके तथा विद्यमान उत्पादों को परिवर्तित किया जा सके। यह न केवल मानव जाति को लाभ पहुंचाना चाहता है अपितु अन्य जीव रूपों को भी जैसा कि सूक्ष्म जीव। यह पर्यावरण में हानिकारक हाइड्रोकार्बन कम करके, प्रदूषण नियंत्रण करके अनुकूल पारिस्थितिकी संतुलन कायम रखने में सहायता करता है। वास्तव में जैव तकनीक की संकल्पना कोई नई नहीं है। मद्दकरण पकाना, शराब बनाना तथा पनीर का निर्माण ये सभी क्रियाएं बहुत पहले के समय से चलती आ रही हैं। यूरोपीय जैव प्रौद्योगिकी महासंघ ने विज्ञान की इस शाखा को प्राकृतिक विज्ञान एवं जीवों, उनकी कोशिकाओं तथा कई शारीरिक भागों के मधय का अंतरसम्बन्ध कहा है। अगर ऐतिहासिक नजर डालें तो पता चलता है कि, जैव प्रौद्योगिकी की संकल्पना 6000 ईसा पूर्व विकसित हुई थी। इस अवधि में बेबिलोनिया तथा सुमेर के नागरिकों को मद्द निर्माण का ज्ञान प्राप्त था। 4000 ईसा पूर्व मिस्र निवासियों को भी इस तकनीक का ज्ञान थाद्य 19वी शताब्दी के अंत तक जैव तकनीक के अंतर्गत विकसित हुई तकनीकों की मदद से इथेनोल, ब्यूटानॉल, एसिटिक अम्ल तथा एसीटोन जैसे कई पदार्थों का निर्माण किया जा चुका था। आधुनिक विश्व में सभी देशों में जैव प्रौद्योगिकी के प्रति काफी अधिक रूचि आई है।

जैव प्रौद्योगिकी की सभी विधियों की तीन प्रमुख प्राथमिकताएं हैं-

1. एक ऐसे जैव उत्प्रेरक की खोज जो किसी अभिक्रिया को शुरू करने के लिए आवश्यक है।
2. प्राप्त जैव उत्प्रेरक की कार्यक्षमता में वृद्धि करने के लिए पर्याप्त वातावरण का निर्माण करना।
3. किण्वन प्रक्रिया के माध्यम से विभिन्न उत्पादों का पृथक्कीकरण और शुद्धिकरण।

ज्यादातर जैव तकनीक में इस्तेमाल होने वाले जैव उत्प्रेरक सम्पूर्ण सूक्ष्म जीव होते हैं जिसके कारण यह कहा जा सकता है कि जैव प्रौद्योगिकी कि सम्पूर्ण कार्यविधि सूक्ष्म जीवों से सम्बन्धित होती है।

जैव प्रौद्योगिकी के अंतर्गत वे सभी क्षेत्र आते हैं, जो सजीवों तथा उनसे प्राप्त पदार्थों के कृषि तथा उद्योग में उपयोग के लिए विकसित किये गये हैं। इन तकनीकों के कुछ प्रमुख उदारहण निम्नवत् हैं- जैव-उर्वरक, जैविक गैस, ऊत्तक संवर्द्धन, जीन अभियांत्रिकी, भ्रूण प्रतिरोपण, परखनली शिशु आदि। इस तकनीक के अनेक उत्पादों, जैसे- खमीर (यीस्ट), टीके, एंजाइम, प्रतिजैविक औषधियां, अल्कोहल, एमीनो अम्ल, हॉर्मोन , साइट्रिक, ग्लूकोनिक तथा लैक्टिक अम्ल इत्यादि पर वर्तमान सभ्यता काफी हद तक निर्भर है। जैव तकनीकी में हुआ विकास गत दो दशकों में जीवविज्ञान, आणविक जीवविज्ञान, जीन अभियांत्रिकी तथा रासायनिक अभियांत्रिकी के क्षेत्र में हुई नवीनतम खोजों का परिणाम माना जा सकता है।

जैव तकनीक समाज में क्रांतिकारी बदलाव लाने में सक्षम रहा है, लेकिन इसके अनेक हानिप्रद पहलू भी हैं। वैज्ञानिक विधियों द्वारा, जहां हम कुछ सीमा तक प्रकृति के अजैविक स्वरूप को हानि पहुंचाते हैं, वहीं इसके द्वारा हम जीवन के वास्तविक रूप को ही परिवर्तित कर देते हैं। अनेक अर्थों में इसके परिणाम अभी तक के विनाश के सभी साधनों से भयानक हो सकते हैं। विश्व में लगातार बढ़ती जा रही जनसंख्या की खाद्य व्यवस्था के लिए आजकल मनुष्य फसलों की केवल सर्वोत्तम प्रजातियों का ही उपयोग कर रहा है। आज लगभग 30 प्रकार के पौधों से ही पोषण प्राप्त किया जा रहा है। इनमें से भी केवल गेहूं, चावल एवं मक्का लगभग 70%

आवश्यकताएं पूरी करते हैं। इन फसलों में भी केवल उन्नत प्रजातियों की ही खेती की जाती है। इस प्रकार, अन्य प्रजातियों के विलुप्त होने का खतरा बढ़-सा गया है। वे प्रजातियां विलुप्त होने की ओर अग्रसर हैं, जिनकी हमें भविष्य में आवश्यकता पड़ सकती है। 1840 में आयरलैंड में 20 लाख से अधिक लोग ब्लाइट रोग से ग्रसित आलू खाने के कारण मौत के शिकार हुए थे। फसल की यह किस्म कैरेबियन देशों से लायी गयी एक विशेष किस्म की संतति थी। यदि इस उन्नत प्रजाति को अन्य प्रजातियों से संकरित होने का अवसर प्राप्त होता, तो संभवत: ऐसी बड़ी दुर्घटना से बचा जा सकता था। इसी प्रकार, 1970 के दशक में अमेरिका में मक्के की फसल एवं 1980 में क्यूबा में तम्बाकू की फसल नष्ट हो गयी थी। स्पष्ट है कि प्रकृति की अनेकता को सीमित करना कभी-कभी अत्यन्त हानिप्रद सिद्ध होता है। जीन अभियांत्रिकी की सहायता से कृत्रिम भिन्नता कुछ हद तक सीमित की जा सकती है, परन्तु प्राकृतिक भिन्नता को सीमित करना अप्राकृतिक ही होगा। हालांकि जैव तकनीक से अनेक दुष्प्रभाव संभव हैं, तथापि इन दुष्प्रभावों पर नियंत्रण भी किया जा सकता है। जैव तकनीक के अंतर्गत निम्नलिखित क्षेत्रों का अध्ययन किया जाता है-

1. जीन अभियांत्रिकी,
2. कोशिका संलयन,
3. ऊत्तक संवर्द्धन,
4 किण्वन,
5. जीन थिरेपी (जीन उपचार), तथा
6. क्लोनिंग।

जैव प्रौद्योगिकी: जीवाणुओं, छोटे जंतुओं तथा पादपों की सहायता से वस्तुओं के उत्पादन की प्रक्रिया जैव प्रौद्योगिकी अथवा जैव तकनीक कहलाती है। क्लोनिंग की सफलता ने इस प्रक्रिया को एक अभूतपूर्व गति एवं सामर्थ्य प्रदान कर दी है। रासायनिक संश्लेषण की बजाय जैव संश्लेषण से बनाये गये पदार्थ तुलनात्मक रूप से बहुत ही सस्ते एवं प्रदूषण रहित होते हैं। इस तकनीक का प्रयोग निम्नलिखित क्षेत्रों में व्यापक रूप से किया जा रहा है:

1. औषधियों के निर्माण में: जैव तकनीक ने औषधि उत्पादन के क्षेत्र में एक क्रांति-सी ला दी है। सर्वप्रथम 1982 में इस प्रक्रिया द्वारा इन्सुलिन को प्राप्त करने में सफलता मिली, जिसका व्यापारिक नाम ह्यूमलिन रखा गया। इसने मधुमेह रोगियों के लिए वरदान-सा काम किया है। शरीर में बनने वाले हॉर्मोन, अन्य रोग-प्रतिरोधी प्रतिजैविक प्रोटीन (यथा-इंटरफेरॉन) तथा टीके की उत्तम गुणवत्ता वाले उत्पादन उत्पादन के लिए विशिष्ट रसायनों की प्राप्ति बहुत कम खर्च पर इस तकनीक की प्रगति के कारण संभव हो सकी है। कृषि के अवशिष्ट पदार्थों से महत्त्वपूर्ण रसायन बनाने, एंटीबायोटिक दवाओं, विटामिन एवं स्टीरॉयड के निर्माण में तथा औद्योगिक उत्पादों के संरक्षण हेतु जैव प्रौद्योगिकी का वृहद् उपयोग किया जा रहा है।
2. चिकित्सा क्षेत्र में: जीन की मरम्त कर रोगों की रोकथाम में जीन चिकित्सा तथा संतान के आनुवंशिक गुणों को सुधारने तथा उसके दोषों को दूर करने में जीन इंजीनियरिंग का उपयोग सुजननिकी तथा जराविज्ञान के लिए प्रभावी साबित हुआ है। भ्रूण प्रतिरोधण की तकनीक ने पशुओं की अच्छी प्रजातियों की तेजी से वृद्धि की है तथा अनेक रोगों का सफल इलाज किया है। कृत्रिम प्रजनन द्वारा परखनली शिशु का विकास भी जैव प्रौद्योगिकी के कारण ही संभव हो सका है।
3. पशुधन संवर्द्धन में: जैव प्रौद्योगिकी की विभिन्न विधाओं, यथा-भ्रूण स्थानांतरण, परखनली निषेचन, भ्रूण परिवर्द्धन, किण्वन आदि द्वारा पालतू पशुओं की दशा में कई तरह के सुधार लाये जा रहे हैं। बी॰एस॰टी॰ एक ऐसा कृत्रिम हॉर्मोन है, जो गाय अथवा भैंस के दूध की मात्रा को बढ़ा देती है। लेकिन इसकी कुछ खामियां भी हैं, क्योंकि इससे छूत के रोगों में वृद्धि हो सकती है, पशुओं की जनन क्षमता में कमी आ सकती है तथा गर्मी को झेल पाने में असहजता महसूस होती है।
4. खाद्य सामग्री, ईंधन तथा रसायन उद्योग में: जैव प्रतिकारकों के प्रयोग से बहुत थोड़े समय में कम लागत तथा कम श्रम द्वारा पौष्टिक एवं परिष्कृत खाद्य सामग्रियों का उत्पादन संभव हो सका है। जैव प्रौद्योगिकी द्वारा शैवाल एवं जीवाणुओं में मूलभूत परिवर्तन करके उन्हें संवर्द्धित तथा परिष्कृत करने में मदद मिली है। इससे पौष्टिक भोज्य पदार्थों तथा शक्तिशाली औषधियों के उत्पादन में भी मदद मिलती है। किण्वन प्रक्रिया द्वारा अनेक रसायनों, ईंधनों आदि के उत्पादन में सुधार लाया जा सका है। विटामिनों के संश्लेषण हेतु जीवाणुओं एवं शैवालों का प्रयोग किया जा रहा है। जैव विधि से कार्बनिक पदार्थों के विघटन से प्राप्त गैस का उपयोग ईंधन के रूप में किया जा रहा है।

5. खेती-बागवानी एवं वन विकास में: जैव प्रौद्योगिकी द्वारा अब किसी पौधे में नये तथा उपयोगी गुणों को कुछ ही समय में उत्पन्न करना संभव हो गया है। इससे विभिन्न पौधों के हाइब्रिड भी तैयार किये जा रहे हैं। उदाहरणार्थ, जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर सनबीन नामक विलक्षण गुणों वाले एक पौधे का विकास फ्रेंचबीन तथा सूरजमुखी दोनों के जीनों को मिलाकर किया गया है। इसी प्रकार, पौधे की प्रकाश संश्लेषण एवं श्वसन क्षमता को बढ़ाकर अधिकाधिक उत्पादकता प्राप्त किया जा सकता है। फसलों में किसी खास प्रोटीन की मात्रा में वृद्धि करना भी उससे संबंधित जीनों की नियंत्रण क्षमता में परिवर्तन द्वारा संभव हो सका है। उर्वरकों के रूप में रसायनों के स्थान पर जीनों पर आधारित पदार्थों का उपयोग कृषि कार्य हेतु किया जा रहा है। इन्हें ही जैव उर्वरक कहा जाता है। ये जैव उर्वरक भूमि की उर्वराशक्ति को बनाये रखते हैं।
6. पर्यावरण संरक्षण में: जैव रासायनिक खनन एवं औद्योगिक अपशिष्ट पदार्थों के उपचार की जैव प्रौद्योगिकीय प्रणालियां पर्यावरण संरक्षण में काफी मददगार साबित हुई हैं। खनिजों से धातुओं के निष्कर्षण में अयस्कों को उपयुक्त घुलनशील स्वरूप प्रदान करने के लिए अनेक प्रकार के जीवाणुओं का प्रयोग किया जाता है। यह प्रक्रिया पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण है। खनिज तेलों एवं पेट्रोलियम के स्रोतों से तेल की अधिक प्राप्ति में अनेक सूक्ष्म जीवाणु काफी कारगर साबित हुए हैं। राष्ट्रीय पर्यावरण इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान (नागपुर) के वैज्ञानिकों ने गैस युक्त ईंधनों से हाइड्रोजन सल्फाइट को हटाने के लिए जीवाणुओं का उपयोग किया है। प्लास्टिक, डिटर्जेंट आदि के प्रदूषण रहित उत्पादन में भी जैव प्रौद्योगिकी का प्रयोग बढ़ता जा रहा है।
7. जनसंख्या नियंत्रण में: जैव प्रौद्योगिकी पर आधारित अनेक गर्भनिरोधकों के निर्माण की संभावना बनी है, जिससे जनसंख्या की भीषण स्थिति से निबटने में सहायता मिल सकती है।
8. डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग में: डी. एन. ए. फिंगर प्रिंटिंग, जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र की एक विलक्षण जैविक तकनीक है, जिसका उपयोग सामान्यत: अपराध अनुसंधान क्रम में वास्तविक अपराधियों को पकड़ने में किया जाता है। इस तकनीक से अपराधियों के वंशज अथवा संतति में उनके डी. एन. ए. की संरचना के अध्ययन द्वारा वास्तविकता का पता लगााया जाता है।
9. जैविक खाद का विकास: जुलाई 1999 में टाटा एनर्जी रिसर्च इंस्टीट्यूट ने एक ऐसे जैविक खाद की खोज की (जिसका नाम 'माइकोराइजा' है), जो सब्जियों, फसलों, वृक्षों तथा फूलों की उत्पादकता को बढ़ाने में सक्षम हो सकेगा। कैडिला फार्मास्यूटिकल्स नामक दवा कंपनी ने इस प्रौद्योगिकी को टी.ई.आर.आई. से खरीद लिया है। ध्यातव्य है कि माइकोराइजा वस्तुत: कवकों का मिश्रण होता है, जो स्वयं को पौधों की जड़ों से संबंधित रख कर उनसे एक तरह का सहजीवी संबंध बना लेते हैं। वे वायुमंडल से नाइट्रोजन लेकर उसे पौधों के लिए उपयोगी बनाने का काम करते हैं। ध्यान देने वाली बात यह है कि ये दोनों ही पदार्थ क्रमश: वायुमंडल तथा मिट्टी में मौजूद तो होते हैं, परंतु पौधे इन्हें प्रत्यक्ष रूप से लेने में असमर्थ होते हैं। लेकिन 'माइकोराइजा' इन पदार्थों को ग्रहण कर इन्हें पौधों को स्थानांतरित कर देते हैं।
10. अन्य क्षेत्रों में: इसके अलावा, जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग उत्तक संवर्द्धन, मशरुम संवर्द्धन, जैव कृषि, क्लोनिंग तकनीक आदि में भी व्यापक रूप से किया जा रहा है।

उपयोग एवं अनुसंधान

आनुवांशिक रूपांतरित फसलें

जैव प्रौद्योगिकी से बीमारियों और कीटों की प्रतिरोधी प्रजातियों के जरिए फसल को होने वाले नुकसान को न्यूनतम करने, रासायनिक तत्वों के इस्तेमाल में कमी लाने और फसली पौधों में दबाव सहने की क्षमता बढ़ाने में मदद मिलती है। इस प्रकार अनुत्पादक भूमि पर भी उत्पादक खेती संभव हो सकती है। इससे एक तरफ पर्यावरणीय घटकों से होने वाले नुकसान को कम से कम किया जा सकता है और दूसरी तरफ फलों और सब्जियों को संरक्षित रखने की अवधि बढ़ाई जा सकती है।

कृषि उत्पादकता में वृद्धि के लिए आरएफएलजी पर आधारित आनुवांशिकी अभियांत्रिकी के क्षेत्र में अनुसंधान के महत्व को देखते हुए जैव प्रौद्योगिकी विभाग के चावल, सरसों, अरहर, गेहूं, कपास आदि फसलों पर अनुसंधान कार्य चल रहे हैं। चौलाई से ज्यादा लाइसिन

और सल्फरयुक्त एमीनो अम्ल वाले प्रोटीन का कोड विकसित तथा संश्लेषित किया गया है, जिससे कि खाद्यान्नों में पोषक तत्व बढ़ाए जा सके और बीजों के भंडारण से संबद्ध प्रोटीन के जीनों की कार्यप्रणाली का अध्ययन किया जा सके। नियोमाइसिन, फास्फोट्रांसफेरेज-प्प मार्कर जीन में एग्रो बैक्टीरियम के आनुवांशिक तत्वों का उपयोग कर उड़द की बेहतर किस्म विकसित की गयी है।

सरसों में भी नयी प्रजातियां विकसित करने के प्रयास चल रहे हैं। धान में होने वाली बीमारी के नियंत्रण के लिए उत्तरदायी जीनों का पता लगाने के लिए दो मालिक्यूलर तकनीकें आरएफएलपी और आरएसपीडी विकसित की गयी है। राई में प्रोटोप्लास्ट संलयन और आरएफएलपी मार्करों के माध्यम से समान आनुवांशिक संरचना पर पृथक- पृथक रूपों वाली वर्णसंकर प्रजातियां विकसित की गयी हैं।

जैव उर्वरक

जैव उर्वरक से तात्पर्य है ऐसे सूक्ष्म सजीव जीव जीवाणु जो पौधों के उपयोग के लिए पोषक तत्व उपलब्ध कराए। जैव उर्वरक का सबसे महत्वपूर्ण कार्य नाइट्रोजन उपलब्धता के संदर्भ में है क्योंकि वह वायुमंडल से मुक्त नाइट्रोजन को ग्रहण करके पोषक पदार्थ का निर्माण करता है, जिसका उपयोग पौधे अपनी वृद्धि के लिए करते हैं। भारत में दो प्रमुख जैव उर्वरकों का इस्तेमाल होता है, ये हैं- राइजोबियम और नील हरित शैवाल। राइजोबियम, एजोला, एजोस्पिरिलम, लाइपोफेरम, माइकोराइजा, स्वतंत्र जीवाणु आदि जैव उर्वरक के घटक हैं। राइजोनियम 'लेग्मूमिनस' पौधों की जड़ों में गांठ बनाता है तथा वातावरण में मुक्त नाइट्रोजन को ग्रहण कर पोषक पदार्थ का निर्माण करता है।

एजोला तीव्र गति से विकसित होने वाली 'फर्न' की प्रजाति है, जो पानी पर तैरती रहती है। माइकोराइजा के द्वारा नाइट्रोजन के स्थिरीकरण से पौधों को पोषक पदार्थों की आपूर्ति होती है। एजेटोबैक्टर, बेसिलस, पालीमिक्सा आदि स्वतंत्र जीवाणु गेहूं, चावल, फल आदि की फसलों को पोषक पदार्थ उपलब्ध कराते हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तत्वावधान में चावल के लिए सस्ती शैवालीय जैव उर्वरक प्रौद्योगिकी विकसित की जा रही है।

जैव प्रौद्योगिकी विभाग ने जैव उर्वरक पर 'टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट एंड डेमोस्ट्रेशन परियोजना' शुरू की है। 'ब्लू-ग्रीन-एल्गी परियोजना' भी चल रही है, जिसका उद्देश्य सुदृढ़ अनुसंधान एवं विकास आधार, शैवालीय जैव उर्वरक के वृहत-स्तरीय अनुप्रयोग के लिए निर्मित करना है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद में राइजोबियम परियोजना दो चरणों में चल रही है।

इस परियोजना के मुख्य तत्व है- लाभप्रद सूक्ष्म जैविक तत्वों की पहचान एवं उनका उपयोग, विभिन्न दलहनी तथा तिलहनी बीज फलियों का विकास इत्यादि। बार्क के वैज्ञानिक इस बात के लिए प्रयासरत हैं कि विकिरण का उपयोग कर दलहन पौधों का कुछ ऐसा रूपांतरण किया जाए कि यह व्यापक पैमाने पर हवा से मुक्त नाइट्रोजन ग्रहण कर उसे जमीन में संग्रहीत कर सके। इस संस्थान के वैज्ञानिकों ने गामा किरणों का उपयोग कर सैस्बेनिया रास्ट्रेरा नामक फली वाले पौधों को रूपांतरित किया है।

जैव कीटनाशक तथा जैव रोग नाशक

जैव कीटनाशक तथा जैव रोग नाशक गैर-कारसाइनोजेनिक है। जैव कीटनाशक का मुख्य तत्व बैसिलस थ्यूरिन्जाइएन्सिस है। जैवनाशी के रूप में वाइरसों, बैक्टीरियाओं, कवकों, प्रोटोजोओं एवं चिंचड़ियों का उपयोग किया जाता है। जैविक नियंत्रण का उपयोग मुख्यतः कपास, तिलहन, गन्ना, दलहन तथा फलों एवं सब्जियों के पौधों में होने वाले रोगों उन पर कीटों के आक्रमण से बचाव के लिए किया जा रहा है। जैव कीटनाशकों के व्यापकीकरण को प्रोत्साहन देने के उद्देश्य से दो केंद्रों टीएनएयू और एमकेएनयू में दो जैव नियंत्रण प्रायोगिक संयंत्र लगाए गए हैं। प्रत्येक बीसीजीजी में पर्याप्त जैव नियंत्रक तत्व निर्मित करने का लक्ष्य रखा गया है, जिससे अरहर, मूंगफली, कपास, सूरजमुखी, तंबाकू, अरण्डी, गन्ना, उड़द, मूंग आदि फसलों की आवश्यकताएं पूर्ण हो सके।

जंतु जीव प्रौद्योगिकी

भारत में जैव-प्रौद्योगिकी ने पशुओं के नार नस्ल विकसित करने में, नस्ल सुधार में तथा पशुओं के स्वास्थ्य सुधार में विशेष योगदान दिया है। शारीरिक क्रिया प्रणाली में सुधार तथा जीन-प्रत्यारोपण प्रणाली प्रमुख पद्धतियां हैं। भ्रूण हस्तांतरण के दौरान भ्रूण

के लिंग को जानने के लिए डी.एन. मार्क्स विकसित किए गए हैं जिसे उपभोक्ताओं की आवश्यकता के अनुसार परिवर्तित किया गया है। भ्रूण के लिंग को तय करने का कार्य विशिष्ट बैलों के समूह पर किया गया है। ओपन न्यूक्लिअस ब्रीडिंग के अंतर्गत नर बछड़ों का आनुवांशिक मानवीकरण किया गया है, जो राष्ट्रीय कृत्रिम गर्भाधान कार्यक्रमों के लिए उत्तम शुक्राणु प्रदान करेंगे।

रिंडरपेस्ट जींस डिजीज, ब्लू वर्णीय वायरस, उकप्लेग वायरस, बैसिलस एंथ्रेसिस जैसे रोगों के निवारण के लिए रोग प्रतिरक्षा प्रणाली के विकास पर कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं। स्वदेशी पशु नस्लों की आनुवांशिकता तथा आनुवांशिक गुणों के निर्धारण और विभिन्न नस्लों की युग्म विकल्पी (एलील) आवृत्तियों का अध्ययन किया गया है। पशुओं में बीमारियां दूर करने के लिए टीके और निदानों के विकास की बड़ी परियोजना शुरू की गयी है। मुर्गियों में न्यू केसल बीमारी और दूधारू पशुओं में संक्रामक बोवाइन राइनोट्रेकिएटिस बीमारी के लिए ऊतक संवर्धन पर आधारित टीकों के वैधीकरण के परीक्षण के बाद इन्हें वाणिज्यिक बिक्री के लिए उपलब्ध करा दिया गया है।

स्टेम सेल

चिकित्सा जगत में क्रांति के लिए मानव की अस्थि मज्जा से ऐसी स्तंभ कोशिकाएं खोज ली गयी है, जो कोई भी ऊतक बना सकती हैं। अभी तक यह विशेषता मानव भ्रूण से प्राप्त स्तंभ कोशिकाओं में ही पायी गयी थी। हाल में 'एमएपीसी' की खोज की गयी है जो भ्रूण कोशिकाओं से प्राप्त बीज कोशिकाओं की तरह कोई भी ऊतक बना सकते हैं। स्तंभ कोशिकाओं या स्टेम सेल के द्वारा हजारों तंत्रिकाघात पीड़ितों एवं लाखों ऐसे रोगियों का उपचार करना संभव हो सकेगा जो अनेक प्रकार की ऐसी व्याधियों से पीड़ित है जो उपचार के अभाव में धीरे-धीरे बढ़ती ही जाती है। इस महत्वपूर्ण खोज ने कैंसर के सफल उपचारों और अन्य मानव अंगों जैसे यकृत, हृदय आदि की मरम्मत का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

रासायनिक पदार्थों से जलने, संक्रमण या स्टीवन जानसंस सिंड्रोम के मामलों में आंख के कार्निया में चोट पहुंचने से व्यक्ति अपनी आंखों की ज्योति खो देता है। ऐसे मामलों में अभी तक स्वस्थ आंख से ऊतक का एक हिस्सा लेकर पीड़ित आंख में प्रत्यारोपण का ही विकल्प मौजूद था, लेकिन स्टेम सेल से विकसित ऊतक के साथ ऐसी समस्या नहीं होती। इन कोशिकाओं का इस्तेमाल मांसपेशियों में वंशाणुओं के बर्ताव का विस्तृत ब्यौरा तैयार करने के लिए भी किया जा रहा है।

मानव आनुवंशिकता तथा जीनोम विश्लेषण

मानव की जीन संरचना को समझ लेने के बाद जीन में मौजूद कमी या दोष को दूर करना संभव हो गया है। चिकित्सक ऐसी बीमारियों के लिए दवाओं को इजाद करने में प्रयत्नशील है जो अब तक लाइलाज है, जैसे कैंसर, एड्स, मधुमेह, हृदय रोग, अल्झाइमर आदि।

जैव प्रौद्योगिकी विभाग और नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ मेंटल हेल्थ एंड न्यूरोसाइंसेज द्वारा संयुक्त रूप से दो मानसिक बीमारियों सिजोफ्रेनिया तथा मानसिक डिप्रेशन से पीड़ित लोगों के जेनेटिक संरचना का अध्ययन किया जा रहा है। देश के कोलकाता, दिल्ली, बैंगलूर तथा हैदराबाद में विशेष रूप से मानव जीनोम संबंधी अनुसंधान किए जा रहे हैं। अंग प्रत्यारोपण में आने वाली बाधाओं को दूर करने के लिए अनुसंधान चल रहा है। भारत को अपनी जातीय, जनजातीय और सामुदायिक विभिन्नता के कारण मानव आनुवंशिकी की जीती-जागती प्रयोगशाला माना जाता है। भारत की अनोखी और विशाल आनुवंशिक विविधता से अनेक उपयोगी और कल्याणकारी जीन मिलने की प्रबल संभावनाएं हैं। भविष्य में इनकी मदद से अनेक आनुवंशिक रोगों का इलाज ढूंढा जा सकता है।

पर्यावरण तथा जैव विविधता संरक्षण

आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण तथा औषधीय महत्व की दुर्लभ हो रही प्रजातियों के संरक्षण के जैव प्रौद्योगिकीय तकनीक अपनाने के प्रयोग काफी सफल रहे हैं। दक्षिणी तटीय क्षेत्र की पारिस्थितिकीय प्रणाली के दलदली क्षेत्र की 11 दुर्लभ होती जा रही वनस्पतियों के विस्तार के लिए ऊतक संवर्द्धन तकनीक विकसित की गयी है। डीएनए जांचक तथा एलिसा तकनीक पर आधारित पर्यावरण पर नजर रखने वाली तकनीकें विकसित की गयी हैं।

गैस युक्त ईंधनों से हाइड्रोजन सल्फाइड जैसी प्रदूषक गैस को हटाने के लिए राष्ट्रीय इंजीनियरिंग अनुसंधान संस्थान नागपुर ने जीवाणुओं के उपयोग वाली तकनीक विकसित की है। इसके अतिरिक्त समुद्र अथवा अन्य जल स्रोतों में किसी कारणवश फैले पेट्रोलियम पदार्थों अथवा तैलीय पदार्थों को साफ करने के उद्देश्य से स्यूडोमोनास जीवाणु का विकास किया गया है।

सामाजिक क्षेत्र के कार्यक्रम

जैव-प्रौद्योगिकी प्रक्रियाओं और तकनीकों के लाभ अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति, महिलाओं और ग्रामीण जनता तक पहुंचाने के लिए जैव प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा अनेक कार्यक्रम चलाए जा रहे हैं।

महिलाओं एवं ग्रामीण विकास के लिए प्रौद्योगिकी आधारित कार्यक्रम नामक एक नई योजना शुरू की गयी है, जिसका उद्देश्य डीबीटी एवं अन्य के द्वारा विकसित प्रौद्योगिकियों के आधार पर अपने उद्यमों के लिए ग्रामीण महिलाओं के उत्थान हेतु जैव प्रौद्योगिकीय संयंत्रों का उपयोग करना है। जैव प्रौद्योगिकी पर आधारित अनेक गर्भ-निरोधकों के निर्माण की संभावना है, जिससे जनसंख्या की भीषण स्थिति पर नियंत्रण किया जा सकता है। राष्ट्रीय रोगशोधन के अंतर्गत जैव प्रौद्योगिकी विभाग को टीका उत्पादन के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने का कार्य सौंपा गया है। अनुसूचित जाति/ अनुसूचित जनजाति तथा कमजोर वर्गों के लिए कुकरमुत्ते की बुवाई, वर्मीकम्पोजिंग, मुर्गीपालन, जैव खाद्य, रेशम उत्पादन, जल कृषि तथा औषधीय व सुगंधित पौधों के क्षेत्र में प्रदर्शन तथा विस्तार प्रकार की परियोजनाएं चलाई जा रही हैं।

बायोप्रॉसपेक्टिंग या बायोपायरेसी

बायोप्रॉसपेक्टिंग का अर्थ है वैज्ञानिक अनुसंधान या व्यावसायिक उपयोग अथवा विकास के उद्देश्य से किसी जीव, खनिज या फिर किसी कार्बनिक पदार्थ के जैविक या जेनेटिक (आनुवंशिक) स्रोतों को अलग कर उसका उपयोग करना। ऐसा करने से पहले अगर इन जैविक या कार्बनिक पदार्थों के धारक/स्वामी की इजाजत नहीं ली जाती है और उन्हें इस कार्य का कोई लाभ नहीं दिया जाता तो इसे ही बायो पाइरेसी (जैव-चोरी) कहते हैं। बायोप्रॉसपेक्टिंग को बायोडाइवर्सिटी प्रॉसपेक्टिंग भी कहते हैं जिसके अन्तर्गत प्रकृति के किसी छोटे जीव, पौधे, फंगी आदि के आनुवंशिक अंगों का उपयोग किया जाता है विभिन्न क्षेत्रों में चाहे उसका उद्देश्य वैज्ञानिक हो या फिर व्यक्तिगत लाभ। ऐसे स्रोत प्राय: विभिन्न पर्यावरणीय दशाओं में पाये जाते है जैसे कि अतिवृष्टि वाले जंगलों में, रेगिस्तानों में या फिर जल स्त्रोतों में। आजकल अन्य विकसित देशों में बायोप्रॉसपेक्टिंग की प्रक्रिया काफी तेजी से चल रही है परन्तु इसके अन्तर्गत कई बार उस देश के निवासियों को इस बारे में नहीं बताया जाता है तथा वहां कि जैविक सम्पत्ति का इस्तेमाल अनुसंधान तथा व्यावसायिक उपयोग के लिए बड़ी तेजी से किये जाने का प्रचलन हो गया है। इसीलिए बायोप्रॉसपेक्टिंग शब्द के अन्तर्गत ही 'बायोपाइरेसी' शब्द को सम्मिलित किया जाता है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए ग्रीनपीस नामक संस्था ने बायोप्रॉसपेक्टिंग की प्रक्रिया को धनी एवं गरीब देशों के बीच बढ़ती दूरी का एक महत्वपूर्ण कारण बताया है। उनका यह मानना है कि अन्यविकसित देश ऐसे जैविक स्रोतों के भंडार हैं परन्तु वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीय विकास के अभाव में वे इसका इस्तेमाल नहीं कर पाते हैं और उनकी जगह धनी और विकसित देशों के वैज्ञानिक ऐसा बगैर उस देश विशेष की इजाजत के करने लगे है। अत: अविकसित देश अपने प्राकृतिक संसाधनों के स्वाभाविक लाभ से वंचित रह जाते हैं। नीम के पेड़ का उदाहरण लिया जा सकता है। वर्ष 1995 में अमेरिका के कृषि तथा फर्मास्युटिकल अनुसंधान विभाग ने नीम के पेड़ से एंटीफंगल औषधि बनाने का पेटेन्ट प्राप्त किया। लेकिन नीम का पेड़ सैकड़ों वर्षों से भारत एवं नेपाल में उगता रहा है। यहां के निवासी नीम के औषधीय गुणों से परिचित हैं। अत: भारत ने अमेरिका द्वारा नीम के पोधे के पेटेन्ट को गैर कानूनी माना तथा वर्ष 2005 में इस जैविक चोरी के केस में विजय मिली तथा अमेरिका को मिले पेटेन्ट को रद्द किया गया। भारत द्वारा अपनी बात इस रूप में रखा गया कि भारत ने नीम के पेड़ के औषधीय गुणों के बारे में किसी भी अंतर्राष्ट्रीय जनरल में प्रकाशित नहीं किया गया था। अत: अमेरिका कभी यह दावा नहीं कर सकता है कि उसे नीम के पेड़ के इन गुणों की पहले से जानकारी थी।

जैव प्रौद्योगिकी सूचना नेटवर्क

जैव प्रौद्योगिकी के सभी पक्षों के बारे में नवीनतम जानकारी की बढ़ती जरूरतें पूरी करने के लिए जैव प्रौद्योगिकी विभाग ने जैव प्रौद्योगिकी सूचना नेटवर्क निर्मित किया है। यह नेटवर्क शोधकर्ताओं और उत्पादक गतिविधियों को समन्वित सूचना प्रदान करता है। इनमें जैविक आंकड़ों का विश्लेषण, प्रकाशित दस्तावेजों की ब्योरेवार सूचना, आणविक, मॉडलिंग तथा सिमुलेशन की गणना, प्रधान समस्याओं के लिए सॉफ्टवेयर विकास, जीनोम मानचित्रीकरण, संरचना कार्य, संरचना आधारित दवा डिजाइन, संरचना को क्रमबद्ध

करना, संरचना अनुमान, परमाणु उत्पत्ति, जीन पहचान आदि जैसी सेवाएं शामिल हैं। मोलेक्यूलर और संरचनात्मक जीव विज्ञान के क्षेत्र में इंटरएक्टिव ग्राफिक्स पर आधारित मोलेक्यूटर मॉडलिंग की जांच की राष्ट्रीय सुविधाएं देश के विभिन्न केंद्रों पर विकसित की गयी हैं।

जैव प्रौद्योगिकी सुविधाएं

मस्तिष्क अनुसंधान के लिए गुड़गांव के राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केंद्र मं एक राष्ट्रीय क्रियाशील चुम्बकीय अनुनाद छायांकन सुविधा स्थापित की गयी तथा अखिल भारतीय आर्युविज्ञान संस्थान और एनसीपीजीआर, नयी दिल्ली में 2005-06 के दौरान एप्रतिमिक्स सुविधाएं स्थापित की गयी।

पशुगृह सुविधा, एनआईएन, हैदराबाद में 30,431 पशुओं का प्रजनन किया गया, जिनसे से 26,157 पशु सरकारी अनुसंधान संस्थानों तथा कई भेषजीय कम्पनियों, दोनों को भेजे गये। संस्थाओं द्वारा वर्ष के दौरान सिथेटिक खनिजों और विटामिनों के साथ-साथ प्राकृतिक तत्वों को मिलाकर 22,349 किलोग्राम पशु आहार तैयार किया गया। आईआईटी कानपुर की ड्रोसोफिला डिपॉजिटरी एवं अनुसंधान सुविधा में ट्यूमर बनने के आनुवंशिक आधार के अन्वेषण के लिए अनसुंधान कार्यक्रम में पलाइ मॉडल प्रयोगकिया जा रहा है। बड़े पैमाने पर ड्रोसोफिला की आनुवांशिक जांच शुरू की गयी है, जिसके लिए नोवल जीनट्रैप वैक्टर्स का प्रयोग किया गया है तथा विशिष्ट आनुवांशिक बिदुपष लोकाई पहचाने गए। नोवर ट्यूमरउत्पन्न करने वाले म्यूटेशन्स के साथ इन एकल ट्रांसपोसन एनसर्शन लाइन्स की नोवल रिपॉजिटरी तैयारी की गयी है।

सेंटर फॉर जेनेटिक इंजीनियरिंग एंड स्ट्रोन मैनरिपुलेशन, एमकेयू मदुरैई ने स्ट्रेण्टोमाइसिस के पूर्ण प्रोटिओम के विश्लेषण के लिए शर्तों का मानवीकरण किया है और उन्हें इष्टतम बनाया है।

प्रयोगशाला में ही गर्भाशय का विकास

वैज्ञानिकों ने जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण सफलता हासिल करते हुए गर्भाशय के विभिन्न भागों को प्रयोगशाला में ही विकसित करने का कार्य शुरू कर दिया है। वैज्ञानिकों ने कोशिकाओं से गर्भाशय के कुछ हिस्से बनाने में सफलता भी प्राप्त कर ली है। इन प्रयोगों से यह उम्मीद बंधी है कि बाद में संपूर्ण गर्भाशय का प्रयोगशाला में ही विकास करना संभव हो सकेगा और उसे बाद में महिलाओं में प्रत्यारोपित कर दिया जायेगा। जिन महिलाओं के गर्भाशय पूरी तरह सक्रिय नहीं हैं, उनके लिए यह प्रयोग एक 'मील का पत्थर' साबित हो सकता है।

प्रयोगशाला में इस तरह के प्रयोग उत्तक संवर्द्धन (Tissue Culture) तकनीक पर आधारित हैं। इसके तहत कुछ मूल उत्तकों को प्रयोगशाला में अंगों के रूप में विकसित कर रोगी के शरीर में प्रत्यारोपित किया जाता है। इस प्रयोग में जुटे वैज्ञानिकों का प्रथम उद्देश्य गर्भाशय के क्षतिग्रस्त उत्तकों को बदलना होता है। इससे गर्भाशय को प्राकृतिक रूप से ही ठीक होने में मदद मिल सकेगी। इसके लिए महिलाओं के शरीर के उन उत्तकों का प्रयोग किया जा रहा है, जो शरीर के किसी भी भाग में विकसित किये जा सकते हैं। इस कार्य में प्रमुख चुनौती इस प्रकार के बायोकेमिकल पदार्थ बनाने की होती है, जिसमें इन उत्तकों को विकसित किया जा सके। महिला के गर्भाशय के विभिन्न भाग भ्रूण में शरीर के विभिन्न अंगों के रूप में विकसित होते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि भ्रूण के अगल-बगल भागों का कार्य अलग-अलग होता है अर्थात् विभिन्न भाग भ्रूण में त्वचा, बाल अथवा नाखून के रूप में विकसित होते हैं। इस तथ्य से कृत्रिम गर्भ बनाने में काफी मदद मिल सकती है।

जीन क्या है

आए दिन हम अखबारों में पढ़ते रहते हैं कि किसी बीमारी के लिए एक खास जीन की पहचान की गई है या फिर अधिक सोने के लिए जिम्मदार या हकलेपन के लिए उत्तरदायी जीन की पहचान की गई है। ऐसे में एक आम आदमी के लिए यह जानना महत्वपूर्ण हो जाता है कि आखिर ये जीन है क्या? आम बोलचाल की भाषा में कहें तो, किसी सजीव में आनुवांशिकता की मूल इकाई है जीन। वस्तुतः सजीव के प्रत्येक कोशिका में आनुवंशिक पदार्थ, (डी.एन.ए.) के रेखीय हेलिक्स में पाये जाने वाले प्यूरीन

एवं पाइरीमिडिन समाक्षारकों का रेखीय क्रम जीन कहलाता है। इसी में किसी सजीव की आनुवांशिक विशेषताओं की जानकारी होती है। उदाहरण के तौर पर; बालों का रंग, आंखों का रंग कैसा होगा या किसी को कौन सी बीमारियां हो सकती हैं। ये जानकारी, कोशिकाओं के केन्द्र में मौजूद जिस तत्व में रहती है वह डीएनए कहलाता है। जब किसी जीन के डीएनए में कोई स्थाई परिवर्तन होता है तो उसे म्यूटेशन या उत्परिवर्तन कहते हैं। यह कोशिकाओं के विभाजन के समय किसी दोष के कारण पैदा हो सकता है या फिर पराबैंगनी विकिरण की वजह से या रासायनिक तत्व या वायरस से भी हो सकता है।

जीन अभियांत्रिकी

किसी भी सजीव का लक्षण व अन्य गुण उसके अंदर की जीन संरचना पर निर्भर करता है। जीन अभियांत्रिकी द्वारा न केवल जीनों के स्वरूप में संशोधन करके जीवों के आकार, आकृति, गुण आदि को बदला जा सकता है, बल्कि पूर्णत: नवीन प्रकार के जीवों का भी निर्माण किया जा सकता है। यही तकनीक (जीन अभियांत्रिकी) मानव को जीवों के सृष्टि में हस्तक्षेप की सर्वाधिक क्षमता प्रदान करती है। जीन अभियांत्रिकी द्वारा अनुपयोगी अथवा दूषित सिस्ट्रॉन (डी.एन.ए. का एक अंश, जो प्रोटीन निर्माण में एक पॉलीपेप्टाइड श्रृंखला का निर्धारण करता है) को परिष्कृत करता है अथवा उसको विस्थापित करता है, ताकि आवश्यक व उपयुक्त फीनोटाइप प्राप्त किया जा सके। संकरण इसके लिए सर्वाधिक उपयोग में लायी जाने वाली तकनीक है। जीन अभियांत्रिकी के अंतर्गत उपयोग में लायी जाने वाली मुख्य तकनीक अधोलिखित हैं–

(i) वांछित जैविक पदार्थ का विलगन: इस तकनीक के अंतर्गत विभिन्न जैविक स्रोतों से डी.एन.ए. (डीऑक्सीराइबो न्यूक्लिक एसिड) निकालकर उसका शुद्धिकरण किया जाता है। इसके तहत भारतीय मूल के अमेरिकी नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. हरगोविन्द खुराना द्वारा विशिष्ट न्यूक्लिओटाइडों की श्रेणी के परखनली संश्लेषण की तकनीक विकसित की गयी। संश्लेषण के पश्चात् इन न्यूक्लिओटाइडों (जीनों) को परिष्कृत करने वाले एंजाइमों व समाक्षारों के मिश्रण की सहायता से संवर्द्धित किया जा सकता है। विलगन की इस तकनीक में संयुक्त राज्य अमेरिका के अनुसंधानकर्ताओं का कार्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इनके द्वारा एसरशिया कोलाइ (ई. कोलाइ) बैक्टीरिया से लैकऑपरोन के कुछ जीनों को विलगित व परिष्कृत किया गया है।

(ii) जैविक पदार्थ की ग्राही कोशिकाओं में स्थानान्तरण एवं परिचालन: लैकऑपरोन के जीनों को विलगित व परिष्कृत करने के पश्चात् जीन के अंश को एक जैव पदार्थ अथवा परखनली से दूसरे जैव पदार्थ अथवा परखनली में स्थानान्तरित किया जाता है। इस तकनीक के अंतर्गत कुछ महत्त्वपूर्ण विधियां निम्नवत् हैं–

(क) रूपान्तरण : इस प्रक्रिया के तहत एक कोशिका, ऊत्तक अथवा जीव किसी विलगित जीन (डी.एन.ए.) अंश को अपने चारों ओर से ग्रहण कर लेता है। यह डी.एन.ए. अंश, ग्राही जीव के आनुवंशिक पदार्थ में सम्मिलित हो जाता है। इसके साथ ही, वह ग्राही के गुण भी प्रदर्शित करने लगता है, जिसके संकेत इसकी नयी डी.एन.ए. संरचना पर स्पष्टत: परिलक्षित होते हैं। अभी तक इस प्रक्रिया का प्रयोग अनेक जैविक पदार्थों (पौधों व जन्तुओं) में सफलतापूर्वक किया जा चुका है। हालांकि प्रारंभ में वनस्पति कोशिका की भित्ति, जीन (डी.एन.ए.) के प्रवेश हेतु बाधक मानी जाती थी, परन्तु हाल के कुछ वर्षों में यह बाधा दूर करने में सफलता मिल गयी है। अब इनकी कोशिका भित्ति को एंजाइमों द्वारा पूर्णत: अथवा आंशिक तौर पर नष्ट कर दिया जाता है, जिससे जीनों का प्रवेश आसान हो जाता है।

(ख) पारक्रमण : इस प्रक्रिया के अंतर्गत डी.एन.ए. फेग एवं जीवाणु में आनुवंशिक पदार्थ का आपस में पारगमन होता है। जैसे– लैम्बडा फेग का संक्रमण होने पर इस फेग के डी.एन.ए. का कुछ भाग जीवाणु के गुणसूत्रों में तथा जीवाणु का उतना ही डी.एन.ए., फेग के डी.एन.ए. में मिल जाता है। जीवाणु कोशिका जीवित रहते हुए विभाजित होती है एवं इसकी संतति कोशिका में संकरित डी.एन.ए. विद्यमान होता है। शेष फेग, जिसमें जीवाणु का कुछ डी.एन.ए. आ चुका होता है, अन्य जीवाणुओं की कोशिकाओं को संकरित करता है। उपरोक्त प्रक्रिया उच्च जैविक पदार्थों में भी पायी जाती है। इसे ई. कोलाई के लैक जीनों को टमाटर तथा अरेबिडॉप्सिस में लैम्बडा फेग की सहायता से स्थानांतरित करने के लिए प्रयोग किया जाता है। इस फेग द्वारा ई. कोलाई तथा सालमोनेला जीवाणुओं के गुणसूत्रों से माल्टोज, ट्रिप्टोफान, अरबिनोज ऑपरोन आदि को भी पारक्रमित किया जा सकता है।

(ग) प्लास्मिड : हाल के कुछ वर्षों से जीवाणुओं में मिलने वाले प्लास्मिडों (डी.एन.ए. वलय, जो मुख्य आनुवंशिक पदार्थ से सर्वथा भिन्न होते हैं) को भी जैविक पदार्थों के निर्देशन एवं परिचालन के लिए उपयोग किया जाता है। सामान्यत: प्लास्मिडों पर लिंग-भेद व प्रतिजैविक रोधन आदि के जीन पाये जाते हैं।

प्लास्मिडों द्वारा स्थानान्तरण प्रतिरोधी हेतु दो प्रकार के एंजाइमों-प्रतिरोधी एन्डोन्यूक्लिएज (आर.ई.) एवं लिगेसेज(Ligases) की आवश्यकता होती है। प्रतिरोधी एन्डोन्यूक्लिएज, प्लास्मिड तथा दाता जीव के डी.एन.ए. अणु को कुछ निश्चित बिन्दुओं पर तोड़ देता है। प्लास्मिड के इन टूटे सिरों पर नये डी.एन.ए. अंश जुड़ जाते हैं। जोड़ने का कार्य लिगेसेज एंजाइम द्वारा संपन्न किया जाता है।

दरअसल, प्रत्येक कोशिका किसी भी किस्म की जीव का निर्माण करने की जानकारी से परिपूर्ण होती है। अत: यदि किसी जीव के किसी खास अंग से कोई जीवित कोशिका उपलब्ध हो, तो उस जीव का प्रजनन करना संभव है। प्रत्येक जीन प्रतिलिपिकरण की सतत प्रक्रिया द्वारा अपना प्रतिरूपी जीन तैयार करता रहता है। यही जीन संतानों में पहुंचते हैं तथा वही गुण पैदा करते हैं, जो माता-पिता में विद्यमान होते हैं। जीवन की प्रक्रिया को सुव्यवस्थित ढंग से चलाने के लिए डी.एन.ए. आर.एन.ए. तथा प्रोटीन संश्लेषण के बीच एक सांमजस्य स्थापित रहता है। इस सामंजस्य के विचलन से जीवों में नवीन अभिलक्षण शुरू हो जाते हैं, जिसे उत्परिवर्तन कहते हैं।

नया एवं परिवर्तित जीन पूर्व जीन की तरह ही स्थायी बन सकता है तथा पुन: नये रूपों में उत्पादन करता चला जाता है। कभी-कभी गुणसूत्रों के जुड़ जाने से भी उत्परिवर्तन पैदा हो जाता है। इसी जीन परिवर्तन के कारण हजारों जीव-जंतु पृथ्वी पर आये और चले गये। अधिक उपज देने वाली टिकाऊ फसलें तथा जीव-जंतुओं की नयी नस्लों का विकास भी इसी उत्परिर्वतन की प्रक्रिया के चलते संभव हुआ है।

जीन अभियांत्रिकी के तहत बीमार जीन की मरम्मत, नये जीन संकरणों का निर्माण तथा जीन की संश्लेषण क्षमता के औद्योगिक उपयोग की विधियां विकसित की जाती हैं। जीनों का संलयन, प्रतिरोपण, हस्तांतरण आदि का अध्ययन इसी के द्वारा संभव हो सका है। इसके लिए कुछ खास तरह के जीवाणुओं (यथा-इश्चीरिया कोलाई) का प्रयोग किया जाता है। ये जीवाणु कुछ ऐसे पदार्थों का निर्माण करते हैं, जो डी.एन.ए. अणु को किसी खास जगह पर तोड़ते हैं। ऐसे पदार्थ 'रेस्ट्रिकशन एंजाइम' कहलाते है। डी.एन.ए. लिगेज एक अन्य अणु होता है, जो एक तरह से गोंद का काम करता है और डी.एन.ए. के विभन्न भागों को जोड़ता है।

जीन अभियांत्रिकी से लाभ: जीन अभियांत्रिकी से मानव समुदाय को कई रूपों में लाभ प्राप्त हुए हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं:

1. मानव इंसुलिन, कैंसर एवं वायरस से लड़ने वाले प्रोटीन अर्थात् इंटरफेरॉन तथा हेपेटाइटिस के टीके के विकास में जीन अभियांत्रिकी काफी महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। मानव वृद्धि हार्मोन अर्थात् सोमैट्रेम के विकास में भी इसका प्रयोग हुआ है। मलेरिया एवं एड्स के टीके के विकास हेतु जो भी प्रयोग चल रहे हैं, वे सभी इसी तकनीक पर आधारित हैं। हृदयाघात, उच्च रक्त चाप, हीमोफीलिया आदि के निदान हेतु उचित खोजी पदार्थ भी इसी तकनीक का परिणाम माने जा सकते हैं।
2. हृदय की धमनियों में जम चुके रक्त के थक्के (जो हृदयाघात का कारण बनते हैं) को समाप्त करने के लिए TPA (Tissue Plasminogen Activator) की खोज इसी तकनीक पर आधारित है। यद्यपि यह ज्च शरीर में स्वत: उत्पन्न होता है, परंतु हृदय घात से बचाव हेतु आवश्यक TPA की आपूर्ति जीन अभियांत्रिकी द्वारा ही की जाती है।
3. चूहों में जीनों के सफल स्थानांतरण से यह स्पष्ट हो गयी है कि आनुवंशिक रोगों के इलाज में जीनों का प्रत्यारोपण काफी कारगर हो सकता है।
4. जीन अभियांत्रिकी द्वारा उत्पन्न जीवाणुओं का प्रयोग पौधों में नये प्रकार के जीनों के विकास में संभव हो सका है। ऐसे पौधे प्रोटीन एवं अन्य पोषक तत्त्वों में प्रचुरता रखते हैं और इस तरह ये खाद्य संकट के लिए एक नयी उम्मीद जगााते हैं।
5. अभियांत्रिकी जीवाणुओं की मदद से ऐसी व्यवस्था की जा रही है कि उत्सर्ज्य काष्ठ, जो कागज उद्योग आदि से प्राप्त होते हैं, को चीनी अथवा अल्कोहल के रूप में बदला जा सकता है। इनका प्रयोग एंटीफ्रीज, घोलक तथा कई रसायनों के उत्पादन में प्रारंभिक पदार्थ के रूप में किया जा सकता है।

कोशिका संलयन

इस तकनीक का विकास सर्वप्रथम डॉ. मिलस्टोन कोहलर एवं जेमे द्वारा 1975 में किया गया। बाहरी बहु-आणविक पदार्थ, जो सामान्यत: एक प्रोटीन होता है तथा किसी जीव में प्रवेश करके प्रतिजैविक की उत्पत्ति को प्रोत्साहित करता है, प्रतिजन कहलाता है। इस प्रतिजन के विरुद्ध प्रतिक्रियास्वरूप ग्राही जीव, प्रतिजैविक पदार्थ उत्पन्न करता है। इस विधि के उपयोग से विषाणु, जीवाणु व अन्य सूक्ष्म जीवों से उत्पन्न होने वाली बीमारियों के निदान की राह में काफी सफलता प्राप्त की जा सकती है।

ऊत्तक संवर्द्धन

ऊत्तक संवर्द्धन (Tissue Culture) ऐसी प्रविधि है, जिसके अंतर्गत पौधों व जन्तुओं की कोशिकाओं, ऊत्तकों अथवा अंगों को पृथक कर, उनका नियंत्रित ताप, दाब व अन्य अनुकूल परिस्थितियों में विशेष पात्रों में वर्द्धन किया जाता है। यह संवर्द्धन पात्रों में उपयुक्त पोषक तत्त्वों को उपलब्ध करा कर किया जाता है। इस तकनीक का प्रयोग पौधों की रोग-रोधक व रसायन-रोधक क्षमता को बेहतर बनाने के लिए किया जाता है। पोषक तत्त्वों में ऊर्जा की आपूर्ति मुख्यत: सुक्रोज द्वारा की जाती है, जो संशोधित भागों में उपलब्ध करायी जाती है। पोषक तत्त्व में सुक्रोज के अतिरिक्त लवण, विटामिन, एमीनो अम्ल , ग्लाइसिन आदि भी उपलब्ध रहते हैं। ऊत्तक संवर्द्धन विधि का उपयोग फसल सुधार में निम्नलिखित रूप से किया जा सकता है-

(**i**) सूक्ष्म संचरण: दुर्लभ पौधों को संवर्द्धित करके कृषि, उद्यान-कृषि एवं वन-संरक्षण आदि के लिए उपयोग किया जा सकता है।

(**ii**) रोग मुक्त पादप की उत्पत्ति: वानस्पतिक सूक्ष्म संचरण के दौरान रोग-कारक (विशेषत: विषाणु) भी कंद-मूल, राइजोम आदि के माध्यम से संक्रमित हो जाते हैं। परंतु, यह देखा गया है कि संक्रमित पौधे की प्ररोह शीर्षस्थ विभाज्योतक संवर्द्धन में प्रयोग करने से प्राप्त पौधे रोग-कारकों से मुक्त होते हैं। इस विधि से गन्ने, मीठे आलू आदि की रोगमुक्त प्रजातियां व्यापक रूप से तैयार की जाती हैं।

(**iii**) एंड्रोजेनिक हैप्लॉयड: हैप्लॉयड कोशिकायें ऐसी कोशिकायें होती हैं, जिनके नाभिक में गुणसूत्रों का केवल एक समूह पाया जाता है। प्रकृति में ऐसी कोशिकायें दुर्लभ हैं तथा आनुवंशिकी व पौध-प्रजनन के लिए अमूल्य हैं। प्रत्येक परागकोष में कई हजार हैप्लॉयड कोशिकायें होती हैं। अत: एंड्रोजेनिक हैप्लॉयड का उत्पादन अत्यंत ही लाभकारी है। ऐसे उत्पादन की सूचना सर्वप्रथम दिल्ली विश्वविद्यालय के गुहा व माहेश्वरी द्वारा 1964 में दी गयी। हैप्लॉयड के प्रयोग से नयी प्रजातियां विकसित करने में लगभग आधा समय लगता है। एंड्रोजेनिक हैप्लॉयड के कुछ अन्य लाभ निम्नलिखित हैं-

- एक ही चरण में समयुग्मता प्राप्त की जा सकती है। यदि बड़े स्तर पर प्रयोग किया जाये, तो इसमें पुनर्संयोजन, पृथक्करण तथा स्थिरीकरण के लाभ भी सम्मिलित हैं।
- हैप्लॉयड उत्परिवर्तन प्रजनन के लिए उपयोगी होते हैं।

(**iv**) भ्रूण संरक्षण: अंतरजातीय संकरण द्वारा पारंपरिक पौध-प्रजनन अक्सर असफल हो जाता है। ऐसे में संकरित भ्रूण को माता से निकाल कर ऊत्तक संवर्द्धन द्वारा बचाया जा सकता है। साधारण एवं जंगली सेम तथा साधारण एवं जंगली टमाटर के मध्य अंतर्जातीय संकरण से रोग-रोधी क्षमता जैसे गुण प्राप्त किये जा सकते हैं। ऐसा केवल भ्रूण संरक्षण द्वारा ही संभव है।

(**v**) उत्परिवर्ती का प्रेरण एवं चुनाव: कोशिकाओं को द्रव माध्यम में भी विकसित किया जा सकता है। द्रव माध्यम में कुछ रसायनों द्वारा अलाभकारी कोशिकाओं को पृथक किया जा सकता है, जिनसे उत्तम प्रजाति के पौधे विकसित किये जा सकते हैं।

(**vi**) सोमाक्लोनीय विभिन्नता: ऊत्तक संवर्द्धन से प्राप्त पादपों में विभिन्नता पायी जाती है। इसे सोमाक्लोनीय विभिन्नता कहा जाता है। यह उस समय उपयोगी होती है, जब यह स्थिर हो तथा इसमें पीड़क प्रतिबल एवं बंध्यता के प्रति सहनशीलता हो।

(**vii**) प्रोटोप्लास्ट तकनीक: वनस्पति कोशिकाओं में कोशिका भित्ति के कारण प्रोटोप्लास्ट को विलगित करना थोड़ा कठिन होता है। पादप कोशिका को सेल्युलोज एवं पेक्टिनेज जैसे एंजाइमों की सहायता से भित्तिरहित कोशिका एवं प्रोटोप्लास्ट के रूप में विलगित किया जा सकता है। विभिन्न स्रोतों से प्राप्त प्रोटोप्लास्ट को पॉलीइथीलीन ग्लाइकॉल (पी.ई.जी.) द्वारा संलयित करके ब्रसीका, संकरित निकोटियाना, पेटुनिया, सोलानम आदि प्रजातियों में सफलतापूर्वक संकरित किया जा सकता है। इस विधि द्वारा दो भिन्न प्रजातियों में भी वैज्ञानिक रूप में संकरण संभव है। हालांकि वर्तमान में इसका आर्थिक उपयोग परिलक्षित नहीं हो रहा है।

पादप ऊत्तक संवर्द्धन

बांस (बम्बूसा अरुणडिनेसिया) की खेती के क्षेत्र में एन.सी.एल. को उल्लेखनीय उपलब्धि हासिल हुई है। इसके द्वारा बांस की तीन किस्मों में पादप ऊत्तक संवर्द्धन द्वारा समय से पूर्व फूल लाने में सफलता मिली है। ये किस्में हैं- डेन्डोकलमस स्ट्रिक्ट्स, बम्बूसा अरुणडिनेसिया एवं डेन्ड्रोकलमस ब्रेनडिसी।

इसके अतिरिक्त इलायची, मिर्च, काजू, कॉफी, अदरक, हल्दी आदि के पादपों को कीटाणुओं से बचाने के लिए आर.आर. एल., त्रिवेन्द्रम द्वारा फेरोमोन्स विकसित करने की दिशा में काम किया गया है। हाल ही में शकरकन्द के, फेरोमोन्स का संश्लेषण किया गया है एवं इसे धीरे-धीरे जारी करने के लिए उपयुक्त पैक में उपलब्ध कराया गया है। इसका क्षेत्र परीक्षण सी.टी.सी.आई. , त्रिवेन्द्रम के विशेषज्ञों की सहायता से सफलतापूर्वक किया गया। इस अनुसंधान में एफ.ए.ओ., अन्तर्राष्ट्रीय आलू अनुसंधान केंद्र, पेरू के विशेषज्ञों द्वारा रुचि दिखायी गयी है। यह केंद्र विश्व के प्रमुख शकरकंद अनुसंधान केंद्रों की बड़े पैमाने पर क्षेत्र परीक्षणों में सहायता करता है। आर.आर.एल., जम्मू द्वारा परंपरागत क्षेत्रों में जूविनाइल हॉर्मोंस के प्रयोग से रेशम की पैदावार बढ़ाने के लिए एक कार्यक्रम प्रारंभ किया गया है। इस हॉर्मोन के इस्तेमाल से रेशम के उत्पादन में 15 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

इसके अलावा, पादप ऊत्तक संवर्द्धन द्वारा अब जीव वैज्ञानिकों की दृष्टि से अनेक महत्त्वपूर्ण यौगिकों का निर्माण किया जाने लगा है। इनमें से शिकोनिन (लाल रंग) भी एक है, जिसे शृंगार सामग्री में प्रयोग किया जाता है। ऊत्तक संवर्द्धन द्वारा और भी बहुत से प्राकृतिक पदार्थों को प्रयोगशाला अथवा जैव-रिएक्टरों में बनाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

इस विधि का उपयोग क्लोन की उत्पत्ति, भ्रूण संवर्द्धन तथा नयी प्रजातियों के विकास में भी हो रहा है। इसका प्रयोग प्रयोग कुक्कुट उत्पादन, समुद्री घास तथा मोतियों में संवर्द्धन इत्यादि के लिए बहुतायत से हो रहा है। फसल उत्पादन के क्षेत्र में भी इसका व्यापक उपयोग किया जा रहा है, जिसमें पौधे की कोशिकाओं, उत्तकों अथवा अंगों को पृथक करके उनका नियंत्रित ताप व दाब पर विशेष पात्रों में संवर्द्धन किया जाता है।

मशरुम संवर्द्धन

मशरुम संबर्द्धन तकनीक का उपयोग धान एवं गेंहू के पुआल से उच्च कोटि का प्रोटीन बनाने औषधीय या औद्योगिक रूप से उपयोगी उत्पाद (यथा-साइट्रिक अम्ल, अल्कोहल आदि) बनाने, जल अपघटनीय एंजाइमों तथा एंटीबायोटिक उत्पाद बनाने आदि में किया जाता है। वस्तुत: मशरुम एककोशीकीय यीस्ट होता है।

कुछ खाद्य मशरुम जीवाणु-रोधी होते हैं, जिससे इनका प्रयोग औषधियों के रूप में किया जाता है। कुछ मशरुम में कैंसर रोधी तथा रक्त में कोलेस्टेरॉल की मात्रा घटाने के गुण होते हैं। एड्स रोधी गुणों पर अभी संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देशों में प्रयोग किये जा रहे हैं। नयी प्रौद्योगिकी के तहत अब हानिकारक कवकों की वृद्धि को रोकने के उपाय किये जा रहे हैं। इस क्रम में, ट्राइकोर्डमा हारजिएनम अनेक मृदा कवकों के विरुद्ध एक उपयोगी जैव नियंत्रक साबित हुआ है। कवकों का उपयोग अब कैंसररोधी टेक्साल के उत्पादन में भी होने लगा है। ध्यातव्य है कि टेक्साल एक डाइर्पीनॉयड है, जो स्त्रियों में अंडाशय के कैंसर तथा स्तन कैंसर को काफी कम कर देता है। कवकों का प्रयोग पर्यावरण प्रदूषण में कमी लाने के लिए भी किया जाता है। एस्परजिलस नाइजर तथा कीटोमियम क्यूप्रीयम चर्मशोधक कारखानों से निकले अवशिष्ट पदार्थों में मौजूद विषैले टैनिन को कम कर प्रदूषण को स्वच्छ बनाये रखने में मदद पहुंचाते हैं।

टेस्ट ट्यूब पादप

ऊत्तक संवर्द्धन तकनीक द्वारा टेस्ट ट्यूब शिशु की तरह टेस्ट ट्यूब पादप को भी विकसित किया जा सकता है। इस तकनीक द्वारा पादप कोशिका एवं ऊत्तक का विकास कृत्रिम प्रकाश एवं नियंत्रित जर्मरहित परिस्थितियों में पोषक माध्यम में किया जाता है। पोषक माध्यम के परित: वातावरण जीवाणु रहित रखा जाता है, ताकि किसी भी प्रकार से पोषक माध्यम का संक्रमण नहीं हो सके। प्रत्येक पादप कोशिका में उन पौधों के विकास के लिए तमाम आवश्यक आनुवंशिक सूचनाएं केन्द्रित रहती हैं।

टेस्ट ट्यूब पादप का व्यावसायिक कार्यान्वयन साठ के दशक में प्रारंभ हुआ। इस तकनीक के आधार पर सजावट हेतु पौधों को विकसित करने की अनेक राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय कंपनियां स्थापित की जा रही हैं। इसके तहत अंग संवर्द्धन द्वारा द्रुत गति से

वृद्धि करने वाले पौधे, यथा-युकेलिप्टस, केजुराइना, रोजवुड, लाल चंदन आदि को विकसित किया जा रहा है, जिनकी लकड़ियां व्यावसायिक रूप से काफी महत्त्व रखती हैं।

ऊत्तक संवर्द्धन विधि द्वारा पादप को विकसित करने की तकनीक के तहत जिस पौधे को विकसित किया जाना होता है, उसका एक छोटा-सा टुकड़ा (ऊत्तक के रूप) लेकर एक परखनली, जिसमें पोषक माध्यम एवं वृद्धि नियंत्रक हॉर्मोन उपलब्ध रहता है, में रखा जाता है।

ऊत्तक को पोषक माध्यम द्वारा पोषण मिलता रहता है एवं वृद्धि हॉर्मोन ऊत्तक के कायिक जनन में सहायक होता है। इसके फलस्वरूप, कोशिका में विभाजन की क्रिया प्रारंभ होती है। विभेदित कोशिकाएं छोटे पादप के रूप में विकसित होती हैं। तदुपरांत, इस छोटे पादप को किसी गमले में स्थानांतरित कर दिया जाता है एवं कुछ दिनों के पश्चात् इसे सामान्य भूमि में भी लगाया जा सकता है। इन तमाम प्रक्रियाओं में लगभग 10 महीने की अवधि लग जाती है।

जीन क्लोनिंग एवं बहुगुणिता द्वारा विकसित इच्छानुसार नये किस्म के पौधों के ऊत्तकों द्वारा ऊत्तक संवर्द्धन की सहायता से अधिक संख्या में पादपों को विकसित किया जा सकता है। इस प्रक्रिया की कुछ सीमाएं भी हैं। यथा- ऊतक संवर्द्धन में वयस्क पादप से पादप खंड (ऊत्तक) लिया जाना चाहिए, न कि छोटे अथवा नये पादप से, क्योंकि वयस्क पादप में उनके तमाम गुण विकसित हो चुके होते हैं, जबकि छोटे व अवयस्क पादप में वैसे गुणों के विकसित नहीं होने की आशंका बनी रहती है। भारत में इस संबंध में प्राप्त उपलब्धि भारतीय विज्ञान संस्थान, बंगलौर के शोधकर्ताओं के प्रयास का प्रतिफल है।

जीन थिरेपी

जीन थिरेपी का उद्देश्य शरीर की सामान्य क्रियाओं को पुनः चालू बनाये रखने के लिए शरीर की कोशिकाओं में सामान्य जीनों को प्रवेश कराकर बीमारी का निदान करना होता है। इसका प्रथम सफल प्रयोग सितंबर 1990 में संयुक्त राज्य अमेरिका में बेथेसडा की एक ऐसी चार वर्षीया बालिका पर किया गया, जो Severe Combined Immune Deficiency (S.C.I.D.) रोग से ग्रस्त थी। इस रोग के अंतर्गत जीनों के टूट जाने से उसके शरीर में रोगों से लड़ने की क्षमता समाप्त हो गयी थी। इस बालिका की 10 अरब श्वेत रक्त कोशिकाओं में ऐसे जीन प्रवेश कराये गये, जो सामान्य एवं स्वस्थ थे। अब ऐसी अनेक विधियां खोजी जा चुकी हैं, जिनसे नवीन क्रियाशील आनुवंशिक पदार्थों को मैमेलियन कोशिकाओं में प्रवेश कराया जा सकता है।

सोमेटिक जीन थिरेपी मानव की आनुवंशिक बीमारियों के उपचार हेतु प्रयुक्त की जा रही है। इसमें आनुवंशिक पदार्थ को रोगी की कोशिकाओं में प्रवेश कराने की विधि का सर्वाधिक प्रयोग किया जा रहा है। डॉ. थॉमस कास्के ने जीन अभियांत्रिकी द्वारा एक जीव से दूसरे जीव में जीन स्थानांतरण करने में सफलता पा ली है। उन्होंने एपने प्रयोग के लिए अस्थि मज्जा से प्राप्त डी.एन.ए. का उपयोग किया। अत्यधिक विकसित अवस्था में पहुंच चुके मैलिंगनेट मेलेनोमा (कैंसर) से प्रभावित आधे से अधिक रोगी, जिनमें जीन स्थानांतरण के लिए ट्यूमर इनफिल्ट्रेटिंग लिम्फोसाइव्स तथा इंटरल्यूकिन-2 प्रवेश विधि प्रयोग की गयी थी, सामान्य से अधिक समय तक जीवित रहे। यह विधि अब तक की सर्वाधिक सुरक्षित विधि मानी जाती है। आंकोजीन्स में प्रवेश कराकर कैंसर जैसे घातक रोग को ठीक किया जा सकता है। साथ ही, इंटरल्यूकिन जैसे प्रोटीन युक्त ट्यूमर में जीनों को प्रवेश कराकर रोग प्रतिरोधी क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।

जीन थिरेपी के उपयोग: जीन थिरेपी ने आधुनिक चिकित्सा पद्धति में कई तरह के दूरगामी प्रभाव उत्पन्न कर दिये हैं। जीन थेरेपी के प्रमुख उपयोगों को निम्न रूपों में रखा जा सकता है:

1. कैंसर की रोकथाम: वर्तमान समय में कैंसर की रोकथाम हेतु जो केमोथिरेपी अथवा रेडियोथिरेपी विधि अपनायी जाती रही है, वह शरीर के अन्य भागों की कोशिकाओं के लिए काफी घातक साबित होती है। इसके निदान के लिए आंकोजीन्स एवं ट्यूमर सप्रेसर जीन के विकास ने इन कुप्रभावों से बचने का रास्ता साफ कर दिया है।
2. लिपिड संबंधी अनियमितता: कुछ लोगों में आनुवांशिक तौर पर रक्त में कोलेस्टेरॉल बढ़ने की प्रवृत्ति पायी जाती है। ऐसे लोगों के यकृत में कम घनत्ववाली लाइपोप्रोटीन को ग्रहण करने की क्षमता या तो बिल्कुल ही नहीं होती है या फिर बहुत ही कम होती है, जिससे हृदय एवं रक्त संचरण प्रणाली सामान्य रूप से कार्य नहीं कर पाती है। जून 1992 में एसी ही

एक 29 वर्षीया महिला की जीन थिरेपी से चिकित्सा की गयी और यह देखा गया कि शल्यक्रिया के बाद उस महिला के रक्त में कोलेस्टेरॉल की मात्रा में बिना किसी दवा के उपयोग किये काफी कमी हो गयी।

3. सिस्टिक फाइब्रोसिस में सुधार: जिन रोगियों में सिस्टिक फाइब्रोसिस पाया जाता है, उनके शरीर में एक ऐसा जीन होता है, जो एक विशेष प्रकार का प्रोटीन पैदा करके उसके माध्यम से कोशिकाओं के अंदर एवं बाहर क्लोराइड पहुंचाने तथा उन्हें एकत्रित करने का कार्य करता है। इसके चलते फेफड़ों की सतह पर तथा पाचन तंत्र के उत्तकों में नमक जमा होने लगते हैं, जिससे बाद में सांस लेने में काफी कठिनाई होने लगती है। जीन थिरेपी द्वारा इस गंभीर बीमारी पर काबू पाया जाना संभव हो सका है।

4. फर्टिलाइजेशन क्लीनिक: आनुवंशिकी के क्षेत्र में नित्य नयी-नयी खोजों ने एक ऐसे फर्टिलाइजेशन क्लीनिक की संकल्पना को संभव बना दिया है, जहां दम्पत्तियों को अपनी इच्छानुसार संतति की प्राप्ति हो सकेगी। यदि मां-बाप किसी वंशानुगत रोग से पीड़ित होंगे, तो यह रोग आने वाले बच्चे में नहीं हो पाये, इस बात की व्यवस्था भी की जायेगी। इन केंद्रों में विशेषज्ञों द्वारा महिला के अंडाशय से डिम्ब निकाल कर उसे उसके पति के शुक्राणुओं के साथ फलित कराया जायेगा। इसके बाद इसमें कृत्रिम मानव रंगसूत्र को सुई द्वारा प्रवेश कराया जायेगा। इस कृत्रिम मानव रंगसूत्र में पूर्व-निर्धारित गुण-धर्मों वाले जीन के शामिल होने से स्त्री-पुरुष के डिम्ब एवं शुक्राणु के मिलने से जो भ्रूण पैदा होगा, वह नये गुणसूत्रों के अनुसार ही विकसित होगा।

कृत्रिम गुणसूत्र में एक जीन ऐसा भी होगा, जो कोशिकाओं में रहने वाली दोषयुक्त कोशिकाओं की हत्या करता रहेगा। इसके परिणामस्वरूप, एक स्वस्थ एवं क्षतिरहित भ्रूण की प्राप्ति हो सकेगी, जिसे बाद में महिला के गर्भाशय में प्रविष्ट करा दिया जायेगा। यदि भविष्य में बच्चे को अपने पूर्वजों की भांति ही कैंसर जैसा रोग हो जाता है, तो ऐसी स्थिति में मात्र एक सुई लगााकर ही उसके जीन-तत्त्व को कैंसर कोशिकाओं की समाप्ति हेतु प्रेरित किया जा सकेगा। परिणामस्वरूप, प्रोस्टेट कैंसर के लिए उत्तरदायी कोशिकाएं स्वत: ही खत्म हो जायेंगी।

5. हृदय रोगों से मुक्ति: जीन उपचार पद्धति से हृदय रोगों से निजात पाने के लिए जो प्रयोग हुए हैं, वे काफी उत्साहवर्द्धक माने जा सकते हैं और यदि यही प्रक्रिया एक ठोस उपचार पद्धति के रूप में हमारे सामने आ पाती है, तो बाइपास सर्जरी जैसी महंगी चिकित्सा की कोई जरूरत नहीं रह जायेगी। ध्यातव्य है कि जीन उपचार जटिल शल्य-चिकित्सा की आवश्यकताओं का एक प्रभावी विकल्प है। शरीर का कोई अंग यदि किसी बीमारी से ग्रस्त हो जाता है, तो जीन उपचार द्वारा उस अंग में इस बीमारी विशेष के लिए जिम्मेदार ऐसे जीन की खोज की जाती है, जिसमें गड़बड़ी होने के कारण यह बीमारी होती है। इस तरह के जीन की पहचान हो जाने के बाद प्रयोगशाला में कृत्रिम तरीके से संश्लेषित जीन द्वारा रोगी के शरीर में गड़बड़ी वाले जीन की 'रिपेयरिंग' की जाती है। इस रिपेयरिंग के लिए रोगी के शरीर में डिफेक्टिव जीन की जगह कृत्रिम रूप से तैयार किये गये जीन का नया सेट प्रतिष्ट करा दिया जाता है। नये जीन का यह सेट रोगी के शरीर में 'डिफेक्टिव जीन' को दरकिनार कर उन सारे कार्यों को अंजाम देना शुरू कर देता है, जो 'डिफेक्टिव जीन' के जिम्मे रहता है। इस तरह शरीर का वह अंग जो रोगग्रस्त रहता है, अपनी पूर्व स्थिति में आने लगता है।

6. एड्स निदान में सहायक: वाशिंगटन (अमेरिका)स्थित 'रिसर्च इंस्टीटयूट फॅर जेनेटिक एंड ह्यूमन थिरेपी' के शोधकर्ताओं ने एड्स जैसी खतरनाक बीमारी से लड़ने के लिए जीन थिरेपी (जीवतत्वीय चिकित्सा) के सफल प्रयोग की घोषणा की है। एड्स का टीका प्राप्त करने का यह एक नया तरीका है। बंदरों पर इस टीके का प्रयोग काफी हद तक अनुकूल रहा है और अब इसका प्रयोग मनुष्यों पर किया जाना है। यह इलाज एड्स के उन मरीजों के लिए विशेष लाभकारी होगा, जिन्हें इस समय एक साथ चार-चार खुराकें लेनी पड़ रही हैं। इस प्रकार जेनेटिक थिरेपी को 'इन विट्रो' तथा 'इन विवो' दोनों अध्ययनों में सकारात्मक पाया गया है। ये दोनों ही लैटिन शब्द हैं। इन विट्रो का तात्पर्य ऐसे शीघ्र कार्य से है, जिसमें किसी जीव के शरीर से एक कोशिका लेकर उस पर प्रयोगशाला में कार्य किये जाते हैं, जबकि इन विवो में जीवित प्राणियों पर शेधकार्य किये जातेहैं।

जीनोम एडिटिंग

जीनोम एडिटिंग जीन थिरेपी का ही एक विकसित व आधुनिक रूप है जिसमें उत्परिवर्तित डीएनए की सूक्ष्म अवस्थिति तक पहुंचकर उसे सही करता है। चिकित्सक पहली बार एक सजीव के जेनेटिक कोड की खामियों का जीर्णोद्धार कर घातक रक्त

बीमारी का इलाज करने में सफल रहे हैं। इस उपलब्धि ने जेनेटिक कोड की खामियों के कारण उत्पन्न उन विभिन्न मानवीय बीमारियों के लिए संभावनाएं पैदा की है जिनका आधुनिक दवाओं से इलाज संभव नहीं हैं। इसके लिए जिस तकनीक का इस्तेमाल किया गया उसे जीनोम एडिटिंग कहा गया (Genome Editing)। चिकित्सकों ने इसके जरिये हिमोफिलिया बी से ग्रसित एक चूहिया का इलाज किया गया जिसमें काफी सुधार देखा गया। हिमोफिलिया वस्तुत: रक्त थक्का में खामियों के कारण होती है जिसे 'फैक्टर पग' कहा जाता है। इस जीन की इस खामी को दूर करने के पश्चात हिमोफिलिया रोग को दूर किया जा सकता है। इस हेतु जिंक फिंगर (Zinc Finger) न्यूक्लियस का इस्तेमाल किया गया। जिंग फिंगर खमीर से लेकर मानव जैसे सजीव के जेनेटिक तंत्र का प्राकृतिक हिस्सा होते हैं और प्रत्येक एक अंगुठा जैसा ढ़ांचा डीएनए के किसी विशेषीकृत अनुक्रम से बंधे होते हैं।

इन विट्रो मीट

इन विट्रो फर्टिलाइजेशन के पश्चात अब इन विट्रो मीट की बारी है। मतलब यह कि वह दिन दूर नहीं है जब विश्व का पहला टेस्ट ट्यूब हैमबर्गर आपके समक्ष हो। नीदरलैंड के मैस्ट्रिच विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक इस पर तेजी से काम कर रहे हैं। इस टेस्ट ट्यूब हैमबर्गर में जिस मीट का इस्तेमाल किया गया होगा, वह स्टेम सेल से उत्पादित होगा न कि जानवारों का। वैज्ञानिक ऐसे बर्गर के विकास पर लगे हैं जिसमें विभिन्न पशुओं से निकाले गये 10000 स्टेम सेल का इस्तेमाल किया जाएगा। इन स्टेम सेल को प्रयोगशालाओं में छोड़ दिया जाएगा जो अरबों में तब्दिल हो जाएगा। इस उत्पाद को 'इन विट्रो मीट'(In vitro meat) कहा जाएगा।

ध्यातव्य है कि जिस तरह आबादी बढ़ रही है उससे वर्ष 2050 तक मांस की खपत में दोगुना बढ़ोतरी का अनुमान है। और वैज्ञानिक अनुमान लगा रहे हैं कि अगले दो तीन दशकों में जनसंख्या वृद्धि को देखते हुये सभी को मांस उपलब्ध कराना कठिन हो जाएगाा, ऐसा इसलिए कि पशुओं के लिए चारों की कमी हो जाएगी फलत: पशु भी कम होंगे। इसी के मद्देनजर इन विट्रो मीट की दिशा में वैज्ञानिक काम कर रहे हैं।

क्लोनिंग

स्कॉटलैंड के वैज्ञानिक डॉ॰ इयान विल्मुट तथा उनके सहयोगी वैज्ञानिकों द्वारा अलैंगिक विधि से एक अकेले जनक द्वारा डॉली नामक भेड़ को जन्म दिलाने तथा बाद में उसी तरह से अमेरिका में नेटी एवं डिटो नामक बंदर तैयार करने के अतिरिक्त चीन में छह चूहों को तैयार करने की प्रारंभिक घटनाओं ने विश्वभर में खलबली मचा दी। किसी भी जीव का प्रतिरूप प्रयोगशाला में ही तैयार कर सकने की वैज्ञानिक सफलता ने मानव समुदाय को भयभीत कर डाला है, क्योंकि इस तकनीक की अगली छलांग 'मानव हमशक्ल' तैयार करना ही है। वैज्ञानिकों की इस उपलब्धि से भविष्य में जहां जीवों का नस्ल सुधारना संभव बन गया है, वहीं मानव का 'क्लोन' तैयार करने की आशंका से सामाजिक संबंधों, नैतिकता आदि पर एक प्रश्नचिह्न भी लग गया है। विश्व के अनकक संगठनों, धर्मगुरुओं तथा बुद्धिजीवियों ने ने क्लोनिंग की आलोचना करते हुए इस पर रोक लगाने की मांग की है।

'क्लोन' वस्तुत: एक जीव अथवा रचना है, जो गैर-यौनिक विधि द्वारा एकल जनक (माता-पिता में से कोई एक) से व्युत्पन्न होता है। 'क्लोन' शारीरिक रूप से ही नहीं, बल्कि आनुवंशिक गुणों में भी अपनी माँ अथवा अपने पिता के समरूप होता है। वास्तव में, एक 'क्लोन' अपनी माँ का प्रतिरूप होता है, जबकि सामान्य यौगिक प्रजनन के तहत पैदा हुए बच्चे में माँ व पिता दोनों के आनुवंशिक गुण समाहित होते हैं। जिस तकनीक द्वारा क्लोन पैदा किया जाता है, उसे क्लोनिंग कहा जाता है। इस तकनीक के तहत प्राय: नाभिकीय अंतरण विधि का प्रयोग किया जाता है। किसी एक कोशिका का नाभिक क्रोमोसोम एवं जीन का भंडार होता है, इसलिए इससे एक कोशिका की सभी आनुवंशिक सूचनाएं प्राप्त की जा सकती हैं। नाभिकीय अंतरण विधि के तहत कोशिका के नाभिक को यांत्रिक रूप से निकाल लिया जाता है। तत्पश्चात, नाभिक रहित अंडाणु में प्रतिस्थापित कर दिया जाता है। इसके बाद उन पर हल्की विद्युत तरंगों को प्रवाहित करके निषेचन प्रक्रिया को आरंभ कराया जाता है, जिसके उपरांत कोशिका का तीव्र विभाजन शुरू हो जाता है। इस प्रक्रिया के तहत पूर्ण विकसित अंडाणु को प्रतिनियुक्त माँ के गर्भ में आरोपित कर दिया जाता हे। इसके साथ ही गर्भाधान, बच्चे का विकास तथा उसका जन्म होता है। पारंपरिक रूप से क्लोनिंग तकनीक कृषि एवं बागवानी के क्षेत्र में काफी प्रचलित रही है। इस तकनीक के तहत ये विशेषज्ञ जनक पौधे की एक टहनी से एक संपूर्ण पेड़ पैदा कर देते हैं,

जो अपने जनक पौधे के समरूप होता है। इस प्रकार, यह तकनीक हाल के वर्षों में प्रकाश में आयी कोई नयी वैज्ञानिक विधि नहीं है, बल्कि यह तकनीक कृषि एवं बागवानी के क्षेत्र में प्राचीनकाल से ही प्रचलित रही है।

क्लोन फार्म बनाने की योजना : न्यूजीलैंड में दुनिया का प्रथम 'क्लोन फार्म' बनाने की तैयारी चल रही थी, जिसे बाद में त्याग दिया गया। इस फार्म में 1500 गायें रखी जानी थी। परीक्षण के दौरान लगभग 90 प्रतिशत क्लोनित जानवर मर गये। इसी वजह से क्लोन फार्म की संकल्पना त्याग दी गई।

प्रजनन के लिए इन क्लोनों के प्रयोग के बाद उत्पन्न मादा संतानें जो दूध देती हैं, उसमें मानव माइलिन बेसिक प्रोटीन मौजूद रहता है। दूध से इस तत्त्व को अलग किया जा सकता है, जिसका प्रयोग मल्टीप सिरोसिस के इलाज में किया जा सकता है। यह एक स्नायु विकार है और अकेले ब्रिटेन में करीब 85 हजार लोग इस बीमारी से पीड़ित हैं। न्यूजीलैंड की सरकारी एजेंसी (एजी) रिसर्च का उद्देश्य दूसरी गायों में मानव मायोस्टेटिन जीन प्रविष्ट कराने का भी है। यह जीन मांसपेशियों के विकास को नियंत्रित करता है। इस जीन को प्राप्त कर लेने के बाद गायें अपने दूध में कुछ ऐसे रसायनों का उत्पादन कर सकेंगी, जो मस्कुलर डिस्ट्रॉफी नामक बीमारी के इलाज में मददगार हो सकते हैं। यह एक आनुवंशिक बीमारी है, जिससे मांसपेशियों का विकास रुक-सा जाता है।

जीन गन

'जीन गन' एक ऐसी विकसित आधुनिक जैव तकनीक है, जिसकी सहायता से बाह्य जीन को मस्तिष्क ऊत्तक में प्रत्यारोपित किया जा सकता है। यह तकनीक पर्किंसन रोगियों के लिए एक अत्यंत सुखद पहलू है। इस प्रकार से प्रत्यारोपित जीन, कोशिका में डोपामाइन (डोपा का डीकार्बोक्सिलेटेड रूप) का निर्माण करता है, जो मस्तिष्क कोशिकाओं में अंतरकोशिकीय संचरण में सहायक होता है। पर्किंसन रोग मस्तिष्क से संबंधित एक ऐसा रोग है, जिसमें मस्तिष्क ऊत्तकों में अन्तरकोशिकीय संचार के अभाव में मनुष्य का मानसिक विकास नहीं हो पाता है।

एग्रेसीट्स के निंग-सन यांग, विसकोसीन की एक जैव तकनीक कंपनी एवं विसकोसीन विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा चूहे के मस्तिष्क ऊत्तक में बाह्य जीन को सफलतापूर्वक प्रत्यारोपित किया जा चुका है। इस जीन के प्रत्यारोपण से टायरोसीन हाइड्रोक्सीलेज का निर्माण होता है, जो डोपामाइन का प्रारंभिक रूप है। जीन गन पद्धति के तहत शोधकर्ताओं द्वारा सर्वप्रथम स्वर्ण कण पर डी.एन.ए., जिसे मस्तिष्क कोशिका में अंतर्विष्ट करना होता है, की एक माइक्रोमीटर मोटी परत का लेप चढ़ाया जाता है। इसके पश्चात् चूहे के मस्तिष्क ऊत्तक को बाहर निकाला जाता है तथा डी.एन.ए. युक्त स्वर्ण कण को शक्तिशाली विद्युत विसर्जन द्वारा निर्मित आवेगकारी तरंगों की मदद से मस्तिष्क ऊत्तक की ओर प्रेषित किया जाता है। 'स्वर्ण कण' ग्रिड द्वारा अवरुद्ध हो जाते हैं तथा डी.एन.ए. मस्तिष्क ऊत्तक में लगातार समाहित होते जाते हैं।

डी.एन.ए. फिंगरप्रिंट

डी.एन.ए. फिंगर प्रिंट जैव तकनीक का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है, जिसकी सहायता से किसी बच्चे से संबंधित पैतृक द्वंद्व को समाप्त करने, अपराधी को पकड़ने, करोड़ों वर्ष पूर्व की घटनाओं का पता लगाने आदि जैसे कार्य बखूबी से किये जाते हैं। डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग के नाम से ज्ञात यह तकनीक, दो व्यक्तियों में मामूली अंतर को भी आणविक स्तर पर बता सकती है। आनुवंशिक विशेषज्ञ, मानव की आनुवंशिक संरचना की गहराई से जांच कर उन भागों का पता लगा लेते हैं, जिसकी रचना प्रत्येक व्यक्ति के लिए विशिष्ट होती है। यही संरचना डी.एन.ए. की लम्बीश्रृंखलाओं से बने 46 गुणसूत्रों पर भी होती है एवं उनके क्रियाकलापों को नियंत्रित करती है। डी.एन.ए. में एडिनीन, थायमीन, सायटोसिन एवं ग्वानिन चार प्रमुख घटक होते हैं, जो शर्करा एवं फॉस्फेट अणुओं द्वारा आपस में जुड़े रहते हैं। यह द्विकुंडलित संरचना है, जिसमें एक तंतु का एडिनीन दूसरे के थायमीन से तथा दूसरे का सायटोसिन पहले के ग्वानिन से जुड़ा रहता है। आनुवंशिक रूपरेखा सूचनाओं का एक कोड होता है। इस कोड में प्रत्येक शब्द तीन अक्षरों से मिलकर बना होता है, जिसे आनुवंशिक कोड कहा जाता है। प्रत्येक कोड एक एमीनो अम्ल प्रदर्शित करता है एवं संपूर्ण डी.एन.ए. प्रोटीन अणु का निर्माण करता है।

किन्हीं दो व्यक्तियों में लगभग 90 प्रतिशत डी.एन.ए. समान होते हैं। बाकी के 10 प्रतिशत भिन्न डी.एन.ए. में समाक्षारों का एक विशिष्ट अनुक्रम होता है। डी.एन.ए. फिंगरप्रिंटिंग, डी.एन.ए. के इन्हीं हिस्सों का पता लगाने की युक्ति है। इस प्रकार, इस युक्ति

द्वारा किसी भी व्यक्ति के विशेष आनुवंशिक अंशों की पहचान की जा सकती है, जो किसी व्यक्ति की उंगलियों के निशान अथवा उनके हस्ताक्षर की तरह केवल उसी व्यक्ति की पहचान होती है। इस तकनीक की खोज सर्वप्रथम ग्रेट ब्रिटेन के लीसेस्टर विश्वविद्यालय के एलेक जे. जेफ्रे द्वारा की गयी।

प्रत्येक व्यक्ति के डी.एन.ए में पुनरावृत्त समाक्षार का अनुक्रम भिन्न होता है। यह अनुक्रम जुड़वां बच्चे में एक जैसा हो सकता है। पुनरावृत्तों की संख्या में भिन्नता वाले भाग को वेरियेबल नंबर टेन्डम रिपीट्स (वी.एन.टी.आर.) कहा जाता है। इस अनुक्रम का पता डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग जैसी आधुनिकतम तकनीक द्वारा लगाया जा सकता है। यह कार्य एक विशेष एन्जाइम, एंडोन्यूक्लियेज द्वारा किया जाता है। यह एन्जाइम एक आणविक कैंची की तरह होता है, जो डी.एन.ए. को कुछ विशेष जगहों पर विभिन्न टुकड़ों में काट सकता है, जिनमें वी.एन.टी.आर. भी उपस्थित होते हैं।

आणविक पहचान के लिए डी.एन.ए. के टुकड़े को इलेक्ट्रोफोरेसिस तकनीक द्वारा छांट लिया जाता है। इसके लिए अणुओं को एक रन्ध्र युक्त जेल स्लैब के एक सिरे पर रख दिया जाता है। विद्युत धारा प्रवाहित करने पर ऋण आवेशित डी.एन.ए. के टुकड़े, धन आवेशित इलेक्ट्रोड की ओर अग्रसर हो जाते हैं। छोटे एवं हल्के टुकड़े जेल से होकर पार कर जाते हैं। विद्युत प्रवाह के बंद करने पर जेल में डी.एन.ए. के टुकड़ों की एक पट्टी-सी बंध जाती है। प्रत्येक टुकड़े के रज्जुओं को रासायनिक विधि द्वारा अलग कर लिया जाता है। अलग किये गये टुकड़ों को एक नायलॉन के कागज पर ब्लॉटिंग द्वारा उतार लिया जाता है। इसके पश्चात् दूसरे चरण में किसी पट्टी में डी.एन.ए. के टुकड़ों की पुनरावृत्ति के संबंध में पता करना होता है। इसके लिए एक प्रोब की आवश्यकता होती है। प्रोब डी. एन.ए. का एक ऐसा टुकड़ा होता है, जो उनके ढेर में से डी.एन.ए. के वांछित टुकड़े को ढूंढ़ लेता है। इस प्रोब का निर्माण प्रयोगशाला में किया जाता है एवं इनमें वी.एन.टी.आर. में निहित पुनरावृत्त समाक्षार अनुक्रमों के पूरक होते हैं।

अधिकांश आनुवंशिक फिंगरप्रिंट में दो तरह के प्रोब का इस्तेमाल किया जाता है-बहुस्थानीय (मल्टी-लोकस) प्रोब एवं एकल स्थानीय (सिंगल लोकस) प्रोब। इन प्रोब्स को नायलॉन की झिल्लियों पर पुनरावृत्त अनुक्रम में जोड़ा जाता है। अतिरिक्त असंबद्ध प्रोब को हटा दिया जाता है। इस अवस्था में डी.एन.ए. पर अंकित संकेत का पता चल जाता है, जो कि आंख से दृश्य नहीं होता। इसे देखने योग्य बनाने के लिए नायलॉन शीट से एक एक्स-किरण फिल्म खींची जाती है। वह स्थान, जहां रेडियोधर्मी डी.एन. ए. प्रोब, डी.एन.ए. के टुकड़ों से जुड़े होते हैं, एक्स-रे पर काली एवं स्पष्ट पट्टियों के रूप में दिखायी देने लगते हैं। ये पट्टियां ही डी.एन.ए. प्रोफाइल या डी.एन.ए. फिंगरप्रिंट होते हैं।

इस प्रकार, नाइट्रोजनी क्षारों अर्थात् एडिनीन, थायमीन, ग्वानिन तथा साइटोसिन के आधार पर किसी व्यक्ति की पहचान करने की विधि ही डी.एन.ए. फिंगर प्रिंटिंग कहलाती है। इसकी सहायता से अपराध स्थल पर अपराधी द्वारा अपने शरीर के सजीव-निर्जीव भाग, रक्त, वीर्य, थूक आदि का कोई भी अवशेष यदि छोड़ा जाता है, तो इसकी सहायता से डी.एन.ए. प्रतिरूप की पहचान कर अपराध माता-पिता तथा उसके पूर्वजों की प्रामाणिकता को भी सिद्ध किया जा सकता है। न्यायालयिक विश्लेषण के लिए जैविक प्रतिदर्श के रूप में रक्त, वीर्य, बाल, त्वचा, योनिद्रव आदि का प्रयोग होता है। जहां तक इस पद्धति की असफलता का प्रश्न है, तो व्यक्तियों के डी.एन.ए. फिंगर प्रिंट समान होने की प्रायिकता 3×10^{-11} (लगभग शून्य) होती है।

भारत में इस तकनीक को विधिक मान्यता सन् 1989 में थलसरी (केरल) के कुन्हीरामन बनाम विलासिनी के मामले में मिली। इस मामले में जब कुन्हीरामन ने विलसिनी के पुत्र को अपना बच्चा मानने से इनकार कर दिया, तो हैदराबाद स्थित सेल्यूलर एंड मोलेक्यूलर बायोलॉजी केंद्र के वरिष्ठ वैज्ञानिक डॉ. लालजी सिंह द्वारा इस तकनीक का प्रयोग कर कुन्हीरामन को दोषी ठहराया गया। स्वर्गीय राजीव गांधी की हत्यारिन 'धानू' को प्रमाणित करने के लिए भी इसी तकनीक का प्रयोग किया गया था। इस दिशा में भारत का एकमात्र शोध संस्थान सेल्यूलर एंड मोलेक्यूलर बायोलॉजी केंद्र (हैदराबाद) ही है।

डी.एन.ए. फिंगरप्रिंट से जुड़ी समस्याएं: डी.एन.ए. फिंगरप्रिंट के परीक्षण से अनेक समस्याएं जुड़ी हुई हैं। इसके परीक्षण में काफी सावधानी की आवश्यकता होती है। न्यायिक जांच प्रतिदर्शों, जैसे- कपड़ों पर रक्त के धब्बे आदि में दूसरे पदार्थ भी मिल जाते हैं। ऐसे प्रतिदर्शों में सामान्यत: कवक एवं जीवाणु पाये जाते हैं। रंजक (जैसे डेनिम जीन का नीला रंग) रेस्ट्रिक्शन एन्जाइम से क्रिया करते हैं एवं डी.एन.ए. कई बार गलत जगहों से कट जाते हैं। इसके अलावा, डी.एन.ए. काफी सुग्राही अणु होते हैं, जो गर्म व आर्द्र परिस्थितियों में बहुत जल्दी नष्ट हो जाते हैं। फलस्वरूप, डी.एन.ए. के कभी बहुत कम एवं कभी बहुत अधिक टुकड़े हो जाते हैं। इससे सही तथ्यों का पता नहीं चल पाता है।

पी.सी.आर. तकनीक

पी.सी.आर. (Polymerised Chain Reaction) तकनीक ने अणुविज्ञान के क्षेत्र में एक जबर्दस्त क्रांति ला दी है, जो कि वस्तुतः एक जीन प्रवर्द्धन तकनीक है। पी.सी.आर. जीवन के आनुवंशिक ब्ल्यू प्रिंट अर्थात् डी.एन.ए. की कॉपी (अनुकृति) बनाता है। डी.एन.ए. के छोटे-से टुकड़े से इस तकनीक द्वारा कुछ ही घंटे में करोड़ों अनुकृतियां बनायी जा सकती हैं। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह तकनीक डी.एन.ए. के टूटे रहने अथवा संपूर्ण डी.एन.ए. दोनों ही स्थितियों में प्रभावी होती है। किसी विशेष जीन की 10 लाख से 100 अरब अनकृतियों की जरूरत होती है, जबकि प्रत्येक कोशिका में जीन की केवल दो अनुकृतियां ही होती हैं, जिनमें से एक पिता से प्राप्त होती है, तो दूसरी माता से। आनुवंशिक सूचनाओं की इन सूक्ष्म इकाइयों को लेकर पी.सी. आर. तकनीक द्वारा डी.एन.ए. की बड़ी मात्रा तैयार की जा सकती है। इस प्रकार, केवल एक कोशिका से ही विश्लेषण के लिए पर्याप्त मात्रा में आनुवंशिक पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं। इस तकनीक में मुख्यतया डी.एन.ए. पॉलीमरेज की उत्प्रेरक क्रिया का ही प्रयोग किया जाता है।

डी.एन.ए. को अनुक्रमित करने के लिए प्रतिलोम तथा पंजीकृत पी.सी.आर. के उपयोग आश्चर्यजनक हैं। इन दोनों तकनीकों से डी.एन.ए. उत्पन्न करने के साथ-साथ उस सिरा को बता पाना भी संभव हो सका है, जिनसे संश्लेषित प्राइमरों को जुड़ना अथवा बढ़ना होता है। किसी प्रतिदर्श में बहुत कम मात्रा में उपस्थित अणुओं की पहचान करने के लिए भी इसका उपयोग किया जाता है। पी.सी.आर. का सबसे महत्त्वपूर्ण तकनीकी प्रभाव जो अनुभव किया गया है, वह आनुवंशिक दोषों के लिए उत्तरदायी संक्रामक रोगों का पता लगाना है। इसके प्रारंभिक उपयोगों में से एक एड्स वायरस के लिए संग्राही परीक्षण भी था। इस विधि से एड्स वायरस से संक्रमित माताओं द्वारा जन्मे बच्चों का परीक्षण भी संभव हो सकता है। अब पी.सी.आर. हीमोफीलिया, मस्कुलर डिस्ट्रॉफी, बीटा-थैलसीमिय, सिकिल सेल एनीमिया आदि जैसे वंशानुगत रोगों का पता लगाने के लिए भी प्रयोग किया जा रहा है।

अपराध स्थल से प्राप्त होने वाले रक्त, बाल, सीमेन आदि के डी.एन.ए. प्रतिदर्श इतने कम तथा अस्पष्ट होते हैं कि किसी अन्य तकनीक से उनका विश्लेषण संभव ही नहीं हो पाता है। ऐसे समय में, पी.सी.आर. तकनीक काफी प्रभावी जान पड़ती है, जिससे गुजरे हुए कल की गुत्थियों को सुलझाना सरल हो गया है। पी.सी.आर. तकनीक काफी तेजी से विकसित होती जा रही है और वैज्ञानिक इसकी क्षमता को बढ़ाने के लिए सतत् प्रयत्नशील हैं। वैसे इसकी कुछ सीमाएं भी हैं, जैसे इसकी अति सुग्राहकता कभी-कभी इसे व्यर्थ भी बना देती है अथवा इसके द्वारा वास्तविक अनुक्रम की बजाय किसी अन्य अनुक्रम का पता लगाना, आदि। लेकिन अध्ययनों द्वारा इसकी इस सीमाओं पर कई तरह से नियंत्रण लगाने के प्रयास जारी हैं।

हाल के वैज्ञानिक परीक्षणों से यह बात स्पष्ट हुई है कि पी.सी.आर. तकनीक के माध्यम से एड्स, हिपेटाइटिस-बी तथा सी वायरस एवं क्षय रोग (टी.बी.) जैसे खतरनाक एवं जानलेवा रोगों के जीवाणुओं का अब रोग के शुरुआती चरणों में ही पता लगाया जा सकता है। इस तकनीक की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह अन्य जांच परीक्षणों की तुलना में काफी कम समय में रोग के जीवाणुओं का पता लगा लेता है। इससे समय रहते रोगों पर आसानी से काबू पाया जा सकता है। इससे परिणाम तो जल्द मिलता ही है, साथ ही इसकी प्रामाणिकता भी सौ प्रतिशत सही मानी गयी है। पी.सी.आर. तकनीक भारत जैसे देशों के लिए एक वरदान है, क्योंकि यहां एड्स जैसे जानलेवा रोगों के मरीजों की संख्या में लगातार वृद्धि हो रही है।

शरीर में एंटीजन के विरुद्ध रक्त की धारा में एंडीबॉडीज का पता लगाने में आमतौर पर कई हफ्तों का समय लग जाता है और सबसे बड़ी दिक्कत तो यह है कि एड्स के लिए प्रयुक्त अन्य जांच परीक्षणों, यथा-एलिसा एवं वेस्टर्न ब्लॉट में इतने कम समय में नकारात्मक परिणाम मिलने की संभावना अधिक बनी रहती है। परंतु, पी.सी.आर. तकनीक एक ऐसा संवेदनशील परीक्षण है कि यह एच.आई.वी. तथा हिपेटाइटिस-बी एवं सी के एंटीजन का एकदम शुरुआती चरण में ही पता लगा लेता है। दरअसल, यह एक अत्यंत ही उन्नत रोग-निदान परीक्षण है, जो डी.एन.ए. के परिभाषित क्रम का विस्तार कर देता है। ऐसी स्थिति में, जबकि भारत में अभी तक करीब 35 लाख लोग एच.आई.वी तथा 40 लाख लोग हेपेटाइटिस-बी तथा सी के वायरस के वाहक हैं, पी. सी.आर. तकनीक की भूमिका काफी महत्त्वपूर्ण हो जाती है।

ट्रांसएंब्रियो तकनीक

अमेरिका के ट्रैंजाइम इकॉ. की प्रयोगशाला के वैज्ञानियों ने ट्रांसएंब्रियो नामक एक ऐसी तकनीक विकसित की है, जिससे ऐसे ट्रांसजेनिक जानवरों को तैयार संभव होगा, जिन्हें रोग नहीं लगेंगे। इससे आनुवंशिक रूप से नये जानवरों को तैयार करने की प्रक्रिया में भारत बदलाव आयेगा। विशेष बात यह है कि इस नयी तकनीक से वैज्ञानिकों को चूहे और मूषक ही नहीं लगभग सभी स्तनधारी प्रजातियों के बदले हुए जीन वाले जानवर तैयार करने में सहायता मिलेगी, तात्पर्य यह है कि प्रजातीय बाधाएं समाप्त हो जायेंगी। अभी तक परिवर्तित जीन वाले जानवर पैदा करने की तकनीक को काफी पेचीदा एवं अक्षम माना जाता हैं वर्तमान में जीन की क्लोनिंग के लिए माइक्रोइंजेक्शन का प्रयोग किया जाता है, जिसमें सूई को भ्रूण में डाला जाता है, लेकिन यह प्रक्रिया महज तुक्केबाजी ही है। इस विधि से ट्रांसजेनिक जानवर पैदा करने में मात्र 5 प्रतिशत कामयाबी ही मिलती है। उधर ट्रांसएंब्रियो तकनीक के तहत जीन को भ्रूण की नाभि में लेंटीवायरस के जरिए डाला जाता है। इस वर्ग के वायरस अपनी आनुवंशिक सामग्री के डीएनए को उसकी प्रतिकृति तैयार करने के लिए अपनी पोषक कोशिका में छोड़ देते हैं। इसका सर्वोत्तम उदाहरण एचआईवी वायरस हैं जो विभाजित और अविभाजित होने वाली कोशिकाओं को संक्रमित कर देते हैं। अपनी इसी विशेषता की वजह से ये वायरस जीन पहुंचाने के सर्वोत्कृष्ट माध्यम बन सकते है। ट्रांसएंब्रियो तकनीक के माध्यम से वैज्ञानिकों ने एचआईवी वायरस के उपयोगी गुणों को बरकरार रखते हुए इसके खतरनाक पहलुओं को कल्याणकारी बना दिया है।

ट्रांसएंब्रियो तकनीक की प्रमुख विशेषता यह है कि इसको किसी भी प्रजाति पर आजमाया जा सकता है तथा अलग जीन वाले जानवर के जीवित रहने की संभावना दस गुना अधिक होती है। इस तकनीक के आ जाने से पशु मॉडल तैयार करने की लागत आधी हो सकती है तथा पशु मॉडल के लिए नयी प्रजातियां प्राप्त हो सकती हैं। इससे दवा अनुसंधान को बढ़ावा मिलेगा तथा स्टेम सेल अनुसंधान और अधिक परिष्कृत हो सकेंगे।

ईयर प्रिंटिंग

फिंगर प्रिंट यानी अंगुलियों की छाप से अपराधियों को पकड़ने का फॉर्मूला अब पुराना होता जा रहा है। आधुनिक वैज्ञानिक 'कान की छाप' के जरिये अपराधियों को पकड़ने का प्रयास करने में जुटे हुए हैं। ब्रिटेन के वैज्ञानिक अब इस बात का प्रयास कर रहे हैं कि यूरोप के प्रत्येक सजायाफ्ता अपराधी के कानों की छाप को संग्रहित किया जाये। इससे ऐसे अपराधियों को पकड़ना आसान हो जायेगा, जो अपराध करते समय हाथों में दस्ताने पहनते हैं। कंप्यूटर तकनीक के जरिये वैज्ञानिक अब लूटे गये घर या कार की खिड़कियों पर आमतौर पर पाये जाने वाले कानों के निशान का वर्गीकरण कर अपराधियों की शिनाख्त करवा सकते हैं। यूरोपीय संघ द्वारा इस तकनीक के लिए धन की व्यवस्था की जा रही है।

प्रारंभिक तौर पर इस अध्ययन पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है कि प्रत्येक कान, दूसरे कान से किन रूपों में भिन्न होता है? ऐसा खुलासा हो जाने पर कान की छाप भी व्यक्ति के डी.एन.ए. की तरह न्यायालय में पेश किये जाने लायक अकाट्य सबूत बन सकेगी, ऐसी आशा है।

सिंथेटिक डीएनए कोडिंग

सिंथेटिक डीएनए में सूचनाएं या संकेत डालकर उसे किसी भी डिजाइनर ड्रेस, सीडी, परफ्यूम या किसी भी अन्य उत्पाद से सम्बद्ध किया जा सकता है। उत्पाद के डीएनए कोड से उसके असली होने की गारंटी मिलेगी और इसके कोड को तोड़ना जालसाजों के लिए नामुमकिन होगा। इससे नकली उत्पाद बनाने के अरबों डॉलर के विश्वव्यापी कारोबार पर प्रभावी अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है। डीएनए कोडिंग से नकली पासपोर्ट, परिचय पत्र और अन्य दस्तावेज बनाने पर भी रोक लग सकेगी। उल्लेखनीय है कि वैज्ञानिकों को इस खोज की प्रेरणा दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान जर्मन जासूसों द्वारा किए जाने वाले कूट लेखन से मिली। वे बड़ा से बड़ा संदेश भी एक सूक्ष्म बिंदू में लिख डालते थे। सिंथेटिक डीएनए कोडिंग प्रणाली का विकास न्यूयॉर्क के माउंट सिनाई स्कमूल ऑफ मेडिसिन के दो वैज्ञानिकों ने सूचनाएं छिपाने के लिए किया है। इससे जुड़े वैज्ञानिकों के अनुसार इस तकनीक का उद्देश्य मानव जीनोम को जटिलता का लाभ उठाते हुए डीएनए में लिखे कोड को छिपाना है। इस विधि से लिखे

कोड को ढूंढ़ना असंभव होता है। इस तकनीक का उपयोग करने वाले निर्माता डीएनए कोडिंग के लिए विभिन्न संख्याओं या संकेतकों का प्रयोग कर सकते है। इन्हें एक डीएनए निडिल की मदद से सिंथेटिक डीएनए पर लिखा जा सकता है। नायलॉन के टुकड़े पर डीएनए कोडिंग करके उसे किसी भी कपड़े पर लगाया जा सकेगा। इसका आकार एक डाक टिकट के चौथाई हिस्से के बराबर होगा। इस प्रकार चिकित्सा विज्ञान और अपराधियों की धरपकड़ के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा डीएनए अब नकली सामान की धरपकड़ में भी विशेष भूमिका निभाएगा।

सिंथेटिक कोशिका

अमेरिका के मेरिलैंड के शीर्ष जीनोम वैज्ञानिक जे. क्रेग वैंटर के नेतृत्व में 24 सदस्यी वैज्ञानिकों की टीम को प्रयोगशाला में कृत्रिम जीवन तैयार करने की दिशा में महत्वपूर्ण सफलता मिली है। 20 मई, 2010 को डा. वेंटर द्वारा की गई घोषणा के अनुसार वैज्ञानिकों ने ऐसी सिंथेटिक कोशिका तैयार करने में सफलता पाई जिसके डीएनए की प्रोसेंसिग पहले ही कर ली गई थी। प्रयोगशाला के सुरक्षित वातावरण में बैक्टेरिया की जेनेटिक प्रोग्रामिंग कर कर उसे एक कोशिका में प्रत्यारोपित कर दिया गया। इससे बने जीवाणु की शकल और व्यवहार ठीक वैसा ही निकला जैसा कि वैज्ञानिक चाहते थे। जे.क्रेग वेंटर इंस्टीट्यूट के डा. क्रेग वेंटर की अगुवाई में वैज्ञानिको की टीम ने इससे पहले बैक्टीरिया का सिंथेटिक जीनोम बनाकर उसे दूसरे बैक्टीरिया में प्रत्यारोपित किया था। बाद में इस बैक्टीरिया के जीनोम को एक अन्य बैक्टीरिया में डाला गया था। मगर इस बार डा. वेंटर ने दोनों तरीकों को मिलाकर चार रासायनों की मदद से सिंथेटिक कोशिका बनाई है।

डा. वेंटर के मुताबिक सिंथेटिक डीएनए के जरिए कोशिका पर नियंत्रण पाने के बाद वैज्ञानिक भविष्य में इनके जरिए बीमारियों का मनचाहे तरीके से मुकाबला करने वाली दवाइयां बना सकेंगे। इसके अलावा तेजी से घटते जैविक ईंधन का विकल्प खोजने में भी इन बैक्टीरिया की मदद ली जा सकती है। यहां तक कि ग्रीन हाउस गैसों को सोखने एवं प्रदूषित जल को स्वच्छ करने में भी ये बैक्टीरिया काम आ सकते हैं।

उल्लेखनीय है कि डा. क्रेग वेंटर वही विवादित वैज्ञानिक हैं, जिन्होंने एक दशक पहले ही मानव जीनोम को डिकोंडिग करने की तकनीक को ईजाद की थी। अब उनकी इस नई खोज को कलोनिंग के जरिए तैयार की पहली भेड़ डॉली और माइक्रोसॉफ्ट ऑपरेटिंग सिस्टम के बराबर माना जा रहा है। अर्थात कृत्रिम तरीके से ही लेकिन मौत को मात देने की कोशिश में एक नया मील का पत्थर जुड़ चुका है। क्रेक वेंटर की टीम में तीन भारतीय मूल के वैज्ञानिक -संजय वाशी, प्रशांत पी. परमार और सुश्रीराधार कृष्ण कुमार शामिल हैं। वैज्ञानिकों का कृत्रिम जीवन बनाने का दावा सफल सिद्ध होता है तो चिकित्सा के क्षेत्र में अभूतपूर्व क्रांति लाई जा सकेगी। सबसे अहम बात यह है कि कैंसर जैसी कई लाइलाज बीमारियों को जड़ से खत्म किया जा सकेगा।

वैज्ञानिकों ने माइक्रोप्लाज्मा सायकोइड्स नामक एक ज्ञात बैक्टीरिया के डीएनए की पूरी संरचना यानी जीनोम का पूरा अध्ययन किया। फिर उस सूचना को एक डीएनए सिंथेसाइजर में डाला गया, जिसमें उस बैक्टीरिया के डीएनए के साथ डीएनए की कुछ छोटी-छोटी लड़ियां बनी। इसके बाद इन लड़ियों को यीस्ट और इ. कोली बैक्टीरिया में प्रविष्ट कराया गया जिसने इन छोटी-छोटी लड़ियों से डीएनए की बड़ी लड़ियां तैयार कर दी। अब इन सभी लड़ियों को जोड़कर पढ़ा गया और वहां निशान लगा दिए गए जहां उस बैक्टीरिया के डीएनए की संरचना में ये नई लड़ियां जुड़ी थी। इस तरह वे डीएनए की बिल्कुल नई प्रतिकृति संरचना या जीनोम तैयार करती थी। अंत में इस कृत्रिम जीनोम को एक-दूसरे बैक्टीरिया में प्रविष्ट कराया गया तो बैक्टीरिया बढ़ने लगे और उसमें कुछ ऐसे थे, जिनमें प्रयोगशाला में निर्मित तया जीनोम भी देखा गया। इस पूरी प्रक्रिया को पूरा होने में एक दशक से भी अधिक का समय लगा एवं लगभग 4 करोड़ की राशि खर्च हुई।

वैसे इस अनुसंधान के दुरुपयोग को लेकर भी आशंकाएं कम नहीं हैं। इस बात का डर है कि जीवन की रचना करने की शक्ति मिलने के साथ ही न सिर्फ तमाम तरह के जैविक युद्ध हो सकते हैं बल्कि मानव की नस्ल के साथ छेड़-छाड़ भी संभव हो सकता है। इसलिए वैज्ञानिकों और पर्यावरणविदों का कहना है कि यह सुनिश्चित करना होगा कि इसके कोई गलत इस्तेमाल न हो पाए। वैसे डा. वेंटर ने स्पष्ट किया कि यह अनुसंधान केवल साकारात्मक एवं लाभदायक पक्षों को ध्यान में रखकर ही किया गया है।

इनविट्रो फर्टिलाइजेशन

जंतु शरीर के बाहर किसी कल्चर पात्र में अंड और शुक्राणु के संयोग व इससे जायगोट बनने की प्रक्रिया को इनविट्रोफर्टिलाइजेशन कहते हैं। इसके लिए स्वस्थ्य नर और मादा जंतुओं से क्रमशः शुक्राणु और अंड प्राप्त करते हैं। फिर उपयुक्त दशाओं में संकलित करके उनसे जायगोट उत्पादित करते हैं। कुछ समय तक इन जायगोट का पात्र कल्चर करके तरूण भ्रूण प्राप्त करते हैं। इसे अंततः स्वस्थ्य एवं उपयुक्त मादाओं के गर्भाशय में प्रतिरोपित किया जाता है जिसे भूण प्रतिरोपण या एम्ब्रयो ट्रांस्पलांटेशन कहा जाता है।

यह तकनीक नई नहीं है, लेकिन इस समय भारत में किराये के कोख के बढ़ते चलन के मद्देनजर इनविट्रोफर्टिलाइजेशन विशेष चर्चा में है। वैसे भारत में कानून इनविट्रोफर्टिलाइजेशन पद्धति से बच्चों को पैदा करने की इजाजत नहीं देता है। दूसरी ओर यह समस्या इसलिए भी गंभीर है कि भारत में किराये की कोख का इस्तेमाल भारतीयों से कहीं अधिक विदेशी कर रहे हैं। दरअसल भारत में इनविट्रो फर्टिलाइजेशन की पद्धति से औलाद प्राप्त करना अमेरिका और यूरोप से सस्ता एवं सुरक्षित है। इस तरीके से बच्चे प्राप्त करना भारत के मुबंई और गुजरात में उद्योग का दर्जा हासिल कर चुका है और इसका फैलाव अन्य प्रांतों में हो रहा है। फिलहाल भारत में किराये की कोख का बाजार एक हजार करोड़ से लेकर पांच हजार करोड़ रुपयों के बीच है।

समस्या यह है कि किसी स्पष्ट कानून के अभाव में विदेशी भारत आकर इन विट्रो फर्टिलाइजेशन तकनीकी के अंतगंत किराये की कोख से बच्चों का सुख तो प्राप्त कर लेते हैं, किन्तु भारतीय कानून की उलझनों की वजह से वे अपने बच्चों को अपने देश नहीं ले जा पाते हैं। सबसे बड़ी परेशानी बच्चों की नागरिकता को लेकर है। इनविट्रोफार्टिलाइजेशन की पद्धति से पैदा बच्चे की नागरिकता को रेखांकित या परिभाषित करना बेहद मुश्किल होता है। इसके कारण बच्चे का भविष्य अंधकारमय हो जाता है। इन उलझनों को देखते हुए ही 15 जुलाई, 2010 को 8 यूरोपीय देशों जर्मनी, फ्रांस, पोलैण्ड, चेक गणराज्य, इटली, नीदरलैंड, वेल्जियम और स्पेन ने इनविट्रो फर्टिलाइजेशन पद्धति से बच्चा पैदा करवाने वाले भारत के डॉक्टरों से कहा है कि उनके वाणिज्य दूतावास की सहमति के बिना उनके नागरिकों को किराये की कोख की सुविधा उपलब्ध नहीं करवायें।

जैव प्रौद्योगिकी पार्क

जैव प्रौद्योगिकी पार्क का उद्देश्य एक जैव प्रौद्योगिकी औद्योगिक क्लस्टर के निर्माण के माध्यम से उत्पाद विकास और नवाचार को सरल बनाना और अनुसंधान तथा नवाचार में सशक्त आधार रखने वाले जैव प्रौद्योगिकीविदों और उद्यमियों को तैयार करना है। केन्द्र और राज्य सरकार, दोनों सार्वजनिक-निजी भागीदारी के माध्यम से जैव प्रौद्योगिकी पार्कों, इन्क्यूबेटरों की स्थापना के साथ-साथ प्रायोगिक परियोजनाओं के द्वारा देश में जैव प्रौद्योगिकी गतिविधियों को बढ़ावा देने का भरपूर प्रयास कर रही हैं। यह देश में जैव प्रौद्योगिकी के व्यावसायिक विकास को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक है जिससे नए उद्यामों को प्रोत्साहन और जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र की स्टार्टअप कंपनियों को बल प्रदान किया जा सके।

जैव कृषि एवं जैव उर्वरक

हरित क्रांति में कीटनाशकों और रासायनिक उर्वरकों के प्रचुर मात्रा में उपयोग के हानिकारक प्रभाव अब सामने आ रहे हैं। इसलिये जैविक खेती के प्रति आकर्षण उन इलाकों में ज्यादा दिखाई पड़ रहा है जो हरितक्रांति के वाहक रहे हैं। इनमें पंजाब अग्रणी था, लेकिन पिछले दिनों विज्ञान एवं पर्यावरण केंद्र के एक सर्वेक्षण में यह बात सामने आयी कि पंजाब के किसानों के खून में भी रासायनिक उर्वरक और कीट नाशकों के तत्व फैल चुके हैं। और हरियाणा के कई क्षेत्रों में पानी तीन सौ फीट नीचे तक प्रदूषित हो गया है। अन्य प्राकृतिक संसाधन भी नष्ट हुए हैं। यहां तक कि पांच वर्ष पूर्व जितनी उपज प्राप्त करने के लिये अब तब की लगभग दोगुनी मात्रा में खाद डालने की जरूरत पड़ने लगी है। इससे मिट्टी की जैविकता निरंतर कम होती गयी है और अब घटकर मात्र 0.2 प्रतिशत रह गयी है।

क्या है जैव कृषि?

यह कृषि की वह पद्धति है जिसमें पर्यावरण को स्वच्छ तथा उसमें संतुलन बनाये रखकर मिट्टी, जल और वायु को बिना प्रदूषित किये जमीन को स्वस्थ एवं सक्रिय रखकर दीर्घकालिक स्थिर उत्पादन प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रणाली में रसायनों और उर्वरकों का उपयोग कम से कम तथा बहुत आवश्यक होने पर ही किया जाता है। तुलनात्मक दृष्टि से खेती की यह प्रणाली

रासायनिक खेती की यह प्रणाली रासायनिक खेती की अपेक्षा सस्ती और टिकाऊ है। जैव कृषि में मिट्टी को जैविक माध्यम माना जाता है न कि भौतिक माध्यम और उत्तरीरक्षा को आवश्यक माना जाता है। अन्यथा विक्षोभ उत्पन्न हो जायेगा। सस्यचक्र प्रणाली, जैवउर्वरक वर्मीकंपोस्ट, रासायनिक उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, जैव कीटनाशी आदि जैव कृषि प्रणाली के महत्वपूर्ण घटक हैं। इस आधार से देखने पर यह साफ होता है कि रासायनिक कृषि प्रणाली निरंतर बनी रहने वाली प्रणाली नहीं है इसीलिये इस बात पर बल दिया जा रहा है कि पौधों के पोषण के लिये रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम करके जैविक पोषण को वरीयता दिया जाये। वस्तुत: जेव कृषि को तीसरी हरित क्रांति एवं सदाबहार कृषि क्रांति के रुप में देखा जाना चाहिये। परंतु इन सबके बीच इस बात का पर्याप्त ध्यान रखना होगा कि उत्पादन के स्तर और प्रगति की दर बनी रहे।

जैव उर्वरक

टिकाऊ खेती के लिये आवश्यक है कि उत्पादन प्रक्रिया में पुनर्नवीकरणीय स्त्रोतों का उपयोग हो जिससे पारिस्थितिकीय संतुलन को बरकरार रखते हुए पर्यावरणीय क्षति को कम किया जा सके। रासायनिक उर्वरकों के स्थान पर जैव उर्वरकों का प्रयोग इस दिशा में एक महत्वपूर्ण प्रयास है। जैव उर्वरक सूक्ष्म जीवाणुयुक्त टीका है जो वायुमंडल से नाइट्रोजन के योगिकीकरण द्वारा एवं फास्फोरस को अघुलनशील से घुलनशील अवस्था में करके कार्बनिक पदार्थों का विघटन तीव्रगति से करता है। इसके अलावा वोसिकुलर एरबसकुलर माइकोराजा पौधों की वृद्धि, मृदा की उर्वरता और उत्पादकता को बढ़ाता है। जैव उर्वरकों का मूल स्त्रोत मृदा तथा जल है। कृषि वैज्ञानिकों को एक वर्ग रासायनिक उर्वरकों एवं जैव उर्वरकों के संतुलित उपयोग के पक्ष में है तथा इसके लिये समन्वित पादप पोषक-तत्व आपूर्ति प्रणाली की परिकल्पना की है। इस परिकल्पना को क्रियात्मक रुप प्रदान करने के लिये पोषक-तत्वों के रासायनिक स्त्रोत के साथ ही निम्नलिखित पदार्थों का भी प्रयोग करते हैं:

- फसल अवशेष
- पुनर्चकित अपशिष्ट
- कार्बनिक खाद (हरीखाद)
- शहरी तथा ग्रामीण व्यर्थ पदार्थ
- प्राकृतिक खनिज पदार्थ
- जैव उर्वरक

प्रमुख जैव उर्वरक निम्नलिखित हैं:

राइजोबियम

मिट्टी में पाये जाने ऐसे जीवाणु जो दलहनी फसलों की जड़ों में ग्रंथियां निर्मित करते हैं, उन्हें क्लोएवर व श्रोथ (1978) ने मूलीय जीवाणु का राइजोबैक्टीरिया नाम दिया है। ये हल्के लाल अथवा गुलाबी रंग के होते हैं, तीव्रगति से बढ़ते हैं तथा कुछ अम्ल भी निर्मित करते हैं। ऐसे राइजोबियम नाम से जाना जाता है। भारत में उगाई जाने वाली सामान्य दलहनी फसलों में केवल सोयाबीन ही ऐसी फसल है जिसकी जड़ों में ग्रंथीकरण ब्रेडीराइजोबियम द्वारा होता है। शेष अन्य दलहनी फसलों के लिये राइजोबियम उपयोगी है। भारत की परंपरागत दलहनों, जैसे-चना, मटर, अरहर, मसूर, उड़द, मूंग, लोबिया, मूंगफली आदि के राइजोबियम प्राय: मृदा में मौजूद होते हैं। दलहनों में, यदि जड़ों में ग्रंथियां अच्छी तरह बन जायें तो इन फसलों की आधे से तीन-चौथाई नाइट्रोजन की आवश्यकता ग्रंथियों में होने वाली वायुमंडलीय नाइट्रोजन के योगिकीकरण से पूरी हो जाती है। इस तरह नाइट्रोजन उर्वरक की एक ओर बचत होती है तो दूसरी ओर मृदा नाइट्रोजन में बढ़ोतरी की संभावना होती है। दलहन से मृदा संरचना में भी सुधार होता है।

फ्रेंकिया

एक दर्जन से ज्यादा ऐसे अदलहनी पौधे हैं जिनमें भी जड़ों पर गांठें बनती हैं। इनका निर्माण फ्रैंकिया नामक किरण फंफूद (एम्टी नोमाइसीट्स) द्वारा होता है। इस तरह के पौधे कृषि से संबंधित न होकर वनों से संबधित हैं अत: संवर्धन (कल्चर) द्वारा इनसे लाभ उठाया जा सकता है।

फॉस्फोबैक्टरिन तथा माइकोराजा

फॉस्फोबैक्टरिन कल्चर अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित कर देता है। इससे पौधों में फॉस्फोरस की कमी के लक्षण कम या दुर हो जाते हैं। इसके साथ कई अन्य जीवाणु जैसे स्यूडोमोनास स्ट्रियाटा या कई फंफूदिया जैसे एस्परजिलस नाइजर भी फॉस्फोरस को घुलनशील बनाने में सहायक हैं।

माइकोराजा एक विशेष प्रकार की फफूंदी है जो पौधों की ऊपरी सतह पर जाल जैसा बनाती है जो कुछ जड़ों के अंदर प्रवेश कर जाती है। जड़ों से संबंधित होते हुए भी ये मिट्टी में बहुत गहराई तक पहुंच जाती हैं और वहां जड़ों से संबंधित होते हुये भी ये मिट्टी के गहरे भाग से ये पादप पोषक तत्व, विशेषकर फॉस्फोरस तथा जल प्राप्त कर पौधों के पोषण में सहायक होती हैं। एंडोगोन कोमा, राइजोक्टोनिया तथा अरमिलैरिया उस तरह के माइकोराइजा हैं जो जड़ों के भीतर कार्य करते हैं।

ऐजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलिम, बैरिंकिया क्लॉस्ट्रिडियम तथा डर्कसिया

ये सभी जीवाणु मिट्टी में पाये जाते हैं तथा बिना पौधे की सहायता से भी वायुमंडल की नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करते हैं। जीवाणु उर्वरकों की दृष्टी से अभी एजोटोबैक्टर एवं एजोस्पिरिलियम का उपयोग अधिक प्रचालित है। इनका उपयोग सभी फसलों के लिये किया जा सकता है। डर्कसिया को कल्चर के रूप में उपयोग में लाया जा सकता है। बैरिंकिया गन्ने की जड़ों पर प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। क्लासट्रिडियम धान के लिये ज्यादा उपयुक्त हैं।

एज़ोला तथा नील-हरित शैवाल

नील-हरित शैवाल सूक्ष्मजीवों का एक महत्वपूर्ण समुदाय है। इनमें नाइट्रोजन-यौगिकीकरण की क्षमता विद्यमान होती है। ये अपने आप में संपूर्ण होते हैं, क्योंकि ये प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया करके कार्बन का यौगिकीकरण तो करते ही हैं, साथ ही नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करके पूर्ण रूप से स्वयंपोषी हो जाते हैं। ऐजोला आकार में छोटा पौधा है तथा स्पंज की तरह दिखाई पड़ता है। इसमें भी नाइट्रोजन यौगिकी करण की क्षमता होती है। ये दोनों जैव उर्वरक धान की खेती के लिये विशेष लाभ दायक हैं तथा ये ऐसे जैव उर्वरक हैं जिनको कृषक भी विकसित कर सकते हैं।

कंपोस्ट

जैविक तथा औद्योगिक अपशिष्ट प्रचुर मात्रा में उपलब्ध रहते हैं। इन्हें पौधों के पोषण हेतु कंपोस्ट में बदला जा सकता है। इससे एक ओर उर्वरकों पर निर्भरता कम होगी दूसरी ओर बढ़ते प्रदूषण से भी बचा जा सकता है। कंपोस्ट तैयार करने में सूक्ष्म जीवाणुओं की विशेष भूमिका होती है। ये कचरे, गोबर व शहर से उपलब्ध विष्ठा से बनाये जाते हैं। कंपोष्ट बनाने की दो प्रचलित विधियां हैं-नाडेव कंपोस्ट विधि एवं बंगलौर कंपोस्ट विधि।

वर्मीकल्चर

केंचुओं का कृत्रिम पर्यावरण में पालन-पोषण 'वर्मी कल्चर' कहलाता है। अनुसंधानों से सिद्ध हो चुका है कि केंचुओं द्वारा निर्मित खाद साधारण कंपोस्ट से अधिक उपयोगी होती है। केंचुए अपने आहार के रुप में मिट्टी तथा कच्चे जीवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजारते हैं। दूसरे माध्यम से वे गंदे पदार्थ को कार्बनिक उर्वरक में बदल देते हैं।

पलवार

खेत से निकले फसल के अवशिष्टों, नीदे तथा खरपतवार आदि का उपयोग पलवार के रुप में करने से मिट्टी की क्षमता मे वृद्धि होती है। इससे पौध पोषण तथा उत्पादन प्रणाली को लाभ पहुंचता है।

भारत में जैव उर्वरकों का उत्पादन

भारत में जैव उर्वरकों का औद्योगिक स्तर पर उत्पादन वर्ष 1964 में सोयाबिन उत्पादन के प्रारंभ के साथ शुरू हुआ। वर्तमान में 62 इकाइयां इसके उत्पादन में लगी हुई है। इसके अलावा कृषि विश्वविद्यालयों में भी छोटे स्तर पर जैव उर्वरक उत्पाादन का कार्य हो रहा है। राज्यवार देखा जाय तो सर्वाधिक उत्पादन तमिलनाडु में होता है उसके बाद कम्रशः महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा गुजरात हैं।

जैव उर्वरक के प्रचार-प्रसार में सहकारिता की भूमिका

इफ्को ने 1967 से ही जैव उर्वरकों के प्रयोग पर बल दिया है। नफेड एक सहकारी समिति है जिसे जैव उर्वरकों के प्रयोग पर बल दिया है। नफेड एक सहकारी समिति है जिसे जैव उर्वरक उत्पादन तथा वितरण का जनक माना जाता है। इफ्को तथा कृभकों ने भी जैव उर्वरक उत्पादन तथा विपणन का कार्य प्रारंभ कर दिया है। इफ्को ने वर्ष 1990 से जैव उर्वरक पर आधारित प्रक्षेत्र प्रदर्शन कार्यक्रम प्रारंभ किया है। पश्चिम बंगाल को एक जैव उर्वरक प्रदेश के रुप में अंगीकृत किया जा चुका है जहां बड़े पैमाने पर जैव उर्वरक प्रदर्शन कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं।

जैव उर्वरकों के उत्पादन और संवर्द्धन की राष्ट्रीय योजना

केंद्र सरकार की 'जैव उर्वरकों के उत्पादन और संवर्द्धन की राष्ट्रीय योजना' के अंतर्गत विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों की नयी उत्पादन क्षमता स्थापित करने, इसे बढ़ावा देने तथा गाजियाबाद स्थित 'राष्ट्रीय जैव उर्वरक विकास केंद्र' और नागपुर, जबलपुर, हिसार, भुवनेश्वर, बंगलौर तथा इम्फाल स्थित प्रादेशिक केंद्रों के जरिये इन उर्वरकों के गुणवत्ता नियंत्रण के लिये सहायता प्रदान की जाती है। देश में अभी लगभग 125 जैव उर्वरक उत्पादन इकाइंया हैं, जिनकी विभिन्न प्रकार के जैव उर्वरकों की वार्षिक उत्पादन क्षमता 18,000 टन है। दसवीं पंचवर्षीय योजना की शेष अवधि के लिये यह योजना जैवीय खेती पर आधारित एक नई राष्ट्रीय परियोजना में समाहित कर दी जायेगी।

सस्यचक्र

एक ही फसल को बार-बार बोने से मिट्टी की उर्वरा शक्ति कम होती है तथा फसल पर कीट और रोगों का प्रकोप बढ़ जाता है। सस्यचक्र, मिश्रित फसल एवं बहुस्तरीय फसल प्रणाली इन समस्याओं से बचने का अच्छा तरीका है। फसल चक्र अपनाने से उत्पादन में स्थिरता, संतुलन, अधिक आर्थिक लाभ, श्रम विभाजन तथा कम से कम जोखिम होता है। यदि दलहन-अनाज, दलहन-तिलहन अंतरवर्ती फसल या मिश्रित फसल उगाई जाये तो उर्वरकों पर निर्भरता कम होगी।

जैवकीटनाशी

पादप-रोगों के निवारण के लिये जैव कीटनाशी अधिक स्थायी होती है तथा इसके उपयोग से प्रदूषण की समस्या भी नहीं आती। इसके अंतर्गत जैवनियंत्रण पद्धति तथा पौधों से प्राप्त जैवकीटनाशी से उपयोग में लाते हैं। जैविकनियंत्रण विधि में जैविक नियंत्रण कारकों के रुप में ऐसे सूक्ष्म जीवों को प्रयोग में लाया जाता है जो कीट, कवक अथवा जीवाणु- जैसे रोगजनकों के क्रिया-कलापों को नियंत्रित कर सकें तथा पौधों को उनके प्रकोपों से बचा सकें और उन्हें रोग ग्रस्त न होने दें। पौधों से प्राप्त जैव कीटनाशी अधिकांशतः एक से अधिक रासायनिक पदार्थों के समूह होते हैं जिसके द्वारा कीटों द्वारा इनके विरूद्ध प्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करने की संभावना बहुत कम होती है।

एंडोसल्फान विवाद

एंडोसल्फान साइक्लोडीन उपसमूह का एक क्लोरीन युक्त हाइड्रोकार्बन कीटनाशी है। यह विभन्न प्रकार के कीटों एवं घुनों के लिए सम्पर्क विष के रूप में कार्य करता है। इसका प्रयोग प्रमुख रूप से खाद्य फसलों जैसे चाय, फल, फलीदार सब्जियों के बचाव के लिए तथा लकड़ियों के परिरक्षण के लिए भी किया जाता है। एंडोसल्फान के व्यावसायिक नामों में थियोडान, एंडोसाइड, बेओसिट,

साइक्लोडान, मेलिक्स, थिमुल एवं थिमोर शामिल हैं। कीटनाशी एंडोसल्फान का प्रयोग भारत में बहुत पहले से होता रहा है। भारत दुनिया का सबसे बड़ा एंडोसल्फान निर्माता देश है और एंडोसल्फान के वैश्विक कारोबार में 70 फीसदी से अधिक हिस्सा भारतीय कंपनियों के पास है। परंतु इस पर प्रतिबंध की वैश्विक मांग काफी समय से होती रही है। हाल के वर्षों में भारत में इस पर प्रतिबन्ध की मांग ने काफी जोर पकड़ लिया, जब वर्ष 2003 में केरल के कासरगड में कुछ लोग इसके कारण बीमार हो गये। यूरोपीय संघ, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड आदि समेत 84 देशों ने इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया है परंतु आर्थिक क्षति का हवाला देते हुए भारत ऐसे किसी भी प्रतिबंध का विरोध करता है। अप्रैल, 2011 में सतत जैविक प्रदूषकों के स्टॉकहोम कन्वेन्शन की पांचवीं बैठक में इस रसायन को प्रतिबंधित सूची में शामिल कर लिया गया, हालांकि भारत को एक वर्ष का समय अवश्य मिल गया है, साथ ही भारत को कुछ शर्तों के अधीन 22 फसलों पर पांच वर्षों के लिए एंडोसल्फान के प्रयोग की अनुमति भी मिल गई है।

पीजीपीआर

पादप वृद्धिवर्धक भूमीय जीवाणु अथवा पीजीपीआर पौधों की जड़ों के पास मृदा में पाये जाने वाले सूक्ष्मजीव हैं तथा पौधों को वृद्धि प्रदान करते हैं। इसके साथ ही ये प्रतिजैविक पदार्थ एवं साइडो फोर भी निर्मित करते हैं जो रोगजनक कवकों व जीवाणुओं की गतिविधियों का दमन करके पौधों को रोग से बचाते हैं।

परभक्षी और परजीवी कीट

परभक्षीकीट, कीटों को पकड़कर पहले काटते हैं और फिर खाते हैं। परजीवी कीट, कीटों पर या अंदर रहकर अपना जीवनयापन करते हुए उन्हें धीरे-धीरे मार देते हैं। कपास के बॉल वर्म के विरूध ट्राइकोग्रामा जातियां, सिट्रस अंगूर, कॉफी, आम के मिलीबग के विरुद्ध परजीवी- लेप्टोमोस्टिंग्स टैक्टोलोपी और परभक्षी लेडीबिर्ड भृंग, गन्ने के शल्ककीट के विरुद्ध परभक्षी लेडीबर्ड भृंग, गन्ने के विभिन्न बेधकों के विरुद्ध ट्राइकोग्रामा जेपोनिकम तथा नारियल की काले सिर की सूंडी के विरुद्ध परजीवी ब्रेकम ब्रीब्रीशेर्निस तथा परजीवी पेरासीटोला निकेन्टिडिस सफल पाये गये हैं।

सूक्ष्मजीव

सूक्ष्मजीवों से उत्पन्न रोगों से नाशक कीटों का नियंत्रण किया जाता है। इनमें वायरस, बैक्टीरिया, प्रोटोजोआ, कवक और सूत्रकृमि प्रमुख हैं। सूक्ष्मजीवों से नाशककीट दो तरह समाप्त होते हैं। प्रथम सीधा संक्रमण और द्वितीय कुछ सूक्ष्मजीवी आविस (टॉक्सिम) उत्पन्न करते हैं और जिसके कीट में अंत:क्षिप्त होने से कीट की मृत्यु हो जाती है। बेसिलस थूरिनजिएन्सिस नामक बैक्टीरिया को लेपीडोप्टेरा, हाइमेनोप्टेरा, आर्थोप्टेरा कोलियोप्टेरा डिप्टेरा आदि गणों के कीटों के विरुद्ध सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया गया है। बेसिलस पोपिली नामक बैक्टीरिया को सफेदलट के विरुद्ध प्रभावी पाया गया है। ग्लूजियापायरोस्टी नामक प्रोटोजोआ को यूरोपीय तनावेधक तथा ग्लूजियाफ्यूमीफरना नामक प्रोटोजोआ को स्प्रूस वडवर्म के विरुद्ध सफलता पूर्वक उपयोग में लाया गया है।

वानस्पतिक जैव कीटनाशक

पौधों से प्राप्त ऐसे प्राकृतिक यौगिक जिनमें कीटनाशक गुण होते हैं वानस्पतिक जैव कीटनाशक कहलाते हैं। नीम, गुलदाउदी, शरीफा, महुआ, करंज, प्लम्बोजिन, एकीरेंथीज, कनेर, डेरिस, जाटीनिया, लेंहाना आदि अनेक पौधों से प्राप्त होने वाले रसायनों में कीटनाशक अथवा वृद्धि निरोधक अथवा भरण निरोधक गुण पाये गये हैं। नीम (अजाडिरेक्टा इंडिका) के सभी भाग में जैव कीटनाशी गुण होते हैं। इसमें से सर्वाधिक मात्रा नीम के बीजों से प्राप्त होती है। इसमें बहुत से जैव कीटनाशी रासायनिक पदार्थ उपस्थित होते हैं, जैसे अजाडिरेक्टिन, निम्बिन, सेलेनिम, निम्बिडिन, मेलिनट्राल तथा सेलेलॉल आदि। इन सभी पदार्थों में अजाडिरोमी ($C_{35} H_{ss} O_{16}$) सबसे महत्वपूर्ण हैं।

जीएम फुड्स एवं बीटी ब्रिंजल विवाद

जेनेटिकली मॉडीफयड फुड्स भारत में एक बार फिर चर्चा में है। इस बार चर्चा एवं विवाद बीटी बैंगन या ब्रिजल को लेकर था। बीटी बैंगन एक प्रकार का ट्रांसजैविक पौधा है। बीटी बैगन मृदा में पाए जाने वाले बैक्टीरिया बैसिलस थूरिनजिएनसिस के क्राई 1AC(cxy 1AC) नामक जीन से युक्त है, जो कीटों के लिए प्रतिरोधक तो है, ही साथ ही यह कीटनाशकों का प्रयोग भी कम करने में सक्षम है। बीटी ब्रिजल जेने टिकली मॉडीफॉयड फसल है। इसे भारत की सबसे बड़ी बीज निर्माता कंपनी महाराष्ट्र हाइब्रिड सीड्स कंपनी ने बहुर्राष्ट्रीय अमेरिकी कंपनी मानसेंटो के साथ विकसित किया है।

जीएम प्रजाति को लेकर विशेषज्ञों में भारी मतभेद के बावजूद जिनेटिक इंजीनियरिंग अप्रूवल कमेटी ने अक्टूबर, 2009 में इसकी आम खेती की सिफारिश की थी। मगर इसके विरुद्ध पर्यावरणविद्दो और कृषकों ने व्यापक विरोध प्रदर्शन प्रारंभ कर दिया। बीटी बैंगन के विरोधियों का तर्क है कि जिन खाद्य पदार्थों के जीन में बदलाव किया गया है, उनसे स्वास्थ्य को नुकसान पहुंच सकता है। यहां तक कि बीटी बैंगन पर प्रयोगात्मक रूप से जिन चूहों का उपयोग किया गया था उनके स्वास्थ्य पर भी दुष्प्रभाव देखा गया। फिर बैंगन की मूल उत्पत्ति भारत में मानी जाती है, बीटी बैगन यहां की मूल प्रजाति को नष्ट कर सकती है। पयावरणविद्दों ने यह आशंका भी व्यक्त किया है कि निषेचित जीन अपने कार्य से इतर कार्यवाई कर सकता है, जिस कारण अन्य पौधों को भी नुकसान पहुंच सकता है। उपरोक्त पक्षों और देशभर में इसके खिलाफ प्रदर्शन को देखते हुए 9 फरवरी, 2010 को वन एवं पर्यावरण मंत्री जयराम रमेश निम्नलिखित कारणों से बीटी ब्रिजल के भारत में खेती पर अस्थायी तौर पर रोक लगाने की घोषणा की–

- सुरक्षा एवं परीक्षण प्रक्रिया पर प्रश्न उठना।
- वैज्ञानिकों के बीच मतैक्य का अभाव।
- दस राज्यों की सरकारों द्वारा विरोध, विशेषकर बैगन का मिश्रित उत्पादन करने वाले राज्य।
- एक स्वतंत्र जैव प्रोद्योगिकी विनियामक प्राधिकरण का अभाव।
- नाकारात्मक लोक भावना और विरोध प्रदर्शन।
- वैश्विक प्रयोग का अभाव क्योंकि, बीटी, बैगन पहली खाद्य जीएम फसल है।
- उपभाक्ताओं में भय और आतंक।

बैसिलस थूरिनजिएनसिस

बैसिलस यूरिनजिएनसिस एक भूमिगत बैक्टीरिया है। यह बैक्टीरिया बीजाणु जनन के दौरान एन्डोप्रोटीन नामक क्रिस्टलीकृत प्रोटीन बनाना है जो अनेक कीटाणुओं जैसे, दीमक, एंफिडों, चींटियों, भृगों, तितलियों आदि को नष्ट कर देता है। बीटी के कुछ विभेद पादप और पशुओं पर निर्भर करने वाले कृमियों, पौधों, प्रोटोओआ और तिलचट्टों को भी नष्ट कर देता है। इसी विशिष्ट लक्षण के कारण बीटी नामक बैक्टीरिया कृषि के क्षेत्र में उपयोगी है। अबतक बीटी के 80 से अधिक वैक्सिन पैदा करने वाले सीआरवाई जीन खोजे जा चुके हैं एवं इसकी मदद से 45 से अधिक व्यापारिक फसलों की परजीवी कीटरोधी किस्में विकसित की जा चुकी है। बीटी की खोज जापानी वैज्ञानिक ईशीवाटा ने 1902 में की थी।

जीएम फसलों की उपयोगिता

जीन संवर्द्धित फसलों को संक्षिप्त रूप में जीएम फसलें कहा जाता है। इस प्रकार की फसलों का विकास जेनेटिक इंजीनियरिग द्वारा संभव हो पाया है। इस तकनीक के द्वारा फसल के उन जीन या जीनों को प्रतिरोपित किया जाता है, जो फसल को हमारी आवश्यकताओं के अनुरूप बनाते है। इसमें प्रोटीन, वसा के अतिरिक्त उपलब्धता के अलावा फसल को कीट एवं रोग प्रतिरोधक बनाया जाता है। इनमें सूखा झेलने और उच्च पोषकता देने की क्षमता भी होती है। वैश्विक स्तर पर जीएम फसलों के प्रति कृषकों का रुझान बढ़ा है। भारत में अनाज भंडारण गृहों की कमी तथा शीत गृहों में अनियमित विद्युत आपूर्ति के कारण फल, फूल और

सब्जियों को संरक्षित नहीं रखा जा सकता। साथ ही सूखे का भी प्रभाव पड़ता रहता है। यहां के वातावरण कीटों आदि से भी फसलों को काफी नुकसान पहुचंता है। ऐसी स्थिति में यदि जीनों में फेरबदल कर इन फसलों को रोगमुक्त एवं अधिक देर तक टिकाऊ, ताजा और संरक्षित बना दिया जाए तो किसानों के साथ-साथ उपभोक्ताओं को भी लाभ होगा। जीएम फसलों की कृषि हेतु बीजों की उत्पादन की अनुमति कृषि मंत्रालय की जेनेटिक इंजीनियरिंग एप्रुवल कमेटी देती है। इस कमेटी द्वारा अभी तक केवल बीटी कपास की खेती की अनुमति दी गई है। साथ ही बीटी बैंगन को लेकर हालिया विवाद तो चल ही रहा है। इसके अतिरिक्त चावल, मक्का, आलू, गोभी आदि 13 सब्जियों और खाद्यान्नों का क्षेत्र परीक्षण किया जा रहा है।

जैविक आतंकवाद

जैविक हथियार प्राकृतिक तौर पर विद्यमान तथा प्रयोगशाला में विकसित और उत्पादित की जा सकने वाले वे सूक्ष्म अवयव हैं, जो मानव शरीर या पशु-पक्षियों के शरीर में प्रवेश करके रोग पैदा कर सकते हैं तथा वनस्पतियों या फसलों को नष्ट कर सकते हैं। ये जैविक हथियार विषाणु, कवक या प्रोटोजोआ युक्त हो सकते हैं। इन जैविक तत्वों का उत्पादन, पुनर्उत्पादन और संवर्द्धन करना काफी आसान होता है तथा इन्हें एक बड़े भौगोलिक क्षेत्र में हवा-जल संक्रमण व पशु-मानव संक्रमण द्वारा तेजी से फैलाया जा सकता है। परम्परागत सैन्य हथियारों की तुलना में जैविक और रासायनिक हथियारों की घातकता इसलिए अधिक होती है कि जिन लोगों पर इन हथियारों से हमला किया जाता है वे इनसे सर्वथा अनभिज्ञ होते हैं तथा उनके पास इनसे बचाव का कोई उपाय भी नहीं होता।

नाभिकीय बमों की तुलना में जैविक हथियारों के निर्माण में प्रयुक्त संसाधन और औजार काफी सस्ते होते हैं तथा आसानी से प्राप्त किये जा सकते हैं। इस कारण ही इन हथियारों को 'गरीबों का नाभिकीय बम' भी कहते हैं। इस प्रकार ये हथियार किसी अन्य हथियार से अधिक खतरनाक, सस्ते, आसानी से निर्मित, वितरित करने योग्य तथा व्यापक संभावनाओं वाले होते हैं। जैविक हथियारों के इस्तेमाल का मुद्दा सबसे पहले खाड़ी युद्ध के दौरान सामने आया, जब अमेरिकी अधिकारियों ने संदेह व्यक्त किया कि ईराक के पास ऐसे हथियारों का विशाल भंडार है। इसके बाद अन्य कई राष्ट्रों जैसे अमेरिका, लीबिया, सीरिया, उत्तर कोरिया, ईरान, चीन, रूस इत्यादि ने जैविक हथियारों पर कार्य करने के लिए प्रयोगशालाएं स्थापित कीं। हालांकि इन सभी राष्ट्रों ने यह दावा किया कि उनकी रुचि सिर्फ जैविक हथियारों के खतरे से लड़ने के लिए सुरक्षात्मक अनुसंधान करने में है। अनेक जैविक रोगाणु ऐसे हैं जो एक बार वायुमंडल में छोड़ देने पर अनन्त काल तक फलते-फूलते रहते हैं। प्लेग, टुलारेमिया, भ्रंश घाटी बुखार, क्यू बुखार, पूर्वी इन्सेफलाइटिस, एंथ्रेक्स तथा छोटी चेचक कुछ परंपरागत जैविक हथियार हैं। रसायनिक अभिकारकों से अलग जो निर्जीव जीवाणु और विषाणु होते हैं, संक्रामक एवं प्रजनक हो सकते हैं। यदि वे वातावरण में स्थापित हो जाते हैं तो उनकी संख्या अन्य हथियारों के विपरीत अपने आप ही क्रमशः बढ़ने लगती है और तब वे लम्बे समय तक काफी खतरनाक बने रह सकते हैं। कुछ जैविक अभिकारक लोगों को विकलांग बना देते हैं, जबकि कुछ मौत का संदेश लेकर आते हैं। जैविक हथियारों का विस्तार घातक सल्मोनेला, जो अस्थायी रूप से अपंग बना देता है, से सुपर बुबोनिक प्लेग तक होता है जिससे बड़े पैमाने पर लोग मारे जाते हैं। जैविक अभिकारकों का प्रयोग लोगों को मारने या उन्हें विकलांग बना देने में किया जा सकता है। साथ ही, इनसे देश की अर्थव्यवस्था को क्षति पहुंचाने के उद्देश्य से पेड़-पौधों और जानवरों पर हमला किया जा सकता है। उदाहरणस्वरूप, इबोला विषाणु लगभग एक सप्ताह में ही इसके शिकार हुए 90 प्रतिशत से भी अधिक लोगों को मौत की नींद सुला देता है। इबोला का कोई इलाज या उपचार नहीं है। जैविक हथियारों के अन्तर्गत जीव-विष को भी शामिल किया जा सकता है जो मूल रूप से जीवों द्वारा उत्पादित घातक पदार्थ है। जीन अभियांत्रिकी के विकास ने 'डिजाइनर हथियारों' का निर्माण सम्भव बना दिया है। इसके द्वारा सूक्ष्म जीवाणुओं में विशेष जीन डालकर उन्हें एन्टीबायोटिक या प्रतिरोधी, विषकारी तथा पर्यावरणीय रूप से स्थिर बनाया जा सकता है। एंथ्रेक्स, बाटुलिज्म, इबोला व गिल्टी प्लेग के वाहक काफी प्राणघातक होते हैं।

जैविक हथियारों की प्राप्ति और प्रयोगः जैविक हथियारों के बारे में सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इन्हें बड़ी आसानी से प्राप्त और विकसित किया जा सकता है। एंथ्रेक्स और बोट्यूलिम्स सामान्य मिट्टी के जीवाणु से प्राप्त किये जा सकते हैं। यद्यपि सन् 1977 के बाद से विश्व में कहीं भी चेचक का कोई रोगी नहीं हुआ है। तथापि इसका वायरस कड़ी सुरक्षा के बीच एटलान्टा तथा मास्को की प्रयोगशाला में सुरक्षित रखा गया है। इसके बावजूद कुछ सिरफिरे लोगों ने अलग से चेचक के वायरस को सुरक्षित रख छोड़ा हो और आवश्यकता पड़ने पर उसका प्रयोग जैविक हथियार के रूप में कर लें। इसका आशय सीधा-सीधा है कि जैविक

हथियारों को आसानी से प्राप्त और विकसित करके उनका अनुप्रयोग शत्रु देश के सैनिकों तथा नागरिकों को मारने के लिए किया जा सकता है। माइक्रोबायोलोजी की आधारभूत जानकारी रखने वाला कोई भी व्यक्ति कुछ हजार डॉलर खर्च करके जैव हथियार प्रयोगशाला स्थापित कर सकता है।

वास्तव में जैविक हथियारों को विकसित कर पाना इतना आसान नहीं है जितना कि प्रचार तंत्र ने बना रखा है, क्योंकि एक व्यवहार्य जैविक हथियार विकास कार्यक्रम हेतु बहुत बड़े पैमाने पर संसाधनों एवं वैज्ञानिक विशेषज्ञता की आवश्यकता पड़ती है जो किसी सरकार के लिए ही सम्भव है। यदि कोई निजी व्यक्ति या समूह अपने स्तर पर जैविक हथियार विकसित करना चाहता है, तो उसे पहले किसी रोगाणु को कल्चर द्वारा अलग करना होगा, फिर उन्हें संवर्द्धित करके हथियार के रूप में प्रयुक्त करने की विधा विकसित करनी होगी। किसी रोगाणु को सुरक्षित रख पाना 'जैविक हथियारों' के प्रयोग का सर्वाधिक कठिनतम कार्य है। यही कारण है कि इन हथियारों को आज तक बड़े पैमाने पर इस्तेमाल नहीं किया गया है।

भारत की तैयारी: हालांकि भारत में किसी प्रकार का जैविक आतंकवादी हमला नहीं हुआ है, फिर भी इसकी आशंका से बचा नहीं जा सकता। विशेषज्ञों के अनुसार कम कीमत तथा आसानी से फैलने के गुण के कारण जैविक हथियारों का प्रयोग आतंकवादियों द्वारा करने की संभावना बढ़ी है। उल्लेखनीय है कि 1 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र को जैविक हथियारों का निशाना बनाने में सिर्फ 1 डॉलर खर्च आता है, जबकि इतने ही क्षेत्र में परम्परागत हथियारों से नुकसान के लिए 2 हजार डॉलर खर्च करना पड़ेगा। जैविक हमले की गंभीरता और विनाशकारी प्रभाव को देखते हुए ही भारत सरकार ने राष्ट्रीय निगरानी तंत्र स्थापित करने की योजना बनायी है। इसमें संभावित जैविक आतंकवादी हमले से बचाव के लिए सीमावर्ती राज्यों की निगरानी करने की भी योजना है। राष्ट्रीय संक्रामक रोग संस्थान (छप्ब्) इस राष्ट्रीय निगरानी तंत्र का शीर्ष अभिकरण होगी। एक नाभिकीय, जैविक व रासायनिक युद्ध निदेशालय की स्थापना की जा रही है। इसके अतिरिक्त कार्यक्रम की निगरानी के लिए एक अंतर-सेवा समन्वय समिति की स्थापना की जा रही है।

ग्वालियर में विष विज्ञान व जैव-रासायनिक औषधि शास्त्र तथा जीवाणु व विषाणु वाहकों के विरुद्ध एंटीबाडी बनाने के क्षेत्र में अध्ययन के लिए सभी प्राथमिक सुविधाएं मौजूद हैं। एंथ्रेक्स, ब्रूसेलोसिस, हैजा, प्लेग तथा छोटी चेचक के जैविक खतरे से बचाव के लिए अनुसंधान जारी है।

सैनिक टुकड़ियों के लिए सुरक्षात्मक वर्दियां निर्मित की गयी है।

विशेषज्ञों के अनुसार हमारे शहरों में जैविक आक्रमण से निबटने के लिए पर्याप्त मात्रा में अस्पताल, डॉक्टर, चिकित्सा कर्मचारी, पुलिस बल नागरिक सुरक्षा कोर मौजूद हैं। इसके अतिरिक्त अधिकतर प्रतिकारक दवाएं स्थानीय स्तर पर निर्मित की जा सकती हैं। जबकि छोटी चेचक के क्षेत्र में स्थिति विपरीत है। चूंकि भारत से छोटी चेचक का उन्मूलन हो गया है, अत: सभी टीकाएं नष्ट कर दी गयी हैं। यदि छोटी चेचक के विषाणु का आक्रमण होता है, तो मरने वालों की संख्या काफी बढ़ सकती है।

सुझाव

1. जैविक युद्ध के आतंक से प्रभावी रूप से निपटने के लिए समन्वित रूप से सूचनाओं एवं संसाधनों का आदान-प्रदान आवश्यक है।
2. जब कहीं जैविक हमला होता है, तब यह अति आवश्यक है कि लोगों पर हमला किये गये उन अभिकारकों (एजेंटों) के स्रोत के बारे में सूचना मिले, बचाव के उपायों की रूपरेखा तैयार की जाये तथा सूक्ष्म-जीवों के फैलाव द्वारा उत्पन्न चुनौतियों से निपटने के लिए उच्चस्तरीय तैयारी व तत्परता दिखायी जाये।
3. आतंकवादी गुटों द्वारा रासायनिक या जैविक हथियारों के विकास या उन पर संभावित नियंत्रण पर रोक लगाने के लिए एक समन्वित अंतर्राष्ट्रीय प्रयास भी समान रूप से महत्वपूर्ण है।
4. इस प्रकार के हमलों से बचने के लिए आकस्मिक योजना बनाने तथा एक विस्तृत जन-स्वास्थ्य नीति प्रतिपादित करने की आवश्यकता है। इसके तहत औषधियों एवं टीकों के अतिक्रांत स्टॉक की पुनर्पूर्ति करना, एंटीडॉट्स, पुराने पड़ गये व अतिक्रांत उपकरणों को बदलना आदि शामिल हो सकता है।
5. रासायनिक या जैविक अभिकारकों को पहचानने व पता लगाने के लिए उपकरणों के विकास हेतु पहल करना, लोगों को संक्रमित या शिकार होने से बचाना, प्रभावित लोगों, उपकरणों एवं क्षेत्रों को विसंदूषित करना और शिकार हुए लोगों को चिकित्सा व उपचार उपलब्ध करना भी आवश्यक है।

6. किसी भी रासायनिक या जैविक हमले को रोकने या उसका प्रतिकार करने में सतर्कता और जन-विश्वास का अति महत्वपूर्ण स्थान है। ऐसा सभी सूचना माध्यमों को इस्तेमाल करके एक प्रभावी सूचना अभियान सार्वजनिक व्याख्यान और प्रदर्शन द्वारा रासायनिक एवं जैविक युद्ध में प्रयुक्त अभिकारकों के बारे में मूल सूचना देकर बचाव के उपाय बताकर तथा हमले के विरुद्ध निवारण युक्ति करके संभव बनाया जा सकता है।

इसलिए रासायनिक या जैविक आतंकवाद के हमले की संभावना को शायद हमेशा के लिए समाप्त तो नहीं कर सकते, लेकिन ये गतिविधियां हमें सतर्क और बेहतर उपकरणों से लैस होने के लिए बाध्य अवश्य कर सकती हैं ताकि जरूरत पड़ने पर तुरंत ही कदम उठाया जा सके।

बायोमेट्रिक तकनीक

बायोमेट्रिक तकनीक अर्थात् व्यक्ति के पहचान की अत्याधुनिक वैज्ञानिक पद्धति। बायोमेट्रिक तकनीक पर आधारित पहचान स्थापित करने का सामूहिक सुरक्षा व्यवस्था का अचूक अस्त्र भी है तथा वर्तमान के नवीनतम वैज्ञानिक एवं उच्च प्रौद्योगिकी के विकास का प्रतिमान भी।

'बायोमेट्रिक' शब्द ग्रीक भाषा के बायो (bio) अर्थात् 'जीवन' तथा मेट्रिक (metric) अर्थात् 'मापना' से मिलकर बना है। 'बायोमेट्रिक' व्यक्ति को उसके शारीरिक एवं व्यवहारिक विशेषताओं, गुण तथा दोष के आधार पर पहचानने, सत्यापित करने तथा मान्यता प्रदान करने की स्वचालित कार्य विधि है। इसके अंतर्गत व्यक्ति के चेहरा, फिंगरप्रिंट, हथेली की रेखाएं तथा नस, लिखावट, रेटिना, आयरिश, ब्लड पल्स (Blood Pulse) तथा आवाज की विशेषताओं की जांच कर पहचान स्थापित की जाती है। वर्तमान में बायोमेट्रिक व्यक्तिगत पहचान एवं सत्यापन सुनिश्चित करने में पूर्ण रूपेण सुरक्षित तथा गहन छानबीन करने वाली कार्य विधि बन कर उभरा है। बायोमेट्रिक पर आधारित पहचान संबंधी तकनीक सुरक्षा तंत्र के लिए व्यवहारिक सुझाव प्रस्तुत करता है। बायोमेट्रिक सिस्टम दो प्रकार से कार्य करता है। प्रथम के अंतर्गत मानव की शारीरिक विशेषताओं से संबंधित आंकड़े एवं आकृति दर्ज करता है। द्वितीय के अंतर्गत मानव व्यवहार के द्वारा विभिन्न पहलुओं का विश्लेषण एवं मापन किया जाता है। सिस्टम यह कार्य तीन स्तरों पर संपादित करता है। प्रथम स्तर पर मानव के शारीरिक विशेषताओं को उपकरणों की सहायता से एकत्र किया जाता है। दूसरे स्तर पर उन विशेषताओं को आंकड़ों में परिवर्तित कर विशेष प्रकार के सांचे में डिजिटल रूप में दर्ज किया जाता है और एक डाटा बेस तैयार किया जाता है। तीसरे स्तर पर सिस्टम वांछित व्यक्ति के द्वारा प्रस्तुत जानकारी को या शरीर के हिस्सों का इमेज लेकर अपने डाटा बेस में मौजूद जानकारी से मिलान कर अपना निष्कर्ष देता है और इस तरह वांछित व्यक्ति की पहचान अथवा सत्यापन का कार्य पूर्ण होता है। प्रथम एवं द्वितीय स्तर के कार्य तो पहले ही संपन्न कर लिये जाते हैं। तीसरा स्तर तब संपन्न होता है जब व्यक्ति कहीं प्रवेश के लिए उपकरण के समक्ष अपने को प्रस्तुत करता है। बायोमेट्रिक सूचनाएं बहुत कठिनाई से एक उपकरण के माध्यम से एकत्र किया जाता है जिसे 'सेंसर' कहा जाता है। पहचान निर्धारण में जिन आंकड़ों की आवश्यकता होती है सेंसर उसे डिजिटल रूप में दर्ज करता है। किसी पहचान के अच्छे परिणाम प्राप्त करने में सेंसर की क्वालिटी का विशेष महत्व होता है।

उदाहरण स्वरूप चेहरे की पहचान लेने के लिए सेंसर के रूप में डिजिटल कैमरे तथा आवाज के नमूने लेने के लिए टेलिफोन का उपयोग किया जाता है तो कैमरे एवं टेलिफोन उपकरण की उत्कृष्टता बहुत मायने रखती है।

पहचान एवं सत्यापन

मिलान के समय बायोमेट्रिक सिस्टम दो प्रारंभिक विधियों पर कार्य करता है प्रथम है पहचान तथा द्वितीय है सत्यापन। सिस्टम पहचान के अंतर्गत बहुत सारे लोगों में से वांछित की पहचान निर्धारित करता है। ऐसा डाटा बेस में डाले गये लोगों की जानकारी में से चुनकर करता है। इसे one – to many process (I:M) कहा जाता है। सत्यापन के अंतर्गत प्रस्तुत तथा उपलब्ध आंकड़ों में समानता स्थापित करके सत्यापित करता है। इसे वदम जव वदम चतवबमे कहा जाता है। यदि डाटा बेस में व्यक्ति की जानकारी पहले से दर्ज होती है तो यह 'close set Identification' कहलाता है। वचमद ेमज प्कमदजपपिबंजपवद कभी-कभी इसे ूंजबी सपेज में अग्रसारित कर देता है कि प्रस्तुत व्यक्ति की पहचान डाटा बेस में नहीं है। यह पद्धति यह सुनिश्चित करती है कि व्यक्ति डाटा बेस में है अथवा नहीं।

बायोमेट्रिक सिस्टम को निम्नांकित शारीरिक विशिष्टताओं तथा वर्णन से समझा एवं मूल्यांकित किया जा सकता है।

- विश्वव्यापकता: सभी व्यक्तियों की अपनी अनूठी शारीरिक संरचना होती है। जो व्यक्ति गूंगा या हाथ विहीन है उसे अन्य शारीरिक विशेषताओं से पहचाना जा सकता है।
- अनूठापन: सामान्य तौर पर दो व्यक्ति में पहचान संबंधी विशेषताएं समान नहीं होती हैं। अपवाद में समान पहचान वाले जुड़वा व्यक्तियों को रखा जा सकता है।
- स्थायीकरण: समय के साथ-साथ शारीरिक विशेषताएं नहीं बदलतीहैं।
- संग्रहण: व्यक्ति की शारीरिक विशेषताओं को आसानी से संग्रहण एवं मापन किया जा सकता है।
- निष्पादन क्षमता: यह व्यवस्था बदले हुए वातावरण एवं परिस्थितियों में भी शुद्ध परिणाम देता है।
- स्वीकार्यत: आम जनता पहचान संबंधी सैंपल संग्रह देने को आसानी से स्वीकार कर लेती है।

बायोमेट्रिक में पहचान के प्रकार

विभिन्न प्रकार की जरूरतें, वातावरण एवं सोच के आधार पर विभिन्न शारीरिक विशेषताओं एवं मानवीय व्यवहार के नमूने लेकर पहचान की पद्धतियां विकसित की गई हैं। विभिन्न प्रकार के पहचान विधि के विकास का एक कारण और भी है कि सुरक्षा में कोई चूक न हो।

चेहरा पहचान विधि

चेहरा पहचान तकनीक चेहरे के विशेष प्रकार के गुणों पर केंद्रित है तथा दो बिंबीय चित्र तैयार करता है। नवीनतम तकनीक में त्री बिंबीय तस्वीर भी प्राप्त की जा रही है। विडियो कैमरा द्वारा चेहरे का इमेज लेकर सांचे में सुरक्षित रख लिया जाता है। बाद में इसका उपयोग प्रस्तुत व्यक्ति के चेहरे से समानता स्थापित करने में किया जाता है। चेहरे संबंधी आंकड़े में आंखों के बीच की दूरी, नाक की लंबाई, ठुडी का एंगल आदि प्राप्त किये जाते हैं। चेहरे के अंकन के दूसरे तरीके में चेहरा का पूरा चित्र लिया जाता है। इन तरीकों को विमपहमद बिम उमजीवक कहा जाता है। चेहरे का चित्र लेने की विधि अत्यंत आसान विधि है। डेस्कटॉप पर एक छोटा सा कैमरा एवं कंप्यूटर इसके लिए पर्याप्त है।

फिंगर प्रिंट पहचान विधि

यह विधि अंगुली के ऊपरी भाग के छाप के विश्लेषण पर आधारित है। इस छाप में छोटे-छोटे लकीर एवं छल्ले बने होते हैं। किसी भी दो व्यक्तियों में इन लकीरों और छल्लों की बनावट समान नहीं होतीं और व्यक्ति के जीवन में ये कभी परिवर्तित भी नहीं होते हैं। फिंगर प्रिंट विधि व्यक्ति के पहचान की अचूक विधि है। शरीर की अन्य कोई विशेषताएं परिवर्तित हो सकती हैं परंतु फिंगर प्रिंट कभी नहीं बदलता। फिंगर प्रिंट का अंकन एक मानक फिंगर प्रिंट कार्ड पर किया जाता है या डिजिटल रूप में दर्ज करके आंकड़े इलेक्ट्रॉनिकली ट्रांसफर कर दिये जाते हैं। फिंगर प्रिंट तकनीक व्यवहार में सबसे ज्यादा प्रयोग में लाया जाने वाला तकनीक है। कंप्यूटर एवं लैपटाप भी अब फिंगर प्रिंट के पासवर्ड से संचालित हो रहे हैं। अब इन उपकरणों के संचालन के लिए पासवर्ड टाइप करने की जरूरत नहीं होगी। केवल उंगली से छू लेने से उपकरण सक्रिय हो जाएंगे।

रेटिना पहचान विधि

इस विधि के अंतर्गत आंख के बॉल के पीछे जो पहले पतले ब्लड वेसेल्स होते हैं उसका चित्र लिया जाता है और उसकी आकृति का विश्लेषण किया जाता है। आंख की पुतली के माध्यम से आने वाली प्रकाश की किरणों को यही ब्लड वेसेल्स संशोधित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के ये ब्लड वेसेल्स अपने आप में विशिष्ट होते हैं। यहां तक की जुड़वा व्यक्तियों के ब्लड वेसेल्स की आकृति भी एक समान नहीं होती।

यद्यपि रेटिना सामान्य तौर पर व्यक्ति के जीवन भर स्थायी आकृति में रहता है। परंतु कुछ रोगों जैसे- गुलकोमा, डायबिटीज, उच्च रक्त-चाप तथा आटोइम्यून डिफिसिंसी सिन्ड्रोम में यह प्रभावित हो सकता है। अन्य पहचान तकनीकों की अपेक्षा रेटिना का विशुद्ध चित्र लेना अत्यंत कठिन होता है क्योंकि यह अंग अत्यंत छोटा तथा आंतरिक भाग में स्थित होता है।

चित्र लेते समय किसी भी प्रकार का हलचल नमूना लेने के कार्य को प्रभावित कर सकता है। यह तकनीक अत्यंत विश्वासी एवं शुद्ध तकनीक है। अत्यंत सुरक्षित स्थानों में प्रवेश रोकने के लिए इसका उपयोग होता है जैसे- परमाणविक हथियारों वाले डिपो और संबंधित शोध के संस्थान।

आइरिश पहचान विधि

यह विधि इस सिद्धांत पर आधारित है कि दो व्यक्तियों के आइरिस समान नहीं होते और यह फिंगर प्रिंट की अपेक्षा ज्यादा शुद्ध विधि है। वैज्ञानिकों का मानना है कि आइरिश की आकृति जीवन भर स्थायी रहती है इसलिए आइरिश की पहचान जीवन भर पासवर्ड के रूप में किया जा सकता है। यह विधि आइरिश के विशिष्ट गुणों के आधार पर कार्य करती है। आइरिश आंख की पुतली के चारों ओर के रंगीन भाग को कहते हैं। यद्यपि बायोमेट्रिक्स में 13 से 60 विशिष्टताएं दर्ज की जाती हैं, जबकि कहा जाता है कि आइरिस में 266 अनूठे बिंदु होते हैं। जलवायु, मौसम और व्यावसायिक विभिन्नताएं भी आइरिश को प्रभावित नहीं करतीं। सबसे पहले एक छोटा किंतु उच्च क्षमता वाले कैमरे से आइरिश का ब्लैक एंड व्हाइट चित्र लिया जाता है। इसके बाद आइरिश के ब्वददमबजपअम जपेनमे जिसे जतं इमबनसंत उमेी ूवता कहा जाता है उसकी विशेषताओं का विश्लेषण कर आब्टीक फिंगर प्रिंट पर दर्ज कर डिजिटल रूप में बदला जाता है। आइरिश पहचान विधि भीड़-भाड़ वाले स्थानों, उच्च खतरे वाले स्थानों में बहुत उपयोगी साबित होता है। इसका उपयोग पासपोर्ट, हवाई सुरक्षा, शारीरिक एवं इलेक्ट्रानिक उपकरणों की सुरक्षा-विश्लेषण में भी किया जाता है। भविष्य में अन्य तकनीकियों को साथ मिलाकर इस विधि का उपयोग कस्टम, पर्यटक आगमन, सूचना की सुरक्षा, भवनों में प्रवेश, गाड़ी स्टार्ट करने, फोरेंसिक विज्ञान आदि में पासवर्ड के रूप में किया जा सकता है।

आवाज की सत्यापन विधि

इस विधि के अंतर्गत बायोमेट्रिक सिस्टम व्यक्ति के आवाज के नमूने को डिजिटल रूप में दर्ज करता है। सिस्टम आवाज के प्रत्येक शब्द को एक विशिष्ट स्थिति में लाता है जिसे फारमेंट्स (Formants) कहा जाता है। प्रत्येक शब्द के सेगमेंटस में अनेक टोन होते हैं जिसे डिजिटल फार्मेट में दर्ज किया जाता है। टोनों का समूह ही व्यक्ति के अनूठे आवाज प्रिंट से मिलान स्थापित करता है। वाइस प्रिंट को डाटा बेस में दर्ज कर सुरक्षित रखा जाता है। जब कोई व्यक्ति कहीं प्रवेश के लिए अपनी आवाज सिस्टम के सामने उच्चारित करता है तब सिस्टम में पहले से दर्ज आवाज के नमूने से उसका मिलान किया जाता है और उसे अनुमति प्रदान की जाती है। यह व्यवस्था कम खर्चीली एवं उपयोग में आसान है।

भारत में बायोमेट्रिक तंत्र

भारत में बहु-नमूना पद्धति पर आधारित बायोमेट्रिक व्यवस्था का विकास किया जा रहा है। चेहरा, फिंगर प्रिंट, आयरिश एवं हस्ताक्षर की पहचान पर आधारित तंत्र की जांच-परख तथा डाटा बेस का परीक्षण आईआईटी कानपुर में चल रहा है। इन परिक्षणों में अभी तक 97% तक की शुद्धता प्राप्त हुई है। थत व थ्त्त की दर 2.46 तथा 1.23% है।

भारत में अभी तक विभिन्न सुरक्षा एजेंसियां पुरानी पहचान पद्धतियों से ही काम चला रही हैं परंतु अब नयी चुनौतियों के परिप्रेक्ष्य में धीरे-धीरे स्थिर गति से बायोमेट्रिक सिस्टम लागू हो रहा है। संचार एवं सूचना तकनीकी मंत्रालय के सहयोग से आईआईटी कानपुर में इस रिसर्च प्रोजेक्ट पर वर्क चल रहा है। यहां के कुछ बड़े अस्पतालों, दवा कंपनियों में इस तरह की पहचान व्यवस्था लागू है। सरकारी कार्यालयों जैसे- आयकर विभाग में इस तरह के पहचान की व्यवस्था लागू करने पर बात चल रही है।

भारत में जैव प्रौद्योगिकी

भारत में जैव प्रौद्योगिकी ज्ञान आधारित क्षेत्रों में सबसे तेजी से बढ़ने वाला क्षेत्र है। इसे शक्तिशाली समर्थकारी प्रौद्योगिकी माना गया है जो कृषि, स्वास्थ्य देखभाल, औद्योगिक प्रक्रियान्वयन और पर्यावरणीय स्थायित्व में क्रांति ला सकता है। आज कल इसका बढ़ता प्रयोग विभिन्न किस्म की फसलों के विकास और विशिष्ट रूप से विकसित किस्मों के लिए किया जाता है, नए भेषजीय उत्पाद, रसायन, सौंदर्य प्रसाधनों, उर्वरक का आधिक्य, वृद्धि वर्धक, प्रसंस्कृत खाद्य पदार्थ, स्वास्थ्य देखभाल के उपकरण और पर्यावरण से संबंधित तत्व आदि। भारतीय जैव-प्रौद्योगिकी वर्ग ने वैश्विक मंच पर त्वरित वृद्धि की है। बड़ी संख्या में उपचारिक जैव प्रौद्योगिकीय औषध हैं और टीके हैं, जिनका देश में उत्पादन और विपणन किया जा रहा है और मानव जाति की अपार सहायता की जा रही है।

भारत की पहचान वृद्धि जैव विविधता देश के रूप में हुई है। जैव प्रौद्योगिकी देश की विविध जैव-विज्ञानी संसाधनों को आर्थिक सम्पन्नता और रोजगार के अवसरों में परिवर्तित करने के लिए मार्ग प्रदान करता है। अनेकानेक कारक हैं जो जैव-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विशिष्ट क्षमता विकसित करने के लिए प्रेरणा सृजित करते हैं। वे हैं; वैज्ञानिक मानव संसाधन का विशाल भंडार अर्थात वैज्ञानिकों और अभियंताओं का एक मजबूत समूह, किफायती विनिर्माण क्षमताएं, अनेक राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशालाएं, जिसमें हजारों वैज्ञानिकों को रोजगार मिला हुआ है, जैव विज्ञान में अकादमी उत्कृष्टता के केन्द्र, अनेकानेक मेडिकल कॉलेज, शैक्षिक और प्रशिक्षण संस्थान, जो जैव प्रौद्योगिकी में डिग्री और डिप्लोमा प्रदान करते हैं, जैव-सूचना विज्ञान और जीव विज्ञानी विज्ञान, असरदार औषध और भेषज उद्योग, तथा तेजी से विकसित होती उपचारात्मक क्षमताएं।

भारत में जैव प्रौद्योगिकी विभाग (डीबीटी), विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन जैव-प्रौद्योगिकी क्षेत्रक के विकास के लिए शीर्ष प्राधिकरण है। इसकी स्थापना देश में विभिन्न जैव प्रौद्योगिकीय कार्यक्रमों और क्रियाकलापों की योजना बनाने संवर्धन करने और समन्वयन करने के लिए की गई है। यह राष्ट्रीय अनुसंधान प्रयोगशालाओं, विश्वविद्यालयों और विभिन्न क्षेत्रकों में अनुसंधान बुनियादों, जो जैव प्रौद्योगिकी से संबंधित है, के लिए सहायता अनुदान की सहायता प्रदान करने के लिए नोडल एजेंसी है। विभाग की मुख्य जिम्मेदारियां निम्नलिखित हैं;-

- जैव प्रौद्योगिकी के बड़े पैमाने पर उपयोग का संवर्धन करना
- जैव प्रौद्योगिकी और संबंधित विनिर्माण के क्षेत्रों में अनुसंधान और विकास के लिए उत्कृष्टता हेतु केन्द्रों की पहचान और स्थापना करना
- अनुसंधान और विकास तथा उत्पादन को सहायता देने के लिए मूल संरचना सुविधाओं की स्थापना
- नए पुनरूमिश्रण डीएनए आधारित जैव प्रौद्योगिकीय प्रक्रियाओं उत्पादों और प्रौद्योगिकी के आयात के लिए सरकार के एजेंट के रूप में कार्य करना
- प्रयोगशाला अनुसंधान, उत्पादन और अनुप्रयोगों के लिए जैव-सुरक्षा दिशानिर्देश विकसित करना
- जैव प्रौद्योगिकी संबंधी तकनीकी और वैज्ञानिक पहल करना
- मानव संसाधन विकास के लिए एकीकृत कार्यक्रम विकसित करना
- जैव-प्रौद्योगिकी क्षेत्र के ज्ञानाधार के विस्तार के लिए अंतरराष्ट्रीय सहयोग का संवर्धन करना
- जैव-प्रौद्योगिकी से संबंधित सूचनाओं के संग्रहण एवं प्रचार-प्रसार के लिए नोडल एजेंसी के रूप में कार्य करना।

विभाग में चिकित्सा, कृषि तथा औद्योगिक जैव प्रौद्योगिकी के विभिन्न पक्षों पर कार्य करने के लिए अधिदेशित आठ स्वायत्त संस्थान हैं। ये हैं;

- राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान, नई दिल्ली
- राष्ट्रीय कोशिका विज्ञान केन्द्र, पुने
- डीएनए फिंगर प्रिंटिंग और डायग्नोस्टिक, हैदराबाद
- राष्ट्रीय मस्तिष्क अनुसंधान केन्द्र, मानेसर, हरियाणा
- राष्ट्रीय पादप जीनोम अनुसंधान केन्द्र, नई दिल्ली

- जैव-संसाधन और स्थायी विकास संस्थान, इम्फाल
- जीवन विज्ञान संस्थान, भुवनेश्वर

जबकि विभाग में सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रम जो जैव-प्रौद्योगिकी क्षेत्रक के विकास के लिए कार्य करते हैं, निम्नलिखित हैं:

- भारत इम्यूनोलॉजिकल एंड बायोलॉजिकल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, भुवनेश्वर
- इंडियन वैक्सीन कॉर्पोरेशन लिमिटेड, गुड़गांव

इसके अलावा, राष्ट्रीय जैव संसाधन विकास बोर्ड (एनबीडीबी) की स्थापना विभाग के अंतर्गत की गई है ताकि अनुसंधान और विकास तथा जैव संसाधनों का स्थायी उपयोगिता विशेषकर नए उत्पादों और प्रक्रियाओं के विकास के लिए जैव-प्रौद्योगिकी और संबंधित वैज्ञानिक तरीकों के प्रभावी अनुप्रयोग के लिए विस्तृत नीतिगत ढांचे का निर्णय किया जा सके। बोर्ड जैव विज्ञान के आधुनिक उपकरणों का उपयोग करते हुए त्वरित अनुसंधान और विकास के माध्यम से राष्ट्र की आर्थिक सम्पन्नता के लिए वैज्ञानिक कार्य योजना का विकास करना चाहता है। बोर्ड के क्रियाकलापों की सहायता करने के लिए एक राष्ट्रीय संचालन समिति का गठन किया गया है। जनवरी 2008 में आयोजित अपनी प्रथम बैठक में एनबीडीबी ने 3 प्राथमिकता क्षेत्रों को चुना है, जो है;-

1. पौधों, जंतुओं, सूक्ष्मजीवों और समुद्री संसाधनों की डिजिटल माल सूची तैयार करना
2. अनुसंधान और विकास परियोजनाएं, कार्यक्रम समर्थन, उत्कृष्टता केन्द्रों की स्थापना, प्रशिक्षण गतिविधियां और प्रदर्शन, जिनसे विशेष क्षेत्रों के जैव संसाधनों का विकास किया जा सके, जैसे कि पूर्वोत्तर क्षेत्र, हिमालच क्षेत्र, तटीय और द्वीप पारिस्थितिकी प्रणालियां, रेगिस्तान क्षेत्र, इंडो-गंगा मैदान और प्रायद्वीप भारतय तथा
3. ज्ञान सशक्तीकरण और मानव संसाधन विकास।

बोर्ड के अन्य महत्वपूर्ण कार्य निम्नलिखित हैं;

- संभावित वैज्ञानिक और आर्थिक मूल्य के जैव-संसाधनों के लिए प्रभावी एक्स सिटु संरक्षण का विकास करना
- सुस्थापित आण्विक वंशावली के द्वारा जैविक संसाधनों का पूर्वानुमान योग्य समूहन का विकास करना
- जैव-संसाधनों का जीन मैप निर्माण करना जो उपयोगी जीनों के स्थान निर्धारण में प्रयोग किया जा सकता है।
- कृषि संबंधी कीटों और रोग प्रजनन के प्रबंधन में जैव विज्ञानी सॉफ्टवेयर के उपयोग का संवर्धन करना
- जैव संसाधन में मूल्यवर्धन संवर्धित करना और जैव सूचना विज्ञान का सुदृढ़ करना
- ऐसे सभी उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए मानव संसाधन को प्रशिक्षित करना।

विभाग निम्नलिखित के विस्तृत क्षेत्रों में जैव-प्रौद्योगिकी के विकास और अनुप्रयोग में महत्वपूर्ण उपलब्धि हासिल कर रहा है;- 1. कृषि, वर्धित कृषि उत्पादकता, रोगों का विकास, सूखा और कीट रोधी किस्मों के रूप मेंय पारजीनी जीवों के अधिक उत्पादन किस्मों का उत्पादन (पौध और पशु), संकर बीजों का विकास, संश्लेषित/कृत्रिम बीज और प्रजनन के रूप में इंजीनियरी की गई फसलें, फसलों की प्रतिकूल मौसम और मृदावस्था के प्रति सहनशीलता का वर्धन करने द्वारा खाद्य सुरक्षा में सुधारय आदि, 2. स्वास्थ्य देखभाल, सुरक्षित और किफायती टीकों का विनिर्माण के रूप में, विभिन्न रोगों का आरंभ मे ही पता लगाना सुनिश्चित करने के लिए जैव-नैदानिकी किट का विकास, विभिन्न उपचारात्मक प्रोटीनों का उत्पादन, डीएनए फिंगर प्रिंट आदि का उपयोग के रूप में, 3. उद्योग, विभिन्न एसिड और एल्कोहल को तैयार करने के रूप में, विटामिन, एंटीबायोटिक, स्टेरोइड असंख्य भेषजीय औषध और रसायन, खराब होने से औद्योगिक उत्पादों का बचाव आदि के रूप में, 4. पर्यावरण और ऊर्जा, प्रदूषण नियंत्रण, जैव अवमूल्यन अपशिष्ट का पूरी तरह ऊर्जा में परिवर्तन जैसे बायोगैस ईंधन, अवमूल्य भूमि का पुनरुद्धार, प्रदूषक का पता लगाने के लिए बायोसेन्सर का विकास, औद्योगिक अपशिष्ट का उपचार आदि के रूप में।

ऐसे प्रयासों को अनुपूरित करने और जैव-प्रौद्योगिकी क्षेत्रक में बड़ी मात्रा में निवेश आकर्षित करने के लिए विभाग अनेकानेक नीतिगत पहलें और उपाय समय-समय पर कर रहा है। इनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण 'राष्ट्रीय जैव-प्रौद्योगिकी विकास कार्यनीति' की घोषणा है। यह समग्र नीतिगत ढांचे के रूप में है ताकि जैव प्रौद्योगिकी उद्योग को बढ़ाया जा सके। यह उन भंडारों को लेता है जो भविष्य के लिए पूरा किया जाता और ढांचा प्रदान करता है, जिसके अंतर्गत कार्य नीतियां और विशिष्ट कार्य क्षेत्रक को संवर्धित करने के लिए करने

की आवश्यकता है। इस नीति का लक्ष्य कृषि और खाद्य जैव-प्रौद्योगिकी, औद्योगिक जैव-प्रौद्योगिकी, उपचारात्मक और चिकित्सा जैव-प्रौद्योगिकी पुनरुत्पादक और जातिगत दवाइयों, नैदानिक जैव-प्रौद्योगिकी जैव अभियंता, नैनो जैव प्रौद्योगिकी, विनिर्माण और जैव प्रक्रियान्वयन, अनुसंधान सेवाओं, जैव संसाधनों, पर्यावरण और बौद्धिक सम्पदा कानून के क्षेत्रों में उन्नति के मार्ग प्रशस्त करना है। नीतिगत ढांचे के मुख्य उद्देश्य हैं: 1. भारत की अकादमी और औद्योगिक जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधान क्षमताओं को सुदृढ़ करने के लिए दिशा निर्धारित करना, 2. व्यापारिक प्रतिष्ठानों, सरकार और अकादमियों के साथ प्रौद्योगिकी को अनुंधान से वाणिज्यिक की ओर ले जाने के लिए कार्य करना, 3. भारत का समग्र औद्योगिक विकास बढ़ाना, 4. लोगों को विज्ञान, अनुप्रयोग, जैव-प्रौद्योगिकी के लाभों और मुद्दों के बारे में सूचना देना, 5. जैव प्रौद्योगिकी की वृद्धि के लिए शिक्षण और कार्य शक्ति प्रशिक्षण क्षमताओं को बढ़ाना, 6. भारत को जैव-प्रौद्योगिकी के लिए उत्कृष्ट अंतरराष्ट्रीय स्थान के रूप में स्थापित करना। दूसरे शब्दों में यह मानव संसाधन विकास, अकादमी और उद्योग अन्तरा पृष्ठ, मूल संरचना विकास, प्रयोगशाला और विनिर्माण, उद्योग व्यापार का संवर्धन, जैव प्रौद्योगिकी पार्क और ऊष्मायित्र, विनियामक प्रक्रम, सार्वजनिक शिक्षा और जागरूकता निर्माण जैसे मुद्दों पर बल देता है। बायोटेक पार्क और बायोटेक इंक्यूबेटर केन्द्रों की स्थापना तथा विभिन्न राज्यों और संगठनों में प्रशिक्षण एवं पायलट परियोनजाओं की स्थापना जैव प्रौद्योगिकी शुरू करने वाली कम्पनियों के लिए उत्कृष्ट माहौल प्रदान करती है। इसके तहत युवा उद्यमियों को वित्तीय/युक्तिगत सहायता प्रदान करने की योजनाएं हैं, जो जैव प्रौद्योगिकी उद्योग में अधिक पूंजी कम करने की स्थिति में नहीं हैं परन्तु उनके पास विकास, डिजाइन और नए जैव प्रौद्योगिकी उत्पाद और प्रक्रियन्वयनों की जैव प्रौद्योगिकीय ऊष्मायित्र और पायलट स्तर की सुविधाओं का उपयोग करके पूर्ण बनाने की क्षमताएं हैं। कुछ मौजूदा जैव प्रौद्योगिकी पार्क/ऊष्मायित्र केन्द्रों और पायलट परियोजनाएं निम्नलिखित हैं;

- लखनऊ, उत्तर प्रदेश में जैव प्रौद्योगिकी पार्क
- जैव-प्रौद्योगिकी ऊष्मायित्र केन्द्र, हैदराबाद, आंध्र प्रदेश
- जैव प्रौद्योगिकी ऊष्मायित्र केन्द्र/पायलट संयंत्र सुविधाएं, केरल
- जैव प्रौद्योगिकी ऊष्मायित्र केन्द्र/हिमाचल प्रदेश में पायलट संयंत्र सुविधाएं
- बैंगलोर में जैव प्रौद्योगिकी पार्क/ऊष्मायित्र केन्द्र और सार्वजनिक इंन्ट्रूमेन्टेशन सुविधा

इसके अलावा स्टेम कोशिका अनुसंधान और उपचार के लिए मार्गदर्शी सिद्धांत तैयार किए गए हैं, ताकि यह सुनिश्चित करने की प्रक्रिया प्रदान की जा सके कि मानव स्तंभ कोशिकाओं के साथ अनुसंधान एक उत्तरदायी तथा नैतिक दृष्टि से संवेदनशील रूप में किए जाते हैं और इनमें सामान्य रूप से जैव चिकित्सा अनुसंधान एवं विशेष रूप से समकोशिका अनुसंधान से संबंधित सभी विनियामक आवश्यकताओं का पालन किया जाता है। इन मार्गदर्शी सिद्धांतों का लक्ष्य है-

1. नैतिकता के मुद्दों को ध्यान में रखते हुए स्तंभ कोशिका अनुसंधान और उपचार के लिए सामान्य सिद्धांतों का बनाना।
2. अनुसंधान और उपचार के लिए मानव स्तंभ कोशिकाओं के उद्भव, प्रवर्धन, अवकलन, लाक्षणीकरण, भण्डारण तथा उपयोग के लिए विशिष्ट मार्गदर्शी सिद्धांतों का निर्धारण।

भारत दुनिया का पहला देश है जहां 1987, में जैव प्रौद्योगिकी सूचना प्रणाली (बीटीआईएस) नेटवर्क बनाया गया है ताकि एक ऐसी मूल संरचना का सृजन किया जा सके जहां यह जैव सूचना विज्ञान के अनुप्रयोग के माध्यम से जैव प्रौद्योगिकी क्षेत्र को समर्थन देता है। यह जैव सूचना विज्ञान में मानव संसाधन के सृजन में सहायता देता है और विभिन्न क्षेत्रों में अनुसंधान करता है। कार्यक्रम के निम्नलिखित प्रमुख प्रबलन क्षेत्र हैं:

- जैव सूचना विज्ञान और अभिकलन जीव विज्ञान के अग्रणी क्षेत्रों में उन्नत अनुसंधान करना।
- जैव सूचना विज्ञान में विश्व स्तरीय मानव संसाधन का विकास।
- प्रभावी शिक्षा जगत-उद्योग अंतरापृष्ठ की स्थापना।
- प्रमुख संस्थानों, संगठनों और विश्व के देशों के साथ अंतरराष्ट्रीय सहयोग का प्रयास और प्रोत्साहन।
- प्रौद्योगिकी विज्ञान, अंतरण और वाणिज्यीकरण के लिए विश्व स्तरीय मंचों का सृजन।

I जैव सूचना विज्ञान (बीटीबीआई) के माध्यम से जीव विज्ञान शिक्षण में नवाचार आरंभिक करते हुए 52 जैव सूचना विज्ञान सुविधाओं (बीआईएफ) की स्थापना की गई है।

जैव प्रौद्योगिकी में अंतरराष्ट्रीय सहयोग जैव प्रौद्योगिकी विभाग की प्रमुख शक्ति रहा है जिसमें भारत के साथ सहयोग करने वाले देशों की संख्या बढ़ गई है। इनका अनुशीलन ज्ञानाधार का विस्तार करने और विशेषज्ञता विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में किया जा रहा है, जो देश में अनुसंधान और विकास में गति को तेज करेगा। हालिया समय में जैव-प्रौद्योगिकी में अंतरराष्ट्रीय सहयोग में स्थायी प्रगति हुई है जिसके परिणाम स्वरूप अनेकानेक महत्वपूर्ण अनुसंधान परियोजनाएं, उत्पाद और प्रौद्योगिकी आए हैं। इनमें से कुछ इस प्रकार हैं: डेनमार्क और फिनलैंड के साथ समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किए गए हैं और प्रस्तावों के लिए संयुक्त आमंत्रण जारी किए गए हैं, जैव प्रौद्योगिकी और जैविक विज्ञान अनुसंधान परिषद (बीबीएसआरसी), यूके के साथ संयुक्त परियोजनाओं का निधिकरण भी किया गया है, विभाग ने कृषि खाद्य, कनाडा और राष्ट्रीय अनुसंधान केन्द्र, कनाडा के साथ क्रमश: दो समझौता ज्ञापनों पर हस्ताक्षर किए हैं, एनआईएच, यूएसए के साथ संकल्पना अनुसंधान पर नए करारनामा और गर्भ निरोधक अनुसंधान और विकास कार्यक्रम (कॉन्रेड) यूएसए के साथ करारनामें में संशोधन पर भी हस्ताक्षर किए गए हैं, आदि।

इन सबके परिणामस्वरूप भारत विश्व के मानचित्र पर जैव प्रौद्योगिकी केन्द्र के रूप में उभर कर सामने आया है और इसे मनपसंद निवेश स्थान के रूप में देखा जा रहा है। आण्विक जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी में विकास के कारण समाज की आर्थिक खुशहाली पर सराहनीय प्रभाव पड़ा है। भारतीय जैव प्रौद्योगिकी क्षेत्रक उभरते व्यापार अवसरों के लिए वैश्विक परिदृश्य में आ रहा है, और नवपरिवर्तनीय दवाइयों, कृषि में अधिक उत्पादकता और पोषक वृद्धि एवं पर्यावरण रक्षा सहित मूल्यवर्धन के लिए बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने की अपार क्षमता रखता है। तथापि, अनेकानेक सामाजिक चिंताएं हैं, जिनका समाधान करना देश की जैव प्रौद्योगिकी नवपरिवर्तन को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यक है, जैसाकि जैव संसाधनों

का संरक्षण करना और उत्पादों और प्रक्रियाओं की सुरक्षा आदि सुनिश्चित करना। तदनुसार सरकार और निजी क्षेत्रक दोनों को जन समुदाय को शिक्षित करने और हितों की रक्षा करने में तथा उनके लिए आधुनिक जैव प्रौद्योगिकी के लाभों को विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाना है।

❖❖❖

परमाणु प्रौद्योगिकी

CHRONICLE
IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

परमाणु किसी पदार्थ का वह सूक्ष्मतम कण है, जो रासायनिक अभिक्रिया में भाग लेता है। यह अत्यन्त सूक्ष्म मूल कणों से मिलकर बना होता है। इनमें इलेक्ट्रॉन – ऋण आवेशित कण, प्रोटॉन – धनावेशित कण तथा न्यूट्रॉन–उदासीन कण प्रमुख हैं। परमाणु अथवा नाभिकीय ऊर्जा न केवल विद्युत उत्पादन में उपयोगी है, बल्कि इसका प्रयोग विकिरण चिकित्सा, औद्योगिक विकिरण–चित्रण, कृषि उत्पादन, खाद्य प्रसंस्करण तथा औषधि निर्माण में भी बखूबी किया जा सकता है। फिलहाल यह वैश्विक चिंता, अशांति व संघर्ष का मुख्य सबब बना हुआ है। फुकुशिमा दुर्घटना, ईरान परमाणु कार्यक्रम इत्यादि ने इसे और पेचिदा बना दिया है। परमाणु ऊर्जा का उपयोग शांतिपूर्ण विकास कार्यों के अलावा नाभिकीय हथियार बनाने में भी किया जा सकता है, जो मानवता की रक्षा के हित में कतई नहीं है। ऊर्जा के नये स्रोतों में नाभिकीय ऊर्जा का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसमें अपार सर्जनात्मक क्षमता अंतर्निहित है। एक अनुमान के अनुसार, यूरेनियम के केवल एक परमाणु के विखंडन से निर्मुक्त ऊर्जा प्राकृतिक गैस के एक अणु के दहन द्वारा उत्पन्न की गयी ऊर्जा की तुलना में 200 करोड़ गुनी अधिक होती है।

परमाणु ऊर्जा की खोज होने के उपरांत से ही उन्नत प्रौद्योगिकी वाले देशों ने इस क्षेत्र में अपनी सक्रियता काफी तेज कर दी। इस सक्रियता के कारण ही फ्रांस 75 प्रतिशत, बेल्जियम 51 प्रतिशत, स्लोवाकिया 53.5 व यूक्रेन 48.6 प्रतिशत हिस्से की पूर्ति नाभिकीय ऊर्जा से ही करता है। हालांकि कुछ समय पूर्व इस सूची में लिथुआनिया भी शामिल था, पर यूरोपीय संघ में शामिल होने के पश्चात इसने अपना एकमात्र परमाणु संयंत्र बंद कर दिया। ऐसे देशों द्वारा नाभिकीय ऊर्जा का उपयोग सर्जनात्मक कार्यों के साथ–साथ विध्वंसात्मक कार्यों (यथा, परमाणु बम आदि के निर्माण) में भी किया जाने लगा है।

नाभिकीय विखण्डन

नाभिकीय विखंडन (Nuclear fission) वह प्रक्रिया है जिसमे एक भारी नाभिक दो लगभग बराबर नाभिकों में टूट जाता हैं। इसी अभिक्रिया के आधार पर बहुत से परमाणु रिएक्टर या परमाणु भट्ठियाँ बनायी गयीं हैं जो विद्युत उर्जा का उत्पादन करतीं हैं। नाभिकीय विखण्डन की खोज सर्वप्रथम जर्मन वैज्ञानिक ऑटो हॉन एवं स्ट्रासमैन द्वारा 1939 में की गयी। इसकी एक अन्य परिभाषा के अनुसार, जब किसी अस्थायी भारी नाभिक पर उच्च ऊर्जा वाले न्यूट्रॉन की बमबारी की जाती है, तो वह लगभग समान द्रव्यमान वाले दो नाभिकों में विभक्त हो जाता है। विखण्डित भाग आवर्त सारणी के मध्य स्थित तत्त्वों के समस्थानिक होते हैं। आवर्त सारणी के मध्य में स्थित तत्त्वों की प्रति नाभिक बंधन ऊर्जा मुक्त होती है। नाभिक को विभाजित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा क्रांतिक ऊर्जा (Critical Energy) कहलाती है। यह ऊर्जा न्यूट्रॉनों की बंधन ऊर्जा (Bond Energy) से अधिक होती है। यदि क्रांतिक ऊर्जा, न्यूट्रॉन की बंधन ऊर्जा से कम हो, तो नाभिकीय विखण्डन धीमी गति से होता है। यूरेनियम के दो समस्थानिक होते हैं– ${}_{92}U^{235}$ तथा ${}_{92}U^{238}$। प्राकृतिक यूरेनियम में 99.3 प्रतिशत U^{238} तथा मात्र 0.7 प्रतिशत U^{235} उपस्थित होता है। जब U^{235} पर मन्द न्यूट्रॉन की बमबारी की जाती है, तो इसका विखण्डन हो जाता है। परन्तु, U^{238} मन्द गति वाले न्यूट्रॉनों को अवशोषित कर लेता है तथा इसका विखण्डन नहीं होता। U^{238} के विखण्डन के लिए तीव्रगामी न्यूट्रॉनों की आवश्यकता होती है। जब U^{235} पर मन्दगति न्यूट्रॉन की बमबारी की जाती है, तो यह U^{236} नाभिक बनाता है, जो अस्थायी है। जल्द ही यह नाभिक दो हल्के नाभिकों क्रिप्टॉन एवं बेरियम में विभक्त हो जाता है। इस क्रिया में तीन नये न्यूट्रॉन निकलते हैं तथा प्रचुर मात्रा में ऊर्जा मुक्त होती है। ये नये न्यूट्रॉन अन्य यूरेनियम नाभिकों का विखण्डन करते हैं तथा प्रत्येक विखण्डन में तीन नये न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार, एक बार यह प्रक्रिया प्रारंभ हो जाने से यह स्वत: चलती रहती है। इस अभिक्रिया को शृंखला अभिक्रया (Chain Reaction) कहा जाता है। यदि विखण्डन में उत्पन्न न्यूट्रानों का मन्दकों (Moderator) द्वारा अवशोषण कर लिया जाये, तो शृंखला अभिक्रिया

नियंत्रित हो जाती है। नाभिकीय रिएक्टर (Nuclear Reactor) में इसी सिद्धांत का पालन किया जाता है। अत: नाभिकीय रिएक्टर में उत्पन्न ऊर्जा को उपयोगी कार्य करने में प्रयुक्त किया जाता है। नाभिकीय विखण्डन का उपयोग परमाणु बम (Atom Bomb) बनाने में भी किया जाता है।

नाभिकीय संलयन

जब दो हल्के नाभिक आपस में संयुक्त होकर एक भारी तत्व के नाभिक की रचना करते हैं तो इसे नाभिकीय संलयन (Nuclear Fusion) कहते हैं। नाभिकीय संलयन के पश्चात जिस नाभिक का सृजन होता है उसक द्रव्यमान, नाभिक के संलयन में भाग लेने वाले दोनों नाभिकों के सम्मिलित द्रव्यमान से कम होता है। चार हाइड्रोजन नाभिकों को मिलाकर हीलियम नाभिक बनने में द्रव्यमान क्षति के कारण अपार ऊर्जा उत्सर्जित होती है। सूर्य की असीमित ऊर्जा का कारण नाभिकीय संलयन ही है। सूर्य में हाइड्रोजन के समस्थानिक ड्यूटेरियम ($_1H^2$) के परमाणु नाभिकों के संलयन के फलस्वरूप हीलियम नाभिक का निर्माण होता है। इस दौरान प्रचुर ऊर्जा उत्सर्जित होती है। नाभिकीय संलयन के सिद्धांत पर हाइड्रोजन बम का भी निर्माण किया जाता है, जिसमें ट्राइटियम तथा ड्यूटेरियम परमाणुओं के नाभिकों का संलयन होता है तथा अपरिमित ऊर्जा उत्सर्जित होती है। चूंकि हाइड्रोजन के 1 ग्राम में परमाणुओं की संख्या यूरेनियम के 1 ग्राम में परमाणुओं की संख्या से बहुत अधिक होती है, अत: नाभिकीय संलयन में नाभिकीय विखण्डन की अपेक्षा अधिक ऊर्जा प्राप्त होती है। नाभिकीय संलयन की प्रक्रिया के लिए बहुत उच्च ताप की आवश्यकता होती है। यह ताप लगभग 10^7 केल्विन तक होता है। अधिक ताप पर नाभिकों में अपनी उष्मीय गति के कारण इतनी अधिक गतिज ऊर्जा (Kinetic Energy) आ जाती है कि ये परस्पर टक्कर होने पर, अपने बीच लगने वाले प्रतिकर्षण बल को पार करने में समर्थ हो जाते हैं। इस अवस्था में दोनों नाभिक एक-दूसरे में संलीन हो जाते हैं। नाभिकीय संलयन के लिए आवश्यक ताप को नाभिकीय विखण्डन द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अत: नाभिकीय संलयन से पूर्व नाभिकीय विखंडन किया जाता है। नाभिकीय संलयन दो विधियों द्वारा सम्पन्न होता है। प्रथम चुम्बकीय क्षेत्र पर आधारित तथा द्वितीय जड़त्व पर आधारित। चुम्बकीय संलयन (Magnetic Fusion) में अत्यधिक शक्तिशाली चुम्बकीय क्षेत्र द्वारा ड्यूटेरियम- ट्राइटियम ईंधन को बिना किसी पदार्थ के स्पर्श से एक स्थान पर सीमाबद्ध किया जाता है, क्योंकि संलयन के लिए आवश्यक तापमान पर प्रत्येक पदार्थ वाष्पीकृत हो जाते हैं। गैसीय प्लाज्मा के रूप में ईंधन को इतना गर्म किया जाता है, जिससे संलयन संभव होसके।

रेडियोधर्मिता

प्रकृति में कुछ तत्त्व स्वतंत्र अवस्था में अधिक समय तक नहीं रह सकते। वे धीरे-धीरे अन्य तत्त्वों में बदल जाते हैं। हेनरी बैकरेल ने पता लगाया कि यूरेनियम धातु और उसके लवणों से एक विशेष प्रकार की अदृश्य किरणें निकलती हैं, जो काले कागज में लिपटी कोरेग्राफिक प्लेट पर अपना प्रभाव डालती हैं एवं उसे काला कर देती हैं। ये किरणें धातुओं की पतली चादर से पार निकल जाती हैं, गैसों को आयनित कर देती हैं तथा जिंक सल्फाइड में प्रतिदीप्ति उत्पन्न करती हैं। इन किरणों को बैकरेल किरणें कहा जाता है। इस प्रकार, बैकरेल किरणों को उत्सर्जित करने वाले तत्त्वों को रेडियोधर्मी तत्त्व तथा इस गुण को रेडियोधर्मिता (Radioactivity) कहते हैं।

कुछ हल्के स्थायी तत्त्वों पर अल्फा कणों की बौछार करने से इसे रेडियोधर्मी बनाया जा सकता है। इसे कृत्रिम रेडियोधर्मिता (Artificial Radioactivity) कहते हैं। उदाहरणत:, एल्युमिनियम नाभिक पर अल्फा कणों की बौछार से एल्युमिनियम के नाभिक से एक न्यूट्रॉन बाहर निकल जाता है। इसके फलस्वरुप एल्युमिनियम, फॉस्फोरस के रेडियो समस्थानिक में बदल जाता है। यह कृत्रिम समस्थानिक अस्थायी होता है एवं पॉजीट्रॉन ($_1e^0$) खोकर स्थायी सिलिकॉन नाभिक में बदल जाता है।

रेडियो समस्थानिकों का उत्पादन: विखण्डन क्रिया के दौरान बड़ी मात्रा में रेडियो समस्थानिकों का उत्पादन होता है। इन समस्थानिकों के संशोधन के उपरांत विभिन्न उपयोगों के अनुसार इनको सम्यक भौतिक अथवा रासायनिक रूपों में परिवर्तित किया जाता है। भाभा परमाणु अनुसंधान केन्द्र (B.A.R.C.) द्वारा फॉस्फोरस- 32 का विकास एवं उत्पादन किया गया है, जिसका प्रयोग आनुवंशिक अभियांत्रिकी, एन्जाइम तकनीक एवं ऊर्जा से संबद्ध क्षेत्रों के अनुसंधान में किया जा रहा है। रेडियो समस्थानिकों का उत्पादन बार्क (BARC) के ध्रुव एवं साइरस रिएक्टरों में मुख्य रूप से किया जाता है।

रेडियो समस्थानिकों के उपयोग: रेडियो समस्थानिक मानव जीवन के लिए कई मायने में अत्यन्त उपयोगी हैं। इनके कुछ महत्त्वपूर्ण उपयोग निम्नवत् हैं-

1. कैंसर के इलाज में: कोबाल्ट -60 का उपयोग कैंसर के इलाज में किया जाता है।
2. पुरानी वस्तुओं के आयु निर्धारण में: इनमें कार्बन-14 का प्रयोग किया जाता है।
3. थाइरॉयड ग्रंथि की क्रियाशीलता ज्ञात करने में: इसमें आयोडीन-131 उपयोगी होता है।
4. आणविक भट्टी एवं भारी जल में: इसमें ड्यूटेरियम ($_1H^2$) उपयोगी है।
5. पृथ्वी की आयु ज्ञात करने में: इसमें यूरेनियम-238 का उपयोग किया जाता है।

गुरु जल का उत्पादन: शीतलक (Coolant) एवं मंदक (Moderator) के रूप में गुरु जल (Heavy Water) का प्रयोग तारापुर को छोड़ कर देश के सभी परमाणु विद्युत रिएक्टरों में होता है। भारत के नाभिकीय विद्युत कार्यक्रम के लिए गुरु जल का विकल्प इसलिए आवश्यक है, क्योंकि भारत के ये रिएक्टर ईंधन के रूप में प्राकृतिक यूरेनियम का प्रयोग करते हैं। हाइड्रोजन सल्फाइड जल विनिमय विधि का प्रयोग करके देश का प्रथम गुरु जल संयंत्र, कोटा (राजस्थान) में स्थापित किया गया। इसी तरह का एक संयंत्र आंध्र प्रदेश के मुनुगरू में निर्माणाधीन है। 1990 में इसकी एक इकाई में प्रायोगिक स्तर पर उत्पादन शुरू किया गया। गुरु जल उत्पादन के अन्य संयंत्र नांगल (पंजाब), बड़ौदा (गुजरात), तूतीकोरीन (तमिलनाडु), तलचर (उड़ीसा) तथा थाल (महाराष्ट्र) में स्थित हैं। ये सभी अमोनियम- हाइड्रोजन विनिमय विधि पर आधारित हैं।

रेडियोधर्मी विकिरण

जापान में मार्च 2011 में आये सूनामी के पश्चात फुकुशिमा परमाणु संयंत्र दुर्घटनाग्रस्त हो गया था। इसके पश्चात रेडियोधर्मी विकिरण फैलने की वैश्विक चिंता नजर आयी। रेडियोधार्मी विकिरण उन ऊर्जासंपन्न असंख्य किरणों व कणों को कहते हैं, जो यूरेनियम जैसे रेडियोधार्मी तत्वों के नाभिकों के टूटने से मुक्त होते हैं। मुख्य रूप से तीन प्रकार की किरणें पैदा होती हैं-अल्फा, जो केवल शरीर की ऊपरी त्वचा को भेद पाती हैं; त्वचा कैंसर, गले का थाइरॉइड कैंसर, अस्थि कैंसर और ल्यूकेमिया पैदा कने वाली बीटा (सेजियम 137, आयोडीन 131 या स्ट्रान्शियम 90 के विघटन से) किरणें, और इन दोनों से भी शक्तिशाली है गामा किरणें, जो वास्तव में विद्युतचुंबकीय (इलेक्ट्रोमैग्नेटिक) विकिरण हैं और मनुष्य के जीनों तक को क्षतिग्रस्त कर देती हैं।

दरअसल परमाणु रिएक्टर खाना पकाने की हॉटप्लेट के समान होता है। जिस तरह हॉटप्लेट बटन बंद कर देने के बाद भी कुछ समय तक गरम रहती है, उसी तरह परमाणु रिएक्टर भी बंद होने के बाद लंबे समय तक गरम भी रहता है और रेडियोध ार्मी विकिरण भी पैदा करता है। बटन बंद करने पर केवल इतना ही होता है कि उसके भीतर परमाणु विखंडन की सतत क्रिया (चेन रिएक्शन) थम जाती है। परमाणु विखंडन की सतत क्रिया चलती रहती है रिएक्टर के केंद्र में लगी परमाणु ईंधन की उन छड़ों में, जिनमें यूरेनियम या प्लूटोनियम भरा होता है। विखंडन की क्रिया शुरू करने के लिए उन पर न्यूट्रॉन कणों की बौछार की जाती है। एक बार शुरू होने के बाद यह क्रिया अपने आप तभी आगे बढ़ और निरंतर चल सकती है, जब न्यूट्रॉन कणों की टक्कर से टूटने वाले यूरेनियम या प्लूटोनियम के हर नाभिक से एक और न्यूट्रॉन कण छटके और वह एक और नाभिक को टक्कर मारे। यदि ऐसा नहीं हुआ, तो परमाणु विखंडन की क्रिया बार-बार रुक जाया करेगी। लेकिन, वास्तव में होता यह है कि हर न्यूट्रोन की टक्कर से यूरेनियम या प्लूटोनियम के हर नाभिक से एक ही नहीं, दो या तीन न्यूट्रॉन कण छटक कर अलग होते हैं। इसे रोकना पड़ता है, वर्ना सतत क्रिया नियंत्रण के बाहर हो जायेगी। रोकने के लिए ईंधन की छड़ों के बीच बोरोन या कैडमियम मिश्रित सामग्रियों वाली न्यूट्रॉन- अवशोषक छड़ें नीचे उतारी जाती हैं। उन्हें रिएक्टर में जितना ज्यादा नीचे उतारा जाता है, उतने ही ज्यादा न्यूट्रॉनों को वे अपने भीतर सोख लेती हैं। इस तरह सुनिश्चित किया जाता है कि रिएक्टर में उतने ही न्यूट्रॉन रहें, जितने नियंत्रित सतत क्रिया के लिए जरूरी हैं। रिएक्टर को बंद करने का मतलब है न्यट्रॉन-अवशोषक छड़ों को एक दम नीचे तक उतार देना, ताकि नाभिकीय विखंडन रुक जाए। नाभिकीय विखंडन की सतत क्रिया तो रुक जाती है, रिएक्टर तुरंत ठंडा नहीं हो जाता। बंद हो जाने के बाद भी परमाणु बिजली घर अपनी अधिकतम क्षमता के 5 से 10 प्रतिशत के बराबर बिजली पैदा करता है। यहाँ तक कि पूरी तरह चुक गई ईंधन- छड़ों से भी करीब उतना ही रेडियोधर्मी विकिरण निकलता रहता है, जितना विशुद्ध रेडियम से निकलता है। जिन छड़ों का परमाणु ईंधन अभी-अभी चुक गया है, उनके भीतर अब भी इतना विखंडनीय पदार्थ हो सकता है कि उनसे

न केवल अच्छा-खासा विकिरण ही पैदा हो रहा हो, यह विकिरण इतना बढ़ भी सकता है कि रिएक्टर बंद होते हुए भी पिघलने लगे। इसीलिए, अपना यूरोनियम या प्लूटोनियम खर्च कर चुकी छड़ें किसी कचरे के ढेर पर नहीं डाली जातीं है, बल्कि उन्हें उनको ठंडा करने के लिए बने विशेष टैंकों में रखा जाता है। उन्हें बार- बार ठंडा करना पड़ता है। यदि किसी को वर्ष भर में कुल मिलाकर 100 मिलीसीवर्ट रेडियोधर्मी विकिरण झेलना पड़ा, तो उसे कैंसर होने की संभावना बहुत बढ़ जायेगी। जिसे कुछ ही सप्ताहों में 1 से 5 सीवर्ट तक विकिरण झेलना पड़ा है, उसे सिरदर्द, मितली आने और उल्टी होने की शिकायत होगी। मनुष्यों व अन्य जीव-जंतुओं के प्रसंग में रेडियोधर्मी विकिरण को एक विशेष अंतरराष्ट्रीय इकाई 'सीवर्ट' (Sv) में मापा जाता है। यह नामकरण स्वीडन के एक डॉक्टर रोल्फ सीवर्ट के सम्मान में किया किया गया है। एक सीवर्ट 1000 मिलीसीवर्ट (mSv) के बराबर होता है। 100 मिलीसीवर्ट शरीर के लिए खतरा शुरू होने की सीमा है। विशेषज्ञ विकिरण की तीव्रता और दीर्घता के अनुसार उसके तात्कालिक और विलंबित प्रभावों के बीच अंतर करते हैं। यदि किसी को वर्ष भर में कुल मिलाकर 100 मिलीसीवर्ट रेडियोधर्मी विकिरण झेलना पड़ा है, तो उसे कैंसर होने की संभावना बहुत बढ़ जाएगी। जिस व्यक्ति को कुछ ही सप्ताहों में 1 से 5 सीवर्ट तक विकिरण झेलना पड़ा है, उसे सिरदर्द, मितली आने और उल्टी होने की शिकायत होने लगेगी। 15 सीवर्ट झेलने के बाद जीवित बच सकना बहुत मुश्किल है। कम तीव्रता वाले विकिरण के विलंबित परिणाम सालों बाद सामने आ सकते हैं और अधिकतर गले की थाइरॉइड ग्रंथि, ल्यूकेमिया और बच्चों में शारीरिक विकृति का कारण बन सकते हैं।

परमाणु संख्या: किसी परमाणु के नाभिक में प्रोटॉन की संख्या को उस परमाणु की परमाणु संख्या (Atomic Number) कहते हैं। यह किसी तत्त्व के परमाणु का मूल गुण होता है। यह कक्षा में उपस्थित इलेक्ट्रॉनों की संख्या के बराबर होता है।

परमाणु भार: किसी परमाणु के नाभिक में उपस्थित प्रोटॉन एवं न्यूट्रॉन की संख्याओं का योग उसके परमाणु भार (Atomic Weight) अथवा द्रव्यमान संख्या (Mass Number) के बराबर होता है।

समइलेक्ट्रॉनिक: कुछ आयनों एवं परमाणुओं में इलेक्ट्रॉनों की कुल संख्या बराबर होती है ऐसे आयन एवं परमाणु समइलेक्ट्रॉनिक कहलाते हैं। इनके इलेक्ट्रॉनिक विन्यास एक जैसे होते हैं। उदाहरणार्थ-सोडियम आयन (Na^+), मैग्नेशियम आयन (Mg^{+2}) एवं नियॉन (Ne) प्रत्येक में 10 इलेक्ट्रॉन पाये जाते हैं। अत: ये सभी समइलेक्ट्रॉनिक हैं।

समस्थानिक (**Isotopes**): एक ही तत्त्व के परमाणु भिन्न-भिन्न द्रव्यमान वाले हो सकते हैं। इन्हें समस्थानिक कहा जाता है। समस्थानिक परमाणुओं के नाभिक में प्रोटॉन की संख्या समान, परन्तु न्यूट्रॉन की संख्या भिन्न-भिन्न होती है। दूसरे शब्दों में, किसी तत्त्व के वे परमाणु जिनकी परमाणु संख्या समान हो, किन्तु परमाणु भार भिन्न-भिन्न हो, समस्थानिक कहलाते हैं। परमाणु संख्या की समानता के कारण समस्थानिकों के रासायनिक गुण समान होते हैं। हाइड्रोजन के तीन समस्थानिक ज्ञात हैं। इन्हें क्रमश: प्रोटियम (हाइड्रोजन, $_1H^1$), ड्यूटेरियम ($_1H^2$) एवं ट्राइटियम ($_1H^3$) कहते हैं। यूरेनियम सहित बहुत से तत्त्वों के समस्थानिक प्रकृति में प्राप्त होते हैं। परमाणु रिएक्टर द्वारा बहुत से तत्त्वों के समस्थानिक कृत्रिम ढंग से भी बनाये जाते हैं। इन्हें रेडियो समस्थानिक (Radio Isotopes) कहते हैं। ये रेडियोधर्मी होते हैं तथा कुछ कण विकिरण उत्सर्जित करते हैं।

समभारी (**Isobars**): कुछ तत्त्वों के परमाणु का परमाणु भार समान, परन्तु इनकी परमाणु संख्या भिन्न-भिन्न होती है। ऐसे तत्त्व समभारी कहे जाते हैं। दूसरे शब्दों में, विभिन्न तत्त्वों के परमाणु, जिनका परमाणु भार तो समान होता है, परन्तु उनके परमाणु संख्या में अंतर होता है, समभारी कहलाते हैं।

अर्द्ध-आयु (**Half Life**): किसी रेडियोधर्मी तत्त्व का द्रव्यमान जितने समय के पश्चात् आधा रह जाता है, उसे उस तत्त्व की 'अर्द्ध आयु' कहते हैं। भिन्न-भिन्न रेडियोधर्मी तत्त्वों के लिए अर्द्ध-आयु का मान भिन्न-भिन्न होता है। उदाहरणार्थ, रेडियम (Ra) के लिए अर्द्ध-आयु1590 वर्ष, थोरियम (Th) के लिए 14×10^9 वर्ष तथा पोलोनियम (Po) के लिए 0.0001 सेकेण्ड होता है।

एकबारगी पैदा हुआ रेडयोधार्मी विकिरण समय और दूरी के साथ घटता जाता है। लेकिन, विकिरण पैदा करने वाले तत्व और परमाणु रिएक्टरों से निकला कचरा हजारों, लाखों, यहाँ तक कि करोड़ों वर्षों तक विकिरणधर्मी बना रह सकता है। उदाहरण के लिए, प्लूटोनियम ढाई लाख वर्ष विकिरणधर्मी बना रहता है। विकिरण से बचने या उसके असर को घटाने के बहुत कम ही उपाय हैं। यदि विकिरण के बादल आ ही गये, तो यथासंभव खिड़की-दरवाजे बंद कर घर में ही रहना चाहिए। प्रदूषित हवा और धूलकणों को साँस के रास्ते भीतर जाने से किसी हद तक रोकने के लिए नकाब लगाना चाहिए। बाहर से घर आने पर कपड़े बदलना और नहाना चाहिए। कई बार आयोडीन की गोलियाँ लेने की भी सलाह दी जाती है, लेकिन बेहतर है कि ऐसा तभी किया जाए, जब सरकारी विभागों की ओर से ऐसा कहा गया हो। आयोडीन की गोलियाँ लेने से थाइरॉइड ग्रंथि आयोडिन से भर जाएगी, इसलिए वहाँ रेडियोधर्मी आयोडीन 131 जमा नहीं हो पाएगा। लेकिन, पहली बात, आयोडीन गोलियों की बड़ी मात्रा लेनी होगी, और दूसरी बात, आयोडीन की बहुत अधिक मात्रा स्वयं भी हानिकारक है। खतरा विकिरण के बादल छंट जाने के बाद भी बना रहता है। वे फल-फूल और सब्जियाँ, जो विकिरण के बदल आने के समय खेतों में थीं, उससे प्रदूषित हो जाती हैं। प्रदूषण की तीव्रता के अनुपात में उनसे वही बीमारियाँ हो सकती हैं, जो विकिरण के सीधे प्रभाव से होती हैं। इसलिए, भोजन के मामले में भी लंबे

समय तक सावधानी बरतनी पड़ सकती है। फुकुशिमा के आस-पास के चावल में भी विकिरण के अंश पाये जाने की सूचना मिली है।

रेडियोधर्मी अपशिष्ट का प्रबंधन: परमाणु संयंत्रों द्वारा उत्पन्न रेडियोधर्मी अपशिष्ट पर्यावरण के लिए एक गंभीर खतरा है। अत: इसका समुचित प्रबंधन आवश्यक है। भारत में इसके लिए अनेक प्रबन्ध किये गये हैं। अंत:स्थलों के निम्नस्तरीय द्रव अपशिष्ट का प्रबंधन तथा पर्यावरण में इनके उत्सर्जन को कम करने के लिए राजस्थान एवं नरौरा के केन्द्रों में व्यवस्था की गयी है, जबकि तटीय क्षेत्रों में निम्नस्तरीय द्रव अपशिष्टों को तारापुर एवं मद्रास के समीप समुद्री जल में घोल दिया जाता है। निम्नस्तरीय ठोस अपशिष्टों के प्रबंधन हेतु विभिन्न प्रकार के डिब्बों का प्रयोग करके भौगोलिक स्थलों का चयन किया जाता है। उच्चस्तरीय रेडियोधर्मी अपशिष्टों के प्रबंधन हेतु त्रिस्तरीय विधि का प्रयोग किया जाता है। ऐसे अपशिष्टों का प्रबंधन तारापुर के 'ठोस संग्रहण निगरानी विविधा' के तत्वावधान में होता है। ट्रॉम्बे, तारापुर एवं रावतभाटा स्थित रेडियोधर्मी अपशिष्ट पदार्थ प्रबंधन सुविधाओं में निम्न तथा मध्यवर्ती स्तर के रेडियो अपशिष्ट पदार्थों को संशोधित करने एवं इनके अनुकूलन का कार्य गत वर्षों में सफलतापूर्वक किया गया है। वर्ष 1990-91 में नरौरा स्थित अपशिष्ट पदार्थ प्रबंधन सुविधा के प्रथम चरण को चालू किया गया तथा तारापुर स्थित अपशिष्ट पदार्थ अचलीकरण संयंत्र द्वारा परमाणु रिएक्टर ईंधन पुनर्संशोधन संयंत्र से उत्सर्जित उच्चस्तरीय अपशिष्ट पदार्थों का उपयोग करने का कार्य सुचारु रूप से किया गया।

विट्रीकृत अपशिष्ट को खास रूप से डिजाइन किये गये गैस भंडारण सर्वेक्षण सुविधा में लगभग 30 साल तक रखा जाता है और उसके बाद उसे गहरे भू-गर्भ निर्माण में दबा दिया जाता है। इस प्रकार की पहली सुविधा तारापुर में 1999 से काम कर रही है। निष्क्रिय किये उच्च-स्तर के रेडियोधर्मी अपशिष्ट के अंतिम निष्पादन हेतु समुचित गहरे भू-गर्म निर्माण किए जा रहे हैं।

कोबाल्ट-60

अप्रैल 2010 में रेडियोसक्रिय आइसोटोप कोबाल्ट-60 के हानिकारक विकिरण का प्रभाव सामने आया। दिल्ली के एक स्थान पर कबाड़ के रूप में रखे रेडियो सक्रिय तत्व के विकिरण से उस दुकान के सभी लोग झुलस गए एवं विविरण के प्रसार के भय से पूरी दिल्ली में हड़कंप मच गया। बार्क (BARC) के परमाणु वैज्ञानिकों ने जांच के बाद घोषित किया कि कोबाल्ट-60 नामक रेडियोसक्रिय तत्व ये यह विकिरण फैला था। वस्तुत: दिल्ली विश्वविद्यालय के रसायन शास्त्र विभाग की एक प्रयोगशाला से यह कबाड़ यहां आया था जिसे विश्वविद्यालय ने अक्रियाशील मानकर यहां बेच दिया था।

कोबाल्ट-60-वस्तुत: कोबाल्ट धातु का रेडियोसक्रिय आइसोटोप है, जो लगातार घातक गामा किरणों को उत्सर्जित करता रहता है। इसकी उर्जा तीन मिलियन इलेक्ट्रॉन वॉल्ट के बराबर होती है। इसकी खोज 1938 में जॉन लिविंगपुट और ग्लेन सीवोर्ण ने की थी। वर्तमान में कोबाल्ट-60 का उपयोग चिकित्सा (ट्यूमर आदि के उपचार में) एवं उद्योगों, रंगरोगन आदि में किया जाता है। कोबाल्ट-60 से उत्सर्जित गामा किरणों के संपर्क में आने पर मानव शरीर की त्वचा जल जाती है। रोगी को खून की उल्टीयां होने लगती है, आंत एवं फेफड़े समेत लिवर खराब हो जाता है एवं शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता समाप्त होने लगती है। यहां तक कि इससे प्रजनन क्षमता का ह्रास हो जाता है एवं शरीर के विभिन्न अंग कैंसर से ग्रसित हो सकते हैं। यदि इसका कण जमीन के अंदर चला गया हो तो वह भी 10-20 वर्षो तक विकिरण छोड़ता रहता है। ऐसी स्थिति में प्रदूषित स्थान से मिट्टी को हटाकर ही वातावरण को विकिरणरहित बनाया जा सकता है।

नाभिकीय संयंत्र

नियन्त्रित नाभिकीय शृंखला उत्पन्न करने के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले रिएक्टर को 'नाभिकीय रिएक्टर या 'परमाणु भट्ठी' (Nuclear Reactor) कहा जाताहै। नाभिकीय रिएक्टर के निम्नलिखित पांच भाग होते हैं-

- ईंधन **(Fuel):** यह रिएक्टर का मुख्य भाग होता है, जिसका विखंडन किया जाता है। ईंधन के रूप में प्राय: यूरेनियम-235 और प्लूटोनियम-239 को प्रयोग में लाया जाता है।
- मंदक **(Moderator):** यह न्यूट्रॉनों की गति को मंद करता है। भारी जल (D_2O), बेरीलियम ऑक्साइड या ग्रेफाइट का प्रयोग मंदक के रूप में किया जाता है। इनमें से भारी जल (Heavy Water) को सबसे अच्छा मंदक माना गया है।

- शीतलक **(Coolant):** नाभिकीय विखंडन के दौरान बड़ी मात्रा में ऊष्मा निर्मुक्त होती है, जिसे ठंडा करना आवश्यक होता है। इस निमित्त रिएक्टर में वायु, जल और कार्बन डाइऑक्साइड प्रवाहित किये जाते हैं। इस ऊष्मा का उपयोग वाष्प निर्माण में किया जाता है, जिससे टरबाइन (Turbine) चलाकर विद्युत उत्पादित की जाती है।
- परिरक्षक **(Shield or Protector):** नाभिकीय विखंडन के दौरान कई प्रकार की उच्च शक्ति और वेधन क्षमता वाली किरणें निकलती हैं। इन किरणों से रक्षा के लिए रिएक्टर के चारों ओर कंक्रीट की मोटी-मोटी दीवारों का निर्माण किया जाता है, जिसे परिरक्षक कहा जाता है।
- नियंत्रक **(Controller):** नाभिकीय विखंडन की गति को नियन्त्रित करना भी जरूरी होता है। इसके लिए कैडमियम (Cadmium) की छड़ें प्रयोग में लायी जाती हैं।

चूंकि रिएक्टर में पहले से ही न्यूट्रॉन विद्यमान रहते हैं, इसलिए उसको चलाने के लिए किसी बाह्य स्रोत की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु, जब रिएक्टर को चालू करना होता है, तो रिएक्टर की दीवारों में लगी कैडमियम की छड़ों को बाहर खींच लिया जाता है, जिससे रिएक्टर में विद्यमान न्यूट्रॉन यूरेनियम के नाभिक को विखंडित करने लगते हैं। जब न्यूट्रॉनों की बढ़ती संख्या पर नियंत्रण पाना होता है, तब उसके लिए कैडमियम की छड़ों को अन्दर खिसका दिया जाता है। ऐसा करने से कैडमियम की छड़ें न्यूट्रॉनों को अवशोषित कर लेती हैं और विखंडन की दर कम हो जाती है। रिएक्टरों के अंतर्गत नाभिकीय विघटनों का अध्ययन किया जाता है। साथ ही, इसमें रेडियो समस्थानिकों (Radio-Isotopes) का निर्माण भी होता है, जिनका उपयोग चिकित्सा, जीवविज्ञान, कृषि, उद्योग तथा विभिन्न वैज्ञानिक अनुसंधानों में किया जाता है।

रिएक्टर के निम्नलिखित प्रकार हैं;

तापीय रिएक्टर: तापीय रिएक्टर में मन्द गति वाले न्यूट्रॉनों से यूरेनियम-235 को विखंडित कर ऊर्जा प्राप्त की जाती है। प्राकृतिक यूरेनियम में चूंकि U^{235} की मात्रा काफी कम होती है, इसलिए इसका विखंडन काफी मंहगा होता है। इतना ही नहीं, इससे यूरेनियम का भंडार शीघ्र ही समाप्त हो जाने की आशंका रहती है।

फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टर: इस रिएक्टर के लिए उपयुक्त ईंधन यूरेनियम-प्लूटोनियम ऑक्साइड के मिश्रण से तैयार किया जाता है। फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टर की कुछ प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं-

- एफ॰बी॰टी॰आर॰ में शृंखला अभिक्रिया को तीव्र न्यूट्रॉनों द्वारा जारी रखा जाता है। इसमें ताप रिएक्टर की तुलना में प्रति विखंडन न्यूट्रॉनों की अधिक संख्या का उत्सर्जन होता है।
- ताप रिएक्टर में प्राकृतिक यूरेनियम के मात्र 1-2 प्रतिशत का ही उपयोग हो पाता है, जबकि एफ॰बी॰टी॰आर॰ में यह 60 से 70 गुना अधिक होता है।
- एफ॰बी॰टी॰आर॰ में सोडियम को शीतलक के रूप में प्रयोग किया जाता है, जबकि ताप रिएक्टरों में जल का।
- एफ॰बी॰टी॰आर॰ फ्रांस की रैपसोडी रिएक्टर की डिजाइन पर आधारित है।
- एफ॰बी॰टी॰आर॰ में प्रयुक्त ईंधन प्लूटोनियम और प्राकृतिक यूरेनियम का मिश्रित कार्बाइड होता है। कार्बाइड ईंधन उच्च घनत्व एवं ताप चालकता के कारण उच्च ब्रीडिंग अनुपात वाला होता है।
- फास्ट ब्रीडर टेस्ट रिएक्टर के बाद अब 500 मेगावाट क्षमता वाले प्रोटोटाइप फास्ट ब्रीडर रिएक्टर (PFBR) का डिजाइन और निर्माण करना है।

शक्ति भट्टी **(Power Reactor):** नाभिकीय ऊर्जा को विद्युत ऊर्जा में बदलने वाली परमाणु भट्टी को 'शक्ति भट्टी' कहा जाता है।

भारी जल **(Heavy Water):** भारी जल, भारी हाइड्रोजन (हाइड्रोजन के समस्थानिकों, यथा-ड्यूटेरियम और ट्राइटियम को भारी हाइड्रोजन कहा जाता है) का एक समस्थानिक (Isotope) होता है। यदि जल बनाने के लिए इस भारी हाइड्रोजन (ड्यूटेरियम 'D') को ऑक्सीजन के साथ मिलाया जाये, तो 'भारी जल' (Heavy Water, D_2O) प्राप्त होता है। इसका सापेक्षिक घनत्व (Relative Density) 1.1 और हिमांक (Freezing Point) साधारण जल से थोड़ा अधिक होता है। इसका उपयोग परमाणु ऊर्जा संयन्त्रों में मंदक (Moderator) और प्रशीतक (Coolant) के रूप में किया जाता है।

परमाणु बम: सर्वप्रथम जर्मन वैज्ञानिक ऑटो हान ने यूरेनियम विखंडन का सिद्धांत प्रतिपादित किया और तदुपरांत यूरेनियम-235 (U^{235}) के नाभिकीय विखंडन के सिद्धांत पर परमाणु बम बनाया गया। इसके तहत न्यूट्रॉन के प्रहार से यूरेनियम परमाणु के नाभिक का कृत्रिम विखंडन किया जाता है। परमाणु विखंडन से एक्स-रे, गामा-रे, उष्मा आदि रूपों में अपरिमित ऊर्जा निःसृत होती है।

इन रूपों में उत्सर्जित ऊर्जा दूसरे परमाणु का विखंडन करती है, जिसके फलस्वरूप पुनः ऊर्जा उत्पन्न होती है और यह ऊर्जा किसी अन्य परमाणु का विखंडन करती है। यह प्रक्रिया समस्त परमाणुओं के विखंडन तक चलती रहती है। सर्वप्रथम, इस बम का प्रयोग द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान अमेरिका द्वारा 6 और 9 अगस्त, 1945 को क्रमशः जापान के हिरोशिमा और नागासाकी नामक शहरों पर किया गया।

हाइड्रोजन बमः हाइड्रोजन बम का निर्माण नाभिकीय संलयन (Nuclear Fusion) के सिद्धान्त पर आधारित है। इस सिद्धान्त के आधार पर हाइड्रोजन के दो नाभिकों को संलयित करके एक अधिक द्रव्यमान का नाभिक तैयार किया जाता है। इस क्रम में काफी मात्रा में ऊर्जा उत्सर्जित होती है, जो अन्य नाभिकों को भी संलयित करती है, जिससे पुनः ऊर्जा का उत्सर्जन होता है। परिणामस्वरूप, अभिक्रिया की एक श्रृंखला बन जाती है, जिससे अपरिमित ऊर्जा निःसृत होती है। यह बम, परमाणु बम की अपेक्षा लगभग 10 हजार गुना अधिक विध्वंसात्मक होता है।

श्रृंखला अभिक्रियाः जब एक अभिक्रिया से स्वतः दूसरी अभिक्रिया होती है, तो उसे 'श्रृंखला अभिक्रिया' कहा जाता है। उदाहरणार्थ, यूरेनियम-235 के परमाणु नाभिक पर जब न्यूट्रॉनों से प्रहार कराया जाता है, तो बड़ी मात्रा में ऊर्जा और नये न्यूट्रॉन निर्मुक्त होते हैं और उनका पुनर्विखंडन करते हैं, जिससे अतिरिक्त ऊर्जा और न्यूट्रॉन उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार, नाभिकीय अभिक्रिया की एक श्रृंखला बन जाती है, जो अपरिमित ऊर्जा निर्मुक्त करती है। नाभिकीय संलयन में भी इसी प्रकार की श्रृंखला अभिक्रिया होती है।

संवर्द्धित यूरेनियम **(Enriched Ura-nium):** नाभिकीय विखंडन के लिए यूरेनियम-238 की तुलना में यूरेनियम-235 अधिक उपयोगी होता है, क्योंकि यूरेनियम-235 का नाभिक बहुत अधिक अस्थायी (Unstable) होता है। फलतः यदि कम गति से भी कोई न्यूट्रॉन उससे टकरा जाये, तो वह उसे पूर्णरूपेण खंडित कर सकता है। लेकिन मुश्किल यह है कि प्रकृति से प्राप्त यूरेनियम में U^{235} की मात्रा बहुत ही कम होती है। प्राकृतिक यूरेनियम में U^{238} की मात्रा 99.3 प्रतिशत और U^{235} की मात्रा केवल 0.7 प्रतिशत होती है। यूरेनियम रिएक्टर में कुछ विशेष प्रक्रियाओं द्वारा उसमें विखंडन योग्य U^{235} की मात्रा 0.7 प्रतिशत से बढ़ाकर 2.34 प्रतिशत तक की जा सकती है। इसी प्रक्रिया को यूरेनियम संवर्द्धन (Enrichment of Uranium) तथा इस विधि द्वारा प्राप्त यूरेनियम को संवर्द्धित यूरेनियम (Enriched Uranium) कहा जाता है। प्रकृति में यूरेनियम प्रायः पिचब्लेन्ड (Pitchblende) के रूप में पायी जाती है।

परमाणु अवताप **(Nuclear Fallout):** नाभिकीय विस्फोट के पश्चात् रेडियोएक्टिव पदार्थ वायुमंडल में तैरने लगते हैं तथा बाद में धीरे-धीरे पृथ्वी की सतह पर जमा होने लगते हैं। इसे ही 'परमाणु अवताप' (Nuclear Fallout) कहा जाता है। परमाणु अवताप तीन प्रकार का होता है-स्थानीय अवताप (Local Fallout), क्षोभमंडलीय अवताप (Tropospheric Fallout) तथा समतापमंडलीय अवताप (Stratospheric Fallout)। स्थानीय अवताप में विस्फोट के कुछ ही घंटों के भीतर लगभग 100 मील की परिधि में रेडियोएक्टिव कण (यथा- स्ट्रांशियम) जमा हो जाते हैं, जबकि क्षोभमंडलीय अवताप में धरातल से लगभग 8 मील की ऊंचाई तक तथा समतापमंडलीय अवताप में 8 से 20 मील तक की ऊंचाई में रेडियोएक्टिव कण तैरते रहते हैं। इनके कारण जनजीवन तथा मानव स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है, वनस्पतियां सूखने लगती हैं तथा मानव शरीर अस्थि कैंसर, ल्यूकेमिया एवं फेफड़े संबंधी अन्य रोगों से ग्रस्त हो जाता है।

भारत का परमाणु कार्यक्रम

स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं॰ जवाहरलाल नेहरू की आरम्भिक दूरदर्शिता तथा डॉ॰ होमी जहांगीर भाभा के वैज्ञानिक प्रयासों से भारत में नाभिकीय ऊर्जा से सम्बन्धित तकनीक काफी विकसित अवस्था में पहुंच गयी है। इसलिए आज भारत को इस क्षेत्र में विश्व के अग्रणी देशों में गिना जाने लगा है। 1948 में देश में परमाणु ऊर्जा से सम्बन्धित समस्त गतिविधियों के नीति-निर्धारण हेतु 'परमाणु ऊर्जा आयोग' का गठन किया गया तथा 1954 में देश के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के सुचारु कार्यान्वयन के लिए एक कार्यकारी संस्था के रूप में 'परमाणु ऊर्जा विभाग' की स्थापना की गयी। तब से लेकर अब तक देश का परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम लोकोपकारी सिद्धान्त के निहित उद्देश्यों को लेकर जारी है।

1948 में पारित परमाणु ऊर्जा अधिनियम के तहत परिभाषित भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के प्रमुख उद्देश्य हैं- विद्युत उत्पादन जैसे शान्तिपूर्ण प्रयोजन के लिए परमाणु ऊर्जा का विकास, नियंत्रण एवं प्रयोग तथा अनुसंधान, कृषि, उद्योग, चिकित्सा एवं अन्य क्षेत्रों में नाभिकीय प्रयोगों का विकास। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए अनुसंधान सुविधाओं, वैज्ञानिक एवं तकनीशियन,

कच्चा माल प्रसंस्करण, बहुमुखी अन्त:संरचना के निर्माण और प्रविधि जानकारी तथा नाभिकीय घटकों एवं इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को उत्पादित करने की क्षमता का विकास करने के प्रयास किये जाते रहे हैं, ताकि भारत इस क्षेत्र में वास्तविक अर्थों में आत्मनिर्भर बन सके। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (ट्राम्बे) द्वारा बड़ी मात्रा में रेडियो समस्थानिक और अन्य रेडियोधर्मी पदार्थों को तैयार किया जाता है। इनका प्रयोग रोगाणुओं से मुक्त करने हेतु खाद्यान्नों के किण्वन में, खाद्य सामग्रियों को सुरक्षित रखने में, विभिन्न रोगों का पता लगाने के लिए विकिरण चित्रण में, रोग उपचार के लिए विकिरण चिकित्सा में, आनुवंशिक उत्परिवर्तन द्वारा गेहूं, चावल, मूंगफली एवं जूट के रोगरोधी और उच्च उत्पादन वाले बीजों के विकास में तथा औद्योगिक रेडियोग्राफी में किया जाता है।

भारत की नाभिकीय नीति में शांतिपूर्ण एवं विकासात्मक उद्देश्यों को शामिल किया गया है। भारत का मानना है कि विश्व शांति के लिए सभी नाभिकीय हथियारों को नष्ट कर दिया जाना चाहिए तथा नाभिकीय हथियारों के निर्माण पर पूर्णत: रोक लगा दी जानी चाहिए। अपनी इसी नीति के तहत भारत ने अपनी नाभिकीय शक्ति का उपयोग या तो विद्युत उत्पादन में किया है अथवा अन्य विकासात्मक कार्यों में। नाभिकीय हथियारों के निर्माण से वह अब तक बचता रहा है, हालांकि ऐसा करने में वह पर्याप्त सक्षम है। अपनी इसी नीति के अंतर्गत भारत ने अब तक परमाणु अप्रसार संधि (N.P.T.) पर हस्ताक्षर नहीं किया है, क्योंकि यह संधि भ्रामक एवं भेदभावपूर्ण है। यह परमाणुसम्पन्न देशों के पक्ष में तथा परमाणु रहित देशों के खिलाफ है। साथ ही, यह पूरे विश्व से परमाणु हथियारों की समाप्ति नहीं, बल्कि उनके अप्रसार की वकालत करती है।

कार्यक्रम की दशा व दिशा: नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम के प्रारंभ में सबसे प्रमुख समस्या रिएक्टर और ईंधन के चयन की होती है। यूरेनियम इसके लिए एक प्रमुख ईंधन है। पर ईंधन के रूप में संवर्द्धित यूरेनियम की अपेक्षा प्राकृतिक यूरेनियम का चयन पूरी तरह से देश में प्राकृतिक यूरेनियम संसाधन की उपलब्धता पर निर्भर करता है। भारत में नाभिकीय ऊर्जा कार्यक्रम के अन्तर्गत 1959 में डॉ॰ होमी जहांगीर भाभा द्वारा यूरेनियम और थोरियम के प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के लिए तीन चरणों वाले कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार की गयी।

प्रथम चरण: प्राकृतिक रूप से उपलब्ध यूरेनियम को दबावयुक्त भारी जल रिएक्टरों (PHWRs) में ईंधन के रूप में प्रयोग कर उपोत्पाद के रूप में विद्युत और प्लूटोनियम प्राप्त करना।

द्वितीय चरण: प्लूटोनियम को ईंधन के रूप में इस्तेमाल करने वाले फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों का विकास, ताकि विद्युत और प्लूटोनियम के साथ-ही-साथ थोरियम से यूरेनियम-233 भी प्राप्त किया जा सके।

तृतीय चरण: थोरियम क्रम के प्रयोग द्वारा अतिरिक्त ब्रीडर रिएक्टरों का निर्माण व विकास, जिससे यूरेनियम की अपेक्षा ज्यादा प्लूटोनियम उत्पादित हो सके।

उपर्युक्त प्रत्येक चरण के विकास के लिए उसके पूर्व के चरण का विकास आवश्यक है। एक चरण से दूसरे चरण में जाने के लिए 20 वर्ष या इससे अधिक का समय लग सकता है। भारत प्रथम चरण के वाणिज्यिक स्तर तक पहुंच गया है, जबकि द्वितीय चरण प्रगति पर है। अब बार्क (B.A.R.C.) तृतीय अर्थात् थोरियम चरण को वृहत् स्तर पर प्रारंभ करने के लिए तैयार है। भारत में यूरेनियम से पांच गुना अधिक उच्च कोटि का थोरियम उपलब्ध है।

संप्रति भारत में 20 परमाणु रिएक्टर कार्यरत हैं, जिनमें से साइरस (CIRUS) और राणा प्रताप सागर ऊर्जा संयंत्र कनाडा के सहयोग से तथा तारापुर परमाणु ऊर्जा संयंत्र अमेरिका की सहायता से स्थापित किये गये हैं। सायरस का प्रचालन बंद हो चुका है। इन संयंत्रों पर भारत, संबंधित राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी (I.A.E.A.) तीनों का नियंत्रण होता है। इनसे उत्पादित प्लूटोनियम का उपयोग भारत स्वयं अपनी इच्छा से नहीं, बल्कि उपर्युक्त एजेंसी द्वारा अनुमोदित प्रयोजनों के लिए ही कर सकता है। शेष परमाणु रिएक्टरों-अप्सरा, जरलिना और पूर्णिमा आदि की स्थापना भारत ने स्वयं अपने प्रयासों से किया है। इसीलिए इन पर किसी दूसरे देश या एजेंसी का नियंत्रण नहीं रहता और इनसे उत्पादित प्लूटोनियम आदि का उपयोग भारत अपनी इच्छानुसार कर सकता है। जहां तक भारत द्वारा किये गये प्रथम नाभिकीय विस्फोट का प्रश्न है, उसने 18 मई, 1974 को राजस्थान के जैसलमेर जिले में पोखरन नामक स्थान पर अपना पहला नाभिकीय विस्फोट किया था। उस समय इस विस्फोट पर लगभग 30 लाख रुपये व्यय हुए थे, जबकि इसमें रिएक्टर, ईंधन संविरचक संयंत्र (Fuel Fabrication Plant) और प्लूटोनियम संयंत्र आदि अव-संरचनाओं पर हुए व्यय की गणना शामिल नहीं है। पोखरन में किया गया यह विस्फोट जमीन के नीचे 300 फीट गहराई में किया गया था। इसमें प्लूटोनियम परमाणु बम का प्रयोग किया गया था, जिसकी क्षमता 15 से 20 किलो टन तक थी।

भारत ने दूसरा परमाणु विस्फोट 11 एवं 13 मई, 1998 को एक बार पुनः पोखरन (राजस्थान) में किया। इसके अंतर्गत एक किलोटन से भी कम ऊर्जा उत्सर्जन वाले (सब-किलोटन) परमाणु परीक्षण करके अब सुपर कंप्यूटर की मदद से प्रयोगशाला में ही परीक्षण करना संभव हो सकेगा। इस दौरान जो पांच परीक्षण किये गये, उनमें से एक फिशन (Fission), तीन कम यील्ड वाला तथा एक थर्मोन्यूक्लियर परीक्षण था। इनमें से पहना परमाणु बम बनाने के लिए, दूसरा छोटा बम बनाने तथा बूस्टर फिशन (Booster Fission) के लिए तथा तीसरा परीक्षण हाइड्रोजन बम बनाने के लिए उपयुक्त था। चूंकि इसमें हाइड्रोजन बम का परीक्षण भी शामिल था, अतः इस बात की पुष्टि हो गयी है कि 1974 के बाद भारत ने नाभिकीय कार्यक्रम के क्षेत्र में काफी तरक्की कर ली है।

परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम

प्रथम चरण-दाबित गुरुजल रिएक्टरः 1960 के दशक में भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम के पहले चरण के रिएक्टर के रूप मी पी.एच. डब्ल्यू.आर का चयन किया है। इसके तहत महाराष्ट्र के तारापुर में एक परमाणु ऊर्जा केंद्र लगाया गया जो 1969 में काम करना शुरू किया और अभी भी काम कर रहा है।

कनाडा के सहयोग से रावतभाटा (राजस्थान) में निर्मित दो दाबित गुरुजल रिएक्टरों ने 1973 और 1981 में व्यावसायिक उत्पादन शुरू किया। बाद में परमाणु ऊर्जा विभाग के अनुसंधान व विकास कार्यों व घरेलू उद्योग के सहयोग के बलबूते पर रिएक्टरों का देश में ही विकास किया गया और देश में बने 220 मेगावाट के दो पी.एच. डब्ल्यू रिएक्टरों को 1984 में 1986 में चेन्नई के समीप कालपक्कम (तमिलनाडु) में चालू किया गया। बाद में 220 मेगावाट के रिएक्टरों के डिजाइन का माणकीकरण किया गया। इस डिजाइन के आधार पर नरौरा (उत्तर प्रदेश) में दो रिएक्टर पूर्णतः स्वदेशी प्रौद्योगिकी पर काम करना शुरू कर दिया। 2000 में नाभिकीय ऊर्जा निगम लिमिटेड ने कैगा (कर्नाटक) तथा रावतभाटा (राजस्थान) में उच्च प्रौद्योगिकी के दो-दो 220 मेगावाट वाले पी.एच. डब्ल्यू रिएक्टर लगाए।

हल्का जल रिएक्टर परियोजनाएंः इस तरह की परियोजनाओं के अंतर्गत कुल 3420 मेगावाट क्षमता के संयंत्रों का निर्माण कार्य चल रहा है। इनमें 540 मेगावाट का एक गुरुचल रिएक्टर तारापुर में, 220 मेगावाट के दो दाबित गुरु जल रिएक्टर रावत भाटा में, 220 मेगावाट क्षमता के दो दाबित गुरुजल रिएक्टर कैगा में और 1000 मेगावाट के दो दाबित जल रिएक्टर कुउनकुलम में स्थापित होने हैं। कुउनकुलम परमाणु परियोजना 1 और 2 परमाणु ऊर्जा की तीव्र वृद्धि को समानांतर धारा देने के लिए रूसी गणराज्य के सहयोग से लागू की जा रही है।

द्वितीय चरण-फास्ट ब्रीडर रिएक्टरः भारत के परमाणु ईंधन संसाधनों को ध्यान में रखते हुए, यह जरूरी है कि बड़े पैमाने पर फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों का सहारा लिया जाये, लेकिन फास्ट ब्रीडर टेक्नोलॉजी में कई सालों तक भारत की बिजली की आवश्यकता पूरी करने की संभावनाएं हैं। परमाणु ऊर्जा विभाग ने मार्क-1 मिश्रित कार्बाइड फ्युएल कोर विश्व में पहली बार विकसित किया है। इसमें प्लूटोनियम अधिक मात्रा में है। मार्क-II के संविचरण काकम ट्रांबे में चल रहा है। एफ.बी.आर.प्रदीपन के लिए बी.ए. आर.सी. द्वारा अनेक पी.एच.आर. सब एसेम्बली मे उपयोग किया जा सकता है। एक पी.बी.आर. परीक्षण ईंधन एफ.बी.आर. में लगाया गया है जो 43 जी वॉट दिन/टन बर्न अप तक पहुंचा है और इसे 100 जी वॉट दिन/टन बर्न अप तक पुनर्प्रसस्करण के लिए लेड मिनी ऐल कलपक्कम में लगाया गया है। यह फास्ट रिएक्टर पुर्नसस्करण प्रक्रिया स्थापित करने में सक्षम है। फास्ट ब्रीडरों से मिलने वाले ईंधन के पुनर्प्रसस्करण के लिए आई.जी.सी.ए.आर. संयंत्र लगा रहा है।

एफ.बी.आर. कार्यक्रम एक राष्ट्रीय मिशन के रूप में उभर कर सामने आया है जिसमें 100 से अधिक शैक्षणिक, अनुसंधान और संस्थागत संगठन सहयोग दे रहा है। केंद्र द्वारा इस्तेमाल ईंधनकेघोल में से रेडियोधर्मी विखंडन उत्पादों के अलग करने और प्लूटोमियम व यूरेनियम हासिल करने का व्यापक तरीका तैयार किया गया है। प्लूटोनियम संवृद्ध कार्बाइड ईंधन के 100000 मेगावाट दिन/टन बर्न अप तक पहुंचने के बाद ये प्रक्रिया अपनाई जाती है। विश्व में पहली बार यह विधि विकसित की गयी है। फास्ट ब्रीडर रिएक्टरों के मामले में हमारा उद्देश्य संक्षिप्त डबलिंग टाइम ईंधन और मेल खाती ईंधन चक्र सुविधाएं विकसित करना चाहिए ताकि पूंजीगत लागत संचालन व रखरखाव लागत को कम करने तथा सुरक्षा स्थिति सुधारने के साथ-साथ स्थापित फास्ट ब्रीडर रिएक्टर क्षमता का तेजी से विकास हो सके। कलपक्कम में बनाए जा रहे प्रोटो टाइप फास्ट ब्रीडर रिएक्टर के बाद ऐसी लगभग 4 इकाइयां और बनानी होंगी और हमें कई क्षेत्रों में अनुसंधान एवं विकास गतिविधियां जारी रखनी होगी।

भारत का परमाणु ऊर्जा लक्ष्य

नई परमाणु परियोजनाओं में मंद वृद्धि के कारण सरकार ने परमाणु ऊर्जा लक्ष्यों को संशोधित कर दिया है। वर्ष 2008 में वर्ष 2020 तक 20000 मेगावाट तथा वर्ष 2032 तक 63000 मेगावाट परमाणु बिजली स्थापित क्षमता का लक्ष्य रखा गया था। पर आंतरिक के साथ-साथ बाह्य चुनौतियों ने उपर्युक्त लक्ष्य को संशोधित करने के लिए सरकार को मजबूर कर दिया। अब नया परमाणु ऊर्जा लक्ष्य वर्ष 2020-21 तक 14580 मेगावाट व 2023-23 तक 27480 मेगावाट तय किया गया है। वर्ष 2017 तक यह लक्ष्य 10080 मेगावाट तय किया गया है। ध्यातव्य है कि वर्ष 2008 में भारत-अमेरिका असैन्य परमाणु समझौता संपन्न होने के पश्चात यह मानकर चला जा रहा था कि सरकार आलोच्य लक्ष्य को प्राप्त कर लेगा। इस समझौते के पश्चात फ्रांस, कनाडा, यूके इत्यादि देशों के साथ भारत ने असैन्य परमाणु ऊर्जा सहयोग के क्षेत्र में समझौते भी किये। पर फुकुशिमा परमाणु दुर्घटना ने सबकुछ बदलकर रख दिया। अब इसकी सुरक्षा पर सवाल उठने लगे हैं। इसी के पश्चात भारत के तमिलनाडु स्थित कुडनकुलनम इकाई व महाराष्ट्र के जैतापुर संयंत्र पर स्थानीय लोगों व कार्यकर्ताओं ने परमाणु संयंत्रों का विरोध करना आरंभ कर दिया है। इसी प्रकार पश्चिम बंगाल का हरिपुर स्थित परियोजना, जिसे रूस को परमाणु ऊर्जा संयंत्र के लिए दिया गया था, पर फिलहाल संकट बादल मंडरा रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि सरकार ने उपर्युक्त स्थलों के अलावा नई परमाणु इकाइयों की स्थापना के लिए हरियाणा, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश, गुजरात व पश्चिम बंगाल में छह ग्रीनफिल्ड स्थल 'भारत परमाणु ऊर्जा निगम लिमिटेड' यानी एनपीसीआईएल को प्रदान किये हैं। यहां 700 मेगावाट का स्वदेशी दाबित भारी जल संयंत्र तथा 1000 से 1650 मेगावाट के बीच का आयातित हल्का जल संयंत्र (Light Water Reactors-LWR) स्थापित किये जाने हैं। एलडब्ल्यूआर के लिए भारत सरकार ने तोशिबा-वेस्टिंगहाउस की 'AP1000' संयंत्र श्रृंखला, जीई-हितैची की 'ESBWR' संयंत्र, अरेवा का 'EPR' संयंत्र तथा रूस का 'VVER' को चुना है। फिलहाल भारत में 20 परमाणु संयंत्र संचालन में है जिनकी कुल स्थापित क्षमता 4780 मेगावाट (MWe-Mega Watt electrical) है।

तृतीय चरण-थोरियम आधारित परमाणु संयंत्र

यूरेनियम के विकल्प के रूप में थोरियम के विशाल संसाधन का उपयोग करने हेतु भारत ने महत्वपूर्ण योजना बनायी है। भारत द्वारा इस रोडियोएक्टिव तत्व पर आधारित कम-से-कम आठ संयंत्र लगाने का निर्णय अंतिम दौर में है। परमाणु ऊर्जा आयोग के अध्यक्ष अनिल काकोदकर ने स्पष्ट किया कि 10 हजार मेगावाट ऊर्जा ने उत्पादन की क्षमता वाले 3 लाख 50 हजार टन थोरियम संसाधन के इस्तेमाल हेतु अगले दशक में संयंत्र स्थापित करने की योजना को योजना आयोग अंतिम रूप दे रहा है।

- देश में सात सौ मेगावाट के थोरियम आधारित कम से कम 8 संयंत्रों की गुंजाइश है।
- योजना के मुताबिक प्रारंभ में 3400 करोड़ रु. की लागत से कलपक्कम में 500 मेगावाट वाले फास्ट ब्रीडर रिएक्टर का प्रतिरूप बनाया जायेगा। संयंत्र को तकनीकी प्रदर्शक के रूप में इस्तेमाल किया जायेगा और थोरियम से व्यावसायिक रूप से ऊर्जा उत्पादन की व्यवहार्यता का पता लगाया जायेगा।
- आयोग की और अधिक ब्रीडर रियेक्टर शुरू करने की योजना है, साथ ही थोरियम आधारित ऊर्जा के व्यावसायिक उत्पादन के लिए उन्हें उच्चीकृत भी किया जायेगा।

भारत की ऊर्जा आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए परमाणु ऊर्जा क्षमता का विकास आवश्यक है। वर्तमान समय में हमारे देश में बनने वाली कुल बिजली का लगभग 3.7 प्रतिशत भाग परमाणु ऊर्जा से प्राप्त होता है। प्रतिशत के लिहाज से यह बहुत ज्यादा भले ही न हो, लेकिन इससे एक बात का पता तो चलता है कि हमने इस उन्नत टेक्नोलॉजी में महारत हासिल कर ली है। अब हम देश में परमाणु ऊर्जा क्षमता के तेजी से विकास के मार्ग पर चल पड़े हैं।

भारत की परमाणु नीति

भारत की परमाणु नीति की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं;

- भारत की परमाणु नीति का मुख्य उद्देश्य शांतिपूर्वक आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक और तकनीक विकास करना है।
- इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भारत द्वारा स्थिरता से सम्भावित जोखिम के विरुद्ध शांति और सुरक्षा के लिए प्रयास किये जायेंगे।
- भारत द्वारा वैश्विक स्तर पर निरस्त्रीकरण के अनुपालन नहीं होने की स्थिति में नाभिकीय निवारण को बनाये रखने के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु प्रयास।
- भारतीय नाभिकीय कार्यक्रम का लक्ष्य अन्य देशों द्वारा इस प्रकार के हथियारों के सम्भावित प्रयोग को रोकना।
- भारत अपनी शांति और स्थिरता के लिए किसी भी प्रकार के खतरे से निपटने के लिए तैयार रहेगा।
- भारत प्रभावपूर्ण निगरानी और पूर्व चेतावनी की क्षमताओं को बनाए रखेगा।
- जब तक किसी अन्य देश द्वारा भारत पर नाभिकीय आक्रमण न किया जाये तब तक भारत देश-विशेष के विरुद्ध नाभिकीय हथियारों के प्रयोग की दिशा में कोई कदम नहीं उठायेगा। यह सिद्धान्त प्रयोग में पहल न करने के नाम से प्रसिद्ध है।
- भारत निम्नतम निवारण की नीति में विश्वास बनाए रखेगा।
- नाभिकीय निवारण सम्बन्धी सिद्धान्त विश्वासयोग्य, प्रभावशाली और दृढ़ रहेंगे।
- नाभिकीय संरक्षा पर विशेष ध्यान दिया जायेगा।
- प्रभावशाली निगरानी तथा पूर्व चेतावनी प्रणाली को विकासित करने के लिए संप्रेषण तंत्र को उन्नत बनाने की दृष्टि से अन्तरिक्ष विज्ञान तथा अन्य सम्प्रेषण तकनीकों को मजबूत किया जायेगा।
- भारत अपनी संगठन तथा गुप्तचर प्रणाली को मजबूत बनाएगा।
- भारत दोहरी सक्षम वितरण प्रणाली को सुनिश्चित करेगा।
- तकनीकी उन्नतियों को बनाये रखने के लिए भारत उन्नत अनुसंधान तथा विकास कार्यक्रम चलाएगा।
- हथियारों को नियंत्रित करने के उपायों को राष्ट्रीय सुरक्षा नीति का अंग बनाया जायेगा।
- भारत विकासशील मजबूत संकट नियंत्रण प्रणाली पर ध्यान देगा।
- भारत नाभिकीय हथियार मुक्त विश्व बनाने के प्रयास को जारी रखेगा।
- भारत इस बात के लिए विशेष प्रयास करता रहेगा कि नाभकीय हथियारों के प्रयोग की पहल न करने सम्बन्धी एक अंतर्राष्ट्रीय संधि की जा सके।
- भारत विकास संबंधी तथा सामरिक मामलों में निर्णय लेने की स्वायत्तता के अधिकार को संरक्षित करेगा।
- भारत दृढ़ कमांड और नियंत्रण प्रणाली बनाए रखेगा।

परमाणु अप्रसार संधि (एन.पी.टी.)

परमाणु अप्रसार संधि के लिए पिछले कुछ दशकों से राजनीतिक प्रयास किये जा रहे हैं। इसका कारण आयरिश प्रस्ताव (1958), क्यूबाई प्रक्षेपास्त्र संकट, एकपक्षीय परीक्षण प्रतिबंध, चीन का परमाणु परीक्षण तथा यूरोप में बहुद्देशीय नाभिकीय शक्तियों के उदय पर प्रतिबंध लगाने का निर्णय था। अन्ततः इन सब का समायोजन परमाणु अप्रसार से संबंधित अमेरिका-सोवियत संघ समझौते के रूप में हुआ। इसके तहत जुलाई 1968 में 62 देशों के प्रतिनिधियों द्वारा इस संधि पर लंदन, मास्को एवं वाशिंगटन में हस्ताक्षर किये गये। इस संधि को 'परमाणु अप्रसार संधि' (NPT) के नाम से जाना जाता है। यह संधि 3 मार्च, 1970 को अपने पूर्ण प्रभाव में आ गयी। यह संधि एक प्रस्तावना एवं 11 अनुच्छेदों पर आधारित है। संधि का मसौदा तय करते समय इसके प्रथम चरण की विधिक समयावधि 25 वर्ष अर्थात् 1995 तक निश्चित की गयी। इस संधि की उपलब्धियों का विश्लेषण करने के लिए प्रत्येक पांचवें वर्ष जेनेवा (स्विट्जरलैंड) में बैठक आयोजित करने का भी प्रावधान रखा गया। तथाकथित परमाणु अस्त्र संपन्न पांच देशों सहित कुल 190 देश इस संधि के पक्षकार हो चुके हैं। भारत, इजरायल, उत्तर कोरिया व पाकिस्तान अभी तक इसका पक्षकार नहीं बना है।

भारत के अनुसार यदि परमाणु मुक्त क्षेत्र का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया जाता है, तो सम्पूर्ण उपमहाद्वीप परमाणु क्षमता युक्त राष्ट्रों पर पूर्णतः आश्रित हो जायेगा, जिससे यहां की आंतरिक गतिशीलता में कमी आने के अलावा राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थाओं

के विलुप्त होने का भी खतरा उत्पन्न हो जायेगा। भारत का यह भी मानना है कि मात्र दक्षिण एशियाई क्षेत्र को ही परमाणु अस्त्र रहित क्षेत्र घोषित किया जाना सर्वथा अनुचित है। यह एक अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दा है, अतः इसे पूरे विश्व में लागू किया जाना चाहिए।

एक ओर यदि विश्व के कल्याणार्थ परमाणु अप्रसार संधि आवश्यक है, तो दूसरी ओर इस संधि के अनुच्छेदों में अनेक खामियां भी मौजूद हैं। इस संधि के अनुच्छेद-4 के अनुसार संधि पर हस्ताक्षर करने वाले राष्ट्रों को यह अधिकार प्राप्त होगा कि वे परमाणु ऊर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग हेतु संबंधित साज-सामान, वैज्ञानिक एवं तकनीकी ज्ञान का परस्पर आदान-प्रदान कर सकेंगे। इस प्रकार, हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्र शांतिपूर्ण उपयोग के नाम पर परमाणु क्षमता प्राप्त करने में स्वतः सफल हो जायेंगे। जाहिर है कि यह संधि न केवल परमाणु शक्तिसम्पन्न देशों को विशेषाधिकार प्रदान करती है, बल्कि परमाणु क्षमता रहित देशों द्वारा इस तकनीक को प्राप्त करने के अधिकार से भी वंचित करती है। परमाणु प्रसार का मामला सम्पूर्ण मानवता के लिए एक गंभीर खतरा बन चुका है और यदि समय रहते इस पर नियंत्रण नहीं किया गया तो विश्व का संहार अत्यन्त करीब होगा। अतः इस विनाश से बचने के लिए परमाणु अस्त्रों के उत्पादन एवं इसके प्रसार पर रोक लगाना आवश्यक है। परन्तु, वर्तमान परमाणु अप्रसार संधि अनेक मामलों में दोषपूर्ण है। यही कारण है कि 1970 में प्रभाव में आने के बावजूद यह अभी तक सर्व-स्वीकृत नहीं हो सकी है।

खाद्य परिरक्षण

भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (ट्रॉम्बे) के वैज्ञानिकों ने नाभिकीय विकिरण (Nuclear Radiation) के उपयोग से जहां एक ओर दालों, मूंगफलियों, जूट, धान, सरसों आदि की उन्नत किस्में विकसित की हैं, वहीं दूसरी ओर विकिरण द्वारा खाद्य पदार्थों के परिरक्षण (Preservation) हेतु नयी विधि विकसित करने में भी सफलता प्राप्त की है। इस विधि से परिरक्षण करने के लिए खाद्य पदार्थों को आयनीकृत विकिरण द्वारा उपचारित किया जाता है।

आयनीकृत विकिरण (Ionised Radiation) विद्युत-चुंबकीय ऊर्जा वर्णक्रम का एक भाग है, जिसमें रेडियो एवं टेलीविजन तरंगें, सूक्ष्म तरंगें, अवरक्त किरणें (Infrared Rays) तथा पराबैंगनी किरणें (Ultraviolet Rays) शामिल होती हैं। ऐसे विकिरण की तरंगदैर्घ्य (Wavelength) वर्णक्रम के अन्य विकिरणों की अपेक्षा कम होती है तथा ऊर्जा उत्सर्जन दर अधिक होती है। यही ऊर्जा खाद्य पदार्थों एवं नाशक जीवों में अणुओं के रासायनिक बंधनों को तोड़ने के लिए पर्याप्त होती है, जिनके द्वारा उनमें होने वाले रासायनिक परिवर्तनों से खाद्य पदार्थ संदूषित हो जाते हैं। जब किसी नाशक जीव या जीवाणु में पर्याप्त मात्रा में रासायनिक बंधन टूट जाते हैं, तो वे सूक्ष्म जीव या जीवाणु नष्ट हो जाते हैं। इसी सिद्धांत के आधार पर खाद्य पदार्थों को विकिरण द्वारा उपचारित करके लंबी समयावधि के लिए परिरक्षित किया जा सकता है।

किरणित खाद्य पदार्थों में न तो कीड़े लगते हैं और न ही वे सड़ते हैं। इस तकनीक द्वारा आलू, प्याज, फल आदि को किरणित करके परिरक्षित किया जा सकता है। विकिरण द्वारा ऐसे ताजे फलों एवं सब्जियों को उपचारित करने से उनके अणुओं के बंधन टूट जाते हैं, जिससे फलों के पकने एवं प्रस्फुटित होने से संबंधित संपूर्ण प्रक्रियाएं लंबी अवधि तक के लिए टाली जा सकती हैं। खाद्य पदार्थों को इस ढंग से परिरक्षित करने की क्रिया खाद्य पदार्थ किरणन (Food Irradiation) कहलाती है। इस क्रिया में खाद्य पदार्थों को गामा या एक्स किरणों द्वारा उपचारित किया जाता है। भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र (B.A.R.C.) के वैज्ञानिकों ने किरणन द्वारा खाद्य पदार्थों को लंबे समय तक सुरक्षित रखने की विधि विकसित की है। इस तकनीक से उपचारित खाद्य पदार्थों को लंबे समय तक सुरक्षित रखने की विधि विकसित की गयी है। इस तकनीक से उपचारित खाद्य पदार्थों को न तो किसी रसायन से उपचारित करना पड़ता है और न ही प्रशीतन कक्षों (Cold Storage) में रखना पड़ता है। भंडारित फल-सब्जियों को विकिरण की निम्न मात्रा से उपचारित करने पर ही अंकुरण एवं पुनर्वृद्धि से बचाया जा सकता है तथा फलों के पकने की क्रिया को ज्यादा समय तक टाला जा सकता है। भंडार गृहों में रखे खाद्य पदार्थों को कीटों से बचाने के लिए यह विधि काफी लाभकारी सिद्ध हुई है। विकिरण की अधिक मात्रा के उपयोग से मांस, समुद्री खाद्य पदार्थों आदि का पाश्चारीकरण (Pasteurization) करने के साथ-साथ उन्हें सड़ने से बचाया जा सकता है। इसके अलावा, इस प्रकार परिरक्षित खाद्य पदार्थों को प्रोटोजोआ, गोल कृमि, फीता कृमि, फ्लूक आदि से भी मुक्त रखा जा सकता है। सुखाये गये मसालों एवं जड़ी बूटियों को भी इससे उपचारित करके उनकी सूक्ष्मजीवी संक्रमणों से सुरक्षा की जा सकती है।

प्राकृतिक तौर पर खाद्य पदार्थों की गुणवत्ता में परिवर्तन दो मुख्य क्रियाओं के कारण संभव होता है, जिनमें से एक प्राकृतिक उपापचय (Natural Metabolism) तथा दूसरी जीवाणु संक्रमण (Bacterial Infection) है। पहली क्रिया के परिणामस्वरूप फलों एवं सब्जियों का पकना एवं उनका अंकुरण संभव बन जाता है, जबकि दूसरी प्रक्रिया से सड़ने-गलने की प्रक्रिया का आरंभ होता है। यदि इन दोनों क्रियाओं को आयनकारी किरणन द्वारा बाधित कर दिया जाये, तो पदार्थों को एक लंबे समय तक बिना प्रशीतन क्रिया के परिरक्षित किया जा सकता है। विकिरण की अधिक मात्रा से खाद्य पदार्थों की सुगंध, सुवास अथवा स्वाद में कुछ परिवर्तन आ सकता है। साथ ही, खाद्य पदार्थों में कार्य-निष्पादन संबंधी परिवर्तन भी आ सकते हैं। यह वस्तुतः पदार्थ में उपस्थित एमिनो अम्ल (Amino Acid) पर निर्भर करते हैं। विकिरण के प्रति अति संवेदनशील होने के कारण इन एमिनो अम्ल की संरचना में परिवर्तन हो सकता है जिससे किरणित फल नरम तो रहेंगे और उनसे रस भी अधिक प्रापत होंगे, परन्तु उनका स्वाद अधिक स्वादिष्ट नहीं रह सकेगा। अतः विकिरण का प्रयोग निर्धारित मात्रा में करना जरूरी होता है। भारत में अभी किरणित खाद्य पदार्थ का प्रयोग आरंभ नहीं हुआ है, क्योंकि सरकार ने इसे अभी तक अपनी मंजूरी नहीं प्रदान की है। विकिरण से उपचारित खाद्य पदार्थों के प्रति जो भ्रांतियां है, उन्हें दूर कर ही इसका व्यापक प्रचलन संभव है।

कार्बन आयु-अंकन

मृत पेड़ पौधों आदि जैसे प्राचीन वस्तुओं की आयु ज्ञात करने के लिए उसमें उपस्थित कार्बन समस्थानिक (Carbon Isotope, i.e., ${}_6C^{14}$) के क्षय होने की दर को ज्ञात करने की विधि कार्बन आयु-अंकन (Carbon Dating) कहलाती है। अंतरिक्ष से आने वाली कॉस्मिक किरणों में उपस्थित न्यूट्रॉन (on^1) तथा वायुमंडल में उपस्थित नाइट्रोजन परमाणु (${}_7N^{14}$) के टकराने पर कार्बन का समस्थानिक (${}_6C^{14}$) बनता है।

$$7N^{14} + o^{n^1} \rightarrow 6C^{14} + 1H^1$$

${}_6C^{14}$ रेडियो एक्टिव समस्थानिक होता है। यह वायुमंडल की ऑक्सीजन को अवशोषित करके CO_2 में मिलता रहता है। वायुमंडल की कार्बन डाइऑक्साइड (CO_2) में साधारण कार्बन (${}_6C^{12}$) तथा रेडियो एक्टिव कार्बन (${}_6C^{12}$) का अनुपात 10^{12} : 1 होता है। सभी पेड़-पौधे वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड ग्रहण करते हैं। अतः जीवित पेड़-पौधों में ${}_6C^{12}$ भी तथा ${}_6C^{14}$ का अनुपात यही (अर्थात् 10^{12} : 1) होता है। जब पेड़-पौधों की मृत्यु हो जाती है, तो उनमें उपस्थित ${}_6C^{12}$ की मात्रा तो वही बनी रहती है, परंतु ${}_6C^{14}$ का स्वतः विघटन प्रारंभ हो जाता है।

$$6C^{14} \rightarrow 7N^{14} + -1\beta^0 + \overline{\mu}$$

इस प्रकार, ${}_6C^{14}$, 0.155 MeV ऊर्जा का β-कण उत्सर्जित कर पुनः ${}_7N^{14}$ में बदल जाता है। कार्बन समस्थानिक (${}_6C^{14}$) की अर्द्ध-आयु (Half life) 5,730 वर्ष होती है। समय के साथ (${}_6C^{14}$) की विघटन दर घटती जाती है। इस प्रकार, यदि हम मृत पेड़-पौधों अथवा जानवरों में उपस्थित ${}_6C^{14}$ की सक्रियता का पता लगा लें, तो उसकी आयु की गणना सहज ही की जा सकती है।

परमाणु कमान का गठन

सामरिक दृष्टि से स्वयं को नाभिकीय शक्ति घोषित करने के लगभग साढ़े चार वर्ष के पश्चात भारत ने विध्वंसकारी नाभिकीय शस्त्रों के इस्तेमाल के मामले में राजनीतिक एवं सैन्य तंत्र का गठन जनवरी 2003 माह में कर दिया है। भारत सरकार की घोषणा के अनुसार परमाणु हथियारों के रखरखाव तथ उनके इस्तेमाल के बारे में निर्णय लेने की जिम्मेदारी दो स्तरों वाली 'नाभिकीय कमान प्राधिकरण' को सौंपी गयी है। नाभिकीय कमान प्राधिकरण के दो भाग हैं- राजनीतिक परिषद तथा कार्यकारी परिषद।

परमाणु हमले के आदेश का अधिकार प्रधानमंत्री की अध्यक्षता वाली राजनीतिक परिषद से पास होगा। इसी के अंतर्गत परमाणु नियंत्रण कमान का गठन किया गया है। परमाणु नियंत्रण कमान मंत्रिमंडल की उस सर्वोच्च परिषद के पास है जिसमें प्रधानमंत्री, उप प्रधानमंत्री, रक्षामंत्री और विदेश मंत्री हैं। यही परिषद परमाणु हथियारों के संचालन के संदर्भ में आवश्यक निर्णय लेगी। इस परिषद की सहायता के लिए कार्यकारी परिषद भी है जिसकी अध्यक्षता प्रधानमंत्री के राष्ट्रीय सुरक्षा सलाहकार करेंगे। सर्वोच्च परिषद

का निर्णय कार्यकारी परिषद के अनुमान और सलाह पर आधारित होगा। एक तरह से कार्यकारी परिषद परमाणु कमान प्राधिकरण को जानकारियां देने के साथ-साथ उसके निर्देशों का पालन भी करेगा। कार्यकारी परिषद का गठन राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद के स्ट्रेटजिक पॉलिसी ग्रुप के सदस्यों को लेकर किया गया है जिसमें विदेश सचिव, रक्षा सचिव, गृह सचिव, तीनों सेनाओं के अध्यक्ष और खुफिया एजेंसियों के प्रमुख शामिल हैं। स्ट्रेटजिक पॉलिसी ग्रुप का काम परमाणु शस्त्रों से सज्जित सेना प्रबंधन को देखना है। इसकी अध्यक्षता भारत के सामरिक नियंत्रण के कमांडर-इन-चीफ करेंगे। वर्तमान में इसके लिए दक्षिण पश्चिम कमान के एयर आफिसर कमांडिंग-इन-चीफ एअर मार्शल स्थाना को चुना गया है। परमाणु कमान के गठन के साथ ही सरकार ने आठ सूत्री परमाणु सिद्धांत की भी घोषणा की है।

परमाणु जनदायित्व विधेयक

परमाणु जन दायित्व विधेयक 25 अगस्त, 2010 को लोकसभा से और 30 अगस्त, 2010 को राज्यसभा से पारित किया गया। इसके तहत भारत के भौगोलिक सीमा क्षेत्र में किसी भी असैन्य परमाणु संयंत्र में दुर्घटना होने की स्थिति में संयंत्र के संचालक का उत्तरदायित्व तय किया गया होगा। इस कानून के जरिये दुर्घटना से प्रभावित लोगों को क्षतिपूर्ति या मुआवजा मिल सकेगा। ध्यातव्य है कि भोपाल गैस त्रासदी के 26 साल बीत जाने के बाद भी क्षतिपूर्ति की रकम कितनी होनी चाहिये और इस रकम के भुगतान का दायित्व किसका होना चाहिये, निर्धारित नहीं किया जा सका है। परमाणु दुर्घटना के संबंध में ऐसे ही सवालों का हल परमाणु जनदायित्व क्षतिपूर्ति कानून में है। इसके अलावा कई और कारण हैं जिनके चलते इस विधेयक की अनिवार्यता थी। भारत, विदेश की कई कंपनियों के साथ समझौता कर बड़े परमाणु संयंत्रों का निर्माण कर रहा है। इन विदेशी कंपनियों को अपने देश में बीमा कवर के लिए क्षतिपूर्ति की अधिकतम रकम तय करके बीमा कंपनियों को देनी होती है। हालांकि विधेयक पर आरंभ में विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच मतभेद था जिसे बाद में संशोधित कर पारित किया गया। संशोधित और संसद् द्वारा पारित विधेयक के मुख्य अंश निम्न प्रकार हैं;

धारा 6(2): मूल विधेयक में संचालक को अधिकतम 500 करोड़ रुपयों का मुआवजा देने का प्रावधान था, किंतु संसद् से पारित विधेयक में 1500 करोड़ रुपये के मुआवेज का प्रावधान है। सरकार समय-समय पर इस राशि की समीक्षा करेगी। विधेयक में अधिकतम क्षतिपूर्ति दायित्व 300 मिलियन एसडीआर यानी 2100 करोड़ रुपये रखा गया है। वैसे वामपंथी दल क्षतिपूर्ति की रकम 1500 करोड़ रुपये के बदले 10000 करोड़ रुपये की मांग कर रहे थे, पर सदन से इस मांग को खारिज करदिया।

- धारा 17 (b) सर्वाधिक विवाद विधेयक की धारा 17(b) के 'मनसा' (Intent) शब्द को लेकर था। मूल विधेयक में प्रावधान था कि 'दुर्घटनाग्रस्त परमाणु संयंत्र का ऑपरेटर, आपूर्तिकर्त्ता पर न्यायालय में मुकदमा दर्ज करा सकता है यदि परमाणु दुर्घटना आपूर्तिकर्त्ता या उसके कर्मचारियों के किसी गतिविधि का परिणाम है, जो परमाणु क्षति की मनसा (जानबुझकर) से किया गया है, और ऐसी गतिविधि में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष खामियों या घटिया सेवाओं वाले उपकरणों या सामग्री की आपूर्ति भी शामिल है। विपक्षी दलों के हंगामे के पश्चात संसद् से पारित विधेयक में 'जो परमाणु क्षति की मनसा (जानबुझकर) से किया गया है' वाक्य को हटा दिया गया है।
- धारा 18 (ब) व्यक्तिगत जोखिम की दशा में क्षतिपूर्ति का दावा करने का समय बढ़ाकर 20 वर्ष कर दिया गया। पूर्व में यह 10 वर्ष था।
- धारा 16 (अ) क्षतिपूर्ति के दावों को निपटारा आवेदन देने के तीन महिने के भीतर किया जाना चाहिये।
- धारा 35: क्षतिपूर्ति की रकम की समीक्षा के लिए पीड़ित व्यक्ति उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में अपील दायर कर सकता है।
- क्षतिपूर्ति या मुआवजे के दावों के भुगतान के लिए परमाणु क्षति दावा आयोग का गठन किया जाएगा। विशेष क्षेत्रों के लिए एक या अधिक दावा आयुक्तों की नियुक्ति की जा सकती है। इन दावा आयुक्तों के पास दीवानी अदालतों के अधिकार होंगे।
- कानून में क्षतिपूर्ति कोष की स्थापना का भी प्रावधान है।

इस कानून कुछ ऐसे प्रावधान हैं जिसकी वजह से दुर्घटना से ग्रसित लोगों को क्षतिपूर्ति के लिए कहीं भटकना नहीं पड़ेगा। एक प्रावधान है 'नो फॉल्ट लैबिलिटी' (No fault liability) का। इसका मतलब यह है कि दुर्घटना के लिए उत्तरदायित्व निर्धारित

करने के बिना भी इसके पीड़ित व्यक्तियों को शीध्र क्षतिपूर्ति की रकम मिल जाएगी। भोपाल गैस त्रासदी में उत्तरदायित्व निर्धारित करने के कानूनी पेंच ने क्षतिपूर्ति के लिए लोगों को लंबा इंतजार करवा दिया। इसके अतिरिक्त भारत ऐसा पहला देश होगा जहां परमाणु दुर्घटना के लिए आपूर्तिकर्त्ता को भी उत्तरदायी की श्रेणी में रखा जाएगा। अमेरिका, रूस जैसे देशों की कंपनियां अपने सरकारों के समक्ष उत्तरदायित्व से बचने के लिए दबाव डाल रही थीं, पर यह दबाव काम नहीं आया। वैसे आशंका यह तो जरूर जतायी जा रही है कि शायद उत्तरदायित्व के कारण कई विदेशी परमाणु कंपनियां भारत की रूख ही न करे। पर यहां यह भी ध्यान रखा जाना चाहिये कि भोपाल गैस त्रासदी को भारत ने सहा है, किसी अन्य देश ने नहीं। किस तरीके से भोपाल गैस त्रासदी में लिप्त कंपनी के स्वामी भारत से फरार हो गये, यह जगजारि है। ऐसे अनुभव को झेलने के पश्चात दुर्घटना के उत्तरदायित्व से संयंत्र के आपूर्तिकर्त्ता विदेशी कंपनियों को मुक्त नहीं किया जा सकता। यह सही है कि भारत को अपने विकास के लिए ऊर्जा की सख्त जरूरत है, पर आम लोगों के कीमत्त पर नहीं। भारत, जापान, अमेरिका, रूस और फ्रांस से परमाणु संयंत्रों की आपूर्ति के लिए वार्ता कर रहा है।

परमाणु सुरक्षा

जापान की फुकुशिमा घटना ने दुनिया में परमाणु ऊर्जा के विस्तार पर सवालिया निशान लगा दिए हैं। वस्तुत: जापान को एक साल तीन-तीन भयावह मुसीबतों से रूबरू होना पड़ा। रिक्टर स्केल पर पर 9 तीव्रता के भूकंप के झटके की वजह से सुनामी लहरों ने तबाही मचाई और इस दोहरी तबाही ने फुकुसिमा के परमाणु बिजली घर को नुकसान पहुंचाया, जिससे रेडियोएक्टिव रिसाव का खतरा मंडराने लगा। हालांकि अच्छी बात यह रही कि हालात उस हद तक बेकाबू नहीं हुए कि उससे भयंकर तबाही आ गई हो। लेकिन ऐसी स्थिति तो आ ही गई थी कि एहतियातन आसपास के इलाकों को खाली करवाना पड़ा। इस परिस्थिति में भी इसे चेरनोबिल में 1986 में हुए परमाणु हादसे के बाद दूसरा बड़ा परमाणु हादसा माना जा रहा है। यहां उल्लेखनीय है, कि एक परमाणु भट्टी में परमाणु ईंधन की छड़ें गल गई थीं और इससे रेडियोएक्टिव रिसाव का खतरा बन गया था। वहीं अन्य परमाणु भट्टी को ठंडा करने वाली प्रणाली खराब हो गई थी। कुल मिलाकर तकनीकी बातों से अलग हटकर सामान्य शब्दों में कहें तो भूकंप एवं सुनामी ने परमाणु रिएक्टरों के संपूर्ण सुरक्षा उपायों को बेकार कर दिया। आशंका तो यहां तक व्यक्त की जाने लगी थी कि दुर्घटना स्थल से 150 किमी. दूर राजधानी टोकियो तक रेडियोएक्टिविटी के घातक प्रभाव पहुंच सकते थे। इससे भी अधिक भयावह स्थिति में फिलीपीन्स, कोरिया और चीन तक रेडियोएक्टिवीटी फैल सकती थी।

पिछले कुछ वर्षों से परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र में काफी विस्तार हुआ है। एक वजह तो इसके बेहतर टेकनोलॉजी है और दूसरी वजह यह है कि इसे 'ग्रीन टेकनोलॉजी' की तरह पेश किया जा रहा है, क्योंकि इससे ग्रीन हाउस गैसों का उत्सर्जन नहीं होता। भारत ही नहीं, सारी दुनिया में परमाणु बिजली घर लगाने की होड़ लगी हुई थी। चेरनोबिल के बाद परमाणु ऊर्जा उपयोग को जो झटका लगा हुआ था, उससे धीरे-धीरे यह उद्योग उभर रहा था। 1978 में भी थ्री माइल्स आईलैंड की परमाणु दुर्घटना के बाद अमेरिका में परमाणु ऊर्जा का विस्तार बंद हो गया था, लेकिन राष्ट्रपति बराक ओबामा के कार्यकाल में परमाणु ऊर्जा बिजली घरों की स्थापना को प्रोत्साहन देने की नीति अपनाई जा रही है। राष्ट्रपति ओबामा परमाणु ऊर्जा के बड़े समर्थक हैं, क्योंकि उन्हें लगता है कि परमाणु ऊर्जा की वजह से अमेरिका अपने विकास कार्यक्रमों में कटौती किए बिना ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम कर सकता है। लेकिन अब अमेरिका में परमाणु ऊर्जा विरोधी लॉबी सक्रिय हो गई है। राष्ट्रपति ओबामा को अपनी डेमोक्रेटिव पार्टी में ही परमाणु ऊर्जा के विरोधी ज्यादा हैं और वे भविष्य के परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों पर रोक लगाने और मौजूदा परमाणु बिजली घरों की सुरक्षा के जांच की मांग कर रहे हैं। इस वक्त अमेरिका में 108 परमाणु संयंत्र हैं, जो 20 प्रतिशत ऊर्जा की जरूरत को पूरी करते हैं। इनमें से कई कैलिफोर्निया में हैं, जहां भूकंप का खतरा मौजूद है। जर्मनी की चांसलर एंजेला मार्केल भी परमाणु ऊर्जा की समर्थक रही हैं और परमाणु ऊर्जा के विरोधियों के कड़े प्रतिरोध के बावजूद वह परमाणु संयंत्र की योजना पर डटी हुई थीं। पर जापान की घटना ने उन्हें अपने परमाणु कार्यक्रम पर पुनर्विचार करने पर मजबूर कर दिया और उन्होंने जर्मनी द्वारा परमाणु कार्यक्रम को त्याग देने की घोषणा भी कर डाली। मानना पड़ेगा कि जापान की दुर्घटना ने अब परमाणु ऊर्जा विरोधियों को ज्यादा मजबूत बना दिया है और इस बात की संभावना लगभग नहीं है कि निकट भविष्य में जर्मनी में परमाणु संयंत्र लग पाएंगे। स्कैंडेनिबियाई देश यथा स्वीडन, नार्वे, डेनमार्क आदि में परमाणु ऊर्जा के विरूद्ध व्यापक सहमति बनी हुई है। थ्री माईल्स और चेरनोबिल की

दुर्घटनाओं के बाद कई बरसों तक परमाणु ऊर्जा का करोबार मंदा रहा। जैसा कि उल्लेख किया जा चुका है, पिछले दिनों ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन से ग्लोबल वार्मिंग की चर्चा ने परमाणु ऊर्जा में दिलचस्पी फिर से पैदा की थी। परमाणु ऊर्जा के पक्ष में सबसे बड़ा तर्क यही दिया जा रहा है कि, इससे कोई प्रदूषण नहीं फैलता, जबकि जीवाश्म ईंधन जैसे कोयले और पेट्रोलियम की दिक्कत यह है कि उससे प्रदूषण फैलता है। इसके अलावा जो ऊर्जा के वर्तमान स्रोत हैं, उनसे बड़े पैमाने पर ऊर्जा पैदा करना फिलहाल तो संभव नहीं है। मगर जापान की घटना ने एक बार फिर से परमाणु संयंत्रों की सुरक्षा पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है।

भारत में बढ़ती ऊर्जा की मांग एवं आवश्यकता संबंधी तथ्य कोई नई बात नहीं है। हाल के वर्षों में परमाणु ऊर्जा के उत्पादन और विस्तार को ही ऊर्जा सुरक्षा के संदर्भ में सर्वश्रेष्ठ उपागम के रूप में प्रस्तुत किया जाता रहा है, मगर जापान के परमाणु हादसे ने भारत में परमाणु ऊर्जा के विरोधियों को और भी मुखर बना दिया है। भारत में परमाणु ऊर्जा के विशेष में तथा परमाणु संयंत्रों की सुरक्षा के संदर्भ में खामियों को कतई नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। सर्वप्रथम, हमारे आयातित, प्लांट, अमेरिका निर्मित तारापुर और रूस की मदद से स्थापित कुडनकुलम प्लांट समुद्र के किनारे स्थित हैं। सभी नए परमाणु पार्क भी समुद्र तटीय इलाकों में ही बने हैं। विदेशी मदद से निर्मित हमारे सभी प्लांट लाइट वाटर रिएक्टर हैं। ये दुनिया में सबसे अधिक जल पीने वाले संयंत्र है। इसलिए भारत जैसे देश में जहां पहले से ही जल संकट की समस्या है, वहां लाइट वाटर रिएक्टर का निर्माण कतई व्यवहारिक नहीं हो सकता। भारत के पास समुद्र तटीय इलाके काफी लंबे-चौड़े हैं, इसके बावजूद देश के पास लाइट वाटर रिएक्टरों के लायक तटीय क्षेत्र खाली नहीं है। ऐसे में तटीय इलाकों में परमाणु प्लांट लगाने का सीधा सा मतलब है, कि वहां रह रहे लोगों को विस्थापित करना होगा और ऐसे में जमीनी स्तर पर लोगों का विरोध भी होगा। जैतापुर, हरिपुर और मीठी बिरदी में स्थानीय लोगों का विशेष प्रदर्शन शुरू भी हो चुका है।

फिर 2004 के अंत में हिन्द महासागर में आई सुनामी ने हमें जो अपना रौद्र रूप दिखाया था और जिसके कारण मद्रास एटॉमिक पॉवर प्लांट को बंद करना पड़ा था, उसे देखते हुए समुद्र किनारे रिएक्टर लगाना प्राकृतिक आपदाओं के नजरिए से बेहद संवेदनशील है। फिर जिस तरह से जलवायु परिवर्तन हो रहा है, उसके परिणामस्वरूप न सिर्फ अधिक तेजी से चक्रवात, तूफान और सुनामी आएंगी, बल्कि समुद्र का जल स्तर भी बढ़ेगा। जाहिर है कि, तटीय परमाणु रिएक्टरों के लिए यह घातक होगा।

ठोस घरेलू क्षमता से आयात आधारित परमाणु कार्यक्रम की ओर बढ़ने का मतलब होगा कि भारत सुरक्षा संबंधी कल-पुर्जो के लिए भी विदेशी कंपनियों पर निर्भर हो सकता है। भारत आज भी गर्व के साथ कहता है कि वह दुनिया में सबसे पुराने ब्वाइलिंग वॉटर रिएक्टरों (वीडब्ल्यूआर) का संचालन तारापुर में कर रहा है। गौरतलब है कि तारापुर प्लांट का निर्माण जिस जनरल इलेक्ट्रिक ने किया है, उसी ने फुकुशिमा को भी वीडब्ल्यूआर की आपूर्ति की है। अब जब जर्मनी ने 1980 के पहले के सभी सातों परमाणु प्लांटों को जून तक बंद करने का निर्णय किया है, तब भारत पर भी इस बात के लिए दबाव पड़ सकता है कि वह 1969 में स्थापित तारापुर को अभी तक क्यों सक्रिय रखा हुआ है?

फुकुशिमा में जिस तरह से रिएक्टर बिल्डिंग में विस्फोट हुए और डिस्चार्ज्ड फ्यूल टैंक में आग फैली, उसने भारत में दो अन्य खतरों को उजागर किया है, एक प्रत्येक पार्क में कम दूरी पर छह या उससे अधिक रिएक्टरों के निर्माण का फैसला और दूसरा तारापुर में चार दशकों से डिस्चार्ज्ड फ्यूल का जमा रहना। ये फ्यूल इसलिए जमा हो गए हैं, क्योंकि अमेरिका ने इन्हें वापस लेने से इंकार कर दिया या फिर उसने भारत को इसके पुनर्प्रसंस्करण की अनुमति प्रदान नहीं की।

भारत में परमाणु उर्जा कार्यक्रम में व्याप्त खामियों एवं परमाणु सुरक्षा में निहित त्रुटियों के संदर्भ में 'सेंटर फॉर पॉलिसी रिसर्च' के प्रो. ब्रह्म चेनाली कुछ अन्य मुद्दों पर प्रकाश डालते हुए भारत-अमेरिका परमाणु समझौते पर भी प्रश्न चिह्न लगाते हैं। उनका मानना है कि इस प्रकार के परमाणु समझौते में सुरक्षा उपायों की अनदेखी करने के साथ ही साथ राष्ट्रीय सहमति भी नहीं ली गई है। उनके अनुसार, अरबों डॉलर का रिएक्टर आयात संबंधी फैसला दीर्घकालिक सुरक्षा निहितार्थों के साथ-साथ बड़े घोटाले की आशंका को भी जन्म देता है। उसी प्रकार फ्रांस के सहयोग से जैतापुर में 9900 मेगावाट क्षमता के परमाणु उर्जा प्लांट को स्थापित करने के संदर्भ में न केवल पर्यावरण की संरक्षा संबंधी मुद्दों की अनदेखी की गई बल्कि यहां पर जमीन अधिग्रहण के लिए भी ताकत का इस्तेमाल किया जा रहा है, ताकि फ्रांसीसी कंपनी एरेवा को छह रिएक्टरों के निर्माण की अनुमति दी जा सके। इनमें से एक भी रिएक्टर उस किस्म का नहीं होगा, जिनका दुनिया भर में अभी इस्तेमाल हो रहा है।

प्रमुख परमाणु दुर्घटनाएं

1957 – किस्टम (पूर्व सोवियत)– वास्ट टैंक में विस्फोट।
1957 – वाइन्डस्केल (ब्रिटेन)– रिएक्टर के कोर सेन्टर में आग लगा।
1979 – थ्री माइल्स आइलैण्ड (सं. रा. अमेरिका)– जबरदस्त रेडियोधर्मी विकिरण का रिसाव, एक घातक हादसा।
1980 – सेंट लॉरेन्स डेसेचेज (फ्रांस)– परमाणु भट्टी में परमाणु ईंधन की छड़े गल गई।
1986 – चेरनोबिल (पूर्व सोवियत संघ)–मेल्टडाउन विस्फोट एवं रेडियोधर्मी विकिरण का रिसाव, विश्व की सबसे घातक परमाणु हादसा।
1989 – वेन्डोलियोस (स्पेन)– संयंत्र में आग लगा।
1993 – कडारस (फ्रांस)– विषाक्त तत्वों का फैलाव।
1999 – तकाईमुरा (जापान)– संयंत्र में स्थित कर्मचारी रेडिएशन से बुरी तरह प्रभावित हुए।
2005 – शेफील्ड (ब्रिटेन)– रेडियोएक्टिव तत्वों का रिसाव।
2005 – एटुचा (आर्जेंटीना)– संयंत्र के कर्मचारी रेडिएशन से प्रभावित।
2006 – फोर्स मार्क (स्पीडन)– संयंत्र में गड़बड़ी।

सबसे बुरी बात यह है, कि इन विदेशी कंपनियों को हादसों के बारे में दायित्व से बचाने के लिए विशेष कानून बनाने की कवायद हो रही है। अब जापान में छह रिएक्टरों वाले फुकुशिमा डायची प्लांट में हादसा हो गया है, तो भारतीय परमाणु उर्जा आयोग के मुखिया इस बात पर जोर देने लगे हैं कि भूकंप एवं सुनामी के परिप्रेक्ष्य में एरेवा रिएक्टर मॉडल की सरुक्षा जांच जरूरी है। जबकि इस कार्य को पहले ही कर लिया जाना चाहिए था। अबतक की भीषणतम हादसा जो कि किसी न्युक्लियर पॉवर प्लांट में हुई हो, वह वर्ष 1986 में यूक्रेन (तात्कालीन USSR) में चेरनोबिल के परमाणु ऊर्जा केन्द्र में हुंई थी। इंटरनेशनल न्यूक्लियर एंड रेडियो लॉजीकल इवेंट स्केल (INES) जो विकिरण उत्सर्जन की तीव्रता का आकलन करता है, ने इसे लेवल 7 की तीव्रता की विकिरण रिसाव घोषित किया था। यह दुर्घटना एक सामान्य टेस्ट के दौरान हुआ था, जब पॉवर प्लांट में मेल्टडाउन एवं अत्यधिक ताप वृद्धि की समस्या उत्पन्न हो गई थी। यद्यपि तात्कालिक पूर्व सोवियत संघ सरकार द्वारा इस घटना पर पर्दा डालने का प्रयास किया गया था। एक आकलन के अनुसार, इस दुर्घटना के दौरान परमाणु संयंत्र में हुए विस्फोट में 50 से अधिक लोगों की तत्काल मृत्यु हो गई। जबकि बाद में रेडियोधर्मी विकिरण के प्रभाव से 4000 से अधिक लोग मारे गए थे। उस समय लगभग 2 लाख लोगों को उस स्थान से विस्थापित होना पड़ा था। उसी प्रकार 1979 में संयुक्त राज्य अमेरिका के श्री माइल्स आइलैंड के परमाणु संयंत्र में भी भीषण हादसा हुआ था।

भारतीय परमाणु ऊर्जा उद्योग एवं परमाणु कार्यक्रम से जुड़े वैज्ञानिकों के अनुसार भारतीय परमाणु ऊर्जा कार्यक्रम एवं विभिन्न रिएक्टरों में सुरक्षा संबंधी ठोस उपाय किए गए हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार सभी परमाणु संयंत्रों को इस प्रकार डिजाइन किया गया है कि भूकंप के हालात में भी वे सुरक्षित रहे साथ अन्य प्रकार की परिस्थितियों में भी सुरक्षा उपायों के कारगर रहने की व्यवस्था की गई है। वैज्ञानिकों के अनुसार कैगा (कर्नाटक) एवं कलपक्कम (तमिलनाडु) के सागर तटीय परमाणु प्लांट पूर्णतः सुरक्षित हैं कैगा प्लांट तट से काफी दूर उच्च स्थल पर निर्मित किया गया है, जबकि 2004 की सुनामी के दौरान भी कलपक्कम प्लांट पूर्णतः सुरक्षित रहा। वैसे 2004 के बाद कलपक्कम प्लांट के लिए सुरक्षा उपायों को और भी दुरूस्त बनाया गया है। यहां उल्लेखनीय है कि 2001 में गुजरात के कच्छ में भूकंप के बाद भी काकरापार परमाणु उर्जा संयंत्र पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा था। उसी प्रकार परमाणु संयंत्रों के चारों ओर के सुरक्षा दीवारों को भी उच्च तकनीकी एवं मानकों के आधार पर ढाला गया है। परमाणु उर्जा आयोग के वैज्ञानिकों के अनुसार कैगा के संयंत्र में दो पूर्णतः सक्षम शटडाउन प्रणाली को लगाया गया है ताकि आपात स्थिति में भी दुर्घटना न हो सके। इसके अतिरिक्त प्रत्येक दो वर्षो में परमाणु संयंत्रों की सुरक्षा की समीक्षा हेतु मॉक ड्रिल एवं व्यापक निरीक्षण अभियान भी होता है।

❖❖❖

अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी

CHRONICLE IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी का संबंध अंतरिक्ष में प्रवेश के द्वारा पुनः प्राप्त वस्तुओं या जीवन रूपों के अध्ययन से है। हमारे जीवन में दैनिक रूप से प्रयोग में लायी जाने वाली प्रौद्योगिकियां यथा; मौसम की भविष्यवाणी, सुदूर संवेदन, जीपीएस सिस्टम, सैटेलाइट टीवी, और कुछ लंबी दूरी की संचार प्रणाली वस्तुतः अंतरिक्ष आधारिक संरचना पर आधारित है। विज्ञान के क्षेत्र में विशेषकर खगोल विज्ञान और पृथ्वी विज्ञान (सुदूर संवेदन के माध्यम से) अधिकांश रूप से अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी से लाभान्वित होती है।

अंतरिक्ष कक्षा

अंतरिक्षयान को ले जा रहा रॉकेट एक बार सफलतापूर्वक छोड़े जाने के बाद पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति से मुक्त हो जाता है और यदि पृथ्वी की परिक्रमा करने लगता है, तो वह एक कृत्रिम उपग्रह बन जाता है। पृथ्वी की परिक्रमा करने वाला चंद्रमा एक प्राकृतिक उपग्रह है। चंद्रमा अथवा किसी अन्य ग्रह की ओर छोड़े गये सुदूर नियंत्रित अंतरिक्षयान को 'खोजी यान' कहा जाता है। पृथ्वी अथवा किसी भी पिंड की कक्षा वह बंद परिपथ है, जिस पर चल कर कृत्रिम अथवा प्राकृतिक उपग्रह निरंतर परिक्रमा करता रहता है। आमतौर पर इसे प्रक्षेप पथ (Trajectory) कहते हैं। कक्षा (Orbit) के विपरीत, प्रक्षेप पक्ष दो बिंदुओं के बीच का सीधा रास्ता होता है। किसी भी वायुयान अथवा बंदूक से निकली गोली द्वारा तय किये गये मार्ग को प्रक्षेप-पथ कहते हैं। इसी प्रकार, पृथ्वी से चंद्रमा तक की यात्रा करने वाले अंतरिक्षयान का रास्ता भी प्रक्षेप-पथ ही कहलाता है। परंतु, इसी अंतरिक्षयान द्वारा एक बार चंद्रमा की परिक्रमा प्रारंभ कर देने पर इसे चंद्रमा की कक्षा में पहुंचा हुआ माना जाता है। अंतरिक्ष में घूमते हुए किसी 'कृत्रिम उपग्रह' अथवा 'खोजी यान' पर गति के वही नियम लागू होते हैं, जिनका चंद्रमा अथवा किन्हीं अन्य ग्रहों द्वारा पालनहोता है।

साथ ही, पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति के प्रभाव से 5 मीटर नीचे पृथ्वी की ओर गिरती भी जायेगी। इस प्रकार, चित्रात्मक रूप से वस्तु प्रत्येक 8 कि.मी. की दूरी पर नीचे गिरती जायेगी। ऐसी स्थिति में, वस्तु अपनी कक्षा में मुक्त रूप से विचरण करती है। बिना किसी व्यवधान का यह मुक्त विचरण 'भारहीनता' (Weightlessness) को दर्शाता है। साधारण शब्दों में, वह वस्तु पृथ्वी का उपग्रह (Satellite) बन जाती है। इसका जड़त्व (Inertia), जो वस्तु को सीधी रेखा में ले जाता है, पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति के अवरोध के कारण उसकी गति को वृत्ताकार कर देता है। ठीक इसी प्रकार पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण, अंतरिक्षयान को सीधी रेखा की बजाय पृथ्वी के परितः घूमने को विवश कर देता है।

यदि किसी वस्तु को वृत्ताकार कक्षा (Circular Orbit) के लिए आवश्यक गति से भी तेज गति से फेंका जाये, तो वह अंडाकृति वाली दीर्घवृत्तीय कक्षा (Elliptical Orbit) में स्थापित होगी। सामान्यतः किसी भी वस्तु को दीर्घवृत्तीय कक्षा में वृत्ताकार कक्षा की अपेक्षा स्थापित करना अधिक आसान होता है। ऐसा इसलिए है, क्योंकि उपग्रह को वृत्ताकार कक्षा में स्थापित करने के लिए अपेक्षाकृत अधिक नियंत्रित गति एवं दिशा आवश्यक होती है। किसी भी दीर्घवृतीय कक्षा में अप-भू (Apogee) एवं उप-भू (Perigee) बिंदु होते हैं। अप-भू, दीर्घवृत्तीय कक्षा का वह बिंदु होता है जो पृथ्वी से अधिकतम दूरी पर स्थित होता है, जबकि उप-भू पृथ्वी से न्यूनतम दूरी पर स्थित होता है। परंतु, वृत्ताकार कक्षा में संपूर्ण कक्षा की दूरी पृथ्वी से समान होने के कारण अप-भू एवं उप-भू में भेद नहीं किया जा सकता।

किसी भी कक्षा के तल का पृथ्वी से होकर गुजरना अत्यंत आवश्यक होता है। परंतु, कक्षा का झुकाव पृथ्वी की ओर किसी भी तरफ से हो सकता है। किसी भी उपग्रह की वांछित कक्षा, छोड़े गये उपग्रह के उद्देश्य पर निर्भर करती है। पृथ्वी के दोनों ध्रुवों (Poles) से गुजरने वाले उपग्रह की कक्षा को ध्रुवीय कक्षा (Polar Orbit) कहते हैं। ऐसी कक्षा में स्थापित उपग्रह सुदूर संवेदन प्रयोजनों के लिए काफी उत्तम होते हैं। यदि कक्षा का तल पृथ्वी की भूमध्यरेखा के समतल हो, तो इसे विषुवतीय कक्षा (Equatorial Orbit) कहते हैं। अधिकांशतः दूरसंचार में प्रयुक्त उपग्रह भू-स्थिर कक्षा (Geo-stationary Orbit) में स्थापित किये जाते हैं, जो सदैव विषुवतीय होती है।

किसी भी उपग्रह को अपनी कक्षा में पृथ्वी की परिक्रमा करने में जो समय लगता है, उसे कक्षीय अवधि कहते हैं। यह समय कक्षा की ऊंचाई पर निर्भर करता है। कक्षा जितनी ही ऊंचाई पर होगी, उसकी अवधि उतनी ही अधिक होगी। पृथ्वी की सतह से कुछ सौ कि.मी. की दूरी की कक्षा में स्थापित उपग्रह, पृथ्वी की एक परिक्रमा लगभग 90 मिनट में पूरी करता है, जबकि लगभग 36,000 कि.मी. की दूरी पर विषुवतीय कक्षा में भू-स्थिर दूरसंचार उपग्रह अपनी कक्षा का एक चक्कर 24 घंटे में पूरा कर लेता है। पृथ्वी की सतह के बहुत ही नजदीक की कक्षा में स्थापित उपग्रह का जीवनकाल काफी छोटा होता है। पृथ्वी का सघन वायुमंडल उपग्रह की गति में प्रतिरोध या बाधा उत्पन्न करता है। यद्यपि पृथ्वी की सतह से 150 कि.मी. की उंचाई पर वायुमंडल विरल होता है। फिर भी, यहां पूर्णत: निर्वात नहीं होता। वहां पर उपस्थि अणुओं या कणों के बार-बार टकराने से उपग्रह की गति में क्रमिक ह्रास होता जाता है। उपग्रह की गति में यह कमी उप-भू बिन्दु (Perigee) पर सर्वाधिक होती है। और इस प्रकार उपग्रह पूर्वनिर्धारित अप-भू-बिंदु (Apogee) तक नहीं पहुंच पाता। इसके फलस्वरूप, अगले चक्कर का उप-भू बिन्दु पृथ्वी के और अधिक नजदीक हो जायेगा। इस तरह उपग्रह की कक्षा सर्पिलाकार कक्षा में बदल जायेगी, जो उपग्रह को पृथ्वी के बहुत ही नजदीक अधिक घनत्व वाले वातावरण में ले आती है। अधिकांशत: वायुमंडल से उत्पन्न घर्षण उपग्रह की सतह को इतना गर्म कर देता है कि उपग्रह पृथ्वी पर पहुंचने से पहले ही पूर्णत: जल जाता है। उपग्रह के कुछ स्थूल एवं कठोर अवशेष अवश्य ही पृथ्वी पर गिरते हैं।

प्रणोदक

रॉकेटों में ईंधन के तौर पर प्रयुक्त होने वाले पदार्थ प्रणोदक (Propellant) कहलाते हैं। इनमें ठोस अथवा द्रव प्रणोदक प्रयुक्त होते हैं। प्रणोदक की शक्ति उसके 'विशिष्ट संघात' (Specific Impulse) से मापा जाता है। एक सेकंड में एक पाउंड (453 ग्राम) प्रणोदक जितना प्रणोद (Impulse) उत्पन्न कर सकता है, उसे ही उस प्रणोदक का 'विशिष्ट संघात' कहते हैं। ठोस प्रणोदक के मुकाबले द्रव प्रणोदक अधिक शक्तिशाली होता है। इसी कारण द्रव प्रणोदक वाले रॉकेटों का नियंत्रण सरल होता है। द्रव प्रणोदक वाले रॉकेट का उपयोग आई.सी.बी.एम. (I.C.B.M.) तथा आई.आर.बी. एम. (I.R.B.M.) के प्रक्षेपण में होता है।

ठोस प्रणोदक तीन प्रकार के होते हैं- द्विआधार, संयुक्त तथा संयुक्त रूपांतरित द्विआधार (Composite Modified Double Base; C.M.B.D.)। सी.एम.डी.बी. प्रणोदक का संसाधन द्विआधार (Double Base) तथा संयुक्त (Composite) प्रणोदकों के संयुक्तीकरण द्वारा होता है। द्रव प्रणोदक साधारणतया हाइड्रोजन पर आधारित होते हैं। इनमें नाइट्रोजन टेट्रा ऑक्साइड (N_2O_4) एक ऑक्सीकारक (Oxidising Agent) के रूप में प्रयुक्त होता है।

भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम

अंतरिक्ष अनुसंधान तथा उपग्रह प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत ने वर्ष 1975 में आर्यभट्ट नामक उपग्रह के सफल प्रक्षेपण से प्रवेश किया। यद्यपि इस दिशा में प्रथम कदम 1962 में ही तब उठाया गया था, जब भारत सरकार ने परमाणु ऊर्जा विभाग के तहत भारतीय राष्ट्रीय अंतरिक्ष अनुसंधान समिति बनायी। 1963 में त्रिवेंद्रम (केरल) के निकट थुम्बा नामक स्थान पर रॉकेट प्रेषण सुविधा केंद्र (Sounding Rocket Launching Facility) की स्थापना की गयी। पुन: 1969 में बंगलौर में भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (I.S.R.O.) के गठन के पश्चात् इस दिशा में एक क्रांति-सी आ गयी। 1975 में भारत का प्रथम उपग्रह आर्यभट्ट छोड़े जाने के समय विश्व में भारत का स्थान 11वां था, जो सम्प्रति पांचवें स्थान पर पहुंच गया है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम को गतिशील बनाने तथा इसे एक नयी दिशा प्रदान करने का श्रेय डॉ॰ विक्रम साराभाई को दिया जा सकता है, जिनके अथक प्रयासों से ही आज हम इस क्षेत्र में इतनी प्रगति कर सके हैं।

उद्देश्य: उपग्रह प्रक्षेपण के पीछे मूल रूप से दो ही उद्देश्य कार्य करते हैं। पहला, दूर-संवेदन का विकास करना तथा दूसरा, संचार व्यवस्था को जनसामान्य के लिए सुलभ बनाना। इन दोनों ही क्षेत्रों में भारत की उपलब्धि काफी प्रशंसनीय एवं उल्लेखीय मानी जा सकती है। भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का मूल उद्देश्य संचार, मौसम तथा संसाधनों के सर्वेक्षण तथा प्रबंधन के क्षेत्र में अंतरिक्ष कार्यक्रमों पर आधारित सेवाएं उपलब्ध कराना, अंतरिक्ष विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी को भू-उपग्रहों के माध्यम से जनसंचार एवं शिक्षा के क्षेत्रों में प्रयुक्त करना तथा अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना जरूरी होता है। इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपग्रहों, प्रक्षेपण यानों तथा संबद्ध आधारभूत प्रणालियों का विकास करना है। साथ ही, इस कार्यक्रम के माध्यम से उद्योगों

के प्रौद्योगिकी से संबंधित सलाह देने का भी काम लिया जाता है। यह कार्यक्रम राष्ट्रीय विकास के प्राय: हर पहलू को अपने में समेटे हुए है। योजना आयोग के सुझाव पर पर्यावरण की रक्षा के साथ-साथ विकास जारी रखने के लिए चलाये जा रहे समन्वित कार्यक्रम में उपग्रहों से प्राप्त आंकड़ों का स्थानीय विशिष्टताओं की जानकारी हासिल करने में भी प्रयोग हो रहा है।

भारत के अंतरिक्ष संगठन

देश के सामाजिक-आर्थिक लाभ एवं अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी व अंतरिक्ष विज्ञान के विकास एवं उपयोग को बढ़ावा देने हेतु भारत सरकार द्वारा 1972 में अंतरिक्ष आयोग एवं अंतरिक्ष विभाग की स्थापना की गयी। अंतरिक्ष विभाग, अंतरिक्ष आयोग द्वारा निरूपित नीतियों के क्रियान्वयन के लिए उत्तरदायी है, जो भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो), राष्ट्रीय सुदूर संवेदन एजेंसी (एन. आर.एस.ए.), भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला (पी.आर.एल.)एवं अन्य एजेंसियों द्वारा निर्धारित किये जाते हैं। अंतरिक्ष विभाग का सचिवालय एवं इसरो का मुख्यालय बंगलौर में स्थित है। अंतरिक्ष विभाग द्वारा गत वर्षों में प्रमोचक रॉकेट, उपग्रह प्रौद्योगिकी, अंतरिक्ष उपयोग और अन्तरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में एक सशक्त अवसंरचना एवं तकनीकी जनशक्ति आधार का निर्माण किया गया है। अंतरिक्ष कार्यक्रम का कार्यान्वयन अंतरिक्ष संस्थानों, उद्योगों, अनुसंधान संस्थानों और प्रयोक्ताओं के बीच परस्पर सहयोग से किया जाता है।

विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र (वी.एस.एस.सी.): विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केन्द्र, जिसका मुख्य प्रतिष्ठान थुम्बा, तिरुवनन्तपुरम में स्थित है, के माध्यम से स्वदेशी परिज्ञापी रॉकेटों, उपग्रह प्रमोचक रॉकेटों और संबद्ध प्रौद्योगिकियों के विकास में तकनीकी विशेषज्ञता अर्जित की गयी है। यह अंतरिक्ष केन्द्र विमानन, मिशन गतिकी, ठोस नोदन, प्रणोदक तथा रसायन, द्रव्य, यांत्रिकी प्रणालियों और कम्प्यूटर तथा आंकड़ा संसाधन के क्षेत्रों में अनुसंधान और विकास कार्य करता है। इस केंद्र में अंतरिक्ष भौतिकी प्रयोगशाला, अंतरिक्ष विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य करती है। ए.एस.एल.वीण, पी.एस.एल.वी. और जी.एस.एल.वी. परियोजनाओं के लिए यह एक अग्रणी केंद्र है तथा इस केंद्र में तिरुवनन्तपुरम के निकट वलियामाला में प्रमोचक रॉकेट विकास के लिए सुविधाएं हैं। मिश्रित विकास कार्य वटियूरकाव, तिरुवनन्तपुरम में स्थापित केन्द्र में किया जाता है। इसका प्रायोगिक अमोनियम परक्लोरेट संयंत्र अलवाई में कार्य कर रहा है।

इसरो उपग्रह केन्द्र (आइजेक): इसरो उपग्रह केन्द्र, बंगलौर सभी भारतीय उपग्रहों के डिजाइन और विकास के लिए अग्रणी केन्द्र है। इस केन्द्र को यांत्रिकी प्रणाली क्षेत्र, इलेक्ट्रॉनिकी प्रणाली क्षेत्र तथा नियंत्रण और मिशन क्षेत्र के रूप में सुगठित किया गया है। इस केन्द्र में कार्यक्रम आयोजना तथा मूल्यांकन समूह, प्रणाली विश्सनीयता समूह, कम्प्यूटर और सूचना समूह तथा स्वदेशीकरण और उपस्कर समूह भी हैं। तकनीकी भौतिकी समूह अंतरिक्ष से संबद्ध विज्ञान के क्षेत्र में अनुसंधान कार्य करता है। आइजेक में वृहद् अंतरिक्ष अनकार चैम्बर (एल.एस.एस.सी.) सहित इलेक्ट्रॉनिकी तथा यांत्रिकी संविरचन और पर्यावरणीय सुविधाओं के लिए सुविधाएं स्थापित की गयी हैं और यह केन्द्र आई.आर.एस. और इनसैट उपग्रह जैसे उन्नत अंतरिक्ष यानों के डिजाइन और संविरचन में भी सक्षम है, जिसके लिए यह अग्रणी केन्द्र है।

इसरो का केंद्र भोपाल: अपने उपग्रह नियंत्रण में बढ़ोतरी करने के उद्देश्य से भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन देश का दूसरा मुख्य नियंत्रण सुविधा भोपाल में स्थापित किया है। उपग्रह नियंत्रण का कार्य भोपाल स्थित एम.सी.एफ. तथा वर्तमान में कर्नाटक स्थित हसन, एम.सी.एफ.के. के द्वारा किया जा रहा है। भोपाल स्थित एम.सी.एफ. का प्रारंभिक कार्य उपग्रह की स्थिति को नियमित नियंत्रण तथा उपग्रह की स्थिति को ठीक बनाये रखने हेतु आवश्यक निर्देश देना है। वर्तमान में 100 निजी टी.वी. चैनल तथा व्यावसायिक नेटवर्क द्वारा दूर-दराज ग्रामीण क्षेत्रों के लिए वी-सैट दूर संचार का प्रयोग किया जा रहा है।

शार केन्द्र: मद्रास से लगभग 100 किलोमीटर उत्तर में श्रीहरिकोटा द्वीप में स्थापित शार केन्द्र, इसरो (I.S.R.O.) का एक मुख्य प्रमोचन केन्द्र है। इस केन्द्र में प्रमोचन रॉकेट कार्यक्रम के लिए अपेक्षित ठोस प्रणोदकों का उत्पादन तथा वृहद् प्रणोदक चरणों की भूमि पर जांच करने के लिए स्थैतिक जांच और मूल्यांकन कॉम्प्लेक्स (स्टैक्स) नामक सुविधाएं विद्यमान हैं। शार केन्द्र के इसरो रेंज कॉम्प्लेक्स में श्रीहरिकोटा के अलावा बालासोर और थुम्बा स्थित प्रमोचन रेंज भी शामिल हैं।

इस केन्द्र में पी.एस.एल.वी. की ठोस मोटरों पर अनेक स्थैतिक जांचें की गयीं। शार केन्द्र को पी.एस.एल.वी. के प्रमोचन में सहायता के लिए भी सज्जित किया गया है। यहां पर जी.एस.एल.वी. के लिए प्रमोचन सुविधाओं के संवर्द्धन का कार्य शुरू किया गयाहै।

द्रव नोदन प्रणाली केन्द्र (एल.पी.एस.सी.): द्रव नोदन प्रणाली केन्द्र में प्रमोदक रॉकेट द्रव नोदन प्रणाली विकास की सुविधाएं तिरुवनन्तपुरम के निकट वालियामाला में, उपग्रह प्रणोदक उपस्करों और ट्रांसड्यूसर निर्माण की संविधायें बंगलौर में और

जांच सुविधाएं तमिलनाडु (महेन्द्रगिरि) में स्थित हैं। वर्ष 1992 के दौरान एल.पी.एस.सी. ने पी.एस.एल.वी. के उड़ान रूपान्तर की सफल जांच सहित पी.एस.एल.वी. के लिए द्रव आधारित द्वितीय चरण का विकास सफलतापूर्वक पूरा किया। पी.एस.एल.वी. के लिए अन्य सभी द्रव नोदन प्रणालियों को प्राप्त किया गया, जिसमें पी.एस.एल.वी. के लिए चतुर्थ चरण और विविध नियंत्रण प्रणालियां शामिल हैं। एल.पी.एस.सी. अब जी.एस.एल.वी. के क्रायोजेनिक चरण का विकास कर रहा है।

अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र (सेक): अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र, अहमदाबाद अंतरिक्ष उपयोग तथा अनुसंधान और विकास के लिए इसरो का एक प्रमुख केन्द्र है। इस केन्द्र में उपग्रह संचार तथा माइक्रोवेव सुदूर संवेदन सहित सुदूर संवेदन के क्षेत्रों में अनुसंधान और विकास कार्य किये जाते हैं। अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र, उपग्रह संचार के लिए दिल्ली भू-केन्द्र का भी परिचालन करता है।

अंतरिक्ष उपयोग केन्द्र आई.आर.एस. उपग्रहों के लिए लिस (LISS) कैमरा नीतभारों तथा इनसैट-2 उपग्रहों के लिए संचार और वी.एच.आर.आर. नीतभारों के डिजाइन और विकास के लिए उत्तरदायी है। इस केन्द्र द्वारा अनेक सुदूर संवेदन उपयोग परियोजनायें भी आयोजित की जाती हैं।

विकास और शैक्षिक संचार इकाई (डेकू) : सेक के साथ स्थापित विकास तथा शैक्षिक संचार इकाई (डेकू) अंतरिक्ष उपयोग कार्यक्रम की संकल्पना, आयोजना और सामाजिक- आर्थिक मूल्यांकन में कार्यरत है। यह इकाई अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी के वर्तमान और उभरते हुए उपयोगों पर आयोजना और नीति संबंधी अध्ययनों को अंजाम देती है तथा शिक्षा और विकास के क्षेत्रों में विडियो कार्यक्रमों का निर्माण करती है। इस इकाई में टी.वी. कार्यक्रम से संबद्ध निर्माण कर्मचारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है।

वर्ष 1992 के दौरान डेकू ने औद्योगिक कामगारों के प्रशिक्षण के लिए इसरो राष्ट्रीय उत्पादकता परिषद के साथ वार्तालाप परीक्षण के आयोजन, उपग्रह के माध्यम से इलेक्ट्रॉनिकी तथा दूरसंचार इंजीनियरिंग संस्थान के सहयोग से विद्यार्थियों के लिए पत्राचार पाठ्यक्रम की आयोजना तथा विस्तार कार्यकर्ताओं और किसानों ग्रामीण समुदाय की भागीदारी से भिवानी जिले में दीर्घकालीन विकास के लिए समेकित मिशन प्रारंभ किया। डेकू द्वारा जल विभाजक प्रबन्ध, जल स्रोतों की खोज, वनों का अतिक्रमण तथा शहरी विस्तार जैसे अनेक विडियो कार्यक्रमों का निर्माण भी शुरू किया गया है।

इसरो दूरमिति, अनुवर्तन और आदेश संचारजाल (इस्ट्रैक): इस्ट्रैक में इसके बंगलौर स्थित मुख्यालय सहित अंतरिक्षयान नियंत्रण केन्द्र तथा बंगलौर, लखनऊ, शार, निकोबार और तिरुवनन्तपुरम में अनेक केन्द्रों का नेटवर्क है। इसके द्वारा आई.आर.एस.मिशन की सहायता के लिए मॉरीशस में एक टी.टी.सी. केन्द्र भी शामिल किया गया है। इस्ट्रैक द्वारा कवलूर में उपग्रह अनुवर्तन तथा सर्वेक्षण केन्द्र भी संचालित किया जाता है। यह अन्तर्राष्ट्रीय कॉसमास-सारसैट उपग्रह आधारित खोज और बचाव कार्यक्रम के मिशन नियंत्रण केन्द्र तथा स्थानीय प्रयोक्ता टर्मिनलों के परिचालन के लिए उत्तरदायी है। इस्ट्रैटेक अपने मुख्यालय से सम्पूर्ण समन्वय, कार्यक्रम आयोजना और मूल्यांकन, गुणवत्ता कार्य तथा आवृत्ति प्रबन्ध कार्य करता है। इस्ट्रैक के अन्य मुख्य क्रियाकलापों में नेटवर्क प्रचालन, अंतरिक्षयान प्रचालन, भावी मिशनों, नेटवर्क विस्तार योजनाओं इत्यादि के लिए अग्रिम आयोजना और विश्लेषण कार्य शामिल हैं।

इनसैट प्रधान नियंत्रण सुविधा (एम.सी.एफ.): हासन, कर्नाटक में स्थित इनसैट प्रधान नियंत्रण सुविधा कक्षीय युक्तिचालनों, स्थान अनुरक्षण और अंतरिक्ष यान पर कक्षीय प्रचालनों सहित, इनसैट उपग्रहों के सभी उड़ानोत्तर प्रचालन के लिए उत्तरदायी है।

इसरो जड़त्वीय प्रणाली इकाई (आई.आई.एस.यू.): आई.आई.एस.यू., तिरुवनन्तपुरम इसरो के उपग्रह और प्रमोचक रॉकेट दोनों के लिए जड़त्वीय प्रणालियों के डिजाइन और विकास में कार्यरत है। इस इकाई में नौवहन प्रणाली, उपग्रह जड़त्वीय प्रणालियों, बियरिंग और अंतरिक्ष आनुवंशिकी, जड़त्वीय प्रणाली समाकलन और अनुकार इत्यादि के क्षेत्रों में अनुसंधान तथा विकास प्रभाग हैं। न्यू मुम्बई में एक बेरीलियम मशीनिंग सुविधा अभिचालन में है।

राष्ट्रीय सुदूर संवेदन एजेंसी (एन.आर.एस.ए.): हैदराबाद स्थित राष्ट्रीय सुदूर संवेदन एजेंसी, अंतरिक्ष विभाग द्वारा समर्थित एक स्वायत्त संस्थान है। यह एजेंसी सुदूर संवेदन उपग्रहों से आंकड़ों के अभिग्रहण और भण्डारण के लिए उत्तरदायी है। एन.आर.एस.ए. द्वारा आई.आर.एस.-1, अमेरिकी लैण्डसैट तथा फ्रेंच स्पॉट उपग्रहों से आंकड़ों के अभिग्रहण तथा यूरोपियन सुदूर संवेदन उपग्रह (ई.आर.एस.) से माइक्रोवेव आंकड़ों के अभिग्रहण के लिए हैदराबाद के निकट शादनगर में उपग्रह भू-केन्द्र की स्थापना की गयी। एन.आर.एस.ए., देहरादून भारतीय सुदूर संवेदन संस्थान का भी प्रचालन करती है। यह एजेंसी प्रयोक्ताओं के सहयोग से विविध उपयोग परियोजनाओं में भी कार्यरत है। इनमें लवणता/क्षारीय मृदाओं का मानचित्रण, सूखा मॉनीटरन, बाढ़ मानचित्रण, भूमि

उपयोग मानचित्रण, मृदा मानचित्रण, जल-भू आकृति, विज्ञानीय मानचित्रण इत्यादि जैसे क्षेत्र शामिल हैं। एन.आर.एस.ए. ने केन्द्र और राज्य सरकारों की वित्तीय सहायता से दीर्घकालीन विकास के लिए समेकित मिशन भी शुरू किया है।

भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला (पी.आर.एल.): भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद अंतरिक्ष एवं इससे संबद्ध विज्ञान में अनुसंधान के लिए एक प्रमुख राष्ट्रीय केन्द्र है। यह अन्तरिक्ष विभाग का एक स्वायत्त संस्थान है। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला के अनुसंधान कार्यक्रम मुख्य रूप से चार समूहों, अर्थात् खगोलीय, खगोलभौतिकी, ग्रहीय वायुमंडल तथा वायु विज्ञान, पृथ्वी विज्ञान तथा सौर प्रणाली एवं सैद्धांतिक भौतिकी द्वारा संपन्न किये जाते हैं।

संयुक्त राज्य का अंतरिक्ष प्रोजेक्ट: अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज वाकर बुश ने वर्ष 2020 तक चांद पर मानव केंद्र बनाने की योजना की घोषणा की है। इस नयी योजना के तहत नासा द्वारा मुख्य रूप से चांद पर एक स्थायी बस्ती बनाने और मंगल पर मानव भेजने का प्रस्ताव है। इस सिलसिले में अमेरिका के राष्ट्रपति जार्ज बुश ने सन 2015 तक चांद पर पहले मानवयुक्त केंद्र की स्थापना पूरी करने का लक्ष्य रखा है।

1. अमेरिका का पहला लक्ष्य वर्ष 2010 तक अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष केंद्र स्थापित करना है।
2. दूसरा लक्ष्य पुराने अंतरिक्ष यानों के बेड़े को हटाकर नये बेड़े को शामिल करना है, जो मनुष्य को चांद और उससे आगे ले जा सके।
3. नये अंतरिक्ष यानों का परीक्षण 2008 तक हो जायेगा।
4. पहला मानवयुक्त अभियान वर्ष 2014 से पहले शुरू कर दिया जायेगा।
5. तीसरा लक्ष्य वर्ष 2020 तक चांद पर मानवयुक्त केंद्र की स्थापना करना है।
6. चांद पर अमेरिका की इस महत्वाकांक्षी परियोजना को ही ध्यान में रखते हुए नासा मौजूद अंतरिक्ष शटल यानों के बेड़े को नष्ट कर नयी पीढ़ी का बेड़ा तैयार करने की योजना बना रहा है।
7. नयी योजना के मुताबिक चंद्रमा पर मानव बस्ती बसे मंगल पर अंतरिक्ष यात्री भेजने की प्रणाली विकसित हो और आसपास के उनका पिंडो का गहन अध्ययन किया जाये।
8. कोलंबिया शटल यान की दुर्घटना के बाद नासा के नये अभियान के लिए बने विशेषज्ञों के एक समूह ने इस अवधारणा को जन्म दिया।
9. नासा की योजना मंगल पर सन् 2009 तक एक सूचना प्रयोगशाला भेजने की है।

प्रक्षेपणयान प्रौद्योगिकी

विशाल रॉकेट जो उपग्रह, रोबॉटिक अंतरिक्ष यान और मानव सहित अंतरिक्ष यान को अंतरिक्ष में ले जाते हैं, प्रमोचन यान या अभिवर्धकों के रूप में जाने जाते हैं। प्रक्षेपण यान में तीन या चार चरण होते हैं। ये सभी चरण एक दूसरे के ऊपर सज्जित होते हैं, कभी-कभी 'स्ट्रैप-ऑन मोटर' कहलाने वाला रॉकेटों का एक समूह, प्रमोचन यान के पहले चरण को घेरते हैं। पृथ्वी की सतह से उत्थापन के बाद प्रमोचन यान एक उपग्रह/अंतरिक्ष यान को उसकी अपेक्षित कक्षा में स्थापित करने के लिए दस से तीस मिनट के बीच में का समय लेता है। किसी भी देश को अंतरिक्ष प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए यह आवश्यकता होता है कि उसे उपग्रहों के निर्माण में आत्मनिर्भर बनने के साथ-साथ इन उपग्रहों के प्रक्षेपण की तकनीक में भी आत्मनिर्भरता प्राप्त हो सके। प्रत्येक देश की यह महत्वाकांक्षा होती है कि वह अपने उपग्रहों का प्रक्षेपण स्वदेशी प्रमोचक यानों की मदद से करे। यही कारण था कि भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम में प्रारंभ से ही प्रमोचक यानों के विकास को सम्मिलित किया गया। भारत में प्रमोचन यानों के विकास कार्यक्रम की शुरूआत 1970 दशक के प्रारंभ में हुई। प्रथम प्रायोगिक प्रमोचन यान 'एसएलवी-3' 1980 में विकसित किया गया। इसका एक संवर्धित संस्करण, एएसएलवी का प्रमोचन 1992 में सफलतापूर्वक किया गया। उपग्रह प्रमोचन यान कार्यक्रम में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचन यान (पीएसएलवी) और भूतुल्यकाली उपग्रह प्रमोचन यान (जीएसएलवी) के प्रचालनीकरण के साथ भारत ने प्रमोचन यान प्रौद्योगिकी में जबरदस्त प्रगति की है। पीएसएलवी इसरो द्वारा प्रचालनात्मक यान को अभिकल्पित और विकसित करने के प्रयास को निरूपित करता है, जिसे कक्षा अनुप्रयोज्य उपग्रह के रूप में प्रयोग किया जा सके। जहाँ एसएलवी-3 ने भारत का स्थान अंतरिक्ष में प्रवीण राष्ट्रों के समुदाय में सुरक्षित किया, एएसएलवी ने इसरो की प्रमोचन यान

प्रौद्योगिकी को आगे बढ़ने की प्रक्रिया प्रदान की। और पीएसएलवी के साथ एक नए वैश्विक-स्तर के यान का आगमन हुआ। पीएसएलवी ने विविध कक्षाओं में 48 उपग्रहों/अंतरिक्षयानों के (22 भारतीय और 26 अंतर्राष्ट्रीय ग्राहकों के लिए) प्रमोचन द्वारा बार बार अपनी विश्वसनीयता और बहुविज्ञता को सिद्ध किया है। इसरो वायुमंडलीय अनुसंधान और अन्य वैज्ञानिक खोजों के लिए भारतीय और अंतर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक समुदाय द्वारा नीतभारों के प्रमोचन के लिए प्रयुक्त रोहिणी श्रृंखला के परिज्ञापी रॉकेटों का भी निर्माण करता है। ये रॉकेट उन्नत प्रमोचन यानों में प्रयुक्त कुछ महत्वपूर्ण प्रणालियों को अर्ह बनाने में भी प्रयोग किए जाते हैं।

विक्रम साराभाई अंतरिक्ष केंद्र (V.S.S.C.) का मुख्य उद्देश्य प्रक्षेपण यानों के अनुसंधान तथा विकास से ही संबंधित है। प्रक्षेपण यान प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में एस.एल.वी.-3 की साधारण क्षमता से प्रारंभ कर आई.आर.एस. एवं इनसैट श्रेणी के उपग्रह की जरूरतों के मुताबिक बड़े तथा कम लागत के प्रक्षेपण यान तैयार करने का कार्य पूरा किया जा चुका है। स्वदेशी प्रक्षेपण यान विकसित करना इस दृष्टि से भी बहुत आवश्यक है कि भारत जितना खर्च एक उपग्रह को बनाने में करता है, उससे कहीं अधिक उसे इसके प्रक्षेपण के लिए किसी विदेशी संस्था को देना पड़ता है।

संवर्द्धित उपग्रह प्रमोचक रॉकेट (ए.एस.एल.वी.)

20 मई, 1992 को ए.एस.एल.वी. (ए.एस.एल.वी.-डी3) की तृतीय विकासात्मक उड़ान का सफलतापूर्वक आयोजन प्रमोचक रॉकेट प्रौद्योगिकी के विकास में एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। ए.एस.एल.वी.-डी 3 द्वारा 106 कि.ग्रा. भार के स्त्रौस-सी (SROSS-C) उपग्रह को 267 कि.मी. की उप-भू और 433 कि.मी. की अपभू-कक्षा में स्थापित किया गया। इसमें राष्ट्रीय भौतिकी प्रयोगशाला द्वारा निर्मित एक मंदक संभाव्य विश्लेषित्र तथा इसरो द्वारा निर्मित एक गामा किरण प्रस्फोट नीतभार सम्मिलित था। चतुर्थ चरण की प्रचक्रण दर (निर्धारित 140 आर.पी.एम. की तुलना में 80 आर.पी.एम.) के कम होने के साथ-साथ स्त्रौस-सी के गुरुत्व केन्द्र में अल्प कमी के कारण इसकी कक्षा कुछ कम रही। चूंकि यह उपग्रह केवल एक इंजीनियरिंग मॉडल था, अतः इसमें आयी खराबी को जानबूझ कर ठीक नहीं किया गया।

इस उड़ान में भारत के पी.एस.एल.वी. और जी.एस.एल.वी. के लिए अपेक्षित अनेक नयी प्रौद्योगिकियों, जैसे- संवृत्त निर्देशन, वास्तविक समय निर्धारण प्रणाली, स्ट्रैप-ऑन जेटीशनिंग और केंद्रीय तापकवच को अर्हक बनाया गया। ए.एस.एल.वी.-डी3 उड़ान पर विस्तृत यंत्रीकरण द्वारा दाब, विकृति, उष्मा अभिवाह, कंपन, त्वरण और प्रघात स्तरों पर बहुमूल्य आंकड़े प्रदान किये गये हैं।

ध्रुवीय उपग्रह प्रमोचक रॉकेट (पी.एस.एल.वी.)

चार चरणों वाला पीएसएलवी 1,4000 किग्रा. तक के उपग्रहों को 800 किमी. ऊची ध्रुवीय कक्षा में छोड़ सकता है। यह 100 किग्रा. के माइक्रो उपग्रहों या लघु उपग्रहों को विभिन्न गठजोड़ों के रूप में छोड़ने की क्षमता रखता है। यह एक टन के नीतभार को भू-तुल्यकालिक स्थानंतरण कक्षा में भी प्रक्षेपित कर सकता है। अब तक इसके आठ मिशन चलाये गये हें जिनमें से सात लगातार सफल रहे हैं।

भू-तुल्यकालिक उपग्रह प्रमोचक रॉकेट (जी.एस.एल.वी.): जी.एस.एल.वी. का डिजाइन पी.एस.एल.वी. के लिए विकसित मॉडयूलों का अधिकतम उपयोग करके किया गया है। इसके संरूपण में पी.एस.एल.वी. के ऊपरी दो चरणों के स्थान पर एक एकल क्रायोजेनिक चरण तथा पी.एस.एल.वी. के द्वितीय चरण से लिये गये चार द्रव प्रणोदक स्ट्रैप-ऑन के स्थान पर छह बेस प्रणोदक स्ट्रैप-ऑन मोटर को शामिल किया गया है। जी.एस.एल.वी., 2500 कि.ग्रा. भार की श्रेणी के उपग्रहों को भू-तुल्यकालिक अन्तरण कक्षा में स्थापित करने में सक्षम होगा।

जीएसएलवी अपनी पहली परीक्षण में ही सफल रहा। 8 मई, 2003 को इसकी सफल उड़ान के बाद इसने काम करना शुरू कर दिया है। जीएसएलवी के तीसरे चरण में इस्तेमाल होने वाले स्वदेश में ही बने क्रायोजेनिक इंजन का वर्ष के दौरान 1,000 सैकेण्ड की अवधि का सफल परीक्षण किया गया और वास्तविक उड़ान हालतों में इसकी सहनशक्ति सिद्ध हो गयी।

जीएसएलवी मैक-3: जीएसएलवी मार्क 3, भारतीय अनुसंधान संगठन द्वारा संप्रति विकासाधीन एक प्रमोचन यान है। इसरो के 4500 से 5000 कि.ग्रा. भार वाले इन्सैट-4 श्रेणी के भारी संचार उपग्रहों के प्रमोचन के लिए जीएसएलवी मार्क 3 की परिकल्पना और डिजाइन तैयार की गई है। यह अरबों डालर के व्यापारिक प्रमोचन बाजार में सक्षम प्रतियोगी के रूप में देश की क्षमता में भी वृद्धि करता है। यह यान जी.टी.ओ., एल.ई.ओ., ध्रुवीय और मध्यवर्ती वृत्तीय कक्षा के लिए मल्टी-मिशन प्रमोचन क्षमता

परिकल्पित करता है। जीएसएलवी-मार्क 3 को 630 टन उत्थापन भार व 42.4 मी. लंबाई सहित तीन चरण यान के रूप में अभिकल्पित किया गया है। प्रथम चरण में 200 टन ठोस नोदक सहित दो एकसमान एस200 बृहत् ठोस बूस्टोर (एल.एस.बी.) समाहित हैं, जिन्हें द्वितीय चरण, एल110 पुन: प्रारंभ योग्य द्रव चरण पर स्ट्रेप ऑन किए गए हैं। तृतीय चरण सी25 एलओएक्स /एलएच 2 निम्नतापीय चरण है। बृहत् नीतभार फेयरिंग का व्यास 5 मी. है और यह 100 क्यू. मी. आयतन के पेलोड को समायोजित कर सकता है।

प्रक्षेपण की बुनियादी सुविधाएं: भारत के पूर्वी तट पर श्रीहरिकोटा द्वीप पर सतीश धवन अंतरिक्ष केन्द्र 'शार' के प्रक्षेपण की व्यापक, सुविधाएं उपलब्ध हैं। श्रीहरिकोटा चेन्नई से 100 किमी. की दूरी पर स्थित है। श्रीहरिकोटा 13° उत्तरी अक्षांश पर स्थित है। यहां से 18° से लेकर 99° तक की विभिन्न कक्षाओं में उपग्रहों का प्रक्षेपण किया जा सकता है। उपग्रह के हिस्सों को इकट्ठा करने, उनमें ईंधन भरने और प्रक्षेपण की पूरी सुविधाएं यहां मौजूद है। श्रीहरिकोटा में उपग्रहों के मार्ग पर निगाह रखने और उसकी गतिविधियों को मॉनीटर करने के लिए टेलीमीट्री, ट्रेकिंग और कमांड नेटवर्क भी है।

ग्रामसेट

गांवों के प्रति समर्पित उपग्रहों की परिकल्पना ग्रामसैट कहलाती है। उपग्रह की सहायता से ग्रामीण प्रौढ़ों को विकासात्मक एवं सतत् शिक्षा उपलब्ध कराकर काफी हद तक निरक्षरता उन्मूलन का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है। ग्रामसैट की सहायता से भारत के उस सपने को साकार किया जा सकता है, जिसके तहत किसी भी भाषा में कार्यक्रमों को सम्पूर्ण देश के लोगों के लिए सुलभ बनाया जा सके। समय पर बचाव उपायों को तत्काल लागू करने तथा विपत्ति में पड़े किसी जहाज अथवा विमान को शीघ्र सूचना उपलब्ध कराने के लिए बंगलौर एवं लखनऊ में उपकरण लगाये गये हैं तथा तलाश एवं बचाव क्षमता का संचालन कार्य शुरू किया जा चुका है। इनसैट-2 शृंखला के उपग्रहों की सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत समस्त संचार सुविधाओं के लिए एक अन्य कार्य किया जा रहा है, जिससे रेलगाड़ियों, ट्रकों एवं अन्य वाहनों के आवागमन पर लगातार निगरानी रखी जा सकेगी।

अंतरिक्ष-उद्योग सहयोग

भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम का उद्योगों से गहरा संबंध है। इन दोनों का परस्पर संबंध एक-दूसरे के विकास एवं लाभ के उद्देश्य से स्थापित है। अंतरिक्ष-उद्योग सहयोग के तहत एक तरफ अंतरिक्ष कार्यक्रम के अन्तर्गत विकसित तकनीक को उद्योग-धंधों के लिए उपलब्ध कराया जाता है, तो दूसरी तरफ उद्योग-धंधों की तकनीक का उपयोग अंतरिक्ष कार्यक्रम में किया जाता है। गत वर्षों में उद्योगों के साथ भारतीय अंतरिक्ष कार्यक्रम के साहचर्य ने एक महत्त्वपूर्ण स्थान हासिल कर लिया है। अंतरिक्ष कार्यक्रम द्वारा अंतरिक्ष बाजार में प्रवेश करने तथा भारतीय उद्योगों में विद्यमान व्यापक संभावनाओं के मद्देनजर सशक्त रूप से सरकारी उद्यमों को प्रारंभ करने की जिम्मेदारी उठायी गयी है। इस दिशा में वर्ष 1992 में अंतरिक्ष विभाग द्वारा वाणिज्यिक फ्रंट 'अंतरिक्ष कॉरपोरेशन लिमिटेड' की स्थापना एक महत्त्वपूर्ण कदम है। अनेक उद्यमों द्वारा हार्डवेयरों के विकास एवं आपूर्ति एवं भू-अवसंरचना के निर्माण के माध्यम से चालू परियोजनाओं अर्थात् पी.एस.एल.वी., जी.एस.एल.वी., आई.आर.एस. एवं इनसैट को सहायता प्रदान की जाती है। विभिन्न उद्योगों में संचार नीतभारों, भू-हार्डवेयर, इलेक्ट्रॉनिकी एवं एन्टीना परावर्तकों, भरणों एवं माउंटों के लिए विविध बॉक्सों के मशीनीकरण एवं संविरचन के कार्य किये जा रहे हैं। भारत इलेक्ट्रॉनिक्स, बंगलौर के अंतरिक्ष इलेक्ट्रॉनिकी प्रभाग द्वारा अंतरिक्ष विभाग के विविध कार्यक्रमों में सक्रिय सहायता की जाती है। जी.एस.एल.वी. परियोजना के लिए पी.सी.एम. सुदूर इकाई के उत्पादन का उत्तरदायित्व अंतरिक्ष इलेक्ट्रॉनिकी विभाग को सौंपा गया है। प्रमोचक रॉकेट कार्यक्रम के लिए द्रव इंजनों का निर्माण, विकसित इंजन उत्पादीकरण कार्यक्रम के अंतर्गत हैदराबाद एवं मुम्बई में निजी कम्पनियों द्वारा किया जा रहा है।

भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली

भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह (INSAT) एक बहुउद्देशीय तथा बहुप्रयोजनीय उपग्रह प्रणाली है। इसका उपयोग घरेलू दूरसंचार, मौसम की जानकारी, आंकड़ों के संप्रेषण तथा आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के सीधे राष्ट्रव्यापी प्रसारण में किया जाता है। यह अंतरिक्ष विभाग, दूरसंचार विभाग, भारतीय मौसम विभाग, आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का संयुक्त उपक्रम है। इनसैट प्रणाली की व्यवस्था तथा संचालन की संपूर्ण जिम्मेदारी अंतरिक्ष विभाग की है। इनसैट प्रणाली के प्रयोग से देश के पूर्वोत्तर राज्यों में ग्रामीण तार व्यवस्था

तथा जिलों एवं राज्यों की राजधानियों के बीच राष्ट्रव्यापी आंकड़ा तथा संचार संपर्क उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्रों की स्थापना की गयी है। व्यापक पैमाने पर लाइब्रेरी नेटवर्क स्थापित करने का काम भी शुरू कर दिया गया है। इनसैट उपग्रहों में लगे अति उच्च रेडियोमीटर (V.H.R.R.) उपकरणों की सहायता से मौसम संबंधी आंकड़ों को एकत्र करने तथा उन्हें प्रसारित करने के साथ-साथ असंलग्न प्लेटफॉर्म से सुदूर क्षेत्रों के मौसम संबंधी आंकड़े इकट्ठा करने से देश में मौसम की भविष्यवाणी के क्षेत्र में आशातीत सफलता मिली है।

इनसेट प्रणाली के जिन उपग्रहों से अभी काम लिया जा रहा है, वे है-इनसेट-4बी, इनसेट-2ई, इनसेट-3ए, इनसेट-3बी, इनसेट-3सी, इनसेट-3ई, कल्पना-1 तथा जी सेट-2। यह प्रणाली सी-बैंड, वृहद सी-बैंड में कुल मिलाकर 150 ट्रांसपोंडर्स उपलब्ध कराती है। बहुद्देशीय उपग्रह प्रणाली होने के कारण यह दूरसंचार, टेलीविजन प्रसारण, मौसम पूर्वानुमान, आपदा चेतावनी और बचाव क्षेत्रों में सेवाएं उपलब्ध कराती है। इन्सेट प्रणाली भारतीय अर्थव्यवस्था के अनेक महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सेवाएं उपलब्ध कराती हैं। इसमें सबसे महत्वपूर्ण दूरसंचार क्षेत्र है जो इनसेट मोबाइल उपग्रह सेल्स के साथ-साथ बी-सेट सेवाएं भी देता है। भारत ने 1992 में इनसैट-2। का सफल परीक्षण करके द्वितीय पीढ़ी की इनसैट प्रणाली को विकसित कर लिया। पहली पीढ़ी के उपग्रहों की तुलना में इस श्रृंखला के उपग्रहों की क्षमता पचास प्रतिशत अधिक है। इसके प्रत्येक उपग्रह में सी-बैंड (C-Band) तथा एस-बैंड (S-Band) के ट्रांसपोंडर (Transponders) लगे होते हैं। सी-बैंड तथा विस्तारित सी-बैंड ट्रांसपोंडरों की सहायता से दूरदराज के क्षेत्रों में एक चैनल वाले संचार संपर्क, क्षेत्रीय टी. वी. मॉनीटरिंग तथा मेट्रो टी. वी. चैनल को प्रभावी बनाया गया है। साथ ही, इससे दूरसंचार प्रणाली को भी पहले की अपेक्षा अधिक प्रभावी बनाने में मदद मिल सकी है। दूसरी ओर, एस-बैंड ट्रांसपोंडरों की मदद से दूरदर्शन के राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय प्रसारण, रेडियो प्रसारण, मौसम की जानकारी, प्राकृतिक आपदाओं की भविष्यवाणी तथा सूचना प्रौद्योगिकी में काफी मदद मिली है। द्वितीय श्रेणी की इनसैट प्रणाली की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह भी है कि यह पूर्णत: स्वदेशी तकनीक पर आधारित प्रौद्योगिकी है।

मेघाट्रॉपिक्स: इसका प्रमोचन इसरो द्वारा 12 अक्टूबर, 2011 को पीएसएलवी सी-18 यान से किया गया। मेघा-ट्रापिक्स जल चक्र तथा ऊर्जा विनिमय के अधययन हेतु एक संयुक्त भारत-फ्रांस उपग्रह मिशन है। इस मिशन का मुख्य उद्देश्य संवहनी प्रणाली के जीवन चक्र को समझना जो उष्णकटिबंधीय मौसम तथा वायुमण्डल को तथा सह उर्जा में उनकी भूमिका तथा उष्णकटिबंधीय क्षेत्र के वायुमंडल में आद्र बजट को प्रभावित करता है। बादल में संघनित जल, वायुमंडल में जल वाष्प, पातन तथा वाष्पन की सूचना सहित उष्णकटिबंधीय वापयुमंडल में जल चक्र के योगदान पर मेघा-ट्रापिक्स वैज्ञानिक आँकडें को प्रदान करेगा, अपने वृत्तीय कक्षा में भूमधयरेखा में 20 डिग्री की आनति पर मेघा-ट्रापिक्स, जलवायु अनुसंधान के लिए एक विशिष्ट उपग्रह है जो परिष्कृत भविष्यसूचक मॉडल वैज्ञानिकों को अन्वेषण में सहायता करता है। इस मिशन के आधारभूत सिद्धांत इस प्रकार हैं-

- वायुमंडलीय जलचक्र के अनेक तत्वों जैसे-जल, वाष्प, बादल, बादलों में संघनित जल, वर्षण तथा वाष्पोत्सर्जन का संगत मापन करना।
- वायुमंडल के शीर्ष स्तर पर संगत उत्सर्जक बजट की माप करना तथा
- संवहनीय प्रणाली की विशेषता को चिह्नित करने तथा महत्वपूर्ण आंकड़ों की प्राप्ति हेतु उच्च लौकिक नमूने सुनिश्चित करना।

जुगनू: 3 कि.ग्रा भारवाला नैनो उपग्रह, जुगनू का प्रमोचन 12 अक्टूबर, 2011 को किया गया। इसे इसरो के मार्गदर्शन में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर द्वारा डिजाइन किया गया और निर्मित किया गया है। इस उपग्रह का उद्देश्य,

1. पृथ्वी का निकट अवरक्त क्षेत्र में प्रतिबिंबन करने के लिए स्वदेशी रूप से निर्मित कैमरा प्रणाली को सिद्ध करना और प्रतिबिंबन संसाधन एलोगरिथ्म की जाँच करना।
2. उपग्रह नौवहन में उपयोग करने हेतु जीपीएस अभिग्राही का मूल्यांकन
3. अन्तरिक्ष में जडत्वीय मापन यूनिट (आईएमयू) आधारित स्वदेश में विकसित एमईएमएस की जाँच।

एसआरएमसैट: इसका प्रमोचन 12.10.2011 को हुआ। एसआरएम विश्वविद्यालय के छात्रों और संकाय सदस्यों द्वारा विकसित 10.9 कि.ग्रा. भारवाला नैनो उपग्रह एसआरएमसैट, वैश्विक ताप तथा कार्बन डाइआक्साइड तथा जलवाष्प का मानिटरन करते हुए वायुमण्डल में प्रदूषण के स्तर की समस्या पर विचार करने का प्रयास करेगा। यह उपग्रह एक ग्रेटिन्ग स्पेक्ट्रपमापी का उपयोग करता है, जो 900 ने.मी.- 1700 ने.मी. अवरक्त रेंज में अवशोषण स्पेक्ट्रम का प्रेक्षण करेगा।

जीसैट-12: जीसैट-12, इसरो द्वारा निर्मित नवीनतम संचार उपग्रह है जिसका भार उत्थापन समय में लगभग 1410 कि.ग्रा. है। जीसैट-12 का संरूपण कम समय में देश की प्रेषानुकरों की बढ़ती माँग को पूरा करने के लिए 12 विस्तारित सी-बैण्ड ट्रांसपोंडरों को वहन करने के लिए किया गया है। जीसैट-12 के 12 विस्तारित सी-बैण्ड ट्रांसपोंडर दूरशिक्षा, दूरचिकित्सा, तथा ग्रामीण संसाधन केन्द्र (वीआरसी) जैसी विभिन्न संचार सेवाओं के लिए इन्सैट प्रणाली की क्षमता का संवर्धन करेंगे।

मिशन: संचार

भार: 1410 कि.ग्रा

559 कि.ग्रा (शुष्क भार)

पावर: 1430 वा. प्रदान करनेवाला सौर व्यूह और एक 64 एएच लीथियम-आयन बैटरी

नोदन: मोनो मिथाइल हाइड्राजीन (एमएमएच) का ईंधन के रूप में और नाइट्रोजन के मिश्रित आक्साइड्स का आक्सीडाइजर के रूप में, उपयोग करनेवाला 440 न्यूटन द्रव अपभू मोटर (एलएएम) अभिवृत्ति और

कक्षा नियंत्रण: भू संवेदक, सूर्य संवेदक, संवेग और प्रतिक्रिया चक्र, चुम्बकीय टार्किंत्रों और आठ 10 न्यूटन और आठ 22 न्यूटन के द्विनोदक प्रणोदकों का उपयोग करते हुए कक्षा में स्थिरीकृत 3-अक्षीय पिंड।

ऐन्टेना: एक 0.7 मी. व्यासवाला पिण्ड पर आरोपित परवलयिक अभिग्राही ऐन्टेना और एक 1.2 मी. व्यासवाला धरुवीकरण संवेदनशील प्रस्तरणीय ऐन्टना

प्रमोचन तिथि: 15 जुलाई , 2011

प्रमोचन स्थल: शार, श्रीहरिकोटा,

प्रमोचन यान: पीएसएलवी-सी17

कक्षा: भू-स्थिर (83 डिग्री देशांतर)

मिशन कालावधि: लगभग 8 वर्ष

जीसैट-8: इसका प्रक्षेपण फ्रेंच गुआयान के कौरू अंतरिक्ष केंद्र से एरियन-5 यान से 20.04.2011 को किया गया। जीसैट-8, भारत का उन्नत संचार उपग्रह एक उच्च शक्तिवाला उपग्रह है, जिसे इन्सैट प्रणाली में लगाई जा रही है। उत्थापन के दौरान लगभग 3100 किग्रा भारवाले जीसैट-8 उपग्रह को के यू बैण्ड में 24 उच्च शक्ति वाले ट्रांसपोंडर तथा एल 1 तथा एल 5 बैण्ड में प्रचालित दो-चैनल वाले जीपीएस आधारित जीईओ संवर्धित नौवहन (गगन) नीतभार का वहन करने के लिए संरूपित किया गया है। 24 के यू बैण्ड ट्रांसपोंडर इन्सैट प्रणाली की क्षमता को संवर्धित करेगा। गगन नीतभार, उपग्रह आधारित संवर्धन प्रणाली (एसबीएएस), को प्रदान करता है, जिसके जरिए भू आधारित अभिग्राहियों के नेटवर्क द्वारा जीपीएस उपग्रहों से प्राप्त स्थिति की सूचना की यथार्थता, को सुधाारा जाता है तथा भूस्थिर उपग्रहों के जरिए देश में प्रयोक्ताओं को उपलब्ध कराया जाता है।

रिसोर्ससैट-2: इसका प्रक्षेपण 20 अप्रैल, 2011 को हुआ था। रिसोर्ससैट-2, रिसोर्ससैट-1 का अनुवर्ती उपग्रह है और इसरो द्वारा निर्मित अठारहवाँ उपग्रह है। रिसोर्ससैट-2 का उद्देश्य पूरे विश्व के प्रयोक्ताओं को रिसोर्ससैट-1 द्वारा प्रदत्त सुदूर संवेदन आँकड़ा सेवाओं को जारी रखना है और संवर्धित बहु स्पेक्ट्रमी और स्थानिक आवरण के साथ भी आँकड़ा प्रदान करना है।

रिसोर्ससैट-1 की तुलना में रिसोर्ससैट-2 में किये गये महत्वपूर्ण परिवर्तन इस प्रकार हैं; लिस-4 बहुस्पेक्ट्रमी प्रमार्ज का 23 कि.मी से 70 कि.मी तक संवर्धन और लिस-3 और लिस-4 में रेडियोधर्मिति यथार्थता का 7 बिट से 10 बिट तक सुधाार तथा एवाइफस में 10 बिट से 12 बिट तक सुधार। इनके अलावा, रिसोर्ससैट-2 में नीतभार इलेक्ट्रानिकियों में लघुकरण सहित उपयुक्त परिवर्तन किये गये हैं। रिसोर्ससैट-2, जहाजों की अवस्थिति, गति और अन्य सूचना प्राप्त करने के लिए वी एच एफ बैण्ड में जहाजों की निगरानी के लिए परीक्षणात्मक नीतभार के रूप में कोमडेव, कनाडा से प्राप्त एआईएस (स्वचालित निर्दिष्टीकरण प्रणाली; नामक एक अतिरिक्त नीतभार का भी वहन करता है। रिसोर्ससैट-2 अपने कैमरों द्वारा लिये गये प्रतिबिंबों के भण्डार के लिए, जिन्हें बाद में भू केन्द्रों को भेजा जा सकता है, प्रत्येक 200 गीगा बाइट की क्षमतावाले दो ठोस स्थिति रिकार्डरों का वहन करता है।

यूथसैट: इसका प्रमोचन श्रीहरिकोटा से पीएसएलवी-सी-16 से 20.04.2011 को हुआ। यह स्नातक और स्नातकोत्तर स्तर के विश्वविद्यालयों और अनुसंधाान विद्यार्थियों की भागीदारी के साथ तारकीय और वायुमण्डलीय अध्ययनार्थ एक भारत-रूस का

संयुक्त उपग्रह है। 92 कि.ग्रा. के उत्थापन भार के साथ यूथसैट एक लघु उपग्रह है और भारतीय लघु उपग्रह (आई.एम.एस.) श्रृंखला में दूसरा है। सौर परिवर्तनशीलता और तापमण्डल-आयनमण्डल परिवर्तनों के बीच के संबंध का पता लगाना, यूथसैट मिशन का उद्देश्य है। यह उपग्रह तीन नीतभारों का वहन करता है, जिनमें से दो भारत के और एक रूस का हैं। एकसाथ वे पृथ्वी के ऊपरी वायुमण्डल के सम्मिश्र, ऊर्जा और गतिकी के अन्वेषण के लिए एक अद्वितीय और विस्तृत परीक्षण पैकेज गठित करते हैं।

स्टुडसैट: इसका प्रमोचन 12.07.2010 को हुआ था। स्टुडसैट कर्नाटक और आन्ध्रप्रदेश में सात अभियांत्रिकी महाविद्यालयों के समागम में विद्यार्थियों द्वारा देश में विकसित किया गया प्रथम पिको-उपग्रह है। स्टुडसैट का वजन 1 कि.ग्रा. से भी कम है और प्राथमिक लक्ष्य शैक्षिक संस्थाओं में अंतरिक्ष तकनीक में अभिवृद्धि करना, लघु उपग्रहों में अनुसंधान और विकास को प्रोत्साहन देना, उपग्रह तथा भू-केंद्रों के बीच संपर्क स्थापित करना, 90 मीटर के विभेदन सहित पृथ्वी की तस्वीरें लेना और नीतभार तथा टेलीमिट्री आँकड़ा को भू-केंद्र को संचारित करना है।

कार्टोसैट-2बी: इसका प्रक्षेपण 12 जुलाई, 2010 को हुआ था। कार्टोसैट-2बी भारतीय सुदूर संवेदन उपग्रह श्रृंखला (आईआरएस) में सत्रहवाँ उपग्रह है। पूर्ववर्तियों कार्टोसैट-2बी अपने पूर्ववर्तियों कार्टोसैट-2 और 2ए के समान ही एक पैन्क्रोमैटिक कैमरा (पैन) वहन करता है। यह 9.6 कि.मी.प्रमार्ज (भौगोलिक पट्टिका) की तस्वीरें 1 मीटर से बेहतर विभेदन के साथ लेने में सक्षम है। कार्टोसैट-2बी के पैन द्वारा भेजे गए दृश्य विशिष्ट स्थान प्रतिबिंबिकी मानचित्रकला तथा दूसरे कई अनुप्रयोगों के लिए उपयोगी हो सकता है। अत्यधिक कुशल कार्टोसैट-2बी त्रिविम प्रतिबिंबिकी और चार से पांच दिन की पुनरागमन के साथ ट्रैक के साथ 26व और साथ ही आर-पार संचालनीय है।

मिशन: सुदूर संवेदन

भार: 694 कि.ग्रा.

ऑनबोर्ड कक्षा: 930 वाट्स

ओशनसैट 2: ओशनसैट-2 उपग्रह बृहत् प्रणाली ने अपनी विरासत पिछले आईआरएस मिशनों से प्राप्त की है और 23 सितंबर, 2009 को सतीश धवन अंतरिक्ष केंद्र, श्रीहरिकोटा से पीएसएलवी -सी 14 द्वारा इसका प्रमोचन हुआ। इसका प्रमुख उद्देश्य महासागर व महासागरीय वायुमंडल का अध्ययन है। यह तीन नीतभार वहन करता है:

1. समुद्री कलर मॉनीटर (ओसीएम)
2. इसरो द्वारा विकसित के.यू-बैंड पेंसिल किरण प्रकीर्णमापी (स्कैट)
3. इतालवी अंतरिक्ष एजेंसी द्वारा विकसित वायुमंडल के लिए रेडियो उपगूहन ध्वनित्र (रोसाऋ)

ओशनसैट-2 की परिकल्पना, वर्धित अनुप्रयोग क्षमता के साथ ओशनसैट-1 (आईआरएस-पी4) की परिचालन सेवाओं की निरंतरता प्रदान करने के लिए की गई है।

प्रमोचन दिनांक: 23 सितंबर, 2009

प्रमोचन स्थल: शार, श्रीहरिकोटा

प्रमोचन यान: पीएसएलवी-सी14

कक्षा: ध्रुवीय सूर्य तुल्यकाली

तुंगता: 720 कि.मी.

अवधि: 99.31मिनट

अनुसैट: 20 अप्रैल, 2009 को प्रमोाचित अनुसैट (अन्ना विश्वविद्यालय उपग्रह) इसरो के समग्र मार्गनिर्देशाधीन भारतीय विश्वविद्यालय द्वारा निर्मित प्रथम उपग्रह है और यह संदेश संग्रहण और अग्रवर्ती परिचालनों से संबंधित प्रौद्योगिकी को प्रदर्शित करता है। इस उपग्रह प्रक्षेपण के निहितार्थ भारत के अंतरिक्ष मिशन में काम करने के लिए युवाओं को प्रोत्साहन प्रदान करना है।

रिसैट 2: रिसैट-2 पृथ्वी के प्रतिबिंब लेने के लिए सभी मौसम क्षमता सहित राडार प्रतिबिंबन उपग्रह है। इसका प्रक्षेपण 20 अप्रैल, 2009 को हुआ था। यह उपग्रह आपदा प्रबंधन अनुप्रयोगों के लिए इसरो की क्षमता में वृद्धि करेगा।

चंद्रयान-1: चंद्रयान-1, भारत का प्रथम चंद्र मिशन, एसडीएससी, शार, श्रीहरिकोटा से 22 अक्टूबर, 2008 को पीएसएलवी सी-11 से सफलतापूर्वक प्रमोचित किया गया था। अंतरिक्षयान चंद्र के रासायनिक, खनिजीय और प्रकाश-भौमिकी मानचित्रण के लिए चंद्र सतह से 100 कि.मी. की ऊँचाई पर चंद्रमा की परिक्रमा कर रहा था। अंतरिक्षयान भारत, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, स्वीडन और बुल्गेरिया में निर्मित 11 वैज्ञानिक उपकरणों को वहन किये हुआ था। सभी प्रमुख मिशन उद्देश्यों के सफलतापूर्वक समापन के बाद, मई 2009 में कक्ष को 200 कि.मी. तक संवर्धन किया गया। अगस्त 2009 तक यह संचालन में रहा। इसकी प्रमुख उपलब्धि चांद पर जल के साक्ष्य के बारे में आंकड़ा उपलब्ध कराना था।

एजुसैट: शिक्षा को समर्पित इस उपग्रह का प्रक्षेपण जीएसएलवी (एफ-1) द्वारा 20 सितंबर, 2004 को सतीश धवन स्पेस सेंटर से किया गया। 1950 किलोग्राम वाले इस एजुसैट के माध्यम से शिक्षा से जुड़े कार्यक्रम प्रसारित किये जायेंगे, जिससे देश में दूरस्थ शिक्षा के क्षेत्र में जबरदस्त क्रांति आ जायेगी। यह सैटेलाइट देश के घरों को शिक्षा की पाठशालाओं में तब्दील कर देगा। प्रक्षेपित किये गये एजुसैट में कई नयी प्रोद्योगिकी का समावेश किया गया है और इसे 'आई-2' के नाम के आवरण से विकषित किया गया है। इसमें विविध स्थलों तक पहुंच बना सकने वाला एंटीना व 1.2 मीटर का प्रत्यावर्तक (रिफ्लेक्टर) भी लगा है जो भारत में किसी भी गंतव्य तक के.यू. बैंड किरणों के पुंज को सटीक ढंग से भेज सकता है। एजुसैट में पांच के.यू. बैंड ट्रांस पोंडर और 6 विस्तारित बी बैंड ट्रांसपोंडर लगे हैं। यह उपग्रह 'इनसैट' प्रणाली में शामिल हो जायेगा, जिसमें 'सी' बैंड के 130 ट्रांसपोंडर लगे हैं। दूरस्थ शिक्षा में क्रांति लाने के लिए छोड़ा गया यह उपग्रह 21वीं सदी की शिक्षा का चेहरा ही बदल देगा। इसके जरिये उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा को सुदूर ग्रामीण इलाकों तक भी पहुंचाया जा सकेगा। भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (इसरो) के मुताबिक इस उपग्रह का मुख्य काम स्कूली, महाविद्यालयी, उच्च स्तरीय शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा के विकास की जरूरी जानकारियों के लिए 'कनेक्टीविटी' उपलब्ध कराना है।

मैटसैट-1: मेटसैट (जिसे यू.एस. स्पेस शटल कोलंबिया दुर्घटना में 1 फरवरी, 2003 को स्वर्गवासी भारतीय मूल की अमेरिकी अंतरिक्ष-यात्री डॉ. कल्पना चावला के नाम पर 5 फरवरी, 2003 को कल्पना-1 के रूप में पुनर्नामित किया गया) इसरो द्वारा निर्मित अनन्य मौसमविज्ञानीय उपग्रहों की श्रृंखला में पहला है। इसका प्रक्षेपण 12 सितंबर, 2002 को हुआ था।

एस्ट्रोसेट: खगोलीय अध्ययन हेतु 2007 में प्रक्षेपित किया जाने वाला भारत का पहला वैज्ञानिक उपग्रह एस्ट्रोसैट होगा। इससे प्राप्त सुविधाएं अंतरराष्ट्रीय प्रेक्षकों को भी मुहैया करायी जाएंगी।

- अंतरराष्ट्रीय सहयोग की परंपरा का पालन करते हुए यह वेधशाला अंतरराष्ट्रीय पर्यवेक्षकों के लिए मुहैया करायी जायेगी। कनाडा ने खगोलीय घटनाओं के अवलोकन के लिए तैयार भारत के पहले विभिन्न तरंग दैर्ध्य वाले उपग्रह के इस्तेमाल में दिलचस्पी दिखायी है।
- भारत में सीओएसपीएआर का आयोजन ऐसे समय पर हुआ है जब देश एस्ट्रोसैट और चंद्रयान की दिशा में कदम बढ़ा रहा है।
- एस्ट्रोसैट में एक्स किरणों, गामा किरणों, इंफ्रोरेड किरणों, खगोल विज्ञान और सौर व्यवस्था पर वर्षों के अध्ययन का समावेश है। कस्तूरीरंगन के मुताबिक चंद्रयान को 2008 तक प्रक्षेपित किया जायेगा। इसरो की एक के बाद एक अभियान की योजना है। एक बार स्थापित होने के बाद भारत अंतर्ग्रहीय अभियानों में अंतरराष्ट्रीय साझीदार बन जाएगा।

हैमसैट: हैमसैट शौकिया रेडियो ऑपरेटरों (एचएएम) के राष्ट्रीय और साथ ही अंतर्राष्ट्रीय समुदायों को उपग्रह आधारित अव्यावसायिक रेडियो सेवाओं को प्रदान करने वाला सूक्ष्म-उपग्रह है। इसमें दो ट्रांसपोंडर हैं, जिसमें से एक इसरो की विशेषज्ञता और हैमसैट-इंडिया के अनुभव सहित, भारतीय शौकीनों द्वारा देश में विकसित किया गया। दूसरा ट्रांसपोंडर वेनलो, नीदरलैंड के उच्च प्रौद्योगिकी संस्थान में डच शौकघ्यिा रेडियो ऑपरेटर और स्नातक इंजीनियरिंग छात्र द्वारा विकसित किया गया। 5 मई, 2005 को पीएसएलवी-सी 16 से इसे प्रक्षेपित किया गया था।

आईएमएस-1: आईएमएस-1, जो पहले टीडब्ल्यूसैट (तीसरी दुनिया का उपग्रह) कहलाता था, इसरो का एक किफायती सूक्ष्म-उपग्रह प्रतिबिंबन मिशन है। इसका प्रक्षेपण 24 अप्रैल, 2008 को किया गया। यह सूर्यकालिक कक्षा में स्थापित पृथ्वी का पर्यवेक्षण करने वाला उपग्रह है।

कार्टोसैट-1: 5 मई, 2005 को प्रक्षेपित यह भारत का पहला सुदूर संवेदन उपग्रह है जो कक्षीय त्रिविम प्रतिबिंब प्रदान करने में सक्षम है। प्रतिबिंबों का उपयोग वैश्विक आवश्यकताओं को पूरा करने वाले मानचित्रीय अनुप्रयोगों के लिए उपयोग में लाया जाता है। इस उपग्रह के कैमरा का विभेदन 2.5 मी. है (छोटे कार को पहचान सकता है)। कार्टोसैट-1 भौगोलिक सूचना प्रणाली (जीआईएस) के विभिन्न अनुप्रयोगों के लिए डिजिटल एलिवेशन मॉडल, लांबिक प्रतिबिंब उत्पाद, और मूल्य वर्धित उत्पादों को जनित करने के लिए अपेक्षित त्रिविम युग्म प्रदान करता है।

गगन: 10 अगस्त, 2010 को सैटेलाइट आधारित नेविगेशन सिस्टम 'गगन' (ळचै ।पकमक ळपव ।नहउमदजमक छंअपहंजपवद) के अंतिम प्रचालन चरण का शुभारंभ किया गया। नवंबर, 2010 में इसका सर्टिफिकेशन का कार्य किया गया एवं जून, 2013 के बाद यह पूर्णत: कार्यशील हो जाएगा। भारत ऐसा चौथा देश है, जिसने सैटेलाइट आधारित नेविगेशन सिस्टम लांच किया है (अमेरिका, यूरोप एवं जापान के बाद)। गगन को भारतीय विमानपत्तन प्राधिकरण और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन ने मिलकर विकसित किया है तथा इसके विकास पर 770 करोड़ रु. की लागत आई है। विमानन क्षेत्र में इसके प्रमुख लाभ हैं;

- दक्षता किफायत में सुधार।
- प्लेन सीधी लाईन में उड़ सकेंगे।
- ईंधन में बचत।
- सर्वप्रथम सभी धावन पथों के लिए वर्टिकल गाइडेंस की उपलब्धता।
- उच्च विशुद्धता वैश्विक प्रसारण।
- संरक्षण में सुधार।
- न्यूनतम सुरक्षित ऊँचाई चेतावनी (SSAW) की उपलब्धता।
- नियंत्रित उड़ान के भू-भाग में जाने पर जोखिम में कमी (CFIT)।
- एडीएस-बी अर्थात वायु में बेहतर तिगराती।
- विमान कर्मियों एवं यातायात कर्मियों के कार्य में कमी
- खोज एवं बचाव कार्य में सुगमता। गैर विमानन क्षेत्र में इसके प्रमुख लाभ निम्नलिखित हैं;
- जियो डायनोमिक्स।
- प्राकृतिक संसाधन व भूमि प्रबंधन।
- वाहन की खोज।
- खोज व बचाव।
- कृषि संबंधित हवाई छिड़काव।
- रेलवे द्वारा यात्री व मालप्रबंधन।

सुदूर संवेदी उपग्रह

अत: मानव विकास के प्रारंभ से ही ऐसी पद्धति की कमी खलती रहती है, जो विभिन्न संसाधनों की खोज में उपयोगी साबित हो सके। इसका परिणाम सुदूर संवेदी तकनीक (Remote Sensing Technique) है, जो शायद 20वीं सदी के चर्चित आविष्कारों में से एक माना जा सकता है। वस्तुत: सुदूर संवेदन तकनीक विभिन्न वैज्ञानिक उपागमों का एक ऐसा व्यवस्थित समूह है, जो पृथ्वी पर स्थित तमाम चीजों, यथा- महासागरों, नदियों, पर्वतों, वनों, पृथ्वी के अंदर छिपी विभिन्न वस्तुओं आदि का दूर से ही (बिना स्पर्श किये प्रकीर्णन विधि से विश्वसनीय एवं प्रमाणिक जानकारी उपलब्ध कराती है। सुदूर संवेदी प्रणाली को दो प्रकार से विभाजित किया जा सकता है- सौर ऊर्जा विकिरण, जिसके विभिन्न वस्तुओं से परावर्तित एवं उत्सर्जित भाग को सुदूर संवेदन ग्रहण कर लेता है। ऐसा सुदूर संवेदन, जिसमें संवेदन उपकरण अपनी ओर से कोई तत्त्व प्रेषित नहीं करता, बल्कि केवल

अपने आप आये तत्त्व (यथा-सौर ऊर्जा) को ग्रहण करता है, 'निष्क्रिय सुदूर संवेदन' कहलाता है। इसके विपरीत, कुछ उपकरण (खासकर सूक्ष्म तरंग उपकरण) विशिष्ट प्रकार के विकिरण को किसी निर्दिष्ट वस्तु की ओर प्रेषित करके और लौट कर आये उस विकिरण को पुनः ग्रहण करते हैं। इस विकिरण के साथ वस्तु की प्रतिक्रिया अथवा विकिरण निकलने और वापस आने में लगे समय के आधार पर उस वस्तु की पहचान, दूरी-निर्धारण आदि कर लिये जाते हैं। चूंकि इस प्रणाली में संवेदन उपकरण स्वयं ही विशिष्ट तरंगों को प्रेषित करता है तथा उसे वापस करता है, अतः इसे 'सक्रिय सुदूर संवेदन' कहते हैं।

उपयोगः सुदूर संवेदन वस्तुतः एक बहुपयोगी तकनीक है, जिसके द्वारा जमीन के उपयोग, फसल के क्षेत्रफल तथा इसके उत्पादन का आकलन, बाढ़ एवं सूखे की चेतावनी तथा इससे होने वाली क्षति का आकलन, मौसम के अनुसार कृषि की योजना बनाने, भूमिगत पानी की खोज, मत्स्य पालन विकास, खनिजों का पता लगाने, वन संसाधनों का सर्वेक्षण करने आदि में आशातीत सफलता मिली है। इसके अलावा, इसका उपयोग फसल रोगों की जानकारी प्राप्त करने, प्राकृतिक आपदाओं की भविष्यवाणी करने, बंजर भूमि प्रबंध, जल संसाधन प्रबंध, भूमिगत पानी की खोज, बर्फ के पिघलने की भविष्यवाणी, जल विभाजन तथा कमान क्षेत्र प्रबंधन में भी किया जाता है। आजकल इस तकनीक का उपयोग भूतल संरचना, मानचित्रों, अभियांत्रिकी प्रयोजनों, पर्यावरण तथा जलवायु संबंधी अध्ययन के साथ- साथ तेल तथा खनिज स्रोतों का पता लगाने के लिए भी किया जा रहा है।

क्रायोजेनिक इंजन

भूस्थिर उपग्रह प्रक्षेपण यान में प्रयुक्त होने वाली द्रव्य ईंधन चालित इंजन में ईंधन बहुत कम तापमान पर भरा जाता है, इसलिए ऐसे इंजन क्रायोजेनिक रॉकेट इंजन कहलाते हैं। इस तरह के रॉकेट इंजन में अत्यधिक ठंडी और द्रवीकृत गैसों को ईंधन और ऑक्सीकारक के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस इंजन में हाइड्रोजन और ईंधन क्रमशः ईंधन और ऑक्सीकारक का कार्य करते हैं। यह ईंजन -253 डिग्री सेल्यिस पर द्रव हाइड्रोजन और -183 डिग्री सेल्यिस पर द्रव ऑक्सीजन ग्रहण करता है। ठोस ईंधन की अपेक्षा यह कई गुना शक्तिशाली होते हैं और रॉकेट को बूस्ट देते हैं, विशेषकर लंबी दूरी और भारी रॉकेटों के लिए यह तकनीक आवश्यक होती है। क्रायोजेनिक इंजन के थ्रस्ट में तापमान बहुत ऊंचा होता है। अतः ऐसे में सर्वाधिक प्राथमिक कार्य अत्यंत विपरीत तापमानों पर इंजन व्यवस्था बनाए रखने की क्षमता अर्जित करना होता है। क्रायोजेनिक इंजनों में -253 डिग्री सेल्सियस से लेकर 2000 डिग्री सेल्सियस तक का उतार-चढ़ाव होता है, इसलिए थ्रस्ट चौंबरों, टर्बाइनों और ईंधन के सिलेंडरों के लिए कुछ विशेष प्रकार की मिश्र-धातु की आवश्यकता होती है। फिलहाल यह प्रौद्योगिकी अमेरिका, रूस, यूरोप, चीन और जापान के पास है।

भारत जीएसएलवी के प्रक्षेपण के लिए क्रायोजेनिक इंजन को स्वदेशी तकीनीक से विकसित करने का प्रयास कर रहा है। हालांकि इस दिशा में भारत को अप्रैल 2010 को असफलता हाथा लगी थी जब जीएसएवी एफ-02 का प्रक्षेपण असफल हो गया था। इसकी विफलता से भारत ने सिर्फ अंतरिक्ष प्रौद्यौगिकी में ही नहीं बल्कि मिसाइल प्रौद्यौगिकी में भी थोड़े समय के लिए पिछड़ गया। क्रायोजेनिक इंजन वाले जो राकेट भारी उपग्रहों को अंतरिक्ष में 36 हजार किमी ऊंचाई तक ले जाते हैं, यही तकनीक लंबी दूरी तक मार करने वाली मिसाइलों के निर्माण में भी इस्तेमाल होती है। इसलिए जीएसएलवी की सफलता या विफलता दोहरे महत्व की है। वैसे, जीएसएलवी का प्रक्षेपण पूर्व में भी हुआ है तथा इसकी दो फ्लाइटें सफल रही हैं और 2168 किग्रा के उपग्रह को इसने पृथ्वी की कक्षा में पहुंचाने में सफलता हासिल की है। लेकिन तब इन जीएसएलवी में स्वदेशी क्रायोजेनिक इंजन नहीं थे। चूंकि क्रायोजनिक इंजन की तकनीक दोहरे महत्व की है इसलिए भारत के मित्र देश भी इसे देने को तैयार नहीं होते हैं। तकरीबन 20 साल पहले रूस ने भारत को क्रायोजेनिक इंजन देने से इनकार कर दिया था उसके बाद से ही भारतीय वैज्ञानिक देश में इन इंजनों का विकास करने में जुटे हुए हैं। एक क्रायोजेनिक इंजन बनाने में करीब 40 करोड़ रुपये का खर्च आता है। जीएसएलवी की एक फ्लाइट 2006 में विफल हुई थी, लेकिन उसमें लांचिंग की गड़बड़ी थी। यदि क्रायोजेनिक इंजन बनाने में भारत सफल रहता है तो इसका एक मतलब यह भी निकलता है कि भारत इंटर कांटीनेंटल मिसाइल प्रौद्यौगिकी से भी लैस हो गया है। यानी एक द्वीप से दूसरे द्वीप तक मार करने वाली मिसाइलें बनाना संभव होगा। रक्षा जरूरतों के मद्देनजर भारत के लिए क्रायोजनिक इंजन का निर्माण जरूरी है। उपग्रह का प्रक्षेपण तो भारत किसी और देश में जाकर भी कर सकता है। लेकिन लंबी दूरी की मिसाइलें बनाने के लिए उसे क्रायोजेनिक इंजनों की दरकार होगी।

प्रायोगिक संचार उपग्रह: एप्पल

'एप्पल' अर्थात् एरियन पैसेंजर पे-लोड एक्सपेरिमेंट (Ariane Passenger Pay- Load Experiment : 'APPLE') को जून 1981 में एरियन प्रक्षेपक यान की मदद से प्रक्षेपित किया गया था। यह ऐसा प्रथम भारतीय उपग्रह है, जिसे यूरोपीय अंतरिक्ष एजेंसी के एरियन रॉकेट की मदद से छोड़ा गया था। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि इसमें संचार संबंधी प्रयोगों के लिए उपकरण लगाये गये थे। एरियन प्रक्षेपक यान द्वार इसे भू-स्थिर कक्षा (लगभग 36 हजार कि.मी. की ऊंचाई पर स्थित) में स्थापित किया गया था। इस कक्षा में स्थापित उपग्रह की यह विशेषता होती है कि वह 24 घंटे में पृथ्वी का एक चक्कर लेता है। साथ ही, इस उपग्रह के माध्यम से पृथ्वी के अधिकांश भागों से संचार संपर्क कायम किया जा सकता है। 'एप्पल' उपग्रह के प्रक्षेपण का मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय संचार व्यवस्था को आधुनिक स्वरूप प्रदान करना, रेडियो प्रसारण के क्षेत्र को विस्तृत बनाना तथा दूर-दराज अथवा यातायात की असुविधा वाले जगहों को संचार के माध्यम से राष्ट्र की मुख्यधारा में शामिल करना था। इसके अलावा, इसने भू-स्थिर कक्षा में उपग्रहों को स्थापित करने तथा संचार के लिए उपयुक्त सी-बैंड ट्रांसपोंडर का प्रयोग करने में भी सहयोग दिया। 'एप्पल' के प्रक्षेपण की सबसे बड़ी खूबी यह है कि इसने अपने तकनीकी अनुभवों के आधार पर भारतीय राष्ट्रीय उपग्रह प्रणाली (INSAT) के निर्माण एवं विकास में मदद पहुंचायी है।

विस्तरित रोहिणी उपग्रहशृंखला (स्रौस)

रोहिणी शृंखला के उपग्रहों की तकनीक में कुछ आवश्यक सुधार लाकर भारतीय अंतरिक्ष वैज्ञानिकों ने अपने कार्यक्रम में विस्तारित रोहिणी उपग्रह शृंखला (SROSS : Stretched Rohini Satellite Series) को कार्यान्वित किया। इस शृंखला के सभी उपग्रह संवर्द्धित उपग्रह प्रमोचक यान (A.S.L.V.), जिसका निर्माण भी पूर्णत: भारतीय तकनीक के आधार पर किया गया था, के सहारे किया गया।

स्रौस शृंखला के प्रथम उपग्रह स्रौस-1 को मई 1987 में ए.एस.एल.वी. की सहायता से श्रीहरिकोटा अंतरिक्ष केन्द्र (आन्ध्र प्रदेश) से प्रक्षेपित किया गया। लेकिन तकनीकी खराबी आ जाने के कारण यह असफल हो गया। इससे भारत द्वारा अधिक भार के उपग्रहों के विकास को काफी धक्का लगा। इसी शृंखला के दूसरे उपग्रह स्रौस-2 को जुलाई 1988 में दूसरी पीढ़ी के यान ए.एस.एल. वी.डी. 2 द्वारा प्रक्षेपित किया गया, जो एक बार पुन: असफल रहा। लगातार दो असफलताओं के बाद मई 1992 में स्रौस-3 को ए.एस.एल.वी.डी.3 से सफलतापूर्वक प्रक्षेपित किया गया और इसे 450 कि.मी. की ऊंचाई पर स्थापित किया गया। इस सफलता के बाद भारत ने अपना स्थान ब्राजील एवं इजरायल जैसे विकासशील देशों में नामित करवा लिया। इस उपग्रह में भारत में ही निर्मित हाइड्रॉक्सिल टर्मिनेटेड पॉली ब्यूटाडाइन (H.T.P.B.) का ईंधन के तौर पर प्रयोग किया गया। ए.एस.एल.वी. की इस सफलता ने ध्रुवीय उपग्रह प्रक्षेपण यान (पी.एस.एल.वी.) के विकास के लिए उम्मीद जगा दी। इस तरह के यान की यह विशेषता होती है कि इससे 1000 किलोग्राम भार वाले उपग्रहों को अंतरिक्ष में स्थापित किया जा सकता है।

अंतरिक्ष बाजार में भारत

सक्षम प्रौद्योगिकी तथा निरंतर अनुसंधानों के बढ़ते कदम से आज भारत अंतरिक्ष के क्षेत्र में अमेरिका, रूस, फ्रांस, जापान तथा चीन का प्रबल प्रतिद्वंद्वी बन गया है। उपग्रहों की स्थापना के साथ-साथ विश्व सूचना बाजार में इसरो (I.S.R.O.) के दूर संवेदी उपग्रहों से प्राप्त होने वाले आंकड़ों, चित्रों व जानकारियों की मांग बढ़ने लगी है। इस क्षेत्र में भारत ने अपनी उपलब्धियों से पर्याप्त विदेशी मुद्रा की कमाई करने के रास्ते भी खोल लिये हैं। इसके लिए भारत ने कई तरह के अंतर्राष्ट्रीय समझौते भी किये हैं, जिनमें से कुछ प्रमुख समझौते निम्नलिखित हैं:

1. इसरो-इन्टेलसैट समझौता: अमेरिका स्थित अंतर्राष्ट्रीय उपग्रह दूरसंचार संगठन (International Telecommunication Satellite: INTELLSAT) ने भारत के इनसैट-2ई उपग्रह के एक हिस्से को पट्टे पर लेने का समझौता किया है। इस समझौते को अंतर्राष्ट्रीय अंतरिक्ष बाजार में भारत की एक जबर्दस्त उबलब्धि मानी जा रही है। इसरो एवं इन्टेलसैट के मध्य हुए इस समझौते के तहत भारत को 10 वर्ष में करीब 10 करोड़ अमेरिकी डॉलर की आय हो सकेगी। इस संगठन ने भारत के इनसैट- 2 ई की क्षमताओं की सहायता से एशिया-प्रशांत क्षेत्र में दूरसंचार सुविधाओं के विस्तार की योजना

बनायी है। इस प्रकार, विदेशी ग्राहक ट्रांसपोंडर भाड़े पर उपलब्ध कराकर अपने 30 साल के इतिहास में इसरो ने एक नये अध्याय की शुरुआत की है।

2. 'इओसैट' से समझौता: अमेरिकी कंपनी अर्थ ऑब्जर्वेशन सैटेलाइट (EOSAT) ने भारतीय उपग्रहों के माध्यम से प्राप्त होने वाले आंकड़ों को सरकारी संगठनों तथा विश्वभर की विभिन्न कंपनियों को बेचने के बारे में भारतीय अंतरिक्ष विपेणन विभाग के साथ एक समझौता किया है, जो कि 1996 में हुआ था। इस समझौते की कालावधि 10 वर्ष के लिए है। इससे आशा की जा रही है कि भारत को करोड़ों डॉलर की आय हो सकेगी।

3. पी.एस.एल.वी. से आय: पी.एस.एल.वी. डी-2 (1994 में प्रक्षेपित), पी.एस.एल.वी.डी-3 (1996 में प्रक्षेपित) तथा पी.एस. एल.वी. सी-2 (1999 में प्रक्षेपित) की सफलता के बाद भारत अपनी इस प्रक्षेपण यान तकनीक तथा अनुसंधान अनुभवों का सदुपयोग कर व्यावसायिक लाभ कमा सकने की स्थिति में आ गया है। अंतरिक्ष में भारत के कारोबार की बढ़ती हुई इस प्रवृत्ति को देखते हुए ही सितंबर 1992 में अंतरिक्ष विभाग ने अपने अधीन अंतरिक्ष कॉरपोरेशन लिमिटेड (ए.सी.एल.) नामक एक सरकारी कंपनी का गठन करके उसको अंतरिक्ष अनुसंधान आदि से संबंधित कारोबार का संपूर्ण उत्तरदायित्व सौंप दिया।

भारत की योजना है कि वह एक से डेढ़ करोड़ डॉलर के पारिश्रमिक पर अपने पी.एस.एल.वी. द्वारा 400-450 किलोग्राम के संचार उपग्रहों को प्रक्षेपित करने की पेशकश कर फ्रांस की अंतरिक्ष एजेंसी एरियन स्पेस को कड़ी प्रतिस्पर्द्धा दे। इसके अलावा, इसरो की व्यावसायिक शाखा अर्थात्, अंतरिक्ष कॉरपोरेशन लिमिटेड अब अन्य विकासशील देशों को अंतरिक्ष अनुसंधान संबंधी प्रौद्योगिकी, स्पेयर पार्ट्स, अन्य उत्पाद तथा शोध परिणामों पर परामर्श उपलब्ध करा सकने की स्थिति में भी है। साथ ही, यह अन्य उपग्रह निर्माताओं के साथ मिलकर दूसरे देशों के लिए कम लागत वाले उपग्रहों को बनाने की योजना पर भी कार्य कर रहा है।

4. एन्ट्रिक्स-एरियन स्पेस समझौता (1998): यूरोपीय स्पेस एजेंसी की कंपनी 'एरियन स्पेस' (Ariane Space) ने इसरो (ISRO) की मार्केटिंग संस्था 'एन्ट्रिक्स कॉरपोरेशन' (Antrix Corporation) के साथ वर्ष 1998 में एक समझौता किया। इस समझौते के अनुसार, इसरो के पी.एस.एल.वी. तथा एरियन स्पेस के 'एरियन -5' का संयुक्त रूप से मार्केटिंग करने की व्यवस्था है, ताकि 100 किलोग्राम के सहायक पे-लोड (Auxiliary Pay-Load) को प्रक्षेपित किया जा सके। इस वर्ग के उपग्रह 'माइक्रो सैटेलाइट' कहलाते हैं। इस समझौते के तहत इसरो ने 26 मई, 1999 को पी.एस.एल.वी.-सी-2 के सफल प्रक्षेपण द्वारा प्रक्षेपण व्यापार में प्रवेश कर लिया है।

अंतरिक्ष कचरा

अंतरिक्ष कचरा को ऑरबिटल डिवरीस (Orbital Debris), स्पेस जंक (Space Junk) और स्पेस वेस्ट (Space Waste) के नाम से भी जाना जाता है। अंतरिक्ष कचरा, मनुष्य द्वारा सृजित वह उपकरण है जो अब कार्य नहीं कर रहे हैं, लेकिन ये पृथ्वी के कक्ष में मौजूद है और इसका चक्कर लगा रहे हैं। वर्ष 1958 में संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा वेनगर्ड-I (Venguard-I) का प्रक्षेपण मेडियम अर्थ ऑर्बिट (MEO) में किया गया था। यह अब तक अंतरिक्ष पड़ा हुआ सबसे पुराना कचरा है, इससे होने वाला संचार वर्ष 1964 में ही समाप्त हो गया था। परंतु यह अगले कई वर्षों तक ऐसे ही पृथ्वी के कक्ष में पड़ा रहेगा। 1970 और 80 के बीच में सोवियत संघ द्वारा आरओआरएसएटी (RORSAT) प्रोग्राम के तहत नेवल सर्विलेंस सेटेलाइट (Naval Surveillance Satellites) के एक श्रृंखला को प्रक्षेपित किया गया। इन उपग्रहों को बीईस-5 परमाणु संयंत्र से जोड़ा गया, क्योंकि इस सम्बन्धित रडार सिस्टम को संचालित करना था। यह उपग्रह अब अक्रियाशील हो चुके हैं। इस प्रकार ये उपग्रह भी अंतरिक्ष कचरा में बदल चुके हैं। इस प्रकार से अनेक देशों द्वारा प्रक्षेपित किये गये उपग्रह और रॉकेट अक्रियाशील होने के कारण कचरे में बदल चुके हैं। अंतरिक्ष में कचरे का दूसरा स्त्रोत उपग्रह रोधी अस्त्रों (Anti-Satellite Weapons) का परीक्षण है। 1960 से 1970 के बीच में संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत संघ द्वारा इस प्रकार के अनेक परीक्षण किये गये। इन परीक्षणों के कारण समय के साथ अंतरिक्ष में कचरा बढ़ते गये। संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपना उपग्रह रोधी योजना 1975 में बंद किया। संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपनी उपग्रह रोधी योजना (Anti Satellite Program) दोबारा 1985 में आरंभ की। वौट एएसएम-135 एएसएटी (Vought ASM-135 ASAT) के द्वारा 1 टन के उपग्रह, जो पृथ्वी के कक्ष में 525 किलोमीटर की ऊंचाई पर चक्कर लगा रहा था, इस उपग्रह को नष्ट कर दिया गया। इसके परिणामस्वरूप एक सेंटीमीटर के अनेक टुकड़े अंतरिक्ष में फैल गये।

जनवरी 2007 में चीन द्वारा उपग्रह रोधी परीक्षण किया था, इस परीक्षण का वैश्विक स्तर पर आलोचना भी हुआ तथा इस परीक्षण के कारण भारी मात्रा में कचरा अंतरिक्ष में फैला। अमेरिकी वैज्ञानिकों के एक दल ने हाल ही में अंतरिक्ष कचरा बढ़ने पर शोध किया है। इन वैज्ञानिकों के अनुसार अंतरिक्ष में कचरा खतरनाक स्तर पर पहुंच गया है। अमेरिकी नेशनल रिसर्च काउंसिल के एक रिपोर्ट में कहा गया है कि बेकार हुए बूस्टर और पुराने उपग्रह अंतरिक्ष में चक्कर लगा रहे हैं। इस रिपोर्ट में इसका भी उल्लेख है कि बेकार हुए बूस्टर और पुराने उपग्रहों से अंतरिक्ष यान और उपयोगी उपग्रह नष्ट हो सकते हैं, इससे पहले कि कोई भीषण दुर्घटना हो जाए, अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी नासा को इन्हें हटाने का कार्य करना चाहिए। अमेरिकी नेशनल रिसर्च काउंसिल ने अपनी रिपोर्ट में आह्वान किया है कि अंतरिक्ष में जमा हुए 'कचरे' को सीमित करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय नियम बनाए जाने चाहिए। इस रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि चुंबकीय नेट या विशालकाय छतरियों के संभावित प्रयोग पर और शोध करने की आवश्यकता है जिससे संकट का समाधान किया जा सके।

अंतरिक्ष में कचरे को सीमित करने के प्रयास को हाल के वर्षों में दो झटके लगे हैं। वर्ष 2007 में चीन ने उपग्रह निरोधक हथियार का टेस्ट किया था। इस परीक्षण के दौरान मौसम की जानकारी देने वाला एक उपग्रह नष्ट हुआ। उपग्रह एक सेंटीमीटर से कुछ बड़े अनेकों हिस्सों में बिखर गये थे। 2009 में एक सक्रिय उपग्रह और एक पुराने उपग्रह की टक्कर हो गई जिससे भारी मात्रा में कचरा अंतरिक्ष में फैल गया। नेशनल रिसर्च काउंसिल के शोध का नेतृत्व करने वाले डोनाल्ड कैसलर के अनुसार उपर्युक्त दोनों घटनाओं के कारण पृथ्वी के कक्ष में कचरे की मात्रा दो गुना हो चुकी है। इसके कारण अंतरिक्ष से कचरा हटाने के लिए पिछले 25 वर्षों से चल रहे कार्यक्रमों पर विपरीत प्रभाव पड़ा है। डोनाल्ड कैसलर के अनुसार, हमने (अंतरिक्ष में) पर्यावरण का नियंत्रण खो दिया है। अंतरिक्ष कचरा को साफ करने के लिए अनेक शोध चल रहे हैं, जिसमें ब्रिटेन के वैज्ञानिकों को कुछ सफलता मिली है। ब्रिटेन के शोधार्थियों ने एक ऐसा उपकरण खोजा है जिसकी मदद से उपग्रह की कक्षा से कचरे को निकालकर बाहर फेंक सकते हैं। इस उपकरण का प्रदर्शन अगले वर्ष किए जाने की योजना है। असल में यह एक छोटा सैटेलाइट क्यूब है जिसमें एक पतली 25 वर्ग मीटर की प्लास्टिक की चादर लगी है।

अंतरिक्ष यान के निचली कक्षा में मौजूद हवा के अवशेष कण चादर को आकर्षित करेंगे और मलबे को सामान्य की तुलना में अधिक तेज रफ्तार से कक्षा से बाहर फेंक देंगे। सारे स्पेस सेंटर की टीम का कहना है कि यह अवधारणा अधिक बड़े उपग्रहों और रॉकेट पर भी लागू की जा सकती है। ऐसा माना जाता है कि धरती से महज कुछ सौ किलोमीटर ऊंचाई पर ही अंतरिक्ष में 5,500 टन का कचरा मौजूद है। अभी पिछले साल ही अपनी कक्षा में चक्कर लगा रहे दो उपग्रह छोटे-छोटे कणों से टकरा गए। इस प्रकार से ये मलबे अंतरिक्ष यानों के लिए भी अतिरिक्त जोखिम पैदा कर सकते हैं। अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियां इस बात पर सहमत हैं कि पुराने उपग्रहों या इस्तेमाल में आ चुके रॉकेट को सेवा समाप्ति के 25 साल के भीतर अंतरिक्ष से हटाया जाना चाहिए। ब्रिटेन के वैज्ञानिकों द्वारा विकसित किया गया यह उपकरण एक नैनो सैटेलाइट है जिसका वजन 3 किलोग्राम है। इसकी क्षमता का परीक्षण करने के लिए इसे धरती से 700 किमी. की ऊंचाई पर भेजा जाएगा। जहां पर धरती के दोनों ध्रुवों का चक्कर लगाएगी।

गैलीलियो परियोजना

गैलीलिया, अमेरिका की तरह यूरोपीय संघ का जीपीएस प्रणाली है। 21 अक्टूबर, 2011 को यूरोप के इस प्रथम सैटेलाइट नेविगेशन सिस्टम गैलीलियो के दो उपग्रहों को फ्रेंच गुयाना अंतरिक्ष केन्द्र से रूसी सोयुज राकेट द्वारा अंतरिक्ष में प्रक्षेपित कर दिया गया था। यूरोपीय आयोग गैलीलियो परियोजना में अरबों डॉलर का निवेश कर रहा है, जिससे उसे भविष्य में लगभग 125 अरब डॉलर की आय होने की अपेक्षा है। गैलीलियो के उपग्रहों का प्रक्षेपण एक और मायने में महत्वपूर्ण है कि यह प्रथम अवसर है जब रूस के सोयुज राकेट को किसी पश्चिमी देश की धरती से छोड़ा जा रहा है। गैलीलियो परियोजना एक ग्लोबल नेविगेशन सैटेलाइट सिस्टम (Global Navigation Satellite System-GNSS) है, जो कि यूरोपीय संघ और यूरोपीय स्पेस एजेंसी द्वारा संयुक्त रूप से विकसित किया जा रहा है। इस परियोजना में उपयोगकर्ताओं को स्थल व वायु में समय व स्थान के शुद्ध आंकड़े उपलब्ध कराने वाले कम से कम 22 सैटेलाइटों का एक वैश्विक नेटवर्क प्राप्त होगा। लगभग 20 बिलियन यूरो वाली इस परियोजना का नाम प्रसिद्ध इटैलियन खगोल विज्ञानी गैलीलियो गैलीली के नाम पर रखा गया है। इस परियोजना का एक प्रमुख राजनीतिक उद्देश्य यह है कि एक उच्च स्तर की शुद्धता वाला सटीक पोजीशनिंग सिस्टम उपलब्ध कराया जाये, जिससे यूरोपियन राष्ट्र इस क्षेत्र में आत्म-निर्भर हो सकें तथा जो रूसी ग्लॉनेस (GLONASS) तथा संयुक्त राज्य अमेरिका की जीपीएस (ग्लोबल पोजीशनिंग

सिस्टम) से स्वतंत्र हो। प्रारम्भ में जीएनएसएस प्रणाली के वर्ष 2012 से परिचालित होने की सम्भावना व्यक्त की गई थी परन्तु अब यह उम्मीद की जा रही है कि इसकी प्रारम्भिक सेवायें वर्ष 2014 से आरम्भ हो जायेंगी तथा परियोजना के समग्र रूप से वर्ष 2019 तक पूर्ण होने की सम्भावना है। गैलीलियो परियोजना के प्रथम प्रदर्शक अंतरिक्ष यान का प्रक्षेपण 28 दिसम्बर, 2005 को तथा द्वितीय यान का प्रक्षेपण अप्रैल, 2008 को हुआ। इन दोनों यानों के प्रक्षेपण का उद्देश्य गैलीलियो परियोजना के परिचालन के लिए इनऑर्बिट तकनीकों का परीक्षण करना था। यूरोपीय संघ के लिए गैलीलियों परियोजना का महत्व, यूरोपीय संसद के उद्योग, शोध और ऊर्जा समिति के अध्यक्ष हरबर्ट रौएल के इस कथन से उजागर होता है कि "यदि भविष्य में यूरोप प्रतिस्पर्द्धी और स्वतंत्र बने रहना चाहता है तो यूरोपीय संघ को स्वयं के सैटेलाइट सिस्टम की आवश्यकता होगी। इसके अतिरिक्त आर्थिक मामलों में भी नई संभावनायें तलाशनी होंगी।"

वित्तीय कारणों से अनेक गतिरोधों के पश्चात गैलीलियो के प्रक्षेपण को लेकर वर्ष 2003 में फ्रांस व रूस के मध्य समझौता हुआ। गैलीलियो परियोजना में प्रमुख रूप से जर्मनी, फ्रांस, स्पेन व इटली शामिल हैं। इसके अतिरिक्त यूरोपीय संघ के अन्य देश भी इससे जुड़े हुए हैं।

गैलीलियो बनाम ग्लोबल पोजीशनिंग सिस्टम

यूरोपीय आयोग के अनुसार गैलीलियो वर्तमान में प्रचलित अमेरिकी नेविगेशन सिस्टम जीपीएस को कड़ी चुनौती पेश कर सकता हैं जीपीएस की तुलना में गैलीलियो में अधिक सटीक परमाणु घड़ियां लगाई गईं है, जेा किसी सैटेलाइट नेविगेशन स्टिम का सर्वाधिक महत्वपूर्ण भाग होता है। यह भी कहा जा रहा है कि गैलीलियो से स्थान व समय के विषय में अधिक सटीक आंकड़ें प्राप्त किये जा सकते हैं। गैलीलियो प्रारम्भिक तौर पर नि:शुल्क सेवा होगी। इसका उद्देश्य उच्च शुद्धता के साथ क्षैतिज व ऊर्ध्वाधर पोजीशनिंग आंकड़ों को उपलब्ध कराना है। यह जीपीएस व रूसी ग्लॉनेस (GLONASS) से अधिक उच्च अक्षांश पर बेहतर सेवायें प्रदान करने में सक्षम है। गैलीलियो वैश्विक खोज एवं बचाव कार्य (Global Search and Rescue Function) को भी सम्पादित करेगा। इसके लिये प्रत्येक सैटेलाइट में एक ट्रांसपोडर लगा होगा। अमेरीकी जीपीएस व रूसी ग्लानेस (GLONASS) के विपरीत गैलीलियों उपयोगकर्ता को प्रतिपुष्टि (फीडबैक) भी प्रदान करेगा। यूरोपीय संघ का यह भी मानना है कि जीपीएस का डाटा अब पुराना पड़ चुका है तथा कभी-कभी यह भ्रमित करने वाले परिणाम दिखाता है।

ग्लोनास: ग्लोनास रूस का एक रेडियो-आधारित उपग्रह नौवहन प्रणाली है। यह संयुक्त राज्य अमेरिका की जीपीएस, चीन की कम्पास नेविगेशन प्रणाली, और यूरोपीय संघ गैलीलियो प्रणाली और भारत की भारतीय क्षेत्रीय नेविगेशनल उपग्रह प्रणाली की एक वैकल्पिक और पूरक प्रणाली है। ग्लोनास के विकास का आरम्भ 1976 में पूर्व सोवियत संघ में हुआ था। 12 अक्टूबर 1982 से लेकर 1995 तक, कई रॉकेट प्रक्षेपणों के माध्यम से इस प्रणाली में पर्याप्त मात्र में उपग्रहों को शामिल किया गया। लेकिन दुर्भाग्यवश इसके बाद रूसी अर्थव्यवस्था चरमरा गयी और इस प्रणाली की स्थिति भी कमजोर हो गई। वर्ष 2000 के दशक के आरम्भ में इस प्रणाली की बहाली को एक शीर्ष वरीयता प्रदान की गई और वित्तपोषण में पर्याप्त वृद्धि की गई। फिलहाल ग्लोनास रूसी संघीय अंतरिक्ष एजेंसी का सबसे महंगा कार्यक्रम है जिसमें 2010 के इसके बजट का एक तिहाई हिस्सा खर्च हो गया था। वर्ष 2010 तक ग्लोनास ने रूसी प्रदेश के लगभग 100% हिस्सों को कवर करने की क्षमता हासिल कर लि थी। फरवरी 2011 तक उपग्रह समूह में 22 संचालनीय उपग्रह थे जो लगातार वैश्विक कवरेज प्रदान करने के लिए आवश्यक 24 उपग्रहों की दृष्टि से कम था और 2011 के दौरान इस कमी के पूरा होने की उम्मीद है।

एन्ट्रिक्स: यह भारत की व्यावसायिक इकाई है जो भारत को अंतरिक्ष क्षमताओं के विपणन के लिए केंद्रीय एजेंसी का काम करती है। अमरीका की स्पेस इमेजिंग के साथ यह आईआरएस आंकड़ों को विश्व भर में सुलभ कराने में अहम भूमिका अदा कराती है। एन्ट्रिक्स के जरिए भारतीय भू-केंद्रों से दूर से नापने, उपग्रहों की स्थिति पर निगरानी और निर्देश भेजने की सेवाएं उपलब्ध कराई जाती हैं।

❖❖❖

नैनोप्रौद्योगिकी

CHRONICLE
IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

नैनो टेक्नोलॉजी का संबंध अत्यंत सूक्ष्म स्तर पर वैज्ञानिक कार्यों से है। विज्ञान की इस शाखा का नाम लंबाई मापने की एक अत्यंत छोटी इकाई नैनोमीटर के नाम पर पड़ा है। नैनोमीटर मीटर के एक अरबवें हिस्सें को कहा जाता है, जो लगभग हाइड्रोजन के एक परमाणु के आकार का लगभग 10 गुणा तथा एक अणु के आकार के बराबर होता है। नैनो साइंस का व्यावहारिक उपयोग अत्यंत सूक्ष्म उपकरणों एवं यंत्रों के निर्माण के आलावा औषधि, बायोटेक्नॉलोजी, पदार्थ विज्ञान, कंप्यूटर विज्ञान, सूचना टेक्नोलॉजी इत्यादि में किया जाता है। नैनो टेक्नोलॉजी का नामकरण 'नैनो' नामक मापन की इकाई से हुआ है। 'नैनो' एक ग्रीक शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ होता है बौना। किसी एक इकाई जैसे-1 मीटर या 1 सेकेंड या 1 ग्राम का 1 अरबवां हिस्सा एक नैनो मीटर कहलाता है। अत: नैनो टेक्नोलॉजी एवं साइंस के अंतर्गत आण्विक स्तर या नैनो पैमाने पर कार्य किया जाता है।

नैनो मीटर = 1×10^{-9} मीटर

0.1 नैनोमीटर = हाइड्रोजन के परमाणु का व्यास

2.5 नैनोमीटर = D.N.A. अणु की चौड़ाई

800 नैनोमीटर = मनुष्य की लाल रुधिर कणिकाओं का व्यास

वैज्ञानिकों के अनुसार नैनोमीटर न्यूनतम इकाई नहीं है। इससे भी छोटी और भी इकाइयां है। फिर भी वैज्ञानिकों ने नैनो स्तर पर ही सूक्ष्म निर्माण की दिशा में क्यों प्रयास किया। इसका सरल जवाब यह है कि स्थूल स्तर से सूक्ष्म स्तर तक जाने में पदार्थों के गुण धर्म में यह परिवर्तन एक खास स्तर पर ही परिलक्षित होता है, जैसे किसी पदार्थ के 1 मीटर और 1 मिमी. के टुकड़ों के गुणों में कोई खास अंतर नहीं होगा, लेकिन यदि उसी पदार्थ के कुछ परमाणुओं को ले लिया जाये, तो उनके गुण सर्वथा भिन्न होंगे। वैज्ञानिकों के अनुसार पदार्थों के स्थूल गुणधर्म का परमाणविक गुण-धर्म में परिवर्तन नैनोमीटर स्तर पर ही होगा।

नैनो पदार्थों का व्यवहार सामान्य पदार्थों के व्यवहार से भिन्न होगा और इन व्यवहारों को नियंत्रित करने वाले नियम भी अलग होंगे। लेकिन स्थूल पदार्थों के व्यवहार का सत्रियमन परंपरागत भौतिकी के नियमों से होता है और परमाणविक स्तर पर पदार्थों के व्यवहार का सन्नियमन क्वांटम यांत्रिकी के नियमों द्वारा होता है। फिर नैनो पदार्थों के व्यवहार को ना तो क्वांटम भौतिकी के नियमों से समझा जा सकता है और ना ही परंपरागत भौतिकी के नियमों से। इनके व्यवहार को कुछ ऐसे नियमों से समझा जा सकता है, जिसमें क्वांटम यांत्रिकी तथा परंपरागत भौतिकी, दोनों के नियम शामिल हों। लेकिन ये नियम अभी स्पष्ट नहीं है। वैज्ञानिक इन नियमों को और अधिक उजागर करने का प्रयास पर रहे हैं।

नैनो टेक्नोलॉजी के नियम

नैनो विज्ञान के नियम परंपरागत विज्ञान की अपेक्षा अधिक सरल और आसान होने चाहिये। नैनो स्तर पर विद्युत चालकत्व क्वांटीकृत हो जाता है। लेकिन सूक्ष्म कणों से प्रवाहित होने वाले इलेक्ट्रॉन तरंगवत व्यवहार का प्रदर्शन करते हैं। किसी नैनो युक्ति की आवश्यकता इसी जगह पड़ती है। किसी नैनो युक्ति द्वारा नैनो स्तर पर इनपुट से आउटपुट तक इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह के तरंगवत गुणधर्म को बनाये रखा जाय तो उसके प्रभाव काफी चमत्कारिक होंगे। विद्युत चालकत्व की तरह नैनो युक्तियों या नैनो परिपथों में तापीय चालकत्व (Thermal Conductance) भी क्वांटीकृत हो सकता है। इस तरह सबसे पहले 90 के दशक में कैलीफोर्निया इंस्टीट्युट ऑफ टेक्नोलॉजी से जुड़े वैज्ञानिकों का ध्यान रखा गया है। इन वैज्ञानिकों में माइकल रूकज, थॉमस तिघे तथा कीघ श्वाब थे। इन्होंने पता लगाया कि नैनो युक्तियों से उष्मा का प्रवाह सतत न होकर सोपानी होता है। यही कारण है कि नैनो स्तर के परिपथों को बनाने में काफी कठिनाई आती है।

नैनो स्तर पर एक और बहुत विचित्र और अनोखी घटना देखने को मिलती है। इन विशेष चालन को जब किसी नैनो परिपथ के साथ बहुत ही हल्के तरीके से जोड़ दिया जाता है, तो उससे होकर एक-एक कर आने-जाने वाले इलेक्ट्रॉनों की गति को नियंत्रित

किया जा सकता है। इस विशेष चालन का नाम 'कूलाम आइलैंड' है तथा इस प्रक्रिया को जिसमें केवल एक ही इलेक्ट्रान एक बार में आजा सकता है 'कूलाम ब्लाकेड' कहा जाता है। इसका सबसे बड़ा उपयोग एकल ट्रांजिस्टर बनाने में किया जा सकता है। सूक्ष्म आकार के तेज गति के ट्रांजिस्टरों का निर्माण इलेक्ट्रॉनिकी के क्षेत्र में क्रांति ला देगा। वैज्ञानिकों के अनुमान के मुताबिक 2014 तक कंप्यूटर चिपों में लगने वाले ट्रांजिस्टरों का आकार घटकर मात्र 20 नैनोमीटर रह जायेगा।

नैनो टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में एक और सफलता सिरामिक पदार्थों के निर्माण में मिली है। नैनोकणों में पराबैंगनी तथा अवरक्त विकिरणों को अवरुद्ध करने का विशिष्ट गुण होता है। इनकी मदद से कारों के पारदर्शी शीशे आदि बनाये जा सकते हैं, जो इन विकिरणों के दुष्प्रभाव को बचा सकते हैं। नैनो कणों से कुछ विशेष किस्म के उत्प्रेरक बनाये जा सकते हैं, जो पर्यावरण संबंधी अनुप्रयोगों में बहुत उपयोगी होते हैं।

नैनो विज्ञान के क्षेत्र

नैनो विज्ञान का क्षेत्र अब काफी व्यापक हो गया है। यह भौतिकी, रसायन, जैविकी, औषधि, यांत्रिकी तथा अन्य वैज्ञानिक क्षेत्रों की गहराइयों को कम करने में सहायक होगा। औषधि तथा स्वागत के क्षेत्र में तो इसके अनेक उपयोग हैं। कैंसर, एड्स, मधुमेह और कई अन्य बीमारियों का निदान बायोमेडिसीन से किया जाता है, जिसका नैनो टेक्नोलॉजी के आधार पर ही विकास संभव हो सका है। आजकल इस टेक्नोलॉजी के आधार पर ही विकास संभव हो सका है। आजकल इस टेक्नोलॉजी का प्रयोग मनुष्य के शरीर के अंदर किसी विशेष अंग तक औषधियों को पहुंचाने में भी किया जाता है। इस टेक्नोलॉजी को 'सेंसर' कहा जाता है। मानव अंग प्रतिरोपण में काम आने वाली परिष्कृत सामग्री के निर्माण में भी इसी टेक्नोलॉजी का प्रयोग किया जाता है। भविष्य में इसका उपयोग बीमारियों का प्रारंभिक अवस्था में पता लगाने तथा उनके उपचार में भी किया जायेगा। इसके अलावा इसका उपयोग ऐसे कृत्रिम अंगों के निर्माण में किया जा सकता है। यह विज्ञान मनुष्य समाज, उत्पादन, कृषि, स्वास्थ्य, रक्षा, उर्जा तथा जीवन के हर संभावित पक्षों पर दूरगामी प्रभाव डालने में सक्षम है। इसको 21वीं शताब्दी का मूल विज्ञान कहा जा सकता है। नैनो विज्ञान की लोकप्रियता को देखते हुए इसके विकास के लिए कई शाखाओं का जन्म हुआ। इनके विकास को सुचारु रूप देने की दृष्टि से नये विषयों का निर्माण हो रहा है। इनमें से कुछ प्रमुख विषय इस प्रकार हैं-

नैनो प्रौद्योगिकी, नैनो कण, नैनो कंप्यूटिंग, नैनो ट्युब, नैनो जीव विज्ञान, नैनो कंपोजिट, नैनो पदार्थ, नैनो इलेक्ट्रॉनिक्स, नैनो घटक, नैनो यंत्र, नैनो प्रणालियों, नैनो उपग्रह, नैनो रोबोट आदि।

नैनो टेक्नोलॉजी का प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में इस प्रकार किया जाता है-

नैनो मैटीरियल: नैनो टेक्नोलॉजी के प्रयोग से हम ऐसे पदार्थों का निर्माण करने में सक्षम होंगे, जो हल्के, मजबूत और लंबी आयु वाले होंगे और जो वातावरण में किसी भी प्रकार का प्रदूषण नहीं फैलायेंगे। इस टेक्नोलॉजी की सहायता से 'स्मार्ट मैटीरियल' का निर्माण भी संभव है। ये 'स्मार्ट मैटीरियल्स मनुष्य की इच्छा के अनुसार अपना स्वरूप बदला करेंगे। उदाहरण के तौर पर नाखून पर लगाने वाली रंगहीन नेलपॉलिश का रंग आपके आदेश के अनुसार बदल जायेगा या आप अपनी पसंद का कपड़ा किसी भी रंग में प्राप्त कर सकेंगे। इस स्मार्ट मैटीरियल्स का सर्वाधिक उपयोग सौंदर्य प्रसाधन की वस्तुओं में किया जायेगा। विभिन्न पदार्थों की सतह पर इन 'स्मार्ट मैटीरियल्स' की एक पतली परत चढ़ा दी जायेगी, जिसमें एक नैनो कंप्यूटर भी निहित होगा, जो आपके आदेशानुसार कार्य करेगा और इन पदार्थों का स्वरूप आपकी इच्छा के अनुसार बदलता रहेगा।

नैनो जीव विज्ञान: आज बहुत सारी औद्योगिक प्रक्रियाओं के लिए बायोटेक्नोलॉजी का सहारा लिया जा रहा है, जिसके फलस्वरूप हमें कम लागत पर प्रदूषण रहित उत्पाद प्राप्त हो सकते हैं। नैनो मशीनों के द्वारा बायोटेक्नोलॉजी को काफी सहायता मिलेगी। इनकी सहायता से कोशिकाओं में से विशेष जीव, प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट आदि प्राप्त किये जा सकते हैं। नैनो मशीनों द्वारा चिकित्सा और सौंदर्य प्रसाधन के लिए जीवित जंतुओं के प्रयोग से बचा जा सकता है। ये नैनो मशीनें मानव शरीर पर इन रसायनों के प्रभाव की संपूर्ण जानकारी कुछ ही क्षणों में उपलब्ध करा देंगी। इसी प्रकार कोट और चमड़े की विभिन्न वस्तुओं के निर्माण के लिए नैनो मशीनों का प्रयोग हो सकता है, जिससे असंख्य जंतुओं का संहार रुक सकता है।

जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में नैनो तकनीक: नैनो प्रौद्योगिकी के आधार पर विकसित यंत्रों की सहायता से जैविक एवं अजैविक पदार्थों के परमाणुओं की संरचना को आसानी से समझा जा सकता है जिसका प्रयोग बीजों, कीटनाशकों, बायोडिग्रेडबल रसायनों, उर्वरकों तथा अन्य कृषि संबंधी सामग्रियों को आवश्कतानुसार रूप देने में किया जा सकता है। इस क्षेत्र से संबंधित विकास से अनाजों के उत्पाद का विकेंद्रीकरण होगा। अनाज उत्पादन के विकेंद्रीकरण से भी देश की कई समस्याओं का निदान होगा।

पर्यावरण एवं उर्जा के क्षेत्र में नैनो प्रौद्योगिकी: उर्जा के क्षेत्र में नैनो प्रोद्योगिकी का योगदान ऊर्जा उत्पादन और भंडारन दोनों क्षेत्र में है। नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों में नैनो फिल्टर की सहायता से प्रयुक्त होने वाले ईंधन का संसाधन, शुद्धिकरण एवं अपशिष्ट प्रबंधन अपेक्षाकृत अधिक सुरक्षा एवं उत्कृष्टता के साथ किया जा सकता है। नैनो विज्ञान की सहायता से तेल से बहुत ही सूक्ष्म कणों को भी अलग किया जा सकता है। वाहनों से होने वाले प्रदूषण में भी कमी लाने के उद्देश्य से नैनो आकार के क्रिस्टेलाइट पर आधारित उत्प्रेरक का विकास किया गया है। इसी प्रकार ऐसे हल्के और मजबूत नैनो कम्पोजिट पदार्थों का निर्माण किया गया है, जिससे वाहनों के वजन में कमी तथा पेट्रोल एवं डीजल में काफी बचत संभव है। नैनो सिरेमिक एवं पैलीमर से बने पदार्थों से ऐसे टायरों का निर्माण किया जा सकता है, जो कम घिसेंगे। इससे टायर ज्यादा चलेंगे और प्रदूषण में भी कमी आयेगी।

माइक्रो इलेक्ट्रॉनिक्स के क्षेत्र में नैनो प्रौद्योगिकी: माइक्रोइलेक्ट्रॉनिक्स सर्किटों के डिजाइन, सूक्ष्मीकरण एवं उत्पादन विधि में अभूतपूर्व प्रगति हुई है। इसका मुख्य श्रेय सॉलिड स्टेट ट्रांजिस्टर की खोज को जाता है। माइक्रो इलेक्ट्रॉनिक्स ने सूक्ष्मीकरण की इस प्रक्रिया को न केवल आगे बढ़ाया, बल्कि दूरसंचार, कम्प्यूटर एवं इंटरनेट में क्रांति पैदा कर दी। नैनो तकनीक से माइक्रो प्रोसेसर एवं अन्य सेमीकंडक्टर युक्तियों का आकार दस लाख गुणा छोटे होने की संभावना है और इसमें ऊर्जा की होने वाली खपत में काफी कमी आयेगी। नैनो तकनीक का व्यावसायिक उपयोग सूचनाओं के भंडारण में सफलतापूर्वक किया गया है। वर्तमान में भंडारण सेल का आकार 800500 नैनोमीटर होता है, सूचना संबंधी आंकड़ों को पढ़ने-लिखने के लिए प्रयुक्त हेड भंडारण माध्यम की सतह के केवल 20 नैनोमीटर की दूरी पर रहता है। नैनो तकनीक के आधार पर विकसित की गयी इस नयी खोज से सूचना संग्रहण में कई हजार गुणा वृद्धि होगी और कई टेरा बिट (10^{-9}) तक पहुंच जायेगी।

नैनो ट्यूब: नैनो ट्यूब कार्बन अणुओं से बनी लंबी खोखली नलिकाएं होती हैं, जिनका व्यास लगभग 1 नैनोमीटर होता है। इन ट्यूबों की मोटाई कार्बन रेशों की तुलना में करीब 10,000 गुणा कम होती है। लेकिन इनमें कार्बन रेशों की अपेक्षा अधिक तनन सामर्थ्य पायी जाती है। नैनो ट्यूबों की प्रत्यास्थता भी बहुत अधिक होती है। इसलिए इनको मोड़कर पुन: आसानी से सीधा भी किया जा सकता है। कार्बन नैनो ट्यूबों के इन यांत्रिक गुणों का प्रयोग सूक्ष्म रोबोटों पर भूकंपरोधी भवनों आदि के निर्माण में किया जा सकता है। इसके अलावा नैनो ट्यूबों में पाये जाने वाला इलेक्ट्रॉनिक गुणधर्म भी विभिन्न प्रकार के इलेक्ट्रॉनिक तथा नैनो युक्तियों के विकास में सहायक है।

नैनो कंपोजिट: कंपोजिट प्लास्टिक बनाने के लिए सिलिका कांच जैसे आकर्बनिक पदार्थों को पॉलिमर्स जैसे कार्बनिक पदार्थों के साथ मिलाया जाता है। लेकिन इस प्रक्रिया से बने प्लास्टिकों में 'बोंड एनर्जी' बहुत कम होती है और परिणामत: अकार्बनिक पदार्थों के कण कार्बनिक पदार्थों से अलग हो जाते हैं। नैनो कणों का सतही क्षेत्रफल अधिक होने के कारण अकार्बनिक पदार्थों की कार्बनिक परमाणुओं के साथ आबंधन शक्ति (Bond energy) बहुत अधिक हो जाती है। इसके अलावा नैनो कणों के स्वरूप गोल, चपटे या छड़नुमा होने की वजह से नैनो कंपोजिटों के गुणधर्म भी बदल जाते हैं।

नैनो कंपोजिटों में ठोस भाग 2.3 प्रतिशत होता है, जबकि साधारण कंपोजिट में यह 30-35 प्रतिशत होता है। भविष्य में नैनो स्तर पर विभिन्न प्रकार के अकार्बनिक पदार्थों को अनेक प्रकार के पॉलीमर के साथ मिलाकर नये-नये गुणधर्म वाले नैनो कंपोजिटों का निर्माण किया जा सकेगा। ज्ञातव्य है कि नैनो कंपोजिट का उत्पादन सबसे पहली बार जापान में हुआ। 1999 से इसका प्रयोग व्यापक हो गयी है।

स्वास्थ के क्षेत्र में नैनो तकनीक : आज चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में कैंसर जैसी बीमारियों का इलाज संभव हो गया है। कीमो थेरैपी के अलावा कई तरह की गोलियां विकसित की गयी है, जो कैंसर को पूरी तरह समाप्त करने में सक्षम है। मगर इन दवाओं का साइड इफेक्ट बहुत खतरनाक होता है। मगर नैनो टेक्नोलॉजी के द्वारा इन दवाओं का साइड इफेक्ट कम किया जा सकेगा। नैनो तकनीक से बनाये गये घटकों एवं यंत्रों का स्वास्थ्य संबंधी क्षेत्र में विशेष रूप से सहायक होगा। इसके द्वारा सर्वथा उपयुक्त औषधियों का निर्माण करना संभव हो जायेगा। नैनो टेक्नोलॉजी की सहायता से जैव सुसंगत एवं उच्च क्षमता के पदार्थों का निर्माण किया जा सकता है। औषधि विज्ञान के क्षेत्र में नैनो कणों का विशेष योगदान है। कुछ दवाओं की विलेयता कम होने के कारण उनके कणों का आकार इतना बड़ा होता है कि वे टयूपर में प्रवेश नहीं कर पाती हैं। इसलिए औषधियों का पूरा असर नहीं होता है। इन औषधियों को यदि नैनो कणों में बदल दिया जाये तो उनका प्रभाव कई गुणा बढ़ जायेगा।

नैनो टेक्नोलॉजी परमाणविक इंजीनीयरी या परमाणविक उत्पादन प्रणाली का ही एक रूप है। इसके द्वारा ऐसे पदार्थों और धातुओं को बनाना संभव हो जायेगा जो स्टील से पचास गुणा ज्यादा मजबूत हों। इन धातुओं से शल्य चिकित्सा के ऐसे उपकरण बनाये

जा सकते हैं, जो एक अकेली कोशिका तक की शल्य क्रिया करने में सक्षम होंगे। इसके अलावा ऐसी नैनो मशीनें भी बनाना संभव हो जायेगा, जो रक्त परिसंचरण प्रणाली के माध्यम से बीमार भाग कैंसर, ट्यूमर तक पहुंचेंगी और बीमार कोशिकाओं को नष्ट कर देंगी।

नैनो तकनीक का इस्तेमाल रोगों का पता लगाने के लिए भी किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने D.N.A. पहचान प्रणाली विकसित की है। इसके द्वारा अनुवांशिकी और संक्रामक रोगों का तत्काल पता लगाया जा सकता है। नैनो तकनीक पर आधारित D.N.A. टेस्ट P.C.R. पद्धति से दस गुणा ज्यादा तेज और एक लाख गुणा ज्यादा परिशुद्ध आता है। इस नयी तकनीक का व्यावसायिक अधिकार इलिनॉय स्थित कंपनी नैनोस्फीयर को दिया गया है। वैज्ञानिक घुटनों में होने वाली बीमारी 'आस्टियो-आर्थराइटिस' की भी परमाणु स्तर पर जांच कर रहे हैं और इसके संभावित इलाज की खोज कर रहे हैं। वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि इस बीमारी के लिए 'एग्रिकैन' नामक एक प्रोटीन में होने वाली विकृति जिम्मेदार है। एग्रिकैन की संरचना का घुटने की बीमारी का सीधा संबंध है। इस खोज से इस बीमारी के लिए उपयुक्त दवा बन सकती है।

D.N.A. स्याही के द्वारा लिखने का नैनो पैटर्न : अभी तक प्रयुक्त होने वाली एक सामान्य चिप में D.N.A. के 2,00,000 अलग-अलग धब्बे होते हैं और प्रत्येक धब्बे का व्यास 20-40 माइक्रोमीटर होता है। स्टेट ऑफ द आर्ट डिप पेन नैनो लिथोग्राफी का प्रयोग करके किसी पारंपरिक जीन चिप के एक धब्बे जितनी जगह में 100,000 D.N.A. धब्बे को तैयार किया जा सकता है। इसका लाभ यह होगा कि भविष्य में एक सूई की नोक से भी कम जगह में 1,00,000 अलग-अलग विकर्णिक जांच वाली जीन चिप तैयार करने में मदद मिलेगी। इससे कुछ ही सेकेंडों में जीन चिप तैयार किया जाना संभव हो जायेगा।

अंतरिक्ष विज्ञान में प्रयोग: इस टेक्नोलॉजी की सहायता से अंतरिक्ष यात्राओं को और अधिक सस्ता और सुलभ बनाया जा सकता है। सौर मंडल के अन्य ग्रहों पर नैनो टेक्नोलॉजी की सहायता से मनुष्य की रहने लायक वातावरण बनाया जा सकता है। इससे आने वाले समय में यदि किसी कारणवश पृथ्वी नष्ट हो गयी तब भी मनुष्य का अस्तित्व बचा रह सकेगा।

नैनो गणना

गणना करने वाली तकनीक अब नैनो विज्ञान पर ही निर्भर करती है।

आण्विक गणना: शोध कर्ताओं ने 'रोटैक्जेन' नामक एक ऐसे इलेक्ट्रॉनिक स्विच का निर्माण किया है जो कि जैविकीय पदार्थों के कई मिलियन अणुओं की एक परत के रूप में होता है। इसका उपयोग आणविक गणनाओं में किया जायेगा।

प्रकाशकीय गणना: प्रकाशकीय गणना कंप्यूटरों में इलेक्ट्रोनों को फोटानों के द्वारा प्रतिस्थापित किया जाता है। इसलिए अत्यंत ही नजदीक जुड़े हुए नैनो संरचनाओं को बनाना संभव है। इससे ट्रांजिस्टर जैसी छोटी तथा सिलिकॉन ट्रांजिस्टरों से 1.000 गुणा अधिक तीव्र स्विचों को बनाने में मदद मिलेगी।

नैनो तंतुकरण: कार्बन नैनो ट्यूब सामान्य ग्रेफाइट की अपेक्षा आकर्षण एवं सुविधा जनक होते हैं क्योंकि इनकी क्षमता, स्थिरता, लोचशीलता, अधिक पृष्ठीय क्षेत्र अधिक होने के साथ-साथ बहुत कम होता है। कार्बन नैनो ट्यूबों का प्रयोग ट्रांजिस्टरों तथा सेलूलर फोनों इत्यादि में किया जायेगा।

बायो कंप्यूटिंग: बायोकंप्यूटिंग का प्रादुर्भाव सूचना प्रौद्योगिकी तथा बायो टेक्नोलाजी के मेल से प्राकृतिक जीवन विज्ञान के नैसर्गिक सिद्धांतों के निर्माण के लिए हुआ। इसके लिए वैज्ञानिकों का यह प्रयास है कि केंद्रक और माइट्रोकॉड्रिया में संचित सूचनाओं को पूर्ण जेनेटिक सूचना के रूप में एकत्रित कर लिया जाय। इससे केंद्रक में कोड भाषा के रूप में संचित जीवन रहस्यों को पढ़ा जा सकेगा।

क्वांटम गणना: क्वांटम गणना का प्रयोग सूचना प्रसंस्करण के लिए नये तकनीकों तथा तंत्रों के विकास में क्वांटम सिद्धांत के विशिष्ट पक्ष के प्रयोग करने में किया जाता है। क्वांटम मेकैनिकल ऑपरेशंस के विलक्षण गुणों का प्रयोग करके द्रव्य या प्रकाश की क्वांटम अवस्था में आंकड़ों को कोड भाषा में भरा जा सकता है,जिनको कि अप्रत्याशित वेग और क्षमता के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

नैनो टेक्नोलॉजी के अन्य प्रयोग

1. जियोलाइट नामक खनिजों में एक नैनोमीटर से भी कम आकार के छिद्र मौजूद होते हैं। इनका इस्तेमाल विशाल हाइड्रोकार्बन परमाणुओं की भंजन प्रक्रिया, जिससे पेट्रोल प्राप्त होता है, में प्रभावी उत्प्रेरकों के रूप में किया जा सकता है।

2. खास किस्म के नैनो रेशों के इस्तेमाल से ऐसी पतलूनें बनायी गयी है जिन पर दाग-धब्बों का कोई असर नहीं होता है। ऐसे वस्त्रों को तैयार करना भी संभव हुआ है, जिन पर सलवटें नहीं पड़ती। नैनो प्रौद्योगिकी के प्रयोग से मजबूत एवं उष्मा अवरोधक वस्त्रों के निर्माण में भी कुछ हद तक सफलता मिली है।
3. नैनो टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल से ऐसी संसाधन प्रक्रियाओं का भी विकास किया जा सकेगा, जिनमें अवांछित उप-उत्पाद कम से कम बनेंगे तथा जो पर्यावरण सम्मत भी होंगे। उद्योगों में ऐसी संसाधन प्रक्रियाओं का विशेष महत्व होगा।
4. नैनो टेक्नोलॉजी के द्वारा टेनिस की ऐसी गेंदों को तैयार किया जा सकता है, जो काफी इस्तेमाल के बाद भी टप्पा खाने के अपने गुण-धर्म को बरकरार रखती है।
5. ऐसी विशेष फिल्टरों का निर्माण भी किया जा सकना संभव हुआ है, जिनके छिद्रों का आकार 10 से 100 नैनो मीटर तक होता है। पेट्रोल तथा डीजल में मौजूद अति सूक्ष्म कणों को हटाने में इन नैनो फिल्टरों का इस्तेमाल किया जा सकता है।
6. नैनो टेक्नोलॉजी के प्रयोग से सूक्ष्म मशीनें, सूक्ष्म युक्तियां आदि का निर्माण तो किया जा सकता है। रोजमर्रा के उपयोग की कई वस्तुओं जैसे कि पहनने वाले वस्त्र, टेनिस की गेंदें, कृषि उपयोगी उत्पादों आदि के विकास में भी इस टेक्नोलॉजी की अहम भूमिका हो सकती है।
7. नैनो टेक्नोलॉजी के इस्तेमाल से बहुत ही हल्के एवं मजबूत नैनो सम्मिश्र पदार्थों का निर्माण किया जा सकेगा। ऐसे पदार्थों के इस्तेमाल से वाहनों के आकर को छोटा तथा उनके वजन को काफी कम किया जा सकेगा, जिससे कि वाहनों की ईंधन की खपत भी कम हो जायेगी। खासकर अंतरिक्षयानों के निर्माण में ऐसे सम्मिश्र पदार्थों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी। अंतरिक्ष यानों के आकार और वजन में न केवल अभूतपूर्व कमी आयेगी, बल्कि उनकी ऊर्जा की आवश्यकता भी काफी हद तक कम हो सकेगी।
8. अर्द्ध चालक पदार्थों से बने नैनो कणों को पॉलीमरों के अंदर समविष्ट करके ऐसे प्रकाश उत्सर्जक डायोडों का निर्माण किया जा सकना संभव होगा, जिनसे उत्सर्जित होने वाले प्रकाश का तरंग दैर्ध्य नैनो कणों के आकार पर निर्भर होगा।
9. इस तरह पेयजल से लेकर हवा तक हमारे जीवन के लगभग सभी पहलुओं को प्रभावित करने की क्षमता नैनो टेकनोलॉजी में है। जरूरत है तो बस इस टेक्नोलॉजी को सही तरह से समझकर उसे उपयोग में लाने की। आशा है नैनो टेकनोलॉजी हमारे जीवन में सुधार लाने के साथ-साथ उनकी गुणवता में भी गुणात्मक परिवर्तन लाने में संमर्थ होगी।
10. नैनो सिरामिक तथा नैनो पॉलिमरों से बने पदार्थों, वाहनों के लिए ऐसे टायरों का निर्माण किया जा सकना संभव होगा, जो इस्तेमाल से बहुत कम घिसेंगे। इस तरह न केवल टायरों की आयु को बढ़ाया जा सकेगा, बल्कि वातावरण में टायरों के सूक्ष्म कणों के उड़-उड़ कर बिखरने से उत्पन्न दुष्प्रभाव से भी काफी हद तक बचा जा सकेगा।
11. नाभिकीय ऊर्जा संयंत्रों में भी ईंधन के संसाधन तथा नाभिकीय अपशिष्ट प्रबंधन में नैनो फिल्टरों की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है। यही नहीं बल्कि पेयजल एवं हवा से अवांछित कणों एवं प्रदूषकों को दूर करने में नैनो पदार्थों से बने फिल्टर काफी उपयोगी हो सकते हैं।

❖❖❖

© CHRONICLE IAS ACADEMY

रक्षा प्रौद्योगिकी

CHRONICLE IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

भारत के प्रमुख रक्षा उप म

डीआरडीओ

रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन (डीआरडीओ) रक्षा मंत्रलय के रक्षा अनुसंधान और विकास विभाग के अधीन काम करता है। डीआरडीओ रक्षा प्रणालियों के डिजाइन एवं विकास के लिए समर्पित है और तीनों रक्षा सेवाओं की अभिव्यक्त गुणात्मक आवश्यकताओं के अनुसार विश्व स्तर के हथियार प्रणालियों और उपकरणों के उत्पादन में आत्मनिर्भरता बढ़ाने की दिशा में काम कर रहा है। डीआरडीओ सैन्य प्रौद्योगिकी के विभिन्न क्षेत्रों में काम कर रहा है, जिसमें वैमानिकी, शस्त्रों, संग्राम वाहनों, इलेक्ट्रॉनिक्स, इंस्ट्रूमेंटेशन इत्यादि प्रमुख हैं। वर्ष 1958 में डीआडीओ का उस समय की पहले से ही कार्यरत भारतीय सेना की प्रौद्योगिकी विकास अधि ष्ठान (टीडीई) तथा रक्षा विज्ञान संस्थान (डीएसओ) के साथ प्रौद्योगिकी विकास और उत्पादन का निदेशालय (डीटीडीपी) के एकीकरण से गठन किया गया था। उस समय डीआरडीओ 10 प्रतिष्ठानों अथवा प्रयोगशालाओं वाला छोटा संगठन था। वर्षों से, इसने विविध विषय शिक्षणों, अनेक प्रयोगशालाओं, उपलब्धियों तथा महत्ता के लिहाज से बहु-दिशात्मक विकास किया है। आज, डीआरडीओ 50 से अधिक प्रयोगशालाओं का समूह है जो भिन्न प्रकार के शिक्षणों जैसे वैमानिकी, आयुध, इलेक्ट्रॉनिक्स, युद्धक वाहन, इंजीनियरिंग प्रणाली, उपकरण, मिसाइल, उन्नत कंप्यूटिंग और सिमुलेशन, विशेष सामग्री, नौसेना प्रणालियों, जीवन विज्ञान, प्रशिक्षण, सूचना प्रणालियों और कृषि को सुरक्षा देने वाली रक्षा प्रौद्योगिकियों का विकास करने में गहराई से लगे हैं। वर्तमान में, संगठन 5000 से अधिक वैज्ञानिकों और 25,000 अन्य वैज्ञानिक, तकनीकी और समर्थन के कर्मियों द्वारा समर्थित है। मिसाइलों, हथियारों, हल्के लड़ाकू विमानों, रडार, इलेक्ट्रॉनिक युद्ध प्रणालियों इत्यादि के विकास के लिए अनेक प्रमुख परियोजनाएं उपयोग के लिए उपलब्ध हैं तथा ऐसी अनेक प्रौद्योगिकियों में पहले ही महत्वपूर्ण उपलब्धियां प्राप्त की गई हैं। इसके प्रमुख लक्ष्य निम्नलिखित हैं:

- हमारी सुरक्षा सेवाओं के लिए स्टेट-ऑफ-द-आर्ट सेंसर, शस्त्र प्रणाली, प्लेटफॉर्म और संबद्ध उपकरण के उत्पादन का डिजाइन, विकास और नेतृत्व करना।
- अधिकतम प्रभाव का मुकाबला करने के लिए सेवाओं को प्रोद्यौगिकीय समाधान प्रदान करना और अच्छी तरह से सैनिकों को बढ़ावा देना।
- बुनियादी सुविधाओं का विकास तथा योग्य जनशक्ति एवं स्वदेशी प्रोद्यौगिकी आधार को मजबूत बनाना।

हिन्दुस्तान एयरोनाटिक्स लिमिटेड (एचएएल)

'हिन्दुस्तान एयरोनाटिक्स लिमिटेड' की स्थापना 1964 में हुई थी। इसका मुख्यालय बेंगुलुरु में है और छह राज्यों में इसके 16 डिवीजन है। रक्षा उत्पादन और आपूर्ति विभाग के अंतर्गत यह सबसे बड़ा सार्वजनिक क्षेत्र का उपक्रम है। इस उपक्रम के मुख्य कार्य हैं- विभिन्न प्रकार के लड़ाकू विमानों, हेलीकाप्टरों और उनके इंजनों में लगने वाले उपकरणों एवं कलपुर्जों का डिजाइन तैयार करना और उनका निर्माण करना। इसका लक्ष्य स्वदेशी हल्के लड़ाकू विमान के निर्यात, सैनिक तथा नागरिक एयरक्राफ्ट्स के रख-रखाव, हवाई जहाज तथा अपनी प्रौद्योगिकी सेवाओं के जरिये अपने उपभोक्ताओं के दायरे में विस्तार करना है।

इस उपक्रम ने हेलीकाप्टर पायलटों को प्रशिक्षण देने के लिए अपने विमानशाला में देश की प्रथम एकेडमी की स्थापना सन् 2000 में की। वर्तमान में उपक्रम ने अपने कार्यों का विस्तार करते हुए उपग्रह प्रक्षेपण के लिए ढांचे और औद्योगिक एवं मैरीन गैस इंजन बनाना आरंभ कर दिया है।

भारत इलेक्ट्रानिक्स लिमिटेड (बीईएल)

'भारत इलेक्ट्रानिक्स लि.' की स्थापना सन् 1954 में हुई थी। इसका मुख्यालय बेंगलुरु में है। इस उपक्रम के अंतर्गत नौ उत्पादन यूनिट तथा 31 विनिर्माण डिवीजन हैं। वर्तमान में यह उपक्रम एक आधुनिक इलेक्ट्रानिक्स कंपनी के रूप में स्थापित हो चुका है। इसे भारत सरकार ने नवरत्न कंपनी घोषित किया है। इसके मुख्य कार्य हैं- सैन्य तथा अर्द्ध सैन्य बलों के लिए उपयोगी इलेक्ट्रानिक्स उपकरणों तथा अति आधुनिक कलपुर्जों का डिजाइन तैयार करना, उनका विकास एवं निर्माण करना आदि। इन कार्यों के अतिरिक्त यह उपक्रम पुलिस विभाग, मौसम विभाग, दूरसंचार विभाग आदि के लिए भी उपयोगी इलेक्ट्रानिक्स उपकरण बनाता है।

भारत डायानामिक्स लिमिटेड (बीडीएल)

'भारत डायानामिक्स लि.' की स्थापना 1970 में की गई थी। इसका मुख्यालय हैदराबाद में है। इसकी दो यूनिटें- एक कंचन-बाग (हैदराबाद) तथा द्वितीय भानूर (आंध्र प्रदेश) में हैं। इसके मुख्य कार्य हैं- प्रमुख मिसाइलों जैसे- पृथ्वी, आकाश, धनुष आदि का उत्पादन, सैन्य बलों के लिए छोटे अस्त्रों का निर्माण आदि। 'बीडीएल' देश में नए मिसाइलों एवं उनसे संबंधित उपकरणों के निर्माण की प्रमुख एजेंसी है।

मिश्र धातु निगम लिमिटेड

'मिश्र धातु निगम लिमिटेड' की स्थापना 1973 में हुई थी। इसका मुख्यालय हैदराबाद में है। यह देश की रक्षा, परमाणु ऊर्जा एयरोनाटिक्स आदि के सामरिक महत्व की जरूरतों को पूरा करता है। इसके मुख्य कार्य हैं- सुपर मिश्र धातु का निर्माण, तापरोधक मिश्र धातु का निर्माण, टंगस्टन एवं मोलिब्डेनम धातु का उत्पादन, कंट्रोल्ड एक्सपेंशन मिश्र धातु का निर्माण तथा एरोस्पेस तथा उपग्रह में काम आने वाले नियोबियम आधारित 'नियोभत-10' का निर्माण आदि।

भारत अर्थमूवर्स लिमिटेड (बीईएमएल)

'भारत अर्थमूवर्स लिमिटेड' की स्थापना 1964 में हुई थी। इसका मुख्यालय बेंगलुरु में है। इसकी तीन उत्पादन यूनिट हैं तथा यह उपक्रम अर्थ मूविंग उद्योग का सबसे बड़ा संस्थान है। इसके मुख्य कार्य हैं- अर्थ मूविंग मशीनों का निर्माण, रेल-डिब्बों का निर्माण, पुल बनाने एवं रेल लाइन बिछाने वाले उपकरणों का निर्माण, भारी ट्रकों एवं डीजल इंजनों का निर्माण आदि है। इसके द्वारा दिल्ली मेट्रो रेल के लिए विशेष प्रकार के स्टील से बना डिब्बे भी तैयार किये जा रहे है। इस संस्थान के उत्पादों का उपयोग भारत सहित विश्व के 30 से अधिक देशों द्वारा किया जा रहा है। इसकी अन्य इकाईयां है- कोलार स्वर्ण खान क्षेत्र एवं सहायक ढलाई इकाई- स्टील फाउंड्री विज्ञान इंडस्ट्रीज लि.।

गोवा शिपयार्ड लिमिटेड (जीएसएल)

'गोवा शिपयार्ड लिमिटेड' का मुख्यालय वास्कोडिगामा, गोवा में है। इसके मुख्य कार्य हैं- सैन्य युद्धपोतों तथा समुद्री परिवहन हेतु पोतों का निर्माण, पोतों का मरम्मत कार्य, गश्ती जलयानों का निर्माण आदि।

गार्डन रीच वर्कशाप लिमिटेड (जीआरडब्ल्यूएल)

'गार्डन रीच वर्कशाप' की स्थापना 1934 ई. में हुई थी। 1960 में भारत सरकार ने इसका अधिग्रहण किया। इसका मुख्यालय कोलकाता में है। इसके तीन प्रमुख विभाग हैं- जहाजरानी, इंजीनियरिंग एवं इंजन विभाग। इसकी रासायनिक प्रयोगशाला को राष्ट्रीय प्रमाणन बोर्ड ने परीक्षण प्रयोगशाला के लिए प्रमाणपत्र दिया है। इसके मुख्य कार्य हैं- नौसेना के युद्धपोतों तथा सामान्य जलयानों का निर्माण एवं मरम्मत का कार्य, इनके उपकरणों का निर्माण, बेली टाइप इस्पात पुल का निर्माण, कृषि कार्य हेतु टरबाइन पंपों का निर्माण, समुद्री ट्रीटमेंट संयंत्र का निर्माण, डीजल इंजन निर्माण, उच्च तकनीक केजहाजी उपस्कर का निर्माण आदि।

मझगांव डाक लिमिटेड (एमडीएल)

'मझगांव डाक लिमिटेड' की स्थापना 1960 में हुई थी। इसका मुख्यालय 'मुंबई' में है। इसकी तीन ईकाइयां मुंबई, नावा तथा मंगलौर में है। यह देश का सबसे बड़ा जलपोत निर्माण यार्ड है। यहां 27 हजार डी. डब्ल्यू. टी डिस्प्लेसमेंट (परिवहन जलयान हेतु)तथा 6 हजार डी. डब्ल्यू. टी डिस्टलेसमेंट तक के युद्धपोतों के निर्माण की क्षमता है। इसके मुख्य कार्य हैं- नौसेना के लिए युद्धपोतों, पनडुब्बियों का निर्माण आदि।

प्रमुख मिसाइलें

पृथ्वी

पृथ्वी मिसाइल जमीन से जमीन पर मार करने वाली कम दूरी की मिसाइल है। 'पृथ्वी' मिसाइल का प्रथम परीक्षण 25 फरवरी, 1988 को चांदीपुर अंतरिम परीक्षण केन्द्र से किया गया था। पूर्णरुपेण स्वदेश में ही विकसित एवं निर्मित पृथ्वी मिसाइल की अधिकतम मारक क्षमता 250 किमी. है तथा न्यूनतम मारक क्षमता 40 किमी. तक है। लगभग एक हजार किग्रा. के विस्फोटक शीर्ष के साथ 150 किमी. तथा वायु सेना को समर्पित 'पृथ्वी' प्रेक्षपास्त्र की मारक क्षमता 500 किग्रा. के विस्फोटक शीर्ष के साथ 250 किमी. है।

सचल प्रक्षेपक से छोड़े जा सकने वाले 'पृथ्वी' प्रक्षेपास्त्र को मुख्यत: युद्ध क्षेत्र में टैक्टिकल प्रयोग के लिए विकसित किया गया है। पृथ्वी मिसाइल का भार लगभग 14 टन है तथा लंबाई लगभग 8.56 किमी है। इसके लक्ष्य भेदन परिशुद्ध 0.1% है। अर्थात यह 250 किमी. की दूरी पर स्थित अपने लक्ष्य को 150 मीटर त्रिज्या के वृत के अंदर निश्चित रूप से घात करेगा। यदि प्रक्षेपण स्थान तथा लक्ष्य स्थान के बीच के तापक्रम एवं वायुवेग की शुद्ध जानकारी उपलब्ध हो तो यह मिसाइल 10 मी. की वृतीय त्रिज्या के अंदर वार कर सकती है। पृथ्वी मिसाइल परंपरागत विस्फोटकों के साथ-साथ परमाणु विस्फोटक को भी ले जाने में सक्षम है। परम्परागत विस्फोटकों के अंतर्गत आकाश में फटकर पर्यावरण की आक्सीजन सोख लेने वाले 'फ्यूल एयर एक्सप्लोसिव' कई वर्ग किमी. क्षेत्र में लघु बम के रूप में फैलकर विस्फोट द्वारा आग फैलाने वाले विस्फोटक, कनस्टर बम आदि शामिल हैं। वास्तव में पृथ्वी मिसाइल का प्रारूप स्वदेशी उपग्रह प्रक्षेपण यान एस.एल.वी-3 पर आधारित है। पृथ्वी मिसाइल में एक चरण वाले दो ईंजनों में द्रव प्रणोदक का प्रयोग किया गया है। द्रव ईंधन के रूप में 'डाई मिथाइल हाइड्रोजन तथा नाइट्रोजन आक्साइड' का प्रयोग किया गया है। 'डाई मिथाइल हाइड्रोजन' अत्यंत विषाक्त द्रव है। मिसाइल में उच्च कोटी के इलेक्ट्रॉनिक और कंप्यूटर आधारित नियंत्रण प्रणाली का उपयोग किया गया है। यह अपने मार्ग का निर्धारण करने में स्वयं सक्षम है।

अग्नि मिसाइल परियोजना

अग्नि मिसाइल परियोजना के अंतर्गत अग्नि-I, अग्नि-II तथा अग्नि-III तथा अग्नि-IV मिसाइल क्रमश विकसित किए गए हैं। अग्नि मिसाइल में 'पुन: प्रवेश प्रौद्योगिकी डिमोंस्ट्रेटर' (Re-Entry Technology Demonstratior) का उपयोग किया गया है। इस तकनीक के अंतर्गत अग्नि अपने पथ से पहले वायुमंडल से बाहर चला जाता है, उसके बाद वायुमंडल में पुन: प्रवेश करता है। वायुमंडल में पुन: प्रवेश के समय घर्षण के कारण अत्यधिक तापीय ऊर्जा उत्पन्न होती है और मिसाइल के बाहरी ढांचे का तापमान बहुत अधिक बढ़ जाता है। इस कमी को दूर करने के लिए भारतीय वैज्ञानिकों ने अग्नि मिसाइल के लिए विशेष तापीय कवच का विकास किया है, जो तीन हजार डिग्री सेल्सियस का उच्च तापमान सह सकता है जबकि कवच के अंदर का तापमान 50^0 सेल्सियस बना रहता है। वर्तमान में भारत अग्नि-4 का विकास कर रहा है।

अग्नि-I

अग्नि प्रक्षेपास्त्र को 1983 में रक्षा अनुसंधान और विकास संगठन द्वारा शुरु किए गए एकीकृत निर्देशित प्रक्षेपास्त्र कार्यक्रम के अंतर्गत विकसित किया गया है। अग्नि-I का प्रथम सफल परीक्षण 22 मई, 1989 को किया गया था। इसका तृतीय तथा अंतिम सफल परीक्षण सन् 1994 में किया गया। इसकी लंबाई 21 मीटर, भार 19 टन, भार वहन क्षमता एक टन तथा मारक क्षमता 1500 किमी. तक है। अग्नि-I में एएसएलवी-4 राकेट का प्रयोग किया गया है। इसके प्रथम चरण में ठोस तथा दूसरे चरण में तरल ईंधन का प्रयोग होता है। यह स्वदेशी तकनीक से विकसित सतह से सतह पर मार करने वाला एक मध्यम दूरी का बैलिस्टिक मिसाइल है।

अग्नि-II

'अग्नि-II' अग्नि-I का ही उन्नत रूप है। इसका प्रथम सफल परीक्षण 11 अप्रैल, 1999 को किया गया। ज्ञात्वय है कि भारत सरकार ने अग्नि-I को मिसाइल का दर्जा नहीं दिया था। इसे केवल 'तकनीक प्रदर्शन योजना' का नाम दिया था। परन्तु अग्नि-II को सरकार ने मिसाइल का दर्जा दिया।

अग्नि-II , अग्नि-I की अपेक्षा हल्का एवं छोटा है। इसकी लंबाई 20 मीटर, व्यास 1.3 मीटर तथा वजन 16 टन है। इस इंटरमीडिएट रेंज बैलिस्टिक मिसाइल (IRBM) की मारक क्षमता एक टन भार वहन के साथ 2200 किमी. है। इसकी मारक क्षमता को 3 हजार से 3500 किमी. तक बढ़ाया जा सकता है। इसे मोबाइल लांचर से कहीं से भी छोड़ा जा सकता है। यह दो चरणों एवं ठोस ईंधन से संचालित होता है। यह परम्परागत तथा परमाणु दोनों प्रकार के विस्फोटकों को ले जाने में सक्षम है। अग्नि-II, चीन एवं पाकिस्तान की एम-11 तथा पाकिस्तान की हत्फ-3 मिसाइल है।

अग्नि-2 में 'ग्लोबल पोजिशनिंग प्रणाली' (जीपीएस) लगाई गई है। इसमें उपग्रह आधारित दिशा ज्ञान एवं स्थान निर्धारित क्षमता है। यह अपनी दिशा को बीच में ही संशोधित कर सकता है। इसमें भी पुनर्प्रवेश नियंत्रण प्रणाली तथा गाइडेंस टेक्नोलॉजी का प्रयोग हुआ है। मिसाइल में नियंत्रण कक्ष से नियंत्रण व्यवस्था संबंधी प्रणाली लगाई गई है तथा डाटा कम्यूनिकेशन सिस्टम '1553 बेस' का प्रयोग किया गया है।

अग्नि-III

अग्नि-3 परियोजना को भारत सरकार से 1998 में ही अनुमोदन प्राप्त हो गया था। परंतु कार्य वर्ष 2001 से आरंभ हुआ। आरंभ में इसका परीक्षण तीन बार रद्द करना पड़ा। उसके बाद वर्ष 2006 में इसका प्रथम परीक्षण असफल रहा परंतु 12 अप्रैल, 2007 को इसका द्वितीय परीक्षण सफल रहा। 2008 में भी इसका परीक्षण किया गया। यह भी दो चरणों वाला ठोस ईंधन आधारित बैलिस्टिक मिसाइल है। इसके सफल परीक्षण से भारत की मिसाइल प्रौद्योगिकी विकसित देशों के बराबर आ गई है। यह स्वतंत्र रूप से अपना रास्ता निर्धारित करते हुए लक्ष्य पर अचूक प्रहार करती है। इसकी गति ध्वनि से कई गुना ज्यादा है। इसका निर्माण डीआरडीओ के हैदराबाद स्थित एडवांस्ड सिस्टम लेबोरेटरीज (एएसएल) में किया गया है। इसे मोबाइल लांचर से भी छोड़ा जा सकता है।

अग्नि-3 की मारक क्षमता 1.5 टन विस्फोट के साथ तीन हजार किमी. से ज्यादा है तथा उसे 5 हजार किमी. तक बढ़ाया जा सकता है। इसकी लंबाई 16.7 मीटर, व्यास 1.8 मीटर तथा वजन 48.3 टन है। इसकी पनडुब्बी से छोड़े जाने वाले प्रारूप 'अग्नि-3 एसएल' का भी विकास किया जा रहा है।

अग्नि-IV

15 नवंबर, 2011 को इसका सफल परीक्षण किया गया। इसकी मारक क्षमता 2500 से 3000 किलोमीटर है।

त्रिशूल

'त्रिशूल' मिसाइल जमीन से हवा में मार कर सकता है। इसका प्रथम परीक्षण जून 1989 को किया गया था। इसका नौसैनिक संस्करण 'टारपीडो एम के2' है। त्रिशूल परियोजना को दिसंबर, 2007 तक विस्तार रूप दिया गया था। इसका उपयोग नीची उड़ान भर रहे विमानों को मार गिराने तथा समुद्री सतह पर उड़ने वाली हारपून जैसी मिसाइलों को नष्ट करने में किया जाता है। यह एक हजार किग्रा. तक के वारहेड्स को ढ़ो सकता है। इसकी अधिकतम मारक क्षमता 9 किमी. तक है। इसमें इलेक्ट्रॉनिक नियंत्रक तथा निर्देशक सिस्टम लगा है। त्रिशूल में ठोस ईंधन का प्रयोग किया जाता है एवं विशेष बूस्टर तथा सस्टेनर राकेट मोटर लगाया गया है। इसमें 'फ्लाई कैचर रडार' का उपयोग हुआ है जो प्रत्येक मौसम में कार्य करता है। त्रिशूल के लिए तीन प्रकार के बहुद्देशीय युद्धक वाहन का विकास किया गया है- जमीन से हवा में मार करने के लिए 'त्वरित कार्यवाही प्रणाली', वायु से जमीन पर मार करने वाली प्रणाली तथा नौसैनिक मिसाइल रोधी प्रणाली।

नाग

'नाग' मिसाइल तृतीय पीढ़ी का टैंक-रोधी गाइडेड मिसाइल है। इसका प्रथम सफल परीक्षण 24 नवंबर, 1990 को किया गया था। एक बार इसे छोड़ देने के बाद पुनः निर्देशित करने की आवश्यकता नहीं होती। यह टैंकों को खोज कर नष्ट कर देता है। इसलिए इसे 'दागो और भूल जाओ' टैंक रोधी मिसाइल भी कहा जाता है। इसकी मारक क्षमता 4-6 कि.मी. है तथा वजन 42 कि.ग्रा. है। इसमें टैंडेम वारहेड लगा होता है। नाग मिसाइल के लिए चार मिसाइलों का एक साथ छोड़ने की स्थिति में रखकर एक नाग मिसाइल कैरियर (नामिका) का निर्माण किया गया है। बीएमपी-1 में बदलाव लाकर 'नामिका' वाहन का विकास किया गया है। नाग मिसाइल को 'एडवांस्ड लाइट हेलीकॉप्टर' (ALH) से भी छोड़ा जा सकता है। यह सभी मौसमों में कार्य कर सकता है।

नाग मिसाइल में 'एटीजीएम तथा फोल प्लेन एरे' तकनीकों का प्रयोग किया गया है जो कि एक डिग्री सेल्सियस के 10वें भाग के बराबर तापमान के अंतर को भी पहचान सकता है। इसमें इमेंजिंग इंफ्रारेड (IIR) तथा मिलिमेट्रिक तरंग (MMW) ग्राही तकनीक पर आधारित निर्देशन प्रणाली का प्रयोग किया गया है, फलस्वरूप यह अत्यधिक अचूक निशाना लगा सकता है। साथ ही इसमें सेंसर फ्यूजन टेक्नोलाजी तथा 'फायर एंड फारगेट' (भारत में विकसित) प्रणाली का भी उपयोग किया गया है। इसमें लगा टैंडेम वारहेड (Tandom Warhead) किसी भी आधुनिक टैंक में लगे ईआरए (Explosive Reactive Armour) तथा सी. टी.ए. (Composite Type armour) को भी नष्ट करने में सक्षम है।

आकाश

'आकाश' एक बहुलक्षीय मिसाइल है जो जमीन से हवा में मार कर सकता है अर्थात एक साथ 5 विमानों या मिसाइलों पर प्रहार कर सकता है। इसका प्रथम सफल परीक्षण 14 अगस्त, 1990 को चांदीपुर से किया गया था। इसकी लंबाई 6.5 मीटर है तथ वजन 650 कि.ग्रा. है। इसकी मारक क्षमता 25-50 किमी. है। यह परंपरागत तथा परमाणु विस्फोटकों को भी ले जाने में सक्षम है। इसे भी मोबाइल लांचर से छोड़ा जा सकता है। आकाश मिसाइल को इसके गुणों के कारण अमेरिकी 'पैट्रियाट' मिसाइल से भी अच्छा समझा जाता है। यह प्रथम भारतीय मिसाइल है जिसके प्रणोदक में रैमजेट सिद्धांतों (दो चरणो वाले) का प्रयोग हुआ है। अमेरिका के बाद भारत ने प्रथम बार 'क्रैज शिफ्टर' प्रणाली का प्रयोग इसमें किया है। इसमें 'फेस्ड ऐरे राडार' (राजेन्द्र) का प्रयोग किया गया है जो 40-60 कि.मी. के रेंज से एक साथ 64 विमानों पर नजर रख सकता है। आकाश मिसाइल इराक की स्कड जैसी मिसाइलों तथा पाकिस्तानी हत्फ व एम-11 जैसी मिसाइलों को आकाश में ही नष्ट कर सकने में समर्थ है।

धनुष

'धनुष' मिसाइल पृथ्वी मिसाइल का नौसैनिक प्रारूप है। यह भी पारंपरिक तथा परमाणु वारहेड ले जा सकता है। इसका प्रथम आंशिक सफल परीक्षण 1 अप्रैल 2000 को उड़ीसा समुद्री तट से 'ऑफ शोर पेट्रोल व्हीकल आईएनएस सुभद्रा से किया गया तथा इसका नवीनतम सफल परीक्षण वर्ष 2007 में किया गया था। इसकी मारक क्षमता 750 कि.ग्रा. वारहेड के साथ 150 कि. मी. तथा 500 कि.मी. वारहेड के साथ 250 कि.ग्रा. है। धनुष मिसाइल की लंबाई 9 मीटर तथा वजन 4 टन है। नौ सेना के लिए इसे ज्यादा उपयुक्त नहीं माना जा रहा है क्योंकि इसकी लंबाई व वजन ज्यादा है अत: यह बीच समुद्र में दुश्मन के टोही विमानों तथा मिसाइलों का निशाना बन सकता है।

अस्त्र

अस्त्र मिसाइल स्वदेशी तकनीक से विकसित मध्यम दूरी की हवा से हवा में भार करने वाली मिसाइल है। इसका विकास देश के महानगरों के लिए त्रिआयामी से विशेष सुरक्षा के उद्देश्यों से किया गया है। इसका प्रथम सफल परीक्षण 9 मई 2003 को चांदीपुर एकीकृत परीक्षण रेंज में विशेष प्रकार के स्थिर लांचर से किया गया था। यह भारत का प्रथम हवा से हवा में माार करने वाली मिसाइल है। इसे सी हैरियर, मिग-29 तथा एसयू-30, एलसीए (हलका लडाकू विमान) आदि विमानों से छोड़ा जा सकता है। उल्लेखनीय है कि अस्त्र मिसाइल के इन विमानों में लग जाने से इनकी मारक क्षमता में और अधिक वृद्धि हो जाएगी।

अस्त्र मिसाइल की वर्तमान में मारक क्षमता 10-25 कि.मी. तक है परंतु इसे 40 किमी. तक बढ़ाया जा सकता है। इसका हेड आन रेंज 100 कि.मी. तथा टेल आन रेंज 15 कि.मी. होगा। इसकी लंबाई 3.8 मीटर है।

सागरिका

'सागरिका' मिसाइल समुद्र के अंदर से छोड़ी जाने वाली मिसाइल है। इसका विकास विशेष रूप से परमाणु ईंधन चलित पनडुब्बी से छोड़े जाने हेतु किया जा रहा है। यह भारत की प्रथम परमाणु क्षमता संपन्न बैलेस्टिक मिसाइल है। (submarine Launch Balastic Missile - SLBM) इसकी मारक क्षमता 700 कि.मी. तक है। इसकी लंबाई 8.5 मीटर तथा व्यास एक मीटर है। इसे 'के-15' के नाम से भी जाना जाता है।

'सागरिका' का 26 फरवरी, 2008 को पूर्वी तट पर विशाखापट्टनम से सफल परीक्षण किया गया। यह परीक्षण समुद्र के अंदर निर्मित नावों के पुल से किया गया। क्योंकि उस समय भारत के पास परमाणु ईंधन चलित पनडुब्बी नहीं था। लेकिन अब भारत के पास 'अरिहंत' नामक स्वदेशी परमाणु पनडुब्बी है जिसपर इसकी तैनाती की जाएगी। ज्ञातव्य है कि इस तरह की मिसाइल क्षमता विश्व में केवल अमेरिका, रूस, चीन तथा फ्रांस के पास ही है।

ब्रह्मोस

'ब्रह्मोस' सुपरसोनिक क्रुज मिसाइल है। मध्यम दूरी की सत्तह से सतह पर प्रहार करने वाली यह मिसाइल भारत एवं रूस दोनों के भागीदारी से विकसित की गई है। इसका नाम 'ब्रह्मोस' भारत की नदी ब्रह्मपुत्र तथा रूस की नदी मस्कवा के नाम से जोड़कर रखा गया है। इसमें रूसी प्रोपल्शन तथा भारतीय निर्देशन प्रणाली का प्रयोग किया गया है। सन् 1998 में डा. अब्दुल कलाम ने इस मिसाइल के विकास की पहल की थी। इन्होंने ही भारत सरकार के वैज्ञानिक सलाहकार की हैसियत से ब्रह्मोस के विकास के लिए भारत एवं रूस के बीच समझौते पर 12 फरवरी, 1998 में हस्ताक्षर किए थे। इस समझौते के अंतर्गत भारत एवं रूस की संयुक्त कंपनी 'ब्रह्मोस एयरोस्पेस' की स्थापना भारत में की गई। इस मिसाइल का विकास भारत को रक्षा अनुसांधान व विकास संगठन (डीआरडीओ) तथा रूस के एनपीओ मशिनेस्त्रिया ने मिलकर किया है। 12 जून 2001 को इसका प्रथम सफल परीक्षण किया गया था। आरंभ में इसका विकास नौसेना की आवश्यकताओं के लिए किया गया था। इसे मोबाइल लांचर, युद्धपोत, पनडुब्बी तथा विमान से भी प्रक्षेपित किया जा सकता है। ब्रह्मोस का 14वां परीक्षण 22 अप्रैल,2007 को उड़ीसा के चांदीपुर स्थित अंतरिम परीक्षण क्षेत्र से किया गया। इनमें चार परीक्षण ब्रह्मोस के थल सैनिक संस्करण के थे। 29 मार्च, 2009 को इसके थल आक्रमण संस्करण (लैंड अटैक वर्जन) का सफल परीक्षण राजस्थान के जैसलमेर की पोकरण टेस्ट रैंज में किया गया। जमीन से 290 कि.मी. की दूरी तक दागे जाने वाले नवीनतम ब्लॉक-2वर्जन का यह तृतीय परीक्षण था। इस सफल परीक्षण के साथ ही 300 कि.ग्रा. के परंपरागत वारहेड को ले जाने में सक्षम ब्रह्मोस के ब्लॉक-2 संस्करण के विकास का चरण पूरा हो गया। अब इसकी तैनाती सेना में की जाएगी। ब्रह्मोस की प्रणोदक प्रणाली तरल एवं ठोस दोनों प्रकार के ईंधन पर आधारित है। इसमें ठोस एवं तरल प्रोपेलेंट रैमजैट सिस्टम लगाया है। इसके मुंख पर सेंसर लगा है जो लक्ष्य को पहचानने में मदद करता है। इसमें 'दागो और भूल जाओ' प्रणाली भी लगी है। आवश्यकतानुसार यह लक्ष्य की परिधि से 20 कि.मी. पहले अचानक अपना मार्ग परिवर्तन भी कर सकता है। ब्रह्मोस की लंबाई 8 मीटर व वजन तीन टन है तथा यह 300 कि.ग्रा. तक परमाणु या परंपरागत विस्फोटक ले जा सकता है। इसकी गति ध्वनि की गति से 2.8 गुणा है। यह 14 कि.मी. की ऊंचाई तक जा सकता है।

ब्रहोस का वार्टिकल प्रक्षेपण: ब्रहोस को वर्टिकल लांचर से सफल रूप से प्रक्षेपित 18 दिसंबर 2008 को किया गया। इस दिन ब्राहोस को नौसेना के जहाज से वर्टिकल लांचर से सीधे ऊपर की ओर (खड़ा) करके प्रक्षेपित किया गया। अब तक इसका परीक्षण तिरक्षी दिशा में प्रक्षेपित कर किया गया था। इस अब पनडुब्बी से भी इसे छोड़ा जा सकता है। विश्व में इस तरह की यह प्रथम मिसाइल है। वर्टिकल लांच के लिए सबसे पहले मिसाइल को लगभग 200 फुट ऊपर ऊंचा उछला जाता है। (गैस के प्रेशर के माध्यम से) इसके बाद यह अपने आप नोज के माध्यम से लक्ष्य की ओर गुड़ जाता है। इस तरह जहाज किसी भी दिशा में हो मिसाइल के लक्ष्य वेधन पर कोई असर नहीं पड़ता। तिरछे करके लांच करने पर मिसाइल का बूस्टर पहले से चालू हो जाता है और ब्लास्ट निकलता है, जिससे जहाज को सुरक्षित रखने के लिए एक विशेष लेप के अलावा अन्य सुरक्षा के प्रावधान करने पड़ते हैं। रूस के कालिनिनग्राद में भारतीय नौसेना के लिए बनाए जा रहे तीन युद्धपोतों पर ब्रहोस का वार्टिकल लांचर लगेगा। अब एयरफोर्स भी इसके एयर लांच वर्जन को विकसति कर रहा है। इसके लिए सुखोई-30 एमकेआई एयरक्राफ्ट में परिवर्तन किया जा रहा है। ब्रह्मोस के हाइपरसोनिक वर्जन ब्रहोस-2.8 वी के विकास की भी योजना है।

शौर्य

शौर्य सतह से सतह पर मार करने वाली मध्यम दूरी की मिसाइल है। इसका सफल परीक्षण 12 नवंबर 2008 व 24 सितंबर, 2011 को किया गया। इसकी माारक क्षमता 700 कि.मी. तक है। इसकी गति ध्वनी की गति से तीन चार गुणा है। इसलिए किसी मिसाइल नाशक द्वारा आकाश में इसे ध्वस्त करना कठिन होगा। ब्रहोस की तरह इसे भी लंबे समय तक सुरक्षित रखा जा सकता है इसलिए यह कनस्तर में भी सुरक्षित रह सकता है। यह एक टन वजन का वारहेड ले जाने में सक्षम है। इसकी लंबाई 10.2 मीटर व चौड़ाई 2.5 मीटर है।

कोरनेट-ई

कोरनेट-ई रूसी टैंकनाशक गाइडेड मिसाइल है। भारतीय थल सेना में कोरनेट- ई मिसाइलें रूसी कोंकुर मिसाइलों का स्थान लेंगी। ज्ञातव्य है कि भारत में कोंकुर मिसाइलों के अतिरिक्त फ्रांसीसी मिसाइल 'मिलन' का उत्पादन होता है अब कोरनेट-ई मिसाइलों

का भी निर्माण भारत में होगा। कोरेनेट ई मिसाइल को किसी भी वाहन पर तैनात किया जा सकता है तथा किसी भी मौसम में छोड़ा जा सकता है। यह 'फायर एंड फॉरगेट' प्रणाली से युक्त है। इसकी भारक क्षमता 5.5 कि. मी. तक है। इसके लांचर स्टैंड पर नाइट विजन ऑप्टिकल साइट लगी होती है जिससे रात में भी इसे आसानी से छोड़ा जा सकता है। एक साथ दो मिसाइलें दागी जा सकती है तथा लांचर स्टैंड पर स्वत: लोड हो जाती है। फोरर्नेट ई मिसाइल कैरियर एक साथ 16 मिसाइलें लेकर चल सकता है। यह न केवल किसी टैंक के कवच (1-1.2 मीटर मोटे) को भेद सकता है ब्लकि 3.5 मीटर मोटी कंक्रीट के बेकर को भी भेद सकता है।

पिछोरा

पिछोरा सतह से आसमान में मार करने वाली अत्याधुनिक मिसाइल प्रणाली है। यह मिसाइल प्रणाली रूस से आयातित है तथा किसी भी आक्रमणकारी शत्रु विमान को 20 कि.मी. दूर से ही मार गिराने सक्षम है।

बराक

'बराक' मिसाइल को इजरायल के 'राफील आर्म्स' ने विकसित किया है। हिब्रू भाषा में बराक का अर्थ 'बिजली' होता है। मूलत: यह एक मिसाइल रोधी रक्षा प्रणाली है। 'बराक' जहाजरोधी मिसाइलों के खतरे से निपटने में काफी उपयोगी साबित होगी। यह आक्रमणकारी मिसाइलों को नष्ट कर सकती है और विमानों एवं अन्य लक्ष्यों पर भी दागी जा सकती है। यह प्रणाली पानी के अंदर से मार करने वाली मिसाइलों से युद्वपोतों की रक्षा के काम में आती है तथा यह वर्टिकल (लम्बवत) लांचर से दागी जाती है और चारों दिशाओं में घूम भी सकती है। 'बराक' की लंबाई 2175 मि.मी., गोलाई 170 मि.मी. तथा भार 98 कि.ग्रा. है। इसकी मारक क्षमता 500 मीटर से 12 कि.मी. तक है तथा यह 22 कि.ग्रा. वारहेड ले जा सकती है। इसकी गति ध्वनि के दो गुणा तक है तथा 5500 मीटर की ऊंचाई तक यह जा सकती है। इसका सफल परीक्षण 8 मई 2003 को भारतीय नौ सेना के जहाज से किया गया था।

सारथ

'सारथ' मिसाइल को दागने का प्लेटफार्म है। इसका निर्माण त्रिशुल, आकाश तथा नाग मिसाइल को छोड़ने के लिए एक बहुउपयोगी वाहन के रूप में हुआ है। यह मूल रूप से रूसी बीएमपी-2 का संशोधित रूप है। मिसाइलों के प्रकार के अनुसार 'सारथ' के भी अलग-अलग संस्करण हैं।

भविष्य के मिसाइल

सूर्य

'सूर्य' नामक अंतरमहाद्वीपीय बैलिस्टिक मिसाइल (Intercontinental Ballistic Missile- ICBM) भारत का सबसे ज्यादा दूर तक प्रहार करने वाला मिसाइल होगा। इसका विकास सन् 1997 से चल रहा है। (अस्पष्ट सूत्रों के अनुसार) इसमें जी एस एल वी के प्रयोग किए जाने का अनुमान है, जिसमें क्रायोजेनिक इंजन लगाया जाएगा। सूर्य मिसाइल की माारक क्षमता पांच हजार कि. मी. से अधिक होगी। इसे 8 हजार से 12 हजार कि.मी. तक बढ़ाया जा सकता है।

स्वप्न

भारत में 'स्वप्न' नामक लंबी दूरी के मिसाइल का विकास चल रहा है, इस मिसाइल में लक्ष्य को भेदने के बाद वापस अपने आधार पर लौटाने के लिए निर्देशात्मक (आरजीएस) का प्रयोग किया जाएगा। स्वप्न मिसाइल अमेरिकी क्रूज मिसाइल 3 एवं रिमोट से चलने वाले वाहन का मिला जुला रूप होगा। इसमें रैमजेट तथा स्क्रैमजेट इंजन वायु श्वासी प्रणोदक प्रणाली का प्रयोग किया जाएगा, जिसमें उड़ान के दौरान आने वाली हवा, हाइड्रोजन से मिश्रित होकर दहन के बाद ऐसा दबाव उत्पन्न करती है, जिससे यह मिसाइल ध्वनि के वेग से सात गुना अधिक वेग से भी जा सकता है। इसे कम से कम सौ बार प्रयोग में लाया जा सकेगा। स्वप्न मिसाइल परंपरागत तथा परमाणु दोनों प्रकार के विस्फोटकों को ले जा सकता है।

संयुक्ता

संयुक्ता, डीआरडीओ और भारतीय सेना का एक संयुक्त कार्यक्रम है। यह कार्यक्रम सॉफ्टवेयर और एकीकरण पर जोर देने वाला है और यह 1.5 MHz - 40 GHz को कवर करने वाली एक एकीकृत ईडब्ल्यू प्रणाली के मूल विकास से संबंधित है । फैक्ट्री में स्टैंड-अलोन जैमर (एसएजे) के मूल्यांकन पूरा किए जाने के बाद, इसे उपयोगकर्ताओं द्वारा इस क्षेत्रस में आंका गया और इस मूल्यांकन के इनपुट को गैर-कॉम खंड के सभी तीन फ्रीक्वेंसी बैंड्स, निम्न, मधयम और उच्च बैंड्स में इलेक्ट्रॉनिक काउंटर मापन (ईसीएम) में निगमित किया गया। इस विकास के साथ, गैर-कॉम खंड के लिए ईसीएम को पूर्ण किया गया और इसके तत्व मूल्यांकन के तहत हैं। इस प्रणाली में सभी संचार और रडार सिग्नल के निरीक्षण, अंतरग्रहण, निगरानी, विश्लेषण और अवरूद्धता की क्षमता रखने वाले वाहन (व्ह्रीक्ल) शामिल होते हैं।

वायुसेना के लड़ाकू एवं प्रशिक्षण विमान

तेजस

'तेजस' चौथी पीढ़ी का बहुउद्देशीय हल्का लड़ाकू विमान है। इसने 4 दिसंबर 2005 को पहली सफल उड़ान बेंगलुरु, में भरी। इस विमान में प्रयोग की जानेवाली तकनीक 'डिमांस्ट्रेटर I' का प्रथम बार उपयोग वर्ष 2001 में किया गया था। 'तेजस' एकल सीट और सिंगल इंजन वाला हल्का और सुपरसोनिक विमान है जो प्रत्येक मौसम में काम कर सकता है। वायु सेना के प्रस्ताव को ध्यान में रखते हुए एयरोनॉटिकल डेवलपमेंट एजेंसी 'तेजस' को शस्त्रों से लैश करने की दिशा में काम कर रही है। इसका डिजाइन ऐसा है कि विमान में कुछ नुकसान होने के बावजूद यह उड़ान भर सकता है। इस विमान में सात आयुध ले जाने की क्षमता के अतिरिक्त हवा में उड़ान के दौरान ईंधन भरने की सुविधा है। तेजस की काकपिट के लिए 'फ्लाई बाई वायर' प्रणाली को विकसित किया गया है इसका पहला परीक्षण वर्ष 2001 में किया गया था। 4 मई 2003 को बेंगलुरु में इसके दो विमानों ने शानदार प्रर्दशन किए। उसके बाद इसका नाम 'तेजस' रखा गया।

प्रशिक्षण विमान-निशांत

'निशांत' पायलट रहित प्रशिक्षण विमान है। यह सतह पर बने संचालन केन्द्र से रिमोट द्वारा संचालित होता है। इसका मुख्य उद्देश्य युद्ध क्षेत्र में पर्यवेक्षण और टोह लेने का कार्य संपन्न करना है। इसका विकास रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन और वैमानिकी विकास एजेंसी द्वारा संयुक्त रूप से किया जा रहा है। इस विमान में लिम्बैक इंजन लगाया गया है जो अमेरिका निर्मित है परंतु अब इसे यहीं बनाया जाएगा आरंभ में इस विमान का नाम 'फाल्कन' रखा गया था। इसे उड़ाने के लिए प्रक्षेपक का प्रयोग किया जाता है, निशांत थल सेना के लिए अत्यंत उपयोगी विमान है। इससे युद्ध क्षेत्र में शत्रु के सैन्य क्रिया कलापों पर घंटों नजर रखा जा सकता है। इसमें इलेक्ट्रो - आप्टिक्स एवं फोटोग्राफिक उपकरण लगे हुए हैं। इसके उपयोग से थल सेना मिसाइलों, तोपों एवं राकेट लांचरों आदि के लिए सटिक निशाना लगा सकती है। रिमोट से कंट्रोल करने के कारण इसमें पायलटों के जान जाने का खतरा नहीं होता है। 'निशांत' मजबूत फाइबर ग्लास एवं कम्पोजिट मैटेरियल का बना होता है अत: रडार से नहीं पकड़ा जा सकता । यह 45 कि. मी. का दायरे में नियंत्रित किया जा सकता है।

पायलट रहित विमान 'लक्ष्य'

(Pilot Less Target Aircraft-PTA) स्वदेशी विमान 'लक्ष्य' का सफल परीक्षण 25 मार्च 2002 को उड़ीसा के अंतरिम परीक्षण रेंज चांदीपुर में किया गया था। उसके बाद भी इसके कई परीक्षण किए गए। ये सब परीक्षण 'लक्ष्य' में स्वदेशी इंजन लगाने के बाद किए गए। वैसे तो सन् 2000 में ही इसे सेना में शामिल कर लिया गया था। 'लक्ष्य' का मूल उद्देश्य है देश की सुरक्षा के लिए शत्रुओं की गतिविधियों पर नजर रखना। यह सेना के तीनो अंगों के लिए उपयोगी है। इसे 100 कि.मी. के दायरे में रिमोट से संचालित किया जा सकता है। यह विमान कम से कम 10 बार प्रयोग में लाया जा सकता है। जेट इंजन युक्त, इस विमान की गति लगभग पांच सौ कि.मी. प्रति घंटा है। इसका उपयोग जमीन से वायु तथा वायु से वायु में मार करने वाले प्रक्षेपास्त्रों एवं तोपों से निशाना लगाने के लिए प्रशिक्षण देने हेतु किया जा रहा है।

हल्का लड़ाकू विमान

सन् 2001 में स्वदेश निर्मित प्रथम 'हल्का लड़ाकू विमान' अथवा एलसीए का बंगलौर में सफल परीक्षण उड़ान के अंतर्गत इसने अधिकतम 3 कि. मी. की ऊंचाई पर 450 किमी/ घंटे की गति से 20 मिनट तक उड़ान भरी। ज्ञातव्य है कि इसके उड़ान का निरीक्षण तत्कालीन वायुसेनाध्यक्ष एयरचीफ मार्शल वाई टिपणिस ने मिराज विमान से की थी। इस प्रकार के विमान के निर्माण का मुख्य लक्ष्य सामरिक दृष्टि से उत्कृष्ट विमान बनाना है, जो टिकाऊ होने के साथ-साथ रखरखाव में आसान हो। एक इंजन तथा एक सीट वाला यह विमान जंगरोधी तथा पूरी तरह डिजिटल है। हवा में उड़ान के दौरान भी इसमें ईंधन भरा जा सकता है। यह सुपर सोनिक विमान सभी प्रकार के मौसम में वायु से वायु में, वायु से सतह पर तथा वायु से समुद्र में मार कर सकता है। यह 4 टन तक के हथियार के साथ 14 मैक की गति से उड़ सकता है। आरंभ में इसमें अमेरिकी इंजन 'जीई-404' लगाया गया था परंतु बाद में स्वेदेशी इंजन 'कावेरी' का विकास कर लिया गया। यह विमान देश की सीमाओं पर हवाई सुरक्षा विमान के रूप में मिग-21 विमानों का स्थान लेगा।

सन् 1983 में देश में अत्याधुनिक हल्के लड़ाकू विमानों को देश में विकसित करने की योजना बनाई गई थी परंतु इसे वित्तीय मंजूरी 1993 में मिली। सन् 1995 में इस विमान का निर्माण कर सरकार के समक्ष प्रदर्शित किया गया। इसके विकास में डीआरडीओ के साथ साथ हिन्दुस्तान एयरोनोटिक्स लिमिटेड तथा वैमानिकी विकास एजेंसी ने भी सहयोग किया हैं। आरंभ में इसे सन् 2012 तक वायु सेना में शामिल किए जाने की बात कही गई थी। आरंभिक विमानों का वजन 8.5 टन था तथा लंबाई-चौड़ाई क्रमशः 13.2 मी. तथा 13.2 मी. थी। ज्ञातव्य है कि सन् 1998 में इसके कुछ अमेरिकी उपकरणों के आयत पर प्रतिबंध लगा दिए गए थे इसलिए इसका निर्माण कुछ विलंब से हुआ।

ओसियन पी-3 विमान

शीत युद्ध के दौरान हिंद महासागर में भारत की नौ सैनिक गतिविधियों पर नजर रखने वाला अमेरिकी टोही विमान ओसियन P-3 भारतीय नौ-सेना में शामिल कर लिया गया है। यह रडार उपकरण से युक्त है। इसमें नवीनतम सेंसर कमांड एवं कंट्रोल शस्त्र प्रणाली भी है। यह विमान 200 कि.मी. से अधिक दूरी की माारक क्षमता की मिसाइलों से लैस है जो समुद्र में इतनी दूरी पर विचरते हुए दुश्मन के किसी भी पोत को ध्वस्त कर सकता है।

हंस-3 विमान

हंस-3 दो सीटों वाला प्रशिक्षण विमान है। इस विमान के विकास से न केवल विमान चालकों का प्रशिक्षण सस्ता हो जाएगा बल्कि भारी मात्रा में विदेशी मुद्रा की बचत भी हो सकेगी। विदेशी प्रशिक्षण विमानों के औसतन 15 वर्षों के जीवनकाल की तुलना में हंस-3 का जीवन काल 25 वर्ष है। इस विमान की अधिकतम गति 215 कि.मी प्रति घंटा है तथा इसके उतरने के लिए 460 मीटर की हवाई पट्टी ही काफी है। अत्यंत हल्के और मजबूत फाइबर ग्लास से बने हंस-3 का भार मात्र 750 कि.ग्रा. है। यह 225 कि.ग्रा. भार लेकर आसानी से उड़ सकता है।

सुखोई-30

'सुखोई-30 एम. के' रूस निर्मित विश्व का आधुनिक प्रकार का बहु प्रयोजनीय लड़ाकू विमान है जिसको भारतीय वायु सेना में शामिल कर लिया गया है। 'सुखोई-30 एम. के' की विशेषता है कि इससे विभिन्न किस्म की 12 मिसाइलें एक साथ छोड़ी जा सकती हैं। इसके अतिरिक्त इसमें 4 हजार कि.ग्रा. वजन के विस्फोटक भी ले जाए जा सकते हैं। इस लड़ाकू विमान की सामान्य उड़ान रेंज 3 हजार कि.मी. से अधिक है, जिसे पुनः आकाश में ही ईंधन भरकर 5200 कि.मी. की दूरी तक बढ़ाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त इसके 'रियर काकपिट' में एक विशेष व्यवस्था है, जिससे इस विमान को 'मिनी अवाक्स' के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है।

परवाज विमान

'परवाज' स्वदेशी प्रशिक्षण विमान का नाम है जिसका विकास किया जा रहा है। स्वदेशी उन्नत एयर जेट ट्रेनर (एजेटी) विमानों की डिजाइन विकास कर लिया गया है। यह विमान ब्रिटेन के हाक एजेटी विमानों की जगह लेगा। इस विमान के विकास के बाद से भारत को ब्रिटेन से एजेटी विमान आयात करने की जरूरत नहीं पड़ेगी इसकी गति ध्वनि से ज्यादा होगी।

बहुउद्देशीय विमान 'सारस'

नेशनल एयरो नॉटिकल लेबोरेटरीज (एनएएल) द्वारा डिजाइन किए गये बहुउद्देशीय विमान 'सारस' का दूसरा परीक्षण उड़ान 7 जून 2004 (प्रथम उड़ान 29 मई 2004) को बंगलौर में हुआ था। कनाडा के दो प्रैट एंड हव्टिनी इंजन इस विमान में लगाए गए हैं। इस विमान द्वारा नागरिक आवश्यकताओं के साथ -साथ सैन्य आवश्यकताओं की भी पूर्ति की जा सकेगी।

एडवांसड लाइट हेलीकॉप्टर- (एएलएच)- ध्रुव

एलएलएच ध्रुव दो इंजनों वाला स्वदेशी हेलीकॉप्टर है। इसमें 14 व्यक्तियों के बैठने की सुविधा है। 'ध्रुव' के नौसैनिक संस्करण का भी विकास किया जा रहा है। यह तटरक्षकों के सर्वेक्षण, लोगों के विशिष्ट यातायात प्रबंधन तथा बाढ़ सर्वेक्षण हेतु अत्यधिक उपयोगी साबित होगा। इसकी अधिकतम गति 245 कि.मी./ घंटा है तथा यह लगातार 4 घंटे तक आकाश में रहकर 800 कि.मी. की दूरी तय कर सकता है।

आई एल-78

आई-एल-78 भारतीय वायुसेना का परिवहन विमान होने के साथ-साथ उड़ान के दौरान लड़ाकू विमानों में ईंधन भरने वाला विमान भी हैं। ज्ञातव्य है कि वायुसेना के मिराज-2000, सुखोई-30, मिग-29 तथा एलसीए में उड़ान के दौरान आसमान में ईंधन भरने की सुविधा है। आईएल-78 के दोनों डैनों और पिछले भाग में लगी होज ड्रम यूनिटों को एक साथ तीन उड़ते हुए लड़ाकू विमानों के ईंधन टैंक से जोड़कर उन्हें ईंधन की आपूर्ति की जा सकती है। इससे विमान आसमान में ज्यादा देर तक उड़ सकते हैं तथा तीन हजार कि.मी. अधिक जा सकते हैं। इसमें 35 टन वैमानिकी ईंधन के भंडारण की सुविधा है।

प्रथम 'आईएल-78' विमान भारत को वर्ष 2003 में उज्बेकिस्तान से प्राप्त हुआ था। सन् 2004-05 तक 6 और ऐसे विमान मिल गए। आसमान में ईंधन भरने वाले नए विमानों के स्क्वाड्रन का नाम 'बैटल क्राई' रखा गया है। आईएल-78 के मिल जाने से भारतीय वायुसेना विश्व की ऐसी छठी वायुसेना बन गई है, जो इस क्षमता से युक्त है।

अस्वाक (ASWAC)

'अस्वाक' अर्थात एयरबोर्न सर्वेलेंस वार्निंग एंड कंट्रोल। इसे एच. एस 748 परिवहन विमान पर विकसित किया गया है। यह एक भारतीय खोजी विमान है। यह अपनी राष्ट्रीय सीमा में उड़ान भरकर दुश्मन की सीमा में एक हजार कि.मी. तक की सैनिक गतिविधियों की जानकारी देने में सक्षम है। इससे शत्रु की ओर से होनेवाले आक्रमण के बारे में पूर्व सूचना मिल जाएगी।

सुपर हरक्यूलिस सी-13 जे विमान

यह विमान अमेरिका निर्मित अत्याधुनिक लड़ाकू विमान है। वर्ष 2008 में अमेरिका के साथ एक समझौता किया गया, जिसके अन्तर्गत भारत को छः अत्याधुनिक लड़ाकू विमान 'सुपर हरक्यूलिस सी-13 जे विमान' प्राप्त होंगे। अमेरिका की 'लाकरहीड मार्टिन' द्वारा निर्मित इन विमानों से सैन्य कर्मियों को संवेदनशील इलाकों में लाने-ले जाने में तथा अन्य महत्वपूर्ण सैन्य आपरेशनों में सहायता मिलेगी।

मिग-23

'मिग-23' नामक लड़ाकू विमान को 1983 में भारतीय वायुसेना में शामिल किया गया था। लगभग 100 विमानों को सोवियत संघ से लिया गया था। इस विमान की विशेषता यह थी कि यह परिंदों की तरह अपने पंखों को सिकोड़ तथा फैला सकता थ। इसलिए इसे 'स्विंग विंग' विमान भी कहा जाता था। नाटो देशों में इसे 'फ्लोगर बो' के नाम से जाना जाता था। इसमें वियोन्ड विजुअल रेंज मिसाइलें लगी थीं तथा यह विमान 96 राकेट या डेढ़ टन बम ले जा सकता था। इस विमान के रख-रखाव, व्यय तथा कलपुर्जों की कमी से तथा जगुआर, मिराज 2000 एवं एस.यू.-30 के आ जाने से इसे भारतीय वायुसेना से 20 मार्च 2007 को सेवा मुक्त कर दिया गया।

अवतार

'अवतार' एक अत्याधुनिक बहुउद्देशीय स्वप्रणोदित अंतरिक्ष यान है, जो उपग्रहों की भांति निगरानी व जासूसी करने के साथ-साथ अंतरिक्ष की निम्न कक्षाओं में छोटे संचार व नेवीगेशनल उपग्रहों को भी स्थापित करने में सक्षम होगा। इसकी एक बड़ी विशेषता यह भी है कि यह राकेट इंजन प्रणाली के बिना भी 'युद्धक विमान' का कार्य करेगा। इसका विकास अभी जारी है।

मिग–29

'मिग–29' रूस द्वारा निर्मित आधुनिक लड़ाकू विमान है। भारत में 'मिग–29' के तीन स्क्वाड्रन हैं। इन विमानों को और अधिक उन्नत बनाने का प्रयास चल रहा है। इस तरह का समझौता भारत और रूस में वर्ष 2008 में हुआ। समझौते के अंतर्गत मिग–29 में उच्च वैमानिकी प्रणाली लगाई जाएगी जो पोत से उड़ान भरने वाले मिग–29 में लगी हुई है। साथ ही इसमें अत्याधुनिक आयुध प्रणाली, वायु से वायु में मार करने वाली मिसाइलें तथा भूमि एवं समुद्री सतह के लक्ष्यों को ध्वस्त करने वाली प्रणालियां लगाई जाएंगी।

बहुउद्देशीय उपकरण टीडीयू

'टीडीयू' अर्थात थ्रेस होल्ड डिटेक्टर यूनिट एक ऐसा उपकरण है, जो प्रतिकूल परिस्थितियों में दुश्मन के घातक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की गतिविधियों को न केवल समय से पहले पकड लेगा बल्कि उन्हें आपरेट होने के पूर्व ही जाम और नष्ट कर देगा। इस उपकरण की सबसे बड़ी विशेषता है कि यह दुश्मन देश की सीमाओं में पता लगा लेगा कि कौन–सा इलेक्ट्रानिक उपकरण कहां लगा हुआ है। टीडीयू को कमांड दिए जाने पर उक्त इलेक्ट्रानिक उपकरण को भी नष्ट कर सकता है। यह विपरित मौसम में भी लगातार कार्य कर सकता है, साथ ही दुश्मन देश के उपकरणों की आडियों व वीडियो रिकार्डिंग भी कर सकता है। सीमा के दो किलोमीटर तक के अंधेरे क्षेत्र को उजाला भी कर सकता है। उच्च इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की भांति यह तमाम रिपोर्ट अपने दूर के नियंत्रण कक्ष को भी प्रेषित कर सकता है।

काली–5000

'काली–5000' एक शक्तिशाली लेजर हथियार है। इसे भाभा एटोमिक रिसर्च सेंटर (बार्क) विकसित कर रहा है। इस हथियार की कल्पना सन् 1985 में बार्क के तत्कालीन डायरेक्टर डा. चिदम्बरम ने की थी। इस स्टारवार हथियार का डिजायन पी.एच. रोन ने किया है। काली–5000, कई गीगावाट शक्ति की माइक्रोवेव तरंगे उत्पन्न करेगा, जो शत्रु के मिसाइलों तथा विमानों की इलेक्ट्रानिक प्रणालियों व कम्प्यूटर चिप्सों को नष्ट करके उन्हें ध्वस्त कर देगा।

एजेटी विमान

'एजेटी' अर्थात एडवांस्ड जैट ट्रेनर ब्रिटेन निर्मित प्रशिक्षण विमान है जिसे वर्ष 2008 में वायु सेना में शामिल कर लिया गया है। ये 'हाक विमान' के नाम से भी जाने जाते हैं। अभी तक सूर्य किरण के बाद सीधे मिग–21 की हाई स्पीड व जटिल लैंडिग के चलते जरा सी चूक दुर्घटना का कारण बन जाती थी। अब हाक विमानों के प्राप्त हो जाने के बाद मिग–21 को प्रशिक्षण से हटाकर केवल आपरेशन उपयोग में ही लाने की वायु सेना की योजना है। इन प्रशिक्षण विमानों को वायु सेवा के बीदर (कर्नाटक) केन्द्र पर तैनात किया गया है।

एडवांस्ड एयरडिफेंस सिस्टम

2 दिसंबर, 2007 को उड़ीसा के बालासोर स्थित एकीकृत परीक्षण केन्द्र, चांदीपुर से सतह से सतह पर मार करने वाले पृथ्वी–II (डमी मिसाइल) को छोड़ा गया। इसको लक्ष्य बनाकर दूसरा पृथ्वी–II (इंटरसेप्टर) मिसाइल उड़ीसा के भद्रक जिले के समीप बंगाल की खाड़ी में स्थित व्हीलर द्वीप से दागा गया और इसने सफलतापूर्वक पहले छोड़े गए प्रक्षेपास्त्र का लक्ष्य भेदन किया। इस तरह से सामरिक परीक्षण के लिए डीआरडीओ ने विशेष रूप से जिस मिसाइल का डिजाइन विकसित किया है उसे एडवांस्ड एयर डिफेंस AAD) नाम दिया गया है। वायुमंडल के भीतर परीक्षण करके भारत ने द्विस्तरीय प्राक्षेपिक प्रक्षेपास्त्र प्रतिरक्षा प्रणाली का सफलतापूर्वक विकास कर लिया है और एंटी बैलिस्टिक मिसाइल क्षमता रखने वाले अमेरिकी 'पैट्रियाट पीएसी–3' से बेहतर है क्योंकि भारतीय रोधी प्रणाली 30 से लेकर 70 कि.मी. की ऊंचाई पर घुसपैठिये मिसाइल को मार गिरा सकता है पैट्रियाट इससे कम ऊंचाई पर मिसाइल को नष्ट करता है।

अग्नि ए–1

अग्नि श्रृंखला ए–1 मिसाइल का प्रथम सफल परीक्षण जुलाई 2004 में बालासोर के निकट व्हीलर्स द्वीप स्थित अंतरिम परीक्षण केन्द्र से किया गया था। इस मिसाइल की मारक क्षमता 700 किमी. है। सतह से सतह पर मार करने वाले अग्नि मिसाइल का यह लघु संस्करण है। इसके अन्य दो संस्करण क्रमशः अग्नि–1 व अग्नि–2 हैं।

अग्नि–1 1600 किमी. की दूरी तक तथा अग्नि–2, 2500 कि.मी. की दूरी तक मार करने में सक्षम है।

मिनी एरियल व्हीकिल

इस उपकरण का निर्माण भारतीय विज्ञान संस्थान- बेंगलुरु ने किया है। यह उपकरण सैन्य चौकसी, मौसम संबंधी जानकारी तथा बाढ़ राहत आदि में उपयोगी होगा। यह मानवरहित छोटा विमान है। इसे 'पामटाप' (Palmtops) भी कहा जाता है क्योंकि इसे हाथ से उछाल कर उड़ाया जाता है। यह कीड़े-मकोड़े के आकार का है। इसका सैन्य तथा नागरिक दोनों उपयोग संभव है।

प्रथम एमएवी 6 कि.ग्रा. वजन का है। इसका पंख 5 फुट चौड़ा है। इसमें एक शक्तिशाली कैमरा लगा है। यह लगभग 90 मिनट तक उड़ सकता है तथा 60 कि.मी. का चक्कर लगा सकता है। सबसे छोटा एमएवी लगभग 1.5 कि.ग्रा. का है और एक फुट चौड़ा है। इसे जमीन से एक रिमोट के जरिये संचालित किया जा सकता है। अमेरिका में इससे भी छोटे-छोटे एमएवी बना लिए गए हैं। वहां पर लगभग 6 इंच चौड़े तथा 100 ग्राम के ऐसे विमान हैं।

एस यू-30 एम के-I विमान

एस यू-30 एमके-I रूसी लड़ाकू विमान एसयू-30 का उन्नत रूप है, जिसे भारत ने प्राप्त किया है। सन् 2001 में रूस से 140 एसयू-30 एमके-I प्राप्त करने का एक समझौता भारत ने किया। ये विमान आगामी 17 वर्षों में भारत को प्राप्त होंगे और यहीं बनाये जाएंगे।

एसयू-33

एसयू-33 विमान रूसी लड़ाकू विमान एसयू-30 का नौसैनिक संस्करण है। भारत ने इसे अपने नौसैनिक उपयोग हेतु रूस से खरीदा है।

एफ-22 रैपटर विमान

'एफ-22 रैपटर लड़ाकू विमान' एक अत्यंत उन्नत जेट फाइटर का नाम है जिसे अमेरिका 1980 से विकसित कर रहा है। इसके विकास से अमेरिका की वायु-सेना का वर्चस्व कायम हो जायेगा।

राडार

'राडार' का अर्थ है- रेडियो तरंगों द्वारा किसी वस्तु का पता लगाना तथा उसकी दूरी मालूम करना। इसके लिए जो रेडियो तरंगें प्रयोग में लायी जाती हैं, वे बहुत कम तरंग दैर्ध्य वाली होती हैं। इन तरंगों को विशेष प्रकार के एरियल द्वारा प्रसारित किया जाता है। राडार का एरियल स्वचालित तरीके से एक निश्चित गति से चारों ओर घूमता रहता है, ताकि वह सभी दिशाओं में संकेत भेज सके। किसी भी दिशा से आने वाली धातु की वस्तुओं से परावर्तित होकर ये तरंगे पुनः वापस आती हैं और राडार की स्क्रीन पर चमकदार चिन्ह उत्पन्न करती हैं। इसी चमकदार चिन्ह के आधार पर विश्लेषण कर विमान, टैंक, मिसाइल आदि का पता लगाया जाता है।

स्वदेश निर्मित बीएफएसआर राडार

बेंगलुरु स्थित 'इलेक्ट्रानिक्स एंड राडार प्रतिष्ठान' ने कम वजन का एक ऐसा गश्ती राडार विकसित किया है जिसकी सहायता से दुश्मन के रेंगते या पैदल चलते हुए सैनिकों, हल्के व भारी वाहनों तथा कम ऊँचाई पर उड़ते हुए हेलीकॉप्टरों का पता आसानी से लगाया जा सकता है। इसका वजन मात्र 27 कि.ग्रा. है। इस बैटल फिल्ड सर्वीलेंस राडार को सैनिक अपनी पीठ पर लादकर भी दुर्गम स्थानों तक ले जा सकेंगे।

तोप खोजी राडार-डब्ल्यू एल आर

'डब्ल्यूएलआर' राडार अर्थात् वीपंस लोकेटिंग राडार नामक यह यंत्र सीमा पर जंगली या पर्वतीय इलाकों में छिपाकर चलायी जाने वाली तोपों की सटीक स्थिति बताने में पूरी तरह सक्षम है। तोप खोजी इस राडार का विकास रक्षा अनुसंधान एवं विकास संगठन ने किया है। देश में विकसित इस राडार की क्षमता अमेरिकी एएनटीवीक्यू-37 राडार के बराबर है। यह राडार 50 कि. मी. की दूरी तक दुश्मन के किसी भी हमलावर तोप को लोकेट कर सकता है। यह एक साथ ऐसी आठ हमलावर तोपों की सटीक स्थिति बता सकता है। इस तरह के तोप खोजी राडारों की विशेषकर सियाचिन और कारगिल इलाके में विशेष जरूरत होती है क्योंकि वहां पाकिस्तानी सेना अपनी तोपें छिपाकर रखती हैं।

इन्द्र-2 राडार

बेल की गाजियाबाद इकाई और बेंगलुरु स्थित इलेक्ट्रानिक राडार विकास संस्थान के सहयोग से 'इन्द्र-2' राडार का विकास किया गया है। यह अत्याधुनिक राडार नीची उड़ान भर रहे किसी शत्रु के लड़ाकू विमान के आने की चेतावनी 90 कि.मी. दूर से दे सकता है।

त्रिआयामी राडार

भारत में प्रथम बार सन् 2002 में रक्षा प्रदर्शिनी डेफएक्सपो नई दिल्ली में 'त्रिआयामी राडार' को प्रदर्शित किया गया था। यह राडार एक साथ 150 से अधिक लक्ष्यों पर नजर रख सकता है तथा कम ऊँचाई (पेड़ जितनी ऊँचाई) पर चुपके से आने वाले शत्रु के विमान को लगभग 150 कि.मी. दूर से सूचित कर सकता है। यह शत्रु के विमान की दिशा तथा स्थिति का कंप्यूटरों पर विश्लेषण कर इसे तत्काल मार गिराने का निर्देश मिसाइल प्रणालियों को या वायुसेना को दे देता है। इस प्रकार के राडार का विकास 'आकाश' मिसाइल को पूर्व चेतावनी देने वाले राडार के तौर पर विकसित किया गया था। परंतु अब यह सेना के तीनों अंगों के लिए उपयोगी साबित हो रहा है। यह राडार अपने और दुश्मन के विमान को पहचानने में सक्षम है। यह सड़क, रेल या वायुमार्गों से कहीं भी भेजा जा सकता है। तीन बड़े ट्रकों पर स्थित इस राडार को केवल 20 मिनट के अंदर ही तैनात कर सक्रिय किया जा सकता है। यह राडार शत्रु सेना की इलेक्ट्रानिक प्रणालियों द्वारा अवरुद्ध करने के प्रयास को असफल कर सकने में भी सक्षम है।

रोहिणी राडार प्रणाली

'रोहिणी राडार प्रणाली' वायु सेना की नवीनतम रक्षा प्रणाली है जिसे हाल में ही वायुसेना में शामिल किया गया है। यह 'त्रिआयामी राडार' है। यह राडार लगभग 185 किमी. दूर से किसी शत्रु विमान या नीचे उड़ान भर रहे छोटे हेलिकाप्टर को भी खोज सकता है। यह चारों दिशाओं में एक साथ देख सकता है। नौ-सेना के लिए इसके नई संस्करण 'रेवती' का विकास किया जा रहा है। इसका प्रयोग जासूसी विमान अवाक्स के साथ भी किया जा सकता है। इस राडार का विकास डीआरडीओ के इलेक्ट्रानिक्स एंड रिसर्च तथा निर्माण रक्षा उपक्रम-भारत इलेक्ट्रानिक्स ने किया है।

शांत राडार

भारत में एक ऐसे 'राडार' का विकास किया गया है जो शत्रु विमान के रेंज से बाहर रहकर कार्य कर सकता है। इसका पता शत्रु सेना नहीं लगा सकती है। यह रेडियोधर्मी भेदी मिसाइल का हमला भी झेल सकने में सक्षम है। यह राडार अपनी रक्षा स्वयं करने में समर्थ है क्योंकि यह शत्रु विमानों को अपना आभास भी नहीं होने देता है। इसका विकास भारत इलेक्ट्रानिक लिमिटेड ने नौसेना के प्रयोग हेतु किया है।

अर्पणा राडार

'अर्पणा राडार' देश का अत्याधुनिक राडार है जिसे नौसेना अपने प्रयोग में ला रही है। समुद्र में चौकसी करने वाले इस राडार 'अर्पणा' से युक्त युद्धपोत क्षितिज के पार स्थित शत्रु के युद्धपोत का पता लगा सकते हैं। यह एक सर्वेक्षणकारी तथा नियंत्रणकारी राडार है। यह 'X-बैंड' से युक्त है तथा युद्धपोतों को आत्मरक्षा के लिए समुचित चेतावनी दे सकता है।

स्वदेशी वायु रक्षा युद्धपोत

भारत का पथम स्वदेशी वायु रक्षा युद्धपोत (एडीएस) कोच्चि नौसैनिक गोदी में निर्मित किया जा रहा है। इसकी लंबाई 2050 मी. तथा विस्थापन क्षमता 37500 टन होगी। यह वायु रक्षा युद्धपोत नौसेना के वर्तमान आईएनएस विराट का स्थान लेगा। यद्यपि यह योजना पुरानी है परंतु सरकार ने वर्ष 2003-04 में इसके निर्माण की अनुमति प्रदान की।

आई.एन.एस ब्रह्मपुत्र

आई.एन.एस. ब्रह्मपुत्र एक 'गाइडेड मिसाइल फ्रिगेट' है जिसे सन् 2000 में नौ-सेना को सौंपा गया था। यह स्वदेशी है तथा अत्याधुनिक इलेक्ट्रानिक युद्ध प्रणालियों, रूसी मिसाइल 'उरन' तथा त्रिशुल मिसाइल से लैस है। प्रोजेक्ट-16 ए के तहत इस युद्धपोत का निर्माण

हुआ तथा नौसेना की परंपरा के अनुसार 1958 में नौ सेना में शामिल इसी नाम के युद्धपोत (जो कि अवकाश ग्रहण कर रहा है।) के स्थान पर दूसरे अधिक उन्नत आईएनएस ब्रह्मपुत्र नौ सेना को सौंपा गया है। इस पर दो बड़े ब्रिटिश 'सीकिंग' हेलीकाप्टर तेनात हैं। इसमें 'सीकिंग' मिसाइल भी लगा है। इस पर पूर्व चेतावनी देने वाले स्वदेश निर्मित 'अपर्णा' राडार प्रणाली लगाई गई है। इसमें इजरायल निर्मित मिसाइल 'बराक' भी तैनात है। यह बीच समुद्र में किसी शत्रु युद्धपोत के मिसाइल आक्रमण को झेलने में तथा शत्रु के समुद्री तथा जमीनी लक्ष्यों पर प्रहार करने में सक्षम है।

एडमिरल गोर्शकोव

एडमिरल गोर्शकोव रूसी विमान वाहक पोत है, जिसे भारत ने खरीदने के लिए भारत ने वर्ष 2004 में रूस से समझौता किया। रूस इसे पूरी तरह से भारतीय नौ सेना के अनुरूप तैयार कर भारत को सौंपेगा। वर्ष 2008 तक इसे भारत को सौंप देना था, परंतु इसके मूल्य को लेकर विवाद अभी भी जारी है। इस पर मिग-29 के अलावा टोही हेलीकाप्टर, बजाल्ट एवं किंजल मिसाइल तथा पनडुब्बी नाशक कामोव-31 हेलीकाप्टर भी तैनात होंगे। इसका मूल नाम 'बाकू' है। बाद में इसका नाम रूस के एक प्रसिद्ध जनरल के नाम पर एडमिरल गोर्शकोव रखा गया। इसकी लंबाई 273 मीटर है। पोत पर लगभग 1950 नौ सैनिक, 18 लड़ाकू विमान तथा हेलीकाप्टरों का एक बेड़ा हमेशा तैनात रहेगा।

आईएनएस जलाश्व

आई.एन.एस.जलाश्व भारतीय नौसेना में शामिल होने वाला अपनी श्रेणी का प्रथम युद्धपोत है। इसे अमेरिका से एक समझौते के तहत वर्ष 2007 में खरीदा गया। इसका मूल नाम 'यूएसएस ट्रेंटन' था। इसकी लंबाई 173 मीटर तथा चौड़ाई 32 मीटर है। यह भारत में आई एन एस विराट के बाद द्वितीय सबसे बड़ा युद्धपोत है। 'जलाश्व' संस्कृत नाम है इसका अर्थ होता है-दरियाई घोड़ा। इस पोत के द्वारा सैनिक तथा हथियारों को दूर मोर्चे पर भेजा और लाया जा सकता है। अब भारत के पास भी 'लैंडिंग प्लेटफार्म डाक' युक्त पोत उपलब्ध हो गया है। युद्ध के दौरान सैनिकों को शत्रु के समुद्र तट पर उतारने के साथ-साथ प्राकृतिक आपदाओं के दौरान राहत कार्यों में इसका प्रयोग किया जा सकेगा।

आईएनएस शिवालिक

आईएनएस शिवालिक स्टील्थ युद्धपोत है। इसे वर्ष 2003 में नौसेना ने प्राप्त किया था। परियोजना -17 के अंतर्गत निर्मित यह स्वदेशी युद्धपोत देश का प्रथम स्वदेशी उच्च माारक क्षमता वाला तथा बचाव प्रणालियों से युक्त स्टील्थ युद्धपोत है। ऐसे दो और पोत का निर्माण किया जाएगा। लगभग 7 अरब रु. की लागत से निर्मित इस पोत पर रूस निर्मित 'क्लब' मिसाइल तथा सुपर सैनिक ब्रह्मोस मिसाइल भी तैनात किए जाएंगे।

आईएनएस ऐरावत

'आईएनएस ऐरावत' देश का छठा लैंडिंग शिप टैंक तथा भारत का 132वां युद्धपोत है। इसे 2009 में नौसेना को सौंपा गया है। यह 'शार्दूल वर्ग' का युद्धपोत है जिस पर हवाई हमलों से बचने के लिए विमान भेदी तोपें और कंधे से छोड़ी जाने वाली 'इगला' मिसाइलों के अलावा एएलएच हेलीकाप्टर 'ध्रुव' तथा सीकिंग हेलिकाप्टर भी तैनात होंगे। इसके अतिरिक्त इस पर दस मुख्य टैंक, 11 समघात ट्रक तथा पांच सौ सैनिक व चालक दल के 170 सदस्य तैनात होंगे। इस पर जल-थलीय कार्रवाई हेतु दो राकेट लांचर भी तैनात होंगे। यह 49 दिनों तक समुद्र में रह सकता है।

आईएनएस विक्रमादित्य

'आईएनएस विक्रमादित्य' उस पोत का नाम है जो भारत में वर्ष 2005 से निर्मित हो रहा है तथा विमान वाहक पोत है। यह युद्धपोत 252 मीटर लंबा, 58 मीटर चौड़ा, 25.6 मी. गहरा होगा तथा इसकी विस्थापन क्षमता 37 हजार 500 टन होगी। इस पर एक साथ तीस लड़ाकू विमान तथा हेलीकाप्टर तैनात किए जा सकते हैं। इनमें स्वदेशी एलसीए तथा मिग-29 भी शामिल होंगे। यह पोत वर्ष 2012 में तैयार हो जाएगा। इस पोत पर दो हवाई पट्टियां तथा एक विमान उतारने का डेक होगा। यह पूर्णत स्वदेशी होगा। इस पोत का निर्माण 'कोच्ची शिपयार्ड' कर रहा है तथा इटालीयन कंपनी फिनकेंटियरी अपनी तकनीकी सहायता प्रदान कर रही है इतना बड़ा विमानवाहक पोत बनाने वाला भारत अमेरिका, फ्रांस तथा रूस के बाद चौथा देश होगा। यह विमानवाहक पोत

पूर्ण रूपेण भारतीय डिजाइन पर आधारित है तथा इसमें लगाने वाला स्टील भी भारतीय स्टील कंपनी 'स्टील आथरिटी आफ इंडिया' द्वारा बनाया जाएगा।

आई.एन.एस प्रहार

'आई.एन.एस प्रहार' विश्व के सबसे तेज गति से चलने वाले मिसाइल पोतों में से एक है। इसे 1997 में कमीशन प्रदान किया गया था। इसकी गति 48 नाटिकल कील है। इसकी लंबाई 56 मीटर तथा विस्थापन क्षमता 500 टन है। यह सतह से सतह पर मार करने वाली मिसाइलों से युक्त है। आई.एन.एस प्रहार भारत में रूस की सहायता से निर्मित इस प्रकार का छठा मिसाइल वाहक पोत है। इसका निर्माण गोवा शिपयार्ड में किया गया था। इसे पश्चिमी नौसैनिक कमान के बेडे में शामिल किया गया है। इसकी माारक क्षमता के कारण इसे भारतीय नौ सैनिक के माारक बेड़े 'किलर स्क्वाड्न' का हिस्सा बनाया गया है। युद्ध काल में इस बेड़े की विशेष भूमिका होगी।

आई.एन.एस प्रबल

स्वदेश निर्मित तथा आधुनिक मिसाइलों से युक्त इस पोत को वर्ष 2002 में कमीशन प्रदान किया गया था। ज्ञातव्य है कि यह पोत सन् 1990 में नौ सेना में शामिल पोत का ही परिष्कृत रूप है। इस पर 76 मिमी.की सतह से सतह पर मार करने वाली तथा विमान भेदी तोपें लगी हुई हैंइसके अतिरिक्त इसमें अत्याधुनिक राडार और इलेक्ट्रानिक उपकरण लगे हुए हैं। इस पोत को नौसेना में शामिल किए जाने से पोत निर्माण के क्षेत्र में देश के स्वावलंबी बनाए जाने की दिशा में किए जा रहे प्रयासों को बल मिलहै।

आई.एन.एस तलवार

आईएन.एस तलवार भारत का प्रथम स्टील्थ पोत है। इसे वर्ष 2003 में नौसेना में शामिल किया गया था। इस पर 200 कि. मी. तक मार करने वाली क्लब मिसाइलें, 250 मि.मी तक मार करने वाली स्टील मिसाइलें, टारपीडो, पनडुब्बी नाशक राकेट तथा कास्तान टोप, जो एक मिनट में 100 फायर कर सकती है, तैनात हैं। यह पोत रूस द्वारा निर्मित है।

आई.एन.एस दिल्ली

आईएनएस दिल्ली का जलावतरण 1997 में हुआ था। इसका निर्माण मंझगांव गोदी में हुआ था। यह अत्यंत विशालकाय युद्धपोत है जो तत्कालीन एशिया का सबसे बड़ा युद्ध पोत था। इसकी लंबाई 163 मीटर, चौड़ाई-70 मीटर तथा 6.4 मी. ऊंची है।

आई.एन.एस घड़ियाल

आईएनएस घड़ियाल का जलावतरण वर्ष 1997 में हुआ। लैंडिंग शिप टैंक वर्ग के इस युद्धपोत में देश के मुख्य युद्धक टैंक अर्जुन सहित देश के नवीनतम टैंकों को रखने की क्षमता है।

आई.एन.एस मैसूर

भारतीय नौसेना के अत्याधुनिक स्वदेशी आईएनएस मैसूर को 1999 में मुंबई में जलावतरण किया गया। 6700 टन विस्थापित क्षमता के इस विध्वंसक पोत पर सतह से सतह पर मार करने वाले अनेक मिसाइल तैनात हैं।

आई.एन.एस सतपुड़ा

स्वदेश निर्मित स्टील्थ युद्धपोत सतपुड़ा का जलावतरण मझगांव बंदरगाह पर वर्ष 2004 में अरब सागर में किया गया था। 4900 टन विस्थापित क्षमता वाले इस युद्धपोत को अत्याधुनिक हथियारों से युक्त किया गया है। इस श्रेणी के प्रथम युद्धपोत शिवालिक का जलावतरण भी वर्ष 2004 में ही किया गया था।

सागरनिधि

'सागरनिधि' एक सामुद्रिक अनुसंधान पोत (ओआरवी)है। इसे वर्ष 2007 में जलावतरित किया गया। यह पोत, सागर पूर्वी तथा सागर पश्चिमी के बाद तीसरा पोत है। इटली में निर्मित यह पोत सबमर्सिबल कैप्सूल लांच करने में सक्षम है जिसकी सहायता

से वैज्ञानिक समुद्री सतह से 6 कि.मी. की गहराई तक जा सकते हैं। 104 मीटर लंबे तथा 18 मीटर चौड़े इस पोत का उपयोग उष्णकटिबंधीय एवं ध्रुवीय वातावरण में समुद्र अध्ययन के अलावा फ्यूचर गैस हाइड्रेट के सामुद्रिक अध्ययन, वन्य जीवन की उत्पति के वैज्ञानिक साक्ष्यों की खोज व गंभीर रोगों के इलाज संबंधी अनुसंधान में किया जाएगा।

आई.एन.एस विराट

आई.एन.एस विक्रांत के सेवानिवृति के बाद भारत की विस्तृत समुद्री सुरक्षा का भार विमानवाहक पोत आई.एन.एस विराट पर है। वर्तमान में यह देश का एक मात्र विमान वाहक पोत है। यह 750 फुट लंबा तथा 90 फुट चौड़ा है और 27 फुट गहरा है। इसका मूल नाम एवएमएस हार्मिज था। पूर्व में यह ब्रिटिश जलपोत था यह विमान वाहक पोत विभिन्न प्रकार के स्वचालित यंत्रों और अत्याधुनिक सुविधाओं से लैस है, साथ ही अनेक प्रकार की मिसाइलों तथा समुद्र में छुपी पनडुब्बियों से बचाव की तकनीक से भी लैस है। विराट को 1987 में कमीशन पदान किया था तथा वर्ष 2010 में सेवानिवृति दे दी जाएगी।

आई.एन.एस कोलकाता

आइएनएस कोलकता का जलावतरण वर्ष 2006 में किया गया। 6800 टन विस्थापन क्षमता वाला 163 मीटर लंबा यह युद्धपोत सन् 2010 में भारतीय नौ सेना में शामिल किया जाएगा।

आइएनएस तिल्लंगचंग

भारतीय नौसेना का युद्धपोत आईएनएस तिल्लंगचंग नौसेना से हटाकर अब मालदीव को सौंप दिया गया है। मालदीव में इसे तटरक्षक दल में शामिल किया गया है जहां यह मालदीव के तटीय क्षेत्रों में अपने दायित्व को निभाएगा । आतंकवाद समुद्री डकैती व तस्करी के विरूद्ध संघर्ष हेतु पारस्परिक सहयोग के तहत इस युद्धपोत को मालदीव को सौंपा गया है।

नौ सेना

- भारतीय नौ सेना में प्रथम पोत आइएनएस ब्रह्मपुत्र का प्रवेश 1958 में हुआ था।
- 1961 ई. में विमान वाहक पोत आईएनएस विक्रांत का प्रवेश हुआ।
- त्रिशुल मिसाइल के नौ सैनिक संस्करण को 'टारपीडो एम के 2' के नाम से जाना जाता है।

आई.एन.एस प्रवासी

आईएनएस प्रवासी को वर्ष 2002 में कमीशन प्रदान किया गया। इस पर सतह से वायु में मार करने वाली मिसाइलें तैनात हैं। इसकी गति 35 नाटिकल मील है।

आईएनएस नीलगिरी

भारत का प्रथम स्वदेशी स्टील्थ युद्धपोत आइएनएस नीलगिरी है। यह नया नीलगिरी पोत 4900 टन विस्थापन क्षमता वाला है। इसकी अधिकतम गति 30 नाटिकल मील है। इसमें लगी मिसाइल प्रणाली से 6 विभिन्न दिशाओं में एक साथ वार किया जा सकता है।

सरोजनी नायडु युद्धपोत

भारतीय कोस्ट गार्ड को एक नया सीजीएस 'सरोजनी नायडु' प्रदान किया गया है। यह एंटी टेरोरिस्ट वारशीप है। साथ बचाव एवं खोजी अभियान में भी सहायता करेगा। इसका निर्माण 'गोआ शीपयार्ड' में हुआ है। इस पर 930 एम एम मेडक गन लगे हुए है और यह गलोबल पोजिशनिंग सिस्टम से जुड़ा हुआ है।

अत्याधुनिक तारपीडो 'शेयना'

विशाखापत्तनम स्थित नौसना तथा प्रौद्योगिकी प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने 'शेयना' प्रकार के अत्याधुनिक तारपीडो का विकास किया है। इसे हेलीकॉप्टर तथा पोत दोनों से ही छोड़ा जा सकता है। इसका वजन 200 कि.ग्रा. तथा लंबाई 27 मीटर है। यह 6 कि.मी तक अपने लक्ष्य का पीछा कर सकता है।

स्वदेशी तारपीडो

'टारपीडो' जल के अंदर काम आने वाला एक हथियार है। यह पानी के अंदर ही दुश्मन सेना की पनडुब्बियों तथा युद्ध पोतों को नष्ट कर देता है। भारत में विकसित टारपीडो के सफल परीक्षण से भारत विश्व के 8 गिने-चुने देशों में शामिल हो गया है। अत्याधुनिक स्वदेशी तकनीक से निर्मित यह टारपीडो शत्रु की पनडुब्बियों को 6 कि.मी. दूर से समुद्र की 400 से 500 मीटर की गहराई में माार गिराने की क्षमता रखता है।

मुख्य युद्धक टैंक-अर्जुन

देश का मुख्य युद्धक टैंक-अर्जुन स्वदेशी तकनीक से विकसित किया गया है। सन् 1996 में इस टैंक को थल सेना को समर्पित किया गया था। जबकि भारत सरकार ने 1974 में ही इस परियोजना को स्वीकृति प्रदान की थी। इसका निर्माण मुख्य रूप से चेन्नई के निकट अवाड़ी स्थित हैवी ब्हीकल फैक्ट्री में किया जा रहा है। अगस्त 2004 में इस फैक्ट्री में निर्मित पांच अर्जुन टैंकों की प्रथम खेप भारतीय सेना के 43 वीं रेजीमेंट को सौंपीगई।

अर्जुन टैंक का वजन 56.5 टन है। इसकी क्षमता 1400 हार्स पावर की है। इंजन की तकनीक जर्मनी की 'एमटीयू कंपनी से प्राप्त की गई है। इसमें 120 एमएम की तोप लगी है जो एक मिनट में आठ राउंड फायर कर सकती है। इसकी भेदन क्षमता 2.5 कि.मी. से अधिक है। इसकी अधिकतम गति 74 कि.मी. प्रति घंटा है। रेगस्तानी एवं नदियों के दलदली क्षेत्रों में भी यह आसानी से चल सकता है। यह नाइट विजन उपकरण से युक्त है। इसका बाहरी आवरण मिश्र धातु से निर्मित 'कंचन' नामक अभेद्य कवच है जो कि स्वदेशी है। साथ ही इसमें एक विशेष प्रकार का फिल्टर लगाया गया है, जो जवानों को जहरीली गैसों एवं विकिरण के प्रभावों से सुरक्षा प्रदान करता है।

यह अपने चारों ओर 360^0 पर घूम कर तीव्रता से आग बढ़ते हुए अचुम फायरिंग कर सकता है। टैंक में 'पेरोनायिक साइट सुविधा' है, जिसमें इसके कमांडर इसके भीतर बैठकर चारों तरफ की निगरानी कर सकता है। इसमें 'आर्मर वियसिंगफिन स्टैबिलाइस्ड डिस्कार्ड सैबोट' प्रणाली लगा है, जिससे यह बख्तर बंद गाड़ियों एवं घूमते-फिरते मोबाइल लक्ष्य पर अचूक निशाना लगा सकता है।

टी-90 एस भीष्म टैंक

'टी-90 एस भीष्म टैंक' तीसरी पीढ़ी का युद्धक टैंक है। इसे सन् 2004 में सेना के सुपुर्द किया गया। यह मध्यम श्रेणी का युद्धक टैंक है। ज्ञातव्य है कि 50 टन से कम वजन वाले टैंक मध्यम श्रेणी के युद्धक टैंक माने जाते हैं। इस टैंक के लिए वर्ष 2001 में भारत एवं रूस के बीच समझौता हुआ था जिसके अंतर्गत 124 टी-90 टैंक तैयार अवस्था में भारत को मिले तथा शेष भारत में ही तैयार किए जा रहे हैं। इसका निर्माण आवडी स्थित टैंक कारखाने में हो रहा है। 'टी-90' टैंक का इंजन 1100 हार्स पावर का है। इसका वजन 46.5 टन है जो अमेरिकी एब्रम्स, जर्मन लेपर्ड, ब्रिटिश चैलेंजर तथा फ्रांसीसी लेकलर्क टैंकों से काफी हल्का है। यह परमाणु, रासायनिक तथा जैविक आक्रमण के माहौल में भी सक्रिय रह सकता हैं। यह बारुदी सुरंगों से भी अपना बचाव कर सकता है। टी-90 टैंक में आत्मरक्षा के लिए लेजर निर्देशित रिफलेक्स मिसाइल लगे हैं जो पांच कि.मी. दूर तक के लड़ाकू हेलीकाप्टरों को नष्ट कर सकता है। इसकी अधिकतम गति 60 कि.मी. प्रति घंटा है, इसे चलाने के लिए तीन व्यक्तियों की आवश्यकता होती है।

युद्धक टैंक 'कर्ण'

युद्धक टैंक 'कर्ण' का आधिकारिक नाम टैंक-एक्स है तथा डीआरडीओ के वैज्ञानिकों के द्वारा दिया गया नाम 'कर्ण' है 'कर्ण' को अर्जुन और रूसी टी-72 टैंक की विशेषताओं को जोड़कर बनाया गया है। इसका वजन 48 टन है। इसमें भी 120 मि.मी. तोप लगी है। अर्जुन टैंक के गोले कर्ण में प्रयोग किए जाएंगे। ये गोले इस्पात के मजबूत कवच को भी भेद सकते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें विमान भेदी मशीनगन तथा सधारण मशीनगन भी लगी हुई है। यह दुश्मन के लक्ष्य का पता लगाने के लिए लेजर रेंज फाइंडर से लैस है इसलिए इसे अत्याधुनिक टैंकों की श्रेणी में रखा जाता है। इसमें भी अर्जुन टैंक की तरह ही स्वदेशी कंचन कवच लगा है, जो अत्यंत मारक क्षमता वाले विस्फोटकों को भी झेल सकता है। कर्ण टैंक अपेक्षाकृत हल्का है अत: इसकी गति अर्जुन टैंक

से अधिक है तथा इसमें पांच सैनिक बैठ सकते हैं। यह टैंक भी परमाणु, रासायनिक और जैविक हमला झेल सकता है। इसमें नाइट विजन भी लगा है जिसके कारण यह रात में भी दुश्मन के लक्ष्य पर अचूक वार कर सकता है।

स्वचालित तोप भीम

स्वचालित तोप भीम का शरीर तो अर्जुन का होगा, लेकिन इस पर बोफोर्स तोपों की भांति 155 मि. मी. की 52 कैलिबर वाली तोप गन लगाई गई है, जो 20 सेकेंड में तीन गोले 40 और 52.5 कि.मी. दूर तक फेंक सकता है। वास्तव में यह अर्जुन टैंक पर आधारित स्वचालित तोप है, इसमें एक साथ 50 राउंड गोले रखने की व्यवस्था है तथा इन्हें तोपों में भरने की स्वचालित व्यवस्था है।

वरुणास्त्र टारपीडो

'वरुणास्त्र टारपीडो' स्वदेश निर्मित है। टारपीडो स्वंय संचालित होने वाला विस्फोटक प्रोजेक्टाइल हथियार है। वरुणास्त्र 500 कि.ग्रा. तक पे लोड के साथ लक्ष्य पर हमला कर सकता है। यह 7.6 मीटर लंबा तथा 1500 कि.ग्रा वजन वाला है। इसकी भारक क्षमता 30 कि.मी. तक है। वर्ष 2009 से इसके व्यवसायिक उत्पादन का प्रोग्राम था।

पिनाका

'पिनाका' मल्टी बैरल राकेट लांचर है। यह लगभग 25 वर्ष पुरानी परियोजना का भाग है। इसका निर्माण एआडीई, पूर्ण में किया गया है। यह मात्र 40 सेकेण्ड के अंदर 100 कि.ग्रा. भार वाले 12 राकेट दाग सकता है। इन राकेतों की भारक क्षमता 7 से 39 कि.मी. तक है। इसके द्वारा सतह से सतह पर मार करने वाले कम दूर के राकेटों को छोड़ा जा सकता है। ये राकेट सैन्य दलों के साथ- साथ टैंकों को भी नष्ट कर सकते हैं। 'पिनाका'राकेट लांचर निम्नांकित मानकों को पूरा करता है; ताप सुरक्षा प्रणाली, फ्लो फोर्मड मोटर आवरण, कंपोजिट प्रोपेलेंट और कंपोजिट प्रक्षेपक ट्यूब आदि। इसका नाम भगवान शिव के धनुष 'पिनाक' के नाम पर 'पिनाका' रखा गया है।

अग्निवर्षा

अग्निवर्षा सीमा सुरक्षा बल के लिए विकसित एक मल्टी बैरल लांचर है, जो एक साथ प्रकार के गोले दाग सकता है। इसे हाल में विकसित किया गया है।

लाहट

भारतीय युद्धक वाहन अनुसंद्यान व विकास संस्थान ने लेजर निर्देशित टैंक नाशक मिसाइल 'लाहट' को विकसित किया है। यह मिसाइल अर्जुन टैंक पर लगा रहता है और 120 मि.मी. की मुख नाल से दागा जा सकता है, इसकी भारक क्षमता 6 कि. मी. तक है।

डेजी कटर बम

'डेजी कटर बम' विश्व के सबसे शक्तिशाली गैर-परमाणु बम हैं। इन बमों से संबंधित कुछ प्रमुख तथ्य निम्न हैं-

- घने जंगलों में हेलीपैड बनाने के लिए इन बमों का प्रयोग होता है। ज्ञातव्य है कि 1970 में वियतनाम युद्ध के दौरान इस बम का उपयोग हेलीपैड बनाने के लिए किया गया था।
- इन बमों में अत्यधिक ज्वलनशील यूरेनियम पाउडर का प्रयोग होता है तथा इसके विस्फोट से एक मील के व्यास में तापमान 10 हजार फारेनहाइट तक पहुंच जाता है जो जीव एवं वनस्पति समेत प्रत्येक वस्तु को राख कर देता है। विस्फोट से उत्पन्न दबाव के कारण भूमिगत सुरंग और 12 फीट गहरे कंक्रीट के निर्माण चूर-चूर हो जाते हैं।
- विस्फोट के 95 मिनट बाद भी वायुमंडल का आक्सीजन वापस नहीं आ पाता है जिससे छोटे-छोटे अनेक अन्य विस्फोट होते हैं और परमाणु विस्फोट जैसा गुब्बारा उठता है। विस्फोट से आसपास के लगभग 550 मी. के क्षेत्र में शून्य उत्पन्न हो जाता है।

ज्ञातव्य है कि सन् 2001 में अमेरिकी सेना ने अफगानिस्तान में तालीबानी ठिकानों को नष्ट करने के लिए डेजी कटर बम (बीएलयू-82) का उपयोग किया था।

नापाम बम

अत्यधिक आग उत्पन्न करने वाला बम, जिसमें पेट्रोल की जेली होती है, 'नापाम बम' कहलाता है।

लिक्विड बम

लिक्विड बम ऐसे विस्फोटक हैं जो तरल रूप में होते हैं और इन्हें किसी छोटे से पात्र में आसानी से कहीं भी ले जाया जा सकता है। इन्हें आसानी से पहचानना कठिन होता है। लिक्विड बम रोजमर्रा के उपयोग में आने वाली सामग्रियों जैसे- परफ्यूम्स, सौंदर्य प्रसाधन की सामग्री, बैटरी तथा नाली आदि की सफाई के रसायनों को मिश्रित कर बनाया जा सकता है। रसायनों के मिश्रण से बनाए गए पदार्थ बहुत ही अस्थायी और झटकों तथा ताप के प्रति अति संवेदनशील होने के कारण ये विस्फोटक केवल एक प्रतिशत दबाव बढ़ने पर घरों की खिड़कियों को तोड़ सकते हैं, दस प्रतिशतके दबाव से लोगों की मौत हो सकती है और भवन के ढांचे को क्षति पहुंचायी जा सकती है। लिक्विड विस्फोटक ठोस और द्रव को मिलाकर बनाया जाता है, जिसमें पहला आक्सीडेंट का कार्य करता है तो दूसरा ईंधन का। इसे पहचानने में असुविधा हो इसलिए इसमें डाई मिलाकर रंग दिया जाता है।

इलेक्ट्रोमैग्नेटिक बम

इलेक्ट्रोमैग्नेटिक बम के द्वारा बिजली से चलने वाली हर मशीन बर्बाद की जा सकती है। यह दुश्मन की सेना के कमांड और कंट्रोल मुख्यालय से लेकर सभी शस्त्र प्रणालियों को निष्क्रिय कर सकता है। परमाणु बम को निष्क्रिय करने की क्षमता रखता है। चूंकि इलेक्ट्रोमैग्नेटिक बम इलेक्ट्रोमैग्नेटिक तकनीकी से ऊर्जा का संचार करता है इसलिए इस तकनीकी पर आधारित सभी उपकरणों तथा यंत्रों को नियंत्रित किया जा सकता है।

प्रत्यक्ष रूप से ऐसा बम फटता तो नहीं परन्तु क्रूज मिसाइल में कार्बन ग्रेफाइट की ऐसी कॉइल फिट की जाती है जो इलेक्ट्रोमैग्नेटिक पल्स का निर्माण करती है तथा इलेक्ट्रोमैग्नेटिक किरणों द्वारा यंत्र को हानि पहुंचाता है। जहां तक इसे दुश्मन के लिए प्रयोग करने की बात है तो इसे क्रूज मिसाइल अथवा मानवरहित विमान (यूएवी) में हवाई बम के माध्यम से किया जा सकता है। इस बम की रूपरेखा को थल सेना द्वारा 12 मई 2007 को नई दिल्ली में हुए अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन 'डेफकॉम इंडिया-07' रखा गया था।

प्रथम युद्धक सामग्री संग्रहालय

देश के कोलकाता स्थित आर्डिनेंस फैक्टरी 'कोसीपोर गन एंड शैल फैक्टरी' के एक भाग को युद्ध सामग्रियों के संग्रहालय के रूप में परिवर्तित करने की योजना बनाई गई है। ज्ञातव्य है कि यह फैक्ट्री देश की सबसे प्राचीन आयुध फैक्ट्री है। इस संग्रहालय में युद्ध सामग्रियों एवं हथियार के विकास का इतिहास भी रखा जाएगा। सुरक्षा की दृष्टि से इसमें आम जनता का प्रवेश प्रतिबंधित होगा।

सी बर्ड परियोजना

'सी बर्ड परियोजना' भारतीय नौसेना की महत्वाकांक्षी परियोजना है। वर्ष 2005 में इस परियोजना का प्रथम चरण पश्चिमी समुद्री तट पर कारवाड़ में पूर्ण हुआ। इस परियोजना का आरंभ 1986 ई. में हुआ था। इस परियोजना के अंतर्गत कारवाड़ (कर्नाटक) में नौसैनिक केंद्र की स्थापना की गई जिसे आईएनएस कदम्ब नाम दिया गया है। विस्तृत क्षेत्र पर फैले आईएनएस कदम्ब के पास 26 कि.मी. चौड़ा समुद्री फ्रंट उपलब्ध है।

यह भारत का प्रथम पत्तन है जहां शिवलिफ्ट एवं ट्रांसफर की सुविधा उपलब्ध है। इससे यहां तैनात पोतों को लिफ्ट करके भूमि पर मरम्मत आदि के लिए ट्रांसफर किया जाता है। यहां दस युद्धपोतों को तैनात करने की योजना बनायी गयी है जिनमें मिसाइल विध्वंसक, मिसाइल फ्रिगेट और मिसाइल कार्वेट शामिल होंगे। पूर्णत: विकसित होने पर यह विश्व का नौवां सबसे बड़ा (एशिया का सबसे बड़ा) नौसैनिक केंद्र होगा। भारतीय नौसेना का यह तीसरा संचालन केंद्र है। इससे पूर्व दो केंद्र मुंबई एवं विशाखापट्टनम में कार्यरत हैं।

सीएमडीएस तकनीक

मिसाइलों का उत्पादन करने वाली भारत डायनामिक्स लि. ने मिसाइल हमले से बचाव के लिए देश में एक नयी बचाव तकनीक विकसित किया है। इस तकनीक के माध्यम से किसी भी प्रकार की हमलावर मिसाइलों को पथभ्रष्ट किया जा सकता है। यह तकनीक 'काउंटर मेंजर डिस्पेंसर सिस्टम' (सीएमडीएस) में लगायी जाएगी, जो किसी हमलावर मिसाइल के आने को स्वत: ही देख लेगी और मिसाइल की विशेषता के अनुरूप बचाव के उपाय करेगी। यदि हमलावर मिसाइल ताप की ओर आकर्षित होती है तो इससे बचाव के लिए प्लेयर अर्थात आग के गोले दागे जाते हैं जो हमलावर मिसाइल को उसके पथ से विकर्षित कर देते हैं। यदि हमलावर मिसाइल रेडियो निर्देशित हैं तो इससे बचाव के लिए सीएमडीएस प्रणाली रेडियो तरंगें फेंकने लगती है, जिन्हें 'शैफ' कहते हैं। तब हमलावर मिसाइल इन्हीं रेडियो तरंगों की ओर आकर्षित हो जाती है।

❖❖❖

CHRONICLE IAS ACADEMY

बौद्धिक सम्पदा

CHRONICLE IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

बौद्धिक सम्पदा (आई पी) मानव बुद्धि की सृष्टि है। इसका तात्पर्य, विचारों, जानकारी, अविष्कार, पुनरूद्धार, सृजनात्मकता अनुसंधान आदि से हैं, चूंकि सभी, मानव मस्तिष्क की उपज हैं और किसी सम्पत्ति के समान हैं, चाहे चल अथवा अचल जहां कर्ताधर्ता या स्वामी अपनी इच्छानुसार सम्पत्ति की विशिष्ट उपयोग कर सकता है और उसकी अनुमति के बिना दूसरों को इसका उपयोग करने से रोकने का अधिकार है। बौद्धिक सम्पदा से संबंधित अधिकारों को बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के रूप में जाना जाता है।

बौद्धिक सम्पदा का अधिकार अन्वेषक या सृजक को विशिष्ट अधिकार प्रदान करने के लिए अधिकाधिक लोगों को ऐसे पुनरूद्धार और सृजन में समय प्रयास और धन का निवेश करने के लिए प्रोत्साहित करता है। प्रथागत रूप से बौद्धिक सम्पदा अधिकारों को दो मुख्य क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है –

कॉपीराइट और कॉपीराइट से संबंधित अधिकार : साहित्यिक और कलात्मक कार्यों (जैसे पुस्तक और अन्य लेखन संगीत संकलन, चित्रकारी, मूर्तिकला, कम्प्यूटर प्रोग्राम और फिल्म) के लेखकों के अधिकारों को कॉपीराइट द्वारा संरक्षण दिया जाता है। संबंधित और इसके सन्निकट अधिकारों के लिए भी संरक्षण की गारंटी दी जाती है जैसे अभिनय (निष्पादन) का अधिकार (उदाहरण के लिए अभिनेता, गायक और संगीतकार), फोनोग्राम के निर्माता (ध्वनि रिकार्डिंग) और प्रसारण संगठन।

औद्योगिक सम्पत्ति जिसे दो मुख्य क्षेत्रों में विभाजित किया जाता हैं :

एक क्षेत्र में विशिष्ट प्रतीकों का संरक्षण किया जाता है विशेष रूप से व्यापार चिन्ह (जो एक उपक्रम के माल या उसकी सेवाओं को दूसरे उपक्रमों के माल एवं उनकी सेवाओं से अलग करता है) और भौगोलिक संकेत देता है (जो एक निश्चित स्थान में उत्पादित माल के रूप में अभिचिन्हांकित करता है जहां माल की विशेषता इसके भौगोलिक मूल को अनिवार्य रूप से परिलक्षित करती हैं)।

अन्य प्रकार की औद्योगिक सम्पदा का संरक्षण मुख्य रूप से प्रौद्योगिकी के पुनरुद्धार, डिजाइन और सृजन को अभिप्रेरित करने के लिए दिया जाता है। इस श्रेणी में अविष्कार (जिसका संरक्षण पेटेन्ट द्वारा किया जाता है) औद्योगिक डिजाइन और व्यापार गोपनीयता शामिल हैं।

बौद्धिक सम्पदा अधिकार का मुद्दा विश्व व्यापार संगठन द्वारा अंतरराष्ट्रीय वार्ता के मंच पर अपने बौद्धिक सम्पदा अधिकार की व्यापार संबंधी पहलुओं संबंधी करार के माध्यम से लाया गया था। यह करार विश्व भर में बौद्धिक सम्पदा अधिकारों (आईपीआर) के संरक्षण और प्रवर्तन के विस्तार में मौजूदा मतभेदों को, उनके साझा न्यूनतम अंतर्राष्ट्रीय सहमत व्यापार मानकों के अंतर्गत लाने के द्वारा कम किया है। सदस्य देशों से निर्धारित समय ढांचा के अंतर्गत मानकों के अनुपालन करने की अपेक्षा की जाती है। भारत ने बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की व्यापार संबंधी पहलुओं का हस्ताक्षर कर्ता होने के नाते अपने बौद्धिक सम्पदा संरक्षण के लिए सुस्पष्ट प्रशासनिक और कानूनी ढांचा विकसित किया है।

डब्ल्यूआईपीओ (विपो) क्या है?

विश्व बौद्धिक सम्पदा संगठन (वर्ल्ड इंटैलैक्चुअल प्रोपर्टी आर्गेनाइजेशन) को दिनांक 14 जुलाई 1967 के सम्मेलन के तहत स्थापित किया गया था जो 1970 से लागू हुआ। यह वर्ष 1974 से संयुक्त राष्ट्र की विशेषज्ञ एजेंसी है और बौद्धिक सम्पदा के क्षेत्र में अनेक अंतर्राष्ट्रीय संगठनों या संधियों, जैसे पेरिस और बर्न सम्मेलन, को संचालित करती है। 'विपो' जेनेवा में स्थित है।

'विपो' (WIPO) का उद्देश्य विभिन्न देशों के सहयोग और जहां उचित हो वहां अन्य अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग के माध्यम से बौद्धिक सम्पदा सुरक्षा को बढ़ावा देना है। 'विपो' का उद्देश्य पेरिस तथा बर्न सम्मेलनों और पेरिस यूनियन के सदस्यों के बीच की गई उप-संधियों द्वारा आपस में, प्रशासनिक सहयोग करना है।

विभिन्न सम्मेलनों के तहत गठित यूनियनों के प्रशासन को 'विपो' (WIPO) के सचिवालय 'अंतर्राष्ट्रीय ब्यूरो' द्वारा केन्द्रीकृत किया गया है। अंतर्राष्ट्रीय ब्यूरो द्वारा पेटेंट, ट्रेडमार्क, औद्योगिक डिजाइन तथा उत्पत्ति के नाम से संबंधित अंतर्राष्ट्रीय पंजीकरण सेवाओं का रख-रखाव भी किया जाता है। 'विपो' सलाह, प्रशिक्षण तथा दस्तावेज तैयार करने के माध्यम से विकासशील देशों के साथ सहयोग बढ़ाने के लिए भी वचनबद्ध है।

'विपो' तथा डब्ल्यूएचओ के बीच सहयोग समझौता दिनांक 1 जनवरी 1996 को लागू हुआ। समझौते में निम्नलिखित तीन प्रमुख क्षेत्रों में सहयोग प्रदान किया जाएगा :

- राष्ट्रीय विधियां और विनियम के बीच किसी भी तरह के विवाद तक पहुंच संबंधी अधिसूचना
- राष्ट्रीय प्रतीकों की सुरक्षा के लिए प्रक्रिया का कार्यान्वयन
- तथा तकनीकी सहयोग

बौद्धिक सम्पत्ति का अधिकार और विश्व व्यापार संगठन

विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यू टी ओ) एक अंतरराष्ट्रीय संगठन है जिसकी स्थापना राष्ट्रों के बीच सुव्यवस्थित और मुक्त व्यापार सुनिश्चित करने के उद्देश्य से की गई है। इस प्रयोजन के लिए यह सदस्य देशों के बीच करार की वार्ताएं करने हेतु एक मंच की व्यवस्था करता है। ये करार कृषि, कपड़ा और परिधान, बैकिंग, दूरसंचार औद्योगिक मानकों और उत्पाद सुरक्षा, खाद्य स्वच्छता विनियमों और इससे ऐसे अनेकों से संबंधित होते हैं और यह बहु पक्षीय व्यापार प्रणाली की नींव है।

ऐसी ही एक महत्वपूर्ण करार 'बौद्धिक सम्पदा अधिकारों के व्यापार संबंधी पहलुओं का करार (टीआरआईपीएस)' है। यह पहली बार अंतर्राष्ट्रीय व्यापार प्रणाली में बौद्धिक सम्पदा संबधी कानून बनाया। यह बहु पक्षीय व्यापार वार्ता के उरूग्वे दौर का परिणाम था। इस करार दुनिया भर में बौद्धिक सम्पदा अधिकार (आईपीआर) के संरक्षण और प्रवर्तन के विस्तार में मौजूद मतभेदों को साझा न्यूनतम अंतर्राष्ट्रीय सहमत व्यापार मानकों के अधीन रखकर कम कर दिया है। सदस्य देशों से निर्धारित समय ढांचा के भीतर इन मानकों का अनुपालन करने अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में विकृतियों एवं बाधाओं को कम करने के लिए बौद्धिक सम्पदा अधिकारों की प्रभावी रूप से रक्षा करने की अपेक्षा की जाती है ट्रिप्स के तहत सदस्य देशों की तीन बाध्यताएं हैं :-

- घरेलू कानूनों के माध्यम से न्यूनतम बौद्धिक सम्पदा अधिकार की रक्षा करना।
- इन अधिकारों का प्रभावी प्रवर्तन सुनिश्चित करना।
- विवादों को अंतर्राष्ट्रीय विश्व व्यापार विवाद निपटान के समक्ष रखने के लिए सहमत होना।

क्या ट्रिप्स समझौता समस्त विश्व व्यापार संगठन के सदस्यों पर लागू होता है?

सभी डब्ल्यूटीओ समझौतों (सिर्फ दोहरे 'प्लूरिलेटरल' समझौते को छोड़कर) समस्त विश्व व्यापार संगठन (डब्ल्यूटीओ) के सदस्यों पर लागू होते हैं। प्रत्येक सदस्य द्वारा सभी समझौतों को एकल पैकेज के साथ एकल हस्ताक्षर में - सभी की विशेष भाषा में, 'एकल वचनबद्धता' से स्वीकार किया गया है।

ट्रिप्स (टीआरआईपीएस) समझौता इस पैकेज का एक हिस्सा है। अत: यह समस्त डब्ल्यूटीओ सदस्यों पर लागू होगा।

किन्तु समझौते में भिन्न-भिन्न देशों को भिन्न समयावधि में इसके प्रावधानों को लागू करने की अनुमति प्रदान की गई है। इन विलंबों में समझौता लागू होने से पहले (जनवरी 1995 से पहले) सदस्य देशों में अपील किए जाने तक की अवधि को संधिकाल के रूप में परिभाषित किया गया है मुख्य संक्रमण अवधि निम्नानुसार है :

- विकसित देशों को डब्ल्यूटीओ समझौता लागू होने से एक वर्ष का संधिकाल दिया गया है अर्थात 1 जनवरी 1996 तक
- विकासशील देशों को आगामी 4 वर्ष की अवधि (अर्थात 1 जनवरी 2000) समझौते के प्रावधानों को लागू करने के लिए दी गई है। जो इसमें सामान्य सिद्धांत जैसे गैर-भेदभाव से संबंधित अनुच्छेद 3, 4 तथा 5 के अलावा शामिल हैं।
- अल्प-विकसित देशों को लम्बा संधिकाल दिया गया है जो कुल ग्यारह वर्ष है, 1 जनवरी 2006 तक, जिसमें विस्तार की अपार संभावना है।

ट्रिप्स समझौता तथा इसमें संदर्भित पूर्व मौजूदा अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलनों के बीच क्या संबंध है?

ट्रिप्स समझौते में कहा गया है कि डब्ल्यूटीओ के सदस्य देश डब्ल्यूआईपीओ के मुख्य सम्मेलन की औद्योगिक सम्पदा पर पेरिस समझौता तथा कापीराइट पर बर्न सम्मेलन (अपने नवीनतम संस्करण में) की प्रतिबद्धताओं का पालन करेंगे।

नैतिक आधारों पर बर्न सम्मेलन के प्रावधानों को अपवाद मानने के साथ, इन सम्मेलनों के समस्त वास्तविक प्रावधानों को संदर्भ द्वारा शामिल किया जाता है। अत: ट्रिप्स समझौते के तहत ये डब्ल्यूटीओ सदस्य देशों के लिए बाध्यता हो जाते हैं उनको इन्हें अपने अधिनियम में मुख्य प्रावधानों के रूप में शामिल करना पड़ता है और इन्हें व्यक्ति विशेष और इनकी कम्पनियों पर लागू किया जाता है।

ट्रिप्स समझौते में उन क्षेत्रों की शर्तों को भी शामिल किया गया है, जिनका इन समझौतों में कोई समाधान नहीं किया गया या इनके बारे में पर्याप्त रूप से ध्यान देते हुए विचार नहीं किया गया।

अत: कभी-कभी ट्रिप्स समझौते को 'बर्न और पेरिस संयोजन' समझौते के रूप में भी स्पष्ट किया जाता है।

ट्रिप्स समझौते के मूल पाठ में बौद्धिक सम्पदा अधिकार पर कुछ अन्य अंतर्राष्ट्रीय समझौतों के प्रावधान का उपयोग भी किया जाता है:

डब्ल्यूटीओ के सदस्यों को 'एकीकृत सर्किट से संबंधित बौद्धिक सम्पदा पर संधि' (ट्रीटी ऑन इंटैलैक्चुअल प्रापर्टीज इन रिसपैक्ट ऑफ इंटीग्रेटिड सर्किट - आईपीआईसी ट्रिटी) के प्रावधानों के अनुसार एकीकृत सर्किट ले-आउट डिजाइन की सुरक्षा करना जरूरी है।

ट्रिप्स समझौते में इंटरनेशनल कन्वेशन फार द प्रोटैक्शन ऑफ परफोरमर, प्रोड्यूसर ऑफ फोनोग्राम एंड ब्रोडकास्टिंग आर्गेनाइजेशन (रोम समझौता) के अनेक प्रावधानों को संदर्भित किया गया है, परन्तु इस समझौते के समस्त् प्रावधानों का अक्षरश: अनुपालन करने की आवश्यकता पर बल नहीं दिया गया है।

ट्रिप्स समझौते के अनुच्छेद-2 में यह स्पष्ट किया गया है कि समझौते IV हिस्से में ऐसा कुछ नहीं है जो मौजूदा बाध्यताओं को कम करता है जिसके अनुसार सदस्य देश आपस में एक दूसरे के साथ पेरिस समझौता, बर्न समझौता, रोम समझौता और एकीकृत सर्किट पर बौद्धिक सम्पदा संधि के तहत काम करेंगे।

क्या ट्रिप्स समझौते के अनुसार यह जरुरी है कि बौद्धिक सम्पदा संरक्षण के नियम समस्त सदस्यों पर समान रूप से लागू होते हैं?

जी नहीं, ट्रिप्स समझौते में शामिल किए गए नियमों में से सभी सदस्यों के बौद्धिक सम्पदा अधिकार की सुरक्षा हेतु न्यूनतम मानकों का अनुपालन करना जरूरी है।

किन्तु सदस्य ऐसी कार्यान्वयन विधियों को चुन सकते हैं, जो समझौते की आवश्यकता की तुलना में ज्यादा व्यापक सुरक्षा प्रदान करे ताकि लम्बे समय तक अतिरिक्त सुरक्षा समझौते के प्रावधानों का उल्लघंन न हो।

इसी कारण ट्रिप्स समझौते को कभी-कभी 'न्यूनतम मानक' समझौते के रूप में उल्लेखित किया जाता है।

इसके अलावा समझौते में सदस्यों को अपनी स्वयं की विधिक प्रक्रिया और प्रणाली के तहत समझौतों के प्रावधानों को कार्यान्वित करने के उचित तरीकों को निर्धारित करने की स्वतंत्रता दी गई है। इस प्रकार समझौते में विभिन्न सदस्य देशों के अधिनियमों के सौहार्दपूर्ण कार्यान्वयन के लिए सदस्यों की विविधता तथा इसके विधिक ढांचे उदाहरण के लिए सामान्य विधि तथा सिविल कानून परंपराओं के बीच संबंध को ध्यान में रखा गया है। .

ट्रिप्स (टीआरआईपीएस) एक करार में निम्नलिखित श्रेणी की बौद्धिक सम्पदा शामिल हैं :-

कॉपीराइट और संबंधित अधिकार : ये ऐसे अधिकार हैं जो कानून द्वारा साहित्यिक, नाटकीय, संगीतीय और कलात्मक कार्यों और सिनेमाटोग्राफ फिल्मों एवं ध्वनि रिकॉर्डिंग के निर्माताओं को दिए जाते हैं। यह अधिकारों का एक बंडल है जिसमें अन्य बातों

के साथ-साथ, पुनरुत्पादन, जनसमूह को सूचित करने, कार्य का अनुकूलीकरण और अनुवाद के अधिकार शामिल हैं। कॉपीराइट का विस्तार अभिव्यक्तियों के लिए किया जाएगा न कि विचारों प्रक्रियाओं, प्रचालन की विधियों या गणितीय अभिकल्पनाओं के लिए किया जाएगा। डाटा या अन्य सामग्रियों का संकलन चाहे मशीन द्वारा पाठड या अन्य रूपों में जो चयन की वजह से या उनके विषय वस्तु की व्यवस्था के कारण बौद्धिक सृजन का निर्माण करते हैं? उनकी रक्षा की जाएगी। सदस्य लेखक और शीर्षक में उनके उत्तराधिकारियों को मूल रूप में या अपने कॉपीराइट कार्यों को जनता के लिए वाणिज्यिक किराए पर देने के अधिकार देने या निषेध करने के अधिकार देंगे। करार में कहा गया है कि निष्पादनकर्ताओं को भी अनधिकृत रिकार्डिंग, पुनरुत्पादन और गतिविधि का सीधे प्रसारण को रोकने का अधिकार होना चाहिए

ट्रेड मार्क्स (व्यापार चिन्ह) : कोई प्रतीक या प्रतीकों का मिश्रण जो एक उपक्रम के माल या सेवाओं को अन्य उपक्रमों के माल और सेवाओं से अलग पहचानने में सक्षम हो वह व्यापार चिन्ह का निर्माण करने में सक्षम होगा। पंजीकृत व्यापार चिन्ह का स्वामी को व्यापार के दरम्यान एक समान या माल एवं सेवाओं के उसी प्रकार के प्रतीकों का उपयोग करने के लिए स्वामी की सहमति न लेने वाले सभी तीसरे पक्षों को रोकने का विशिष्ट अधिकार होगा। इस प्रकार से करार व्यापार के चिन्ह के रूप में अर्हक प्रतीकों के प्रकार की रक्षा और उनके स्वामियों को दिए जाने वाले न्यूनतम अधिकारों को पारिभाषित करता है। इसमें यह कहा गया है कि सेवा चिन्हों की रक्षा उसी तरह की जाए जैसे कि माल के लिए प्रयुक्त व्यापार चिन्हों की रक्षा की जाती है। ऐसे चिन्ह जो देश विशेष में सुविख्यात हो गए हैं, उन्हें अतिरिक्त सुरक्षा दी जाए।

भौगोलिक संकेत : ये ऐसे संकेत हैं जो सदस्य देश के क्षेत्राधिकार में सृजित माल को अभिचिन्हित करते हैं, या उस क्षेत्र के प्रदेश या स्थान में सृजन का संकेत देते हैं जहां गुणवत्ता, ख्याति और अन्य विशेषताएं जो माल की होती हैं अपने भौगोलिक मूल को अनिवार्य रूप से परिलक्षित करती हैं। करार के तहत सदस्य इच्छुक पक्षों को निम्नलिखित का निषेध करने के कानूनी उपाय प्रदान करेंगे :- (i) माल के विशेष विवरण या प्रस्तुतीकरण में किसी साधन का उपयोग जो यह निर्दिष्ट करता है कि प्रश्नाधीन माल वास्तविक सृजन स्थान को छोड़कर ऐसे भौगोलिक क्षेत्र में उत्पन्न होता है जो माल के भौगोलिक उत्पादन के रूप में जनता को गुमराह करता है (ii) कोई उपयोग जो करार के अर्थ के अधीन पक्षपात प्रतिस्पर्धा के कार्य का निर्माण करता है।

पेटेन्ट : ये देश द्वारा आविष्कारक को दिए जाने वाले विशिष्ट अधिकार है, अविष्कार को उपयोग, विनिर्माण और विपणन जो नवीनता, पुररूद्धारता और उपयोगिता को संतुष्ट करता है। ऐसे किसी भी अविष्कार के लिए पेटेन्ट उपलब्ध होगा चाहे वह उत्पाद हो या प्रक्रियाएं, प्रौद्योगिकी के सभी क्षेत्रों में यह उपलब्ध होगा। सदस्यों को पेटेन्ट एकत्व अधिकारिता से अलग रखा जा सकता है - (i) मानव या पशु के उपचार के लिए नैदानिक, चिकित्सीय और शल्य चिकित्सा विधियांय (ii) सूक्ष्म जीवों को छोड़कर गैर जीवविज्ञानी और सूक्ष्म जीवविज्ञानी प्रक्रियाओं को छोड़कर पौधों और पशुओं के उत्पादन के लिए अनिवार्य रूप से जीवविज्ञानी प्रक्रियाएं। पेटेन्ट इसके स्वामी को निम्नलिखित विशिष्ट अधिकार प्रदान करेगा :-

- जहां पेटेन्ट की विषय वस्तु उत्पाद है, तृतीय पक्ष को स्वामी की सहमति के बिना निर्माण, उपयोग, बिक्री करने के लिए देने, बेचने के कार्य या वैसे उत्पादों के आयात करने से रोकना।
- जहां पेटेन्ट की विषय वस्तु प्रक्रिया है, तृतीय पक्ष को स्वामी की सहमति के बिना प्रक्रिया का उपयोग करने के कार्य, उपयोग करने, बिक्री के लिए देने, बेचने या इन प्रयोजनों के लिए आयात करने कम से कम उस प्रक्रिया द्वारा प्राप्त उत्पाद को रोकना।

औद्योगिक डिजाइन : इसका तात्पर्य सृजनात्मक क्रियाकलाप से है जिसके परिणाम स्वरूप उत्पाद की सजावट या औपचारिक प्रकटन होता है। परन्तु इसमें कोई प्रणाली या सिद्धांत या निर्माण या कोई ऐसी चीज शामिल नहीं होती जो वस्तुतः केवल एक तकनीकी उपकरण होता है। करार के अधीन, सदस्य स्वतंत्र रूप से सृजित औद्योगिक डिजाइन के लिए सुरक्षा मुहैया कराएंगे जो नए एवं मूल रूप से सृजित हैं। सुरक्षित औद्योगिक डिजाइन के स्वामी के पास स्वामी की सहमति के बिना इसे बनाने, बेचने या ऐसी वस्तुओं का आयात करने जिसमें डिजाइन सन्निहित या डिजाइन शामिल हो, जो सुरक्षित डिजाइन की प्रति या वस्तुतः प्रति होती है, और जब ऐसे कार्य वाणिज्यिक प्रयोजनों के लिए किए जाते हैं तो तृतीय पक्ष को रोकने का अधिकार होगा।

एकीकृत परिपथ के लिए ले-आउट डिजाइन : करार के अधीन सदस्य एकीकृत परिपथ के ले-आउट डिजाइन (स्थलाकृति) को संरक्षण प्रदान करते हैं। सदस्य निम्नलिखित कार्यों को गैर कानूनी मानेंगे यदि अधिकार प्राप्त के अधिकृत किए बगैर, किए जाते हैं- संरक्षित ले-आउट डिजाइन, एकीकृत परिपथ, जिसमें संरक्षित ले-आउट डिजाइन शामिल है या ऐसी वस्तु

जिसमें ऐसी एकीकृत परिपथ सन्निहित हो, केवल तब तक, जब यह गैर कानूनी रूप से पुनरुत्पादित ले-आउट डिजाइन समझा जाता है, इसका आयात करना, बेचना या अन्यथा वाणिज्यिक प्रयोजनों के लिए इसका वितरण करना।

गुप्त सूचना की सुरक्षा (व्यापार गोपनीयता) : व्यापार की गोपनीयता या गुप्त सूचना वह सूचना है जिसे जान बूझकर गुप्त रखी जाती है और आर्थिक हित के लिए उसका वाणिज्यिक अनुप्रयोग सम्भव होता है। स्वाभाविक और कानूनी व्यक्ति अपने नियंत्रणाधीन कानूनी रूप से सूचना को प्रकट होने से उसे प्राप्त करने, दूसरों के द्वारा बिना अनुमति उसका उपयोग करने जो सच्ची वाणिज्यिक प्रथा के विपरीत हो, उसे रोकने की क्षमता रखते हैं जब तक ऐसी सूचना :-

- अर्थ में गुप्त हैं कि यह निकाय के रूप में या सटीक सम्मिश्रण या इसके संघटकों को संघटन में, जो सामान्य रूप से जानी जाती है या उस परिधि के भीतर व्यक्तियों की पहुंच में सरलता से उपलब्ध हो जो प्रश्नाधीन सूचना से संबंधित हैं
- की वाणिज्यिक मूल्य है क्योंकि यह गुप्त हैं और
- यह परिस्थितियों के अधीन, कानूनी रूप से सूचना के नियंत्रित करने वाले व्यक्ति द्वारा समुचित कदमों के अधीन हो।

संयंत्र की किस्में : सदस्य संयंत्र की किस्मों के लिए सुरक्षा मुहैया कराएंगे या तो पेटेन्ट द्वारा अथवा प्रभावी अद्वितीय प्रणाली द्वारा या किसी सम्मिश्रण द्वारा।

भारत और बौद्धिक सम्पत्ति का अधिकार

बहु पक्षीय व्यापार और वाणिज्य बढ़ाने के आज के वैश्विक परिदृश्य में किसी भी देश के लिए रचनाकारों और आविष्कारकों को सांविधिक अधिकार प्रदान करके अपनी बौद्धिक सम्पत्ति की सुरक्षा करना आवश्यक हो गया है और इससे उन्हें विश्व के बाजार में अपने प्रयासों का उचित वाणिज्यिक मूल्य प्राप्त करने में मदद मिलती है।

नवीन और सृजनात्मक क्षमता को विश्व व्यापार संगठन की बौद्धिक सम्पत्ति प्रणाली के तहत सुरक्षित रखा जाता है। इस तथ्य को मानते हुए, भारत ने विश्व व्यापार संगठन का एक संस्थापक सदस्य होने के नाते व्यापार संबंधी बौद्धिक सम्पत्ति अधिकारों (टीआरआईपीएस) से संबंधित करार का अनुसमर्थन किया है। इस करार के अनुसार भारत सहित सभी सदस्य देश परस्पर वार्ता से निर्धारित किए गए प्रतिमानों और मानकों का पालन अनुबंधित समय सीमा के अंतर्गत करेंगे। तदनुसार, भारत ने एक बौद्धिक सम्पत्ति अधिकार प्रणाली स्थापित की है, जो विश्व व्यापार संगठन के अनुरूप है और सभी स्तरों पर चाहे वह सांविधिक, प्रशासनिक अथवा न्यायिक हो, भली भांति स्थापित है।

सरकार ने बौद्धिक सम्पत्ति के भारी महत्व को देखते हुए देश में इसके प्रशासन को कारगर बनाने के लिए व्यापक उपाय किए हैं। वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय में, औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग के अधीन महानियंत्रण, पेटेण्ट, डिजाइन और ट्रेड मार्क सीजीपीडीटीएम के कार्यालय का गठन किया गया है।

यह पेटेण्ट, डिजाइन, ट्रेडमार्क और भौगोलिक निदर्शन से संबंधित सभी मामलों को प्रकाशित करता है और निम्नलिखित के कार्यों का संचालन एवं निरीक्षण करना है :-

- पेटेण्ट कार्यालय (डिजाइन विंग सहित)
- पेटेण्ट सूचना प्रणाली (पीआईएस)
- ट्रेडमार्क रजिस्ट्री (टीएमआर), और
- भौगोलिक निदर्शन रजिस्ट्री (जीआईआर)

इसके अलावा, स्वत्वाधिकारों (कॉपीराइट्स) और इससे संबंधित अधिकारों के पंजीकरण सहित सभी प्रकार की सुविधाएं मुहैया कराने के लिए मानव संसाधन विकास मंत्रालय के शिक्षा विभाग में एक कॉपीराइट कार्यालय की स्थापना की गई है।

जहां तक एकीकृत परिपथों ले आउट डिजाइन तैयार करने से संबंधित मुद्दों का संबंध है, ''सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय का इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग एक नोडल संगठन है। जबकि कृषि मंत्रालय पौध की सुरक्षा, किस्मों की सुरक्षा और कृषक अधिकार प्राधिकारी'' पौध की किस्मों से संबंधित सभी उपायों और नीतियों को प्रशासित करता है।

प्रशासनिक ढांचे को मजबूत बनाने के लिए कई प्रकार के वैधानिक उपाय किए गए हैं। इनमें ट्रेडमार्क अधिनियम, 1999 वस्तुओं का भौगोलिक निदर्शन (पंजीकरण एवं सुरक्षा) अधिनियम, 1999 डिजाइन अधिनियम, 2000 पेटेण्ट अधिनियम, 1970 और इसमें वर्ष 2002 और 2005 में किए गए संशोधन भारतीय कॉपीराइट अधिनियम, 1957 और इसका संशोधन कॉपीराइट संशोधन अधिनियम, 1999 अर्द्धचालक एकीकृत परिपथ ले आउट डिजाइन अधिनियम, 2000 तथा पौधों की किस्मों और कृषक अधिकारों का संरक्षण अधिनियम ,2001

कॉपीराइट : कॉपीराइट और संबंधित व्यापक कानून है कॉपीराइट अधिनियम, 1957 । इस अधिनियम के अनुसार, शब्द 'कॉपीराइट' का अर्थ है कोई कार्य को करने या उसका पर्याप्त भाग करने या प्राधिकृत करने का एकमात्र अधिकार। यहां प्रयुक्त कार्यों का अर्थ हैं :-

साहित्यिक रचना : इसमें कम्प्यूटर कार्यक्रम, सारणियां, संकलन और कम्प्यूटर डाटाबेस शामिल हैं।

नाट्य रचना : इसमें गायन, नृत्य रचना या किसी प्रदर्शन में मनोरंजन का कोई रूप, नाटड प्रबंध या अभिनय जिसका रूप लिखित या किसी अन्य रूप में तय हो, शामिल हैं।

संगीत रचना : इसमें संगीत रचनाएं शामिल हैं, ऐसी रचनाओं का ग्राफीय रूप शामिल है लेकिन इसमें संगीत के साथ गाए, बोले या अभिनीत किए जाने वाले शब्द या अंगविक्षेप शामिल नहीं हैं।

कलात्मक रचना : इसका अर्थ है चित्र, मूर्ति, आलेख (जिसमें आरेख, मानचित्र, चार्ट या प्लान भी शामिल है), उत्कीर्णन, या फोटोग्राफ, भले ही उनमें कलात्मक गुण हों या न हों। इसमें स्थापत्य रचनाएं और कलात्मक कारीगरी की कोई अन्य रचनाएं भी शामिल हो सकती हैं।

चलचित्र रचना : इसका अर्थ है किसी ऐसी प्रक्रिया में जरिए, जिससे किसी भी तरह चलती-फिरती छवि निर्मित की जा सकती है, बनाए गए किसी माध्यम पर दृश्य रिकार्डिंग की कोई रचना।

ध्वनि रिकार्डिंग : इसका अर्थ है ध्वनियों की रिकार्डिंग जिससे ध्वनियां निर्मित की जा सकती हैं, उस माध्यम पर ध्यान दिए बिना, जिससे ध्वनियां निर्मित की गई हो।

यहां 'संबंधित अधिकार या निकटवर्ती अधिकार' है कलाकारों (उदाहरणार्थ अभिनेताओं, गायकों और संगीतकारों), फोनोग्राम (ध्वनि रिकार्डिंग) के निर्माताओं और प्रसारण संगठनों के अधिकार।

यह अधिनियम मानव संसाधन विकास मंत्रालय में उच्च शिक्षा विभाग द्वारा प्रशासित किया जाता है। इस अधिनियम में एक कॉपीराइट बोर्ड स्थापित किया गया है। इस बोर्ड को कॉपीराइट के पंजीकरण कॉपीराइट के समनुदेशन, सार्वजनिक किए जाने से रोकी गई रचनाओं के संबंध में लाइसेंस प्रदान करने, अप्रकाशित भारतीय रचनाओं, अनुवादों का निर्माण और प्रकाशन से जुड़े विवादों का अधिनिर्णय करने का कार्य तथा कुछ विनिर्दिष्ट प्रयोजनों की जिम्मेदारी सौंपी गई है। इस अधिनियम ने कॉपीराइट के पंजीकरण हेतु कॉपीराइट के पंजीयक के नियंत्रण में एक कॉपीराइट कार्यालय स्थापित किया है।

इस अधिनियम के मुख्य प्रावधान निम्नानुसार है :-

- इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए 'कॉपीराइट कार्यालय' नामक कार्यलय स्थापित किया जाएगा। यह कॉपीराइट कार्यालय कॉपीराइट पंजीयक के प्रत्यक्ष नियंत्रण में होगा जो केन्द्र सरकार की देख रेख और निर्देशन में काम करेगा। साथ ही, केन्द्र सरकार एक 'कॉपीराइट बोर्ड' का गठन करेगी।
- कॉपीराइट कार्यालय में निर्धारित प्रपत्र में 'कॉपीराइट रजिस्टर' नामक रजिस्टर रखा जाएगा जिसमें रचनाओं के नाम या शीर्षक और कॉपीराइट के लेखकों, प्रकाशकों एवं स्वामियों के नाम एवं पते और अन्य ऐसे ब्यौरे हों जो निर्धारित किए जाएं।
- किसी रचना का लेखक या प्रकाशक, अथवा स्वामी या कोई अन्य व्यक्ति जो उसके कॉपीराइट का इच्छुक हो कॉपीराइट रजिस्टर में उस रचना का ब्यौरा शामिल करने के लिए कॉपीराइट पंजीयक को निर्धारित प्रपत्र मे आवेदन के साथ निर्धारित शुल्क अदा करके ऐसा कर सकता है।

- इस अधिनियम के तहत कॉपीराइट का रजिस्टर तथा उसकी अनुक्रमणिका सभी संभव समय पर निरीक्षण के लिए उपलब्ध होंगे और कोई भी व्यक्ति शुल्क अदा करके और निर्धारित शर्तों के अधीन ऐसे रजिस्टर या अनुक्रमणिका से प्रतियां बनाने या उसके अंश उद्घृत करने का पात्र होगा।
- कॉपीराइट का रजिस्टर उसमें दर्ज किए गए ब्यौरे और उन दस्तावेजों, जो उसमें की गई प्रविष्टियों की प्रतियां कही जाएं या उनमें से उद्यृत अंश, जो कॉपीराइट पंजीयक द्वारा अधिप्रमाणित एवं कॉपीराइट कार्यालय की मुहर से मुहरबंद हो, का प्रथम दृष्टा साक्ष्य होगा, और यह अन्य किसी प्रमाण या मूल प्रति की प्रस्तुति के बिना सभी न्यायालयों में साक्ष्य के रूप में अनुमेय होगा।
- कॉपीराइट लेखक के जीवनकाल में प्रकाशित किसी साहित्यिक, नाट्य, संगीत या कलात्मक रचना (फोटोग्राफ को छोड़कर) के संबंध में लेखक की मृत्यु के वर्ष से अगले कैलेण्डर वर्ष से शुरू होकर, साठ वर्ष तक जारी रहेगा। साथ ही, किसी ऐसी साहित्यिक, नाट्य, संगीत या कलात्मक रचना (फोटोग्राफ को छोड़कर) जो बिना नाम के प्रकाशित हुई हो, के संबंध में कॉपीराइट रचना के पहली बार प्रकाशित होने के वर्ष से अगले कैलेण्डर वर्ष से शुरू होकर साठ साल तक बना रहेगा।
- किसी मौजूदा रचना के कॉपीराइट प्राप्त व्यक्ति अथवा किसी भावी रचना के कॉपीराइट का संभावित स्वामी किसी अन्य व्यक्ति को कॉपीराइट पूरी तरह या आंशिक रूप से और या तो सामान्यतया या शर्तों के अधीन और कॉपीराइट की पूरी अवधि या उसके एक भाग के लिए समनुदेशित कर सकता है। तथापि, किसी भावी रचना के कॉपीराइट के समनुदेशन में, यह समनुदेशन तभी प्रभावी होगा जब रचना अस्तित्व में आ जाएगी।
- यदि किसी भारतीय रचना जो प्रकाशित हो गई हो या सार्वजनिक हो गई हो, में कॉपीराइट की अवधि के दौरान कभी भी कॉपीराइट बोर्ड से यह शिकायत की जाती है कि रचना के कॉपीराइट प्राप्त व्यक्ति ने :- (i) रचना को पुनः प्रकाशित करने या पुनः प्रकाशित करने की अनुमति देने से इन्कार कर दिया है अथवा रचना को सार्वजनिक करने की अनुमति देने से इंकार किया है और ऐसे इंकार के कारण, रचना जनता के समक्ष नहीं आ पा रहीं हैं अथवा (ii) जनता के समक्ष ऐसी रचना के प्रसारण की अनुमति देने से इन्कार किया है अथवा ध्वनि रिकार्डिंग के मामले में, रचना की ऐसी शर्तों ध्वनि रिकार्डिंग की गई है जो शिकायतकर्ता उचित नहीं समझता।

इसके बाद, कॉपीराइट बोर्ड, रचना के कॉपीराइट के स्वामी को सुनवाई का पर्याप्त अवसर देने और ऐसी जांच करने के बाद, जैसा भी आवश्यक हो, यदि वह इस बात से सन्तुष्ट है कि ऐसे इन्कार के आधार उचित नहीं है, कॉपीराइट पंजीयक को निदेश दे सकता है कि वह शिकायतकर्ता को रचना पुनरू प्रकाशित करने, जनता के समक्ष रचना को लाने या जनता में रचना का प्रसारण करने, जैसा भी मामला हो, का लाइसेंस प्रदान करे, बशर्ते कॉपीराइट के स्वामी को ऐसी क्षतिपूर्ति का भुगतान किया जाए और ऐसे निबंधन एवं शर्तों का पालन किया जाए जो कॉपीराइट बोर्ड निर्धारित करे, और ऐसा हो जाने पर कॉपीराइट पंजीयक यथा निर्धारित ऐसे शुल्क की अदायगी होने पर, कॉपीराइट बोर्ड के निर्देशानुसार शिकायतकर्ता को लाइसेंस प्रदान करेगा।

केन्द्र सरकार सरकारी राजपत्र में आदेश प्रकाशित करके निदेश दे सकती है कि इस अधिनिम के समस्त या कुछेक प्रावधान निम्नलिखित पर लागू होंगे :-

- ऐसी रचना पर जो पहली बार भारत से बाहर किसी राज्य क्षेत्र में प्रकाशित हुई हो जिस पर आदेश इस प्रकार लागू होगा जैसे वह पहली बार भारत में प्रकाशित हुई हो।
- अप्रकाशित रचनाओं या ऐसी ही अन्य श्रेणी की रचनाओं पर, जिनके रचनाकार रचना करते समय किसी दूसरे देश के नागरिक थे, इस प्रकार लागू होगा जैसे वे रचनाकार भारत के नागरिक हों,
- भारत से बाहर किसी राज्य क्षेत्र में अधिवास के संबंध में, जिस पर आदेश इस प्रकार लागू होगा जैसे वह भारत में अधिवास हो।
- किसी ऐसी रचना पर जिसका लेखक उसके पहली बार प्रकाशन की तारीख को या ऐसे मामले में जहां उस तारीख तक लेखक का देहान्त हो चुका था, अपनी मृत्यु की तारीख को किसी दूसरे देश का नागरिक रहा हो जिस पर आदेश इस रूप में लागू होगा कि जैसे कि लेखक उस तारीख या समय को भारत का नागरिक रहा हो।

किसी रचना के कॉपीराइट का उल्लंघन निम्न तरीके से हुआ माना जाएगा :-

- यदि कोई व्यक्ति कॉपीराइट प्राप्त व्यक्ति या कॉपीराइट पंजीयक द्वारा इस अधिनियम के तहत लाइसेंस प्रदान किए बिना अथवा प्रदान किए लाइसेंस की शर्तों का उल्लंघन करके अथवा इस अधिनियम के तहत सक्षम प्राधिकारी द्वारा आरोपित शर्तों का उल्लंघन करके :- (i) कुछ ऐसा करता है जो इस अधिनियम द्वारा केवल कॉपीराइट प्राप्त व्यक्ति को ही करने का विशिष्ट अधिकार प्राप्त हो अथवा (ii) जनता के समक्ष कोई ऐसी रचना लाने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले स्थान को लाभ हेतु प्रयोग की अनुमति देता है, जहां रचना को सामने लाना उसके कॉपीराइट का उल्लंघन है, सिवाय तब यदि उसे यह ज्ञात न हो और ऐसा विश्वास करने का आधार भी न था कि जनता के समाने ऐसी रचना लाने से कॉपीराइट का उल्लंघन होगा।

अथवा

- यदि कोई व्यक्ति :- (i) किराए पर देकर बिक्री करता है, या बेचता है या किराए पर देता है, या व्यापार के जरिए प्रदर्शित करता है या किराए पर बेचने की पेशकश करता हैय अथवा (ii) व्यापार के प्रयोजनार्थ या तो वितरण करता है या इस हद तक कार्रवाई करता है कि कॉपीराइट प्राप्त व्यक्ति पर प्रतिकूल असर पड़ता होय या (iii) व्यापार के रूप में जनता में प्रदर्शित करता है या (iv) रचना की उल्लंघनकारी प्रतियों का भारत में आयात करता है।

- प्रत्येक प्रसारण संगठन को इसके प्रसारणों के संबंध में 'प्रसारण निर्माण अधिकार' नामक एक विशेष अधिकार होगा। प्रसारण निर्माण अधिकार प्रसारण किए जाने के वर्ष से अगले कैलेण्डर वर्ष की शुरूआत से पच्चीस वर्ष तक बना रहेगा।
- जब कोई कलाकार किसी प्रदर्शन में शामिल होता है या संबद्ध होता है तो उसे ऐसे प्रदर्शन के संबंध में ''कलाकार का अधिकार'' नामक एक विशेष अधिकार प्राप्त होगा। कलाकार का अधिकार प्रदर्शन से पच्चीस वर्ष तक बना रहेगा।

प्रसारण निर्माण अधिकार या कलाकार का अधिकार का निम्नलिखित द्वारा उल्लंघन नहीं माना जाएगा :-

- ध्वनि रिकॉर्डिंग या दृश्य रिकॉर्डिंग करने वाले व्यक्ति के निजी प्रयोग के लिए अथवा वास्तविक शिक्षण या अनुसंधान के प्रयोजनों के लिए ध्वनि रिकॉर्डिंग या दृश्य रिकॉर्डिंग करना अथवा
- किसी प्रदर्शन या सामयिक घटनाओं की रिपोर्टिंग में प्रसारण के अंशों को अथवा वास्तविक समीक्षा, शिक्षण या अनुसंधान के लिए उचित रूप से प्रयोग में लाना अथवा
- कोई अन्य कार्य, आवश्यक रूपान्तरों एवं परिवर्तनों के साथ जो अधिनियम के तहत कॉपीराइट के उल्लंघन नहीं माने जाते।

जब इस अधिनियम के तहत किसी कम्पनी द्वारा कोई अपराध किया जाए तो ऐसा प्रत्येक व्यक्ति जो अपराध होने के समय कम्पनी के कारोबार के संचालन के लिए कम्पनी का प्रभारी था और कम्पनी के लिए जिम्मेदार था और कम्पनी स्वयं भी ऐसे अपराध की दोषी मानी जाएगी और उसके विरूद्ध तदनुसार कार्यवाही की जाएगी तथा वह दण्ड की भागी होगी।

औद्योगिक डिजाइन : औद्योगिक डिजाइन संबंधी कानून नए और मूल औद्योगिक डिजाइनों के पंजीकरण और संरक्षण डिजाइन अधिनियम, 2000 से संबंधित कानून के समेकित करने और उसमें संशोधन करने के लिए बनाया गया है। इसमें डिजाइन अधिनियम, 1911 को निरस्त एवं प्रतिस्थापित किया है। डिजाइन अधिनियम, 2000 के अनुसार, 'डिजाइन' शब्द का अर्थ है मात्र लाइनों के आकार , समाकृति, नमूने, पद्धति, अलंकरण अथवा गठन के गुण अथवा तीन आयामी अथवा दोनों रूपों में हो, के लिए किसी औद्योगिक प्रक्रिया अथवा साधन, चाहे वह मैनुअल, यांत्रिक हो अथवा रासायनिक, पृथक-पृथक हो अथवा संयुक्त, द्वारा उपयोग किए गए रंग हैं, जो किसी तैयार वस्तु में अच्छे लगें और जिन्हें देखने मात्र से पहचाना जा सके लेकिन इसके निर्माण की कोई पद्धति अथवा सिद्धांत अथवा कोई ऐसी चीज जो पदार्थ में मात्र यांत्रिक साधन है, शामिल नहीं है और व्यापार तथा पण्य चिन्ह (मार्क) अधिनियम, 1958 में यथा परिभाषित कोई व्यापार चिन्ह (ट्रेड मार्क) अथवा भारतीय दण्ड संहिता में यथा परिभाषित कोई सम्पत्ति चिन्ह अथवा कॉपीराइट अधिनियम, 1957 में यथा परिभाषित कोई कलाकृति शामिल नहीं हैं।

अधिनियम के तहत औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय के तहत महानियंत्रक, पेटेण्ट, डिजाइन और व्यापार चिन्ह डिजाइन नियंत्रक हैं। महा नियंत्रक, पेटेण्ट, डिजाइन और व्यापार चिन्ह औद्योगिक डिजाइन विंग की कार्य प्रणाली

का संचालन और निरीक्षण करता है। डिजाइन अधिनियम के तहत औद्योगिक डिजाइन का पंजीकरण कोलकाता स्थित पेटेण्ट के मुख्यालय के 'औद्योगिक डिजाइन विंग' द्वारा किया जाता है।

अधिनियम के मुख्य उपबंध निम्नलिखित हैं :-

- व्यापार और पण्य चिन्ह अधिनियम के अधीन नियुक्त महानियंत्रण, पेटेण्ट, डिजाइन और व्यापार चिन्ह इस अधिनियम के प्रयोजनार्थ डिजाइन नियंत्रक होंगे।
- नियंत्रक, किसी व्यक्ति जो किसी नए अथवा मूल डिजाइन जिसे किसी देश में पहले प्रकाशित नहीं किया गया है और जो सरकारी आदेश अथवा नैतिकता के प्रतिकूल नहीं है, का मालिक होने का दावा करता है, के आवेदन पर उसके डिजाइन को अधिनियम के तहत पंजीकृत करेगा। प्रत्येक आवेदन निर्धारित प्रपत्र में होगा और निर्धारित तरीके से पेटेण्ट कार्यालय को प्रस्तुत किया जाएगा और उसके साथ निर्धारित शुल्क भेजा जाएगा। डिजाइन को एक श्रेणी से अधिक में पंजीकृत नहीं किया जाएगा और यह संदेह होने की स्थिति में कि डिजाइन को किस श्रेणी में पंजीकृत किया जाए, नियंत्रक इस प्रश्न का निर्णय लेगा।

उन डिजाइनों के पंजीकरण का निषेध जो :-

- नए अथवा मूल नहीं हैं अथवा
- प्रस्तुत करने की तारीख से पहले भारत अथवा किसी भी देश में मूर्त रूप में प्रकाशन द्वारा अथवा उपयोग द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकार से जनता के सम्मुख प्रकट न किया गया हो अथवा यह जानकारी न हो कि कहां लागू होता है, इसके पंजीकरण के आवेदन की अग्रता की तारीख क्या है और
- जो ज्ञात डिजाइनों अथवा ज्ञात मिले-जुले डिजाइनों से उल्लेखनीय रूप से कोई अंतर न हो अथवा
- जिस में लज्जाजनक और अश्लील सामग्री निहित हो।

- नियंत्रक डिजाइन पंजीकृत होने पर उसके मालिक को एक पंजीकरण प्रमाणपत्र प्रदान करेगा। पेटेण्ट कार्यालय में डिजाइनों का रजिस्टर नामक एक पुस्तिका भी रखी जाएगी जिसमें पंजीकृत डिजाइनों के मालिकों को नाम और पते, समुनदेशनों की अधिसूचनाएं और पंजीकृत डिजाइनों के सम्प्रेषणों और यथाविहित अन्य सामग्री को दर्ज किया जाएगा।
- डिजाइन पंजीकृत हो जाएगा तो डिजाइन को पंजीकृत मालिक को इस अधिनियम के उपबंधों के अधीन पंजीकरण की तारीख से दस वर्षों केलिए डिजाइन का कॉपीराइट प्राप्त हो जाएगा। यदि उक्त इस वर्षों की समाप्ति से पूर्व निर्धारित तरीके से आवेदन किया जाता है तो नियंत्रक, निर्धारित शुल्क का भुगतान किए जाने पर दस वर्षों की मूल अवधि की समाप्ति की तारीख से पांच वर्ष की दूसरी अवधि के लिए कॉपीराइट की अवधि बढ़ा देंगे।
- डिजाइन का पंजीकरण होने के बाद नियंत्रक यथाशीघ्र डिजाइन के ब्यौरे का यथाविहित तरीके से प्रकाशन किए जाने की जांच करेंगे और तत्पश्चात डिजाइन लोगों द्वारा निरीक्षण के लिए प्रस्तुत कर दिया जाएगा। डिजाइन के कॉपीराइट मौजूद होने की अवधि के दौरान, कोई भी व्यक्ति ऐसी सूचना प्रस्तुत करने पर जो नियंत्रक को डिजाइन की पहचान करने में समर्थ बनाए और निर्धारित शुल्क का भुगतान करके विहित तरीके से डिजाइन का निरीक्षण कर सकता है। कोई भी व्यक्ति नियंत्रक को आवेदन करके और यथा निर्धारित शुल्क का भुगतान करके किसी भी पंजीकृत डिजाइन की प्रति प्राप्त कर सकता है।
- कोई भी इच्छुक व्यक्ति डिजाइन के पंजीकरण के पश्चात डिजाइन का पंजीकरण रद्द कराने के लिए निम्नलिखित को किसी भी समय याचिका प्रस्तुत कर सकता है:- (i) कि डिजाइन भारत में पहले से ही पंजीकृत है अथवा (ii) कि इसे भारत अथवा अन्य किसी देश में पंजीकरण की तारीख से पहले ही प्रकाशित कर दिया गया है अथवा (iii) कि डिजाइन नया अथवा मूल नहीं हैं अथवा (v) कि डिजाइन इस अधिनियम के तहत पंजीकरण किए जाने योग्य नहीं है अथवा (v) यह इस अधिनियम में यथा परिभाषित डिजाइन नहीं है। नियंत्रक किसी भी समय इस याचिका को उच्च न्यायालय को भेज सकता है और उच्च न्यायालय इस प्रकार भेजी गई याचिका पर निर्णय लेगा।

- मालिक की जानकारी अथवा सहमति के बिना किसी डिजाइन अथवा किसी वस्तु जिसमें इस डिजाइन का प्रयोग किया गया है, की किसी औद्योगिक अथवा अन्य प्रदर्शनी में जिस पर केन्द्रीय सरकार द्वारा सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा अधिनियम के उपबंध लागू किए गए हैं प्रदर्शनी के आयोजन की अवधि के दौरान अथवा बाद में प्रदर्शन अथवा डिजाइन का प्रकाशन अथवा विवरण प्रकाशित करने अथवा प्रदर्शनी आयोजित किए जाने की अवधि के दौरान अथवा बाद में किसी व्यक्ति द्वारा डिजाइन अथवा वस्तु का अन्यत्र कहीं प्रदर्शन अथवा डिजाइन का प्रकाशन अथवा विवरण प्रकाशित डिजाइन के पंजीकरण पर रोक नहीं लगाई जाती अथवा उसके पंजीकरण को अवैध नहीं माना जाता बशर्ते कि :- (i) डिजाइन अथवा वस्तु को प्रदर्शित अथवा डिजाइन के विवरण को प्रकाशित करने वाला प्रदर्शक नियंत्रक को विहित रूप में पूर्व नोटिस देता है, और (ii) पंजीकरण के लिए आवेदन डिजाइन अथवा वस्तु के पहले प्रदर्शन अथवा डिजाइन के विवरण के प्रकाशन की तारीख से छह माह के अंदर किया जाता है।
- किसी भी डिजाइन में कॉपीराइट की मौजूदगी के दौरान किसी व्यक्ति के लिए ऐसा करना विधि सम्मत नहीं होगा:-
- वस्तुओं की किसी भी श्रेणी में जिसमें डिजाइन पंजीकृत है किसी वस्तु पर लागू अथवा लागू हो सकने वाली बिक्री के प्रयोजन के लिए लाइसेंस अथवा पंजीकृत मालिक की सहमति के बिना डिजाइन अथवा कोई धोखेपूर्ण या उसकी प्रत्यक्ष नकल या कुछ ऐसा करना जिसका उद्देश्य डिजाइन को इस प्रकार अनुप्रयुक्त किया जाना होय अथवा
- पंजीकृत मालिक की सहमति के बिना उस श्रेणी से जिसमें डिजाइन को पंजीकृत किया गया है, संबंधित किसी वस्तु का बिक्री के लिए आयात करना तथा उस पर डिजाइन या कोई धोखेपूर्ण या प्रत्यक्ष नकल को अनुप्रयुक्त करनाय अथवा
- यह जानते हुए कि डिजाइन या कोई धोखेपूर्ण या प्रत्यक्ष नकल किसी वस्तु श्रेणी में जिसमें डिजाइन पंजीकृत है, में पंजीकृत मालिक की सहमति के बिना किसी वस्तु पर अनुप्रयुक्त की गई है उस वस्तु को बिक्री हेतु प्रकाशित या उद्भासित करना या कराना।
- जहां डिजाइन के लिए कोई आवेदन छोड दिया या अस्वीकृत कर दिया गया है वहां आवेदन तथा उस आवेदन के संबंध में छोडे गए किन्हीं आरेखों, फोटो, ट्रेसिंग प्रतिनिधित्वों या नमूनों का किसी भी समय सार्वजनिक निरीक्षण नहीं किया जाए या अथवा नियंत्रक द्वारा प्रकाशन नहीं किया जाएगा।
- यदि कोई व्यक्ति अधिनियम के उल्लंघन में कार्य करता है तो वह प्रत्येक उल्लंघन के लिए डिजाइन पंजीकृत मालिक को संविदा ऋण के रूप में निर्धारित कुछ राशि से अनधिक राशि देने के लिए दायी हो जाए, अथवा यदि मालिक ऐसे किसी उल्लंघन के लिए क्षतियों की वसूली के लिए मुकदमा करके चयन करता है अथवा उसकी पुनरावृत्ति के लिए निषेधज्ञा जारी करवाता है तो ऐसी क्षतिपूर्ति अदा करेगा जो निर्धारित की जाए तथा तदनुसार निषेधाज्ञा द्वारा प्रतिबंधित होगा।

पेटेंट : पेटेंट से संबंधित मुख्य विधान पेटेंट अधिनियम, 1970 है। पेटेंट शब्द को एकाधिकार के रूप में पारिभाषित किया जाता है जो उस व्यक्ति को दिया जाता है जिसने नयी और उपयोगी चीज का अविष्कार किया है या मौजूदा वस्तु में सुधार किया या वस्तु की नई प्रक्रिया का अविष्कार किया है। इसमें नई खोजी गई वस्तु को विनिर्मित करने का विशिष्ट अधिकार या सीमित अवधि के लिए अविष्कारी प्रक्रिया के अनुसार वस्तु का विनिर्माण करने का अधिकार। अविष्कारों में उत्पाद या नई मिश्र धातु उत्पाद अविष्कार कहलाता है और इसके लिए पेटेंट को उत्पाद पेटेंट कहा जाता है जबकि अविष्कार जिसमें प्रक्रिया या ज्ञात अथवा नई मिश्र धातु बनाने की प्रक्रियाओं को प्रक्रिया अविष्कार कहा जाता है और इसके लिए पेटेंट प्रक्रिया पेटेंट कहलाता है। यह अधिनियम केवल प्रक्रिया पेटेंट की व्यवस्था करता है और खाद्य, भेषज और रसायन जैसे उत्पादों के लिए अविष्कार को केवल ईएमआर (विशिष्ट विपणन अधिकार) प्रदान किया जाता है।

वाक्यांश 'लंबित पेटेंट' और 'आवेदितपेटेंट' का क्या अर्थ है?

इन वाक्यांशों का इस्तेमाल किसी वस्तु के निर्माता या विक्रेता द्वारा जनता को यह सूचित करने के लिए किया जाता है कि इस वस्तु के लिए पेटेंट का आवेदन पेटेंट एवं ट्रेडमार्क कार्यालय में दर्ज हो गया है। कानून के अनुसार उन लोगों पर जुर्माना किया जाता है जो जनता को धोखा देने के लिए इन वाक्यांशों का प्रयोग करते हैं।

भारत में पेटेंट प्रणाली का प्रशासन पेटेंट, डिजाइन, ट्रेड मार्क्स और भौगोलिक संकेत महानियंत्रक के अधीक्षण में होता है। महानियंत्रक का कार्यालय औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग, वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय के अधीन कार्य करता है। महानियंत्रक

पेटेंट कार्यालय और पेटेंट सूचना प्रणाली (पीआईएस) का निदेशन और पर्यवेक्षण करता है। पेटेंट कार्यालय नया पेटेंट अधिनियम के तहत नए अविष्कारों के लिए पेटेंट प्रदान करने संबंधी सांविधिक कर्त्तव्यों का निष्पादन करता है। पेटेंट का मुख्यालय कोलकाता में है जिसकी शाखाएं मुम्बई, चेन्नै और दिल्ली में हैं। शाखाएं अपने भूखण्ड के क्षेत्राधिकार के भीतर आने वाले पेटेंट के आवेदनों के संबंध में कार्य करते हैं। नागपुर में पेटेंट सूचना प्रणाली (पीआईएस) प्रयोक्ताओं के लिए पेटेंट सूचना केन्द्र के रूप में कार्य करते आ रहा है। पेटेंट सूचना प्रणाली, पेटेंट विशिष्टीकरण और पेटेंट संबंधी साहित्य का विश्व व्यापी आधार पर संग्रहण का रखरखाव करता और प्रौद्योगिकीय सूचना प्रदान करता है जो पेटेंट या पेटेंट संबधी साहित्य में निहित होती है। यह सर्च सेवाओं और पेटेंट प्रति आपूर्ति सेवाओं के माध्यम से अनुसंधान और विकास प्रतिष्ठानों के विभिन्न प्रयोक्ताओं, सरकारी कार्यालयों, निजी उद्योगों, व्यापार अविष्कारकों और भारत के भीतर अन्य प्रयोक्ताओं को प्रदान् है।

अधिनियम के मुख्य प्रावधान हैं :-

- पेटेंट, डिजाइन और ट्रेड मार्क के महानियंत्रक की नियुक्ति व्यापार और पण्य चिन्ह अधिनियम, 1958 के तहत की जाती है, वह अधिनियम के प्रयोजनों के लिए पेटेंट नियंत्रक होगा। पेटेंटों के पंजीकरण को सुकर बनाने के प्रयोजन से केन्द्रीय सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट जगहों पर एक पेटेंट कार्यालय होगा।
- पेटेंट कार्यालय में एक रजिस्टर रखा जाएगा, जिसमें निम्नलिखित की प्रविष्टि की जाएगी :-
  - पेटेंट की गारंटियों के नाम और पता
  - पेटेंट का आबंटन, विस्तार और प्रतिसंहरण की अधिसूचनाएं और
- यथा निर्धारित वैधता या पेटेंटों के स्वामित्व को प्रभावित करने वाले ऐसे अन्य विषयों के विवरण।
- अविष्कार के लिए पेटेंट का आवेदन इनमें से किसी व्यक्ति द्वारा किया जा सकता है :-
  - कोई भी व्यक्ति जो अविष्कार का वास्तविक और प्रथम अविष्कारक होने का दावा करता है
  - कोई भी व्यक्ति जो उस व्यक्ति का आर्बटित होता है जो इस प्रकार के आवेदन के अधिकार के संबंध में वास्तविक और प्रथम अविष्कार होने का दावा करता है
  - किसी दिवंगत व्यक्ति का कानूनी प्रतिनिधि जो अपनी मृत्यु के तुरन्त पहले ऐसा आवेदन करने का हकदार होता है।
- इस अधिनियम के अभिप्राय से निम्नलिखित अविष्कार नहीं हैं :-
  - ऐसा अविष्कार जो तुच्छ है या जो ऐसा दावा करता है जो सुस्थापित प्राकृतिक नियमों के विपरीत है,
  - अविष्कार जिसका प्राथमिक या लक्षित उपयोग नियम के प्रतिकूल हो या नैतिकता के प्रतिकूल या जन स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है,
  - वैज्ञानिक सिद्धांतों की खोज मात्र या अव्यवहारिक सिद्धांतों का प्रतिपादनय,
  - ज्ञात तत्व के लिए नए उपयोग की नई विशेषता की खोज मात्र या ज्ञात प्रक्रिया मशीन या उपकरण का उपयोग मात्र जब तक कि ऐसी ज्ञात प्रक्रिया से नए उत्पाद न हो या कम से कम एक नए प्रतिक्रिया कारक को शामिल नहीं करता है,
  - मिश्रण मात्र से प्राप्त तत्व जो उसके संघटकों की विशेषताओं का वर्धन करता या ऐसे तत्व के उत्पादन के लिए प्रक्रिया करताहै,
  - ज्ञात उपकरणों की व्यवस्था मात्र या पुनर्व्यवस्था जो ज्ञात तरीके से प्रत्येक स्वतंत्र रूप से कार्य करता है,
  - मशीन, उपकरण या अन्य उपकरणों को अधिक सक्षम बनाने हेतु अथवा मौजूदा मशीन, उपकरण या अन्य उपकरणों के सुधार या पुनरुद्धार या विनिर्माण में सुधार या नियंत्रण के लिए प्रक्रिया के दौरान प्रयोज्य परीक्षण की विधि या प्रक्रिया,
  - कृषि या बागवानी की विधि,
  - मानव जाति के लिए किसी औषधीय, शल्य चिकित्सीय, उपचारात्मक, रोगनिरोधी के लिए कोई, या अन्य उपचार के लिए कोई प्रक्रिया अथवा पशुओं के इस प्रकार के उपचार के लिए या पौधों को रोगों से मुक्त रखने के लिए या उनकी और उनके उत्पादों का आर्थिक मूल्य बढ़ाने के लिए कोई प्रक्रिया।

- पेटेंट का प्रत्येक आवेदन केवल एक अविष्कार के लिए होगा और यह निर्धारित प्रपत्र में किया जाएगा और पेटेंट कार्यालय में दर्ज किया जाएगा। प्रत्येक आवदेन में यह उल्लेख होगा कि आवेदक के पास अविष्कार है और यह वास्तव में प्रथम अविष्कारक होने का दावा करने वाले स्वामी को नामित करेगा और ऐसा दावा करने वाला व्यक्ति आवेदक नहीं है या आवेदकों में से एक नहीं है, आवेदन में यह घोषणा की जाएगी कि आवेदक को इस प्रकार से नामित व्यक्ति पर विश्वास है कि वह वास्तव में प्रथम अविष्कारक है। ऐसा प्रत्येक आवेदन के साथ अनंतिम या पूर्ण विशिष्टीकरण होगा।

- जहां पेटेंट के लिए आवेदन (जो समझौता आवेदन न हो) के साथ अनंतिम विशिष्टीकरण लगा हो, एक पूर्ण विशिष्टीकरण आवेदन करने की तिथि से बारह माहों के भीतर दर्ज किया जाएगा, और यदि पूर्ण विशिष्टीकरण दर्ज नहीं किया जाता है तो आवेदन परित्यक्त समझा जाएगा। प्रत्येक पूर्ण विशिष्टीकरण निम्न प्रकार से होगा :-

- अविष्कार का पूर्ण विवरण का उल्लेख और इसके कार्य या उपयोग और विधि का उल्लेख होगा जिसके द्वारा इसको निष्पादित किया जाता है।
- अविष्कार के निष्पादन की सर्वोत्तम विधि का प्रकटीकरण जो आवेदक को ज्ञात है और जिसके लिए संरक्षण का दावा करने के लिए वह हकदार हैं, और
- दावे के साथ समाप्त हो या अविष्कार की संभावना का दावा जिसके लिए संरक्षण का दावा किया जाता है।

किसी भी समय इस अधिनियम के तहत पूर्ण विशिष्टीकरण को स्वीकार करने संबंधी विज्ञापन की तारीख से चार माहों के अंदर (या ऐसी अवधि के अंदर जो कुल एक माह की अवधि से अधिक न हो, जैसाकि उपर्युक्त चार माह की समाप्ति के पहले निर्धारित तरीके से नियंत्रक उसको दिए गए आवेदन पर अनुमत करता है) कोई भी इच्छुक व्यक्ति निम्नलिखित में से किसी आधार पर किसी व्यक्ति को पेटेंट प्रदान करने का विरोध करने के लिए नियंत्रक को सूचना दे सकता है, अर्थात : -

कि पेटेंट के लिए आवेदक या व्यक्ति जिसके तहत या जिसके माध्यम से वह दावा करता है, उसने गलत तरीके से अविष्कार प्राप्त किया या उससे उसका कोई भाग या व्यक्ति जिसके अधीन या माध्यम से वह दावा करता है, गलत तरीके से प्राप्त किया गया है

- कि अब तक दावाकृत पूर्ण विशिष्टीकरण में कोई दावा की प्राथमिकता तिथि के पहले प्रकाशित हुआ है :- (i) 1 जनवरी, 1912 को या इसके बाद भारत में पेटेंट के लिए किया गया आवेदन के अनुसरण में दर्ज किसी विशिष्टि में या (ii) भारत में या कहीं पर किसी अन्य दस्तावेज में।
- कि अब तक पूर्ण विनिर्देशन के किसी दावे में, दावा किए गए अविष्कार पर आवेदक के दावे की प्राथमिकता तिथि को या उसके बाद प्रकाशित पूर्ण विनिर्देशन के दवे में दावा किया गया है और भारत में पेटेंट हेतु आवेदन के अनुसरण में दर्ज किया गया है जो ऐसा दावा है जिसकी प्राथमिकता तिथि आवेदक के दावे की तिथि से पहले है।
- कि अब तक पूर्ण विनिर्देशन के दावे में दावा किया गया आविष्कार सार्वजनिक रूप से ज्ञात था या उस दावे की प्राथमिकता की तारीख के पहले सार्वजनिक रूप से प्रयुक्त हुआ है।
- कि अब तक पूर्ण विनिर्देशन के दावे में दावा किया गया आविष्कार में प्रत्यक्ष और स्पष्ट रूप से कोई आविष्कारक के कदम शामिल नहीं हैं।
- कि पूर्ण विनिर्देशन के किसी दावे का विषय इस अधिनियम के अर्थ के अधीन आविष्कार नहीं है या इस अधिनियम के तहत पेटेंट करने योग्य नहीं है।
- कि पूर्ण विनिर्देशन अविष्कार का पर्याप्त एवं स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं करता या जिस विधि से इसका निष्पादन किया जाना है, का उल्लेख नहीं करता।
- कि समझौता आवेदन के मामले में आवेदक द्वारा या जिस व्यक्ति से वह हक प्राप्त करता है उसके द्वारा समझौता देश में किए गए आविष्कार के लिए संरक्षण हेतु प्रथम आवेदन की तारीख से बारह माह के भीतर आवेदन नहीं किया गया।

जहां विधिवत रूप से विरोध के लिए ऐसी कोई सूचना दी जाती है तो नियंत्रक आवेदक को सूचित करेगा और आवेदक और विरोधी को मामले पर निर्णय लेने के पहले सुनवाई का अवसर प्रदान करेगा।

■ जहां पेटेंट के लिए आवेदन के अनुसरण में पूर्ण विनिर्देशन स्वीकार कर लिया गया है और या तो :- (i) आवेदन का विरोध नहीं किया गया है और विरोध दर्ज करने का समय समाप्त हो गया है या (ii) आवेदन का विरोध किया गया है और आवेदन पर आवेदक के पक्ष में अंततः निर्णय लिया गया है या (iii) इस अधिनियम द्वारा प्रदत्त किसी शक्ति के कारण आवेदन नियंत्रक द्वारा अस्वीकृत नहीं किया गया है, तो निर्धारित प्रपत्र में आवेदक द्वारा अनुरोध करने पर आवेदक को पेटेंट प्रदान किया जाएगा या संयुक्त आवेदन के मामले में संयुक्त रूप से आवेदकों को प्रदान किया जाएगा और नियंत्रक पेटेंट कार्यालय की मुहर से पेटेंट को मुहरबंद करेगा और जिस तारीख को पेटेंट मुहरबंद किया जाता है उसकी प्रविष्टि रजिस्टर में की जाएगी। प्रत्येक दिया गया पेटेंट का निबंधन और जिसका समय समाप्त नहीं हुआ है प्रत्येक पेटेंट का निबंधन और जो इस अधिनियम के तहत प्रभावी है वह पेटेंट के लिए आवेदन दर्ज करने की तारीख से बीस वर्ष की होगी।

■ जहां पूर्ण विनिर्देशन में उल्लिखित या प्रकटन किसी अविष्कार के किसी सुधार या परिवर्तन के संबंध में पेटेंट के लिए आवेदन किया जाता है और आवेदक भी उस अविष्कार के पेटेंट के लिए आवेदन करता या आवेदन किया है या उसके संबंधी में पेटेंट धारक है तो नियंत्रक आवेदक के अनुरोध करने पर अतिरिक्त पेटेंट के रूप में सुधार या परिवर्तन के लिए पेटेंट प्रदान कर सकता है। अतिरिक्त पेटेंट मुख्य अविष्कार के पेटेंट की अवधि के बराबर अवधि के लिए दिया जाएगा।

■ किसी भी समय पेटेंट को मुहरबंद करने की तारीख से तीन वर्ष की अवधि समाप्त होने के बाद इच्छुक कोई भी व्यक्ति यह दोष लगाते हुए नियंत्रक को आवेदन कर सकता है कि पेटेंट दिया गया आविष्कार के संबंध में जनता की समुचित अपेक्षाएं पूरी नहीं हुई हैं या पेटेंट किया हुआ अविष्कार उचित कीमत पर जनता के लिए उपलब्ध नहीं है और वह पेटेंट किए हुए अविष्कार के अनिवार्य रूप से कार्य करने के लिए लाइसेंस प्रदान करने का अनुरोध करता है।

■ यदि कोई व्यक्ति अधिनियम के तहत दिए गए किसी दिशानिर्देश का पालन नहीं करता है या अधिनियम के उल्लंघन में पेटेंट प्रदान करने के लिए आवेदन करने का कारण बनाता है तो उसको कारावास की सजा या जुर्माना या दोनों हो सकता है।

इस अधिनियम का संशोधन पेटेंट (संशोधन) अधिनियम, 2002 द्वारा और पेटेंट (संशोधन) अधिनियम, 2005 द्वारा ट्रिप्स के करार के तहत भारत के दायित्वों की देख रेख करने के लिए किया गया है। संशोधन के बाद, उत्पाद पेटेंट (प्रक्रिया पेटेंट की बजाए) खाद्य, भेषज, और रसायन उत्पादों के लिए दिया जा रहा है। पेटेंट के पश्च प्रदाय विरोध के साथ-साथ प्रदाय पूर्व विरोध भी अनुमत है।

ट्रेड मार्क : ट्रेड मार्क अधिनियम, 1999 का अधिनियमन ट्रेड मार्क से संबंधित कानून में संशोधन एवं समेकन करने के लिए माल और सेवाओं के लिए ट्रेड मार्क का पंजीकरण और बेहतर संरक्षण मुहैया कराने और नकली मार्क का उपयोग रोकने के लिए किया गया है। यह पहले का ट्रेड एवं पण्य मार्क अधिनियम, 1958 को रद्द करता है। ट्रेड मार्क अधिनियम, 1999 के अनुसार 'ट्रेड मार्क' शब्द का अर्थ है एक चिन्ह जो ग्राफीय रूप में प्रस्तुत योग्य हो और जो एक व्यक्ति के माल और सेवाओं को दूसरों से अलग करने में समर्थ हो और इसमें माल की आकृति, उनकी पैकेजिंग और रंगों का मिश्रण शामिल हैं।

अधिनियम के तहत औद्योगिक नीति एवं संवर्धन विभाग, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के अधीन पेटेंट डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक, ट्रेड मार्क का पंजीयक है। पेटेंट, डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक ट्रेड मार्क रजिस्ट्री के कार्यों का निर्देशन और पर्यवेक्षण करता है। ट्रेड मार्क रजिस्ट्री, ट्रेड मार्क अधिनियम, 1991 और उसके अधीन नियमों को प्रवृत्त करता है और देश में ट्रेड मार्क से संबंधित विषयों में सुसाध्य कारक है। रजिस्ट्री का मुख्य कार्य ट्रेड मार्क का पंजीकरण करना है जो अधिनियम और नियमों के तहत पंजीकरण के लिए अर्हक होता है।

अधिनियम के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं :-

■ केन्द्रीय सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना के द्वारा एक व्यक्ति की नियुक्ति कर सकती है जो पेटेंट डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक के रूप में जाना जाता है, जो इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए ट्रेड मार्क का पंजीयक होगा। ट्रेड मार्क रजिस्ट्री भी होगी, ऐसी जगह पर जैसाकि केन्द्रीय सरकार विनिर्दिष्ट करे यह ट्रेड मार्क के पंजीकरण को सुकर बनाने के प्रयोजन से होगी।

■ इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए एक रिकार्ड जो ट्रेड मार्क रजिस्टर कहा जाता है, को ट्रेड मार्क रजिस्ट्री के मुख्यालय में रखा जाएगा जिसमें सभी पंजीकृत ट्रेड मार्क की प्रविष्टि नामों, पता और मालिकों का विवरण आबंटन और पारेषण की अधिसूचनाओं, पंजीकृत प्रयोक्ताओं का नाम व पता, शर्तों, सीमाओं जैसाकि यथा निर्धारित पंजीकृत ट्रेड मार्क से संबंधित ऐसे अन्य मामलों की प्रविष्टि की जाएगी।

■ रजिस्टर माल और सेवाओं का वर्गीकरण करेगा जहां तक ट्रेड मार्क के पंजीकरण के प्रयोजनों से माल और सेवाओं के अंतर्राष्ट्रीय वर्गीकरण में निर्धारित होगा। वर्ग के संबंध में उठने वाला कोई सवाल जिसके अंतर्गत कोई माल या सेवा आती है का निर्णय रजिस्टर द्वारा किया जाएगा जिसका निर्णय अंतिम होगा।

■ ट्रेड मार्क के पंजीकरण को अस्वीकार करने के सम्पूर्ण कारण :-

- जो किसी सुस्पष्ट विशेषता से हित हैं (अर्थात एक व्यक्ति के माल या उसकी सेवाओं को दूसरे व्यक्ति के माल या सेवाओं से अलग दर्शाने में समर्थ नहीं है),
- जिसमें विशिष्ट रूप से चिन्हा या संकेत निहित हो जा व्यापार में प्रकार, गुणवत्ता, लक्षित प्रयोजन, मूल्य, भौगोलिक उत्पत्ति या माल के उत्पादन का समय को विनिर्दिष्ट करता है या माल या सेवा प्रदाय या अन्य विशेषताओं को दर्शाता है,
- जिसमें विशिष्ट रूप से चिन्ह या संकेत निहित हो जो वर्तमान भाषा में या सद्भावना या व्यापार के प्रचलित पथ में प्रथागत हो गए है,
- यदि इसमें विशिष्ट रूप से माल की आकृति निहित है :- (i) जो अपने आप में माल की प्रकृति के परिणाम है या तकनीकी परिणाम प्राप्त करने के लिए अनिवार्य है या (iii) जो माल को स्थायी मूल्य प्रदान करता है।

■ ट्रेड मार्क के पंजीकरण को अस्वीकार करने के प्रासंगिक कारण :-

- जनता की ओर से दुविधा की सम्भावना निम्नलिखित के कारण : (i) इसकी पहले के ट्रेडमार्क के साथ समानता और ट्रेड मार्क में शामिल माल और सेवाओं का एक समान होना या (ii) पहले के ट्रेड मार्क के साथ इसकी समानता और ट्रेड मार्क में शामिल किए गए माल या सेवाओं की एक रूपता या समानता।
- यदि इसका उपयोग भारत में निषेध योग्य है : (i) किसी कानून के कारण विशेषत: व्यापार के दरम्यान प्रयुक्त अपंजीकृत ट्रेडमार्क का रद्द करने का कानून या (ii) कॉपीराइट कानून के कारण।

■ कोई व्यक्ति जो अपने द्वारा प्रयुक्त या उपयोग के लिए प्रस्तावित ट्रेड मार्क का स्वामी होने का दावा करता है, जो इसका पंजीकरण करने के लिए इच्छुक है, वह पंजीयक के पास लिखित रूप में अपने ट्रेड मार्क के पंजीकरण के लिए निर्धारित तरीके से आवेदन करेगा। ट्रेड मार्क के पंजीकरण के के लिए एक ही आवेदन किया जाना है और विभिन्न वर्गों के माल और सेवाओं के लिए और उसके लिए देय शुल्क माल और सेवाओं का ऐसा प्रत्येक वर्ग के संबंध में होगा।

■ कोई व्यक्ति पंजीकरण के लिए आवेदन के विज्ञापन या पुनर्विज्ञापन की तारीख से तीन माह के भीतर या और अधिक ऐसी अवधि के भीतर जो कुल मिलाकर एक माह से अधिक न हो, पंजीकरण का विरोध करने के लिए पंजीयक को लिखित रूप में निर्धारित तरीके से सूचित कर सकता है। पंजीयक पंजीकरण के लिए आवेदक को एक प्रति भेजेगा और आवेदक द्वारा विरोध की सूचना की प्रति प्राप्त करने के दो माह के भीतर आवेदक पंजीयक को निर्धारित तरीके से उन कारणों का प्रत्युत्तर विवरण भेजेगा जिनके आधार पर उसे अपने आवेदन पर भरोसा है और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो यह माना जाएगा कि उसने अपने आवेदन का परित्याग कर दिया है। पंजीयक पक्षों की सुनवाई करने के बाद, यदि यह आवश्यक हो और साक्ष्य पर विचार करके निर्णय लेगा कि क्या और किस शर्त के अधीन या सीमा के अधीन, यदि कोई हो, पंजीकरण अनुमत किया जाना है और वह आपत्ति के कारणों को ध्यान में रखेगा कि क्या विरोधी पर विश्वास किया जाए अथवा नहीं।

■ ट्रेड मार्क का पंजीकरण, इस अधिनियम के लागू होने के बाद दस वर्ष की अवधि के लिए होगा परन्तु अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार इसका समय-समय पर नवीकरण कियो जा सकता है। पंजीयक निर्धारित तरीके से ट्रेड मार्क के पंजीकृत स्वामी द्वारा किए गए आवेदन पर निर्धारित अवधि के भीतर निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर मूल पंजीकरण के समाप्त होने की तारीख से या पिछला नवीकरण की तारीख से जैसा भी मामला हो दस वर्ष की अवधि के लिए ट्रेड मार्क का पंजीकरण का नवीकरण करेगा।

■ पंजीकृत ट्रेड मार्क के उल्लंघन के कारण निम्नलिखित हैं :-

- ट्रेड मार्क के किसी विज्ञापन के द्वारा यदि ऐसा विज्ञापन : (i) पक्षपात पूर्ण फायदा उठाता है और यह औद्योगिक या वाणिज्यिक मामलों में सच्ची प्रथा के विपरीत हो या (ii) यह इसके विशिष्ट विशेषता के लिए नुकसानदायक हो या (iii) यह ट्रेड मार्क की प्रतिष्ठा के विपरीत हो।
- उस व्यक्ति द्वारा जो पंजीकृत स्वामी नहीं है या अनुमत उपयोग द्वारा व्यापार करते समय उपयोग करता है वह चिन्ह: (i) जो पंजीकृत ट्रेड मार्क के समानुरूप या समान है और (ii) इसका उपयोग ऐसे माल या सेवाओं के संबंध में किया जाता है उनके समान नहीं हैं जिनके लिए ट्रेड मार्क का पंजीकरण किया जाता है और (iii) भारत में पंजीकृत ट्रेड मार्क की प्रतिष्ठा है और उचित कारणों के बगैर चिन्ह का उपयोग अनुचित लाभ उठाता या पंजीकृत ट्रेड मार्क की विशिष्ट विशेषता या प्रतिष्ठा के लिए हानिकारक है।
- उस व्यक्ति द्वारा वह पंजीकृत ट्रेड मार्क का उपयोग अपने ट्रेड नाम या अपने ट्रेड नाम के भाग के रूप में या अपने कारोबारी प्रतिष्ठान का नाम हो या नाम का भाग जो ऐसे माल या सेवाओं का कारोबार करता है जिसके लिए ट्रेड मार्क पंजीकृत है।
- जहां पंजीकृत ट्रेड मार्क का विशिष्ट तत्व में शब्द शामिल हो तो ट्रेड मार्क का उल्लंघन उन शब्दों को बोलने के द्वारा किया जाता है तथा उनके दृश्य प्रस्तुतीकरण द्वारा।
- उस व्यक्ति के द्वारा जो ऐसा ट्रेड मार्क लेबलिंग में उपयोग के लिए लक्षित सामग्री के लिए या सामान पैक करने के लिए कारोबारी कागज के रूप में या माल का विज्ञापन देने के लिए या सेवा के लिए प्रयुक्त करता है, बशर्ते कि ऐसा व्यक्ति जब वह मार्क की प्रयुक्त करता है यह जानता था कि उसके पास यह जानकारी होती थी कि चिन्ह का प्रयोग विधिवत रूप से स्वामी या लाइसेंस धारक द्वारा प्राधिकृत नहीं है।

■ कोई व्यक्ति जो :- (i) किसी ट्रेड मार्क को झूठला है या (ii) किसी ट्रेड मार्क को किसी सामान या सेवाओं के लिए झूठे तौर पर प्रयुक्त करता है या (iii) बनाता है, बेचता है, या अपने अधिकार में किसी डाई, ब्लॉक, मशीन, प्लेट या अन्य उपकरण को झूठे प्रयोग के लिए अपने अधिकार में लेता है या ट्रेड मार्क के झूठलाने के लिए प्रयोग करता है या (iv) माल या सेवाओं के लिए किसी झूठे ट्रेड मार्क को प्रयुक्त करता है या (v) छेड़-छाड़ करता है, बदलता है, मूल संकेत को बदलता है जिसे किसी सामान के लिए प्रयुक्त किया गया है जिसके लिए अधिनियम के तहत इसको प्रयुक्त करना अपेक्षित है, को कारावास या जुर्माना हो सकता है।

सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन : सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन, 2000 का अधिनियम सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन की रक्षा और उससे संबंधित मामलों या उसके प्रासंगिक मामलों के लिए किया गया है। अधिनियम के अनुसार 'ले-आउट डिजाइन' का अर्थ है, ट्रांजिस्टर एवं अन्य परिपथ वाले तत्वों का ले-आउट और इसमें लेड वायर जो ऐसे तत्वों को जोड़ता है, और जिसे किसी भी तरह से सेमी कंडक्टर के रूप में व्यक्त किया जाता है, शामिल है। यहां 'सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ' का अर्थ है ट्रांजिस्टर वाले उत्पाद और अन्य परिपथ युक्त तत्व जो अभिन्न रूप से सेमी कंडक्टर सामग्री में निर्मित होते हैं या रोधक सामग्री या सेमी कंडक्टर सामग्री के भीतर होता है और जिसकी डिजाइन इलेक्ट्रोनिकी परिपथ संबंधी कार्य के निष्पादन के लिए किया जाता है।

अधिनियम का कार्यान्वयन इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी विभाग, सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा किया जाता है। यह अधिनियम भारत में रजिस्ट्री में दर्ज एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन आईपीआर आवेदनों के लिए प्रयोज्य है। सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन रजिस्ट्री एसआईसीएलडीआर वह कार्यालय है जहां सृजित आईपीआर द्वारा एकीकृत परिपथ के ले-आउट डिजाइन संबंधी आवेदन दर्ज किए जाते हैं। रजिस्ट्री का क्षेत्राधिकार पूरे भारत में है।

अधिनियम के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं :-

■ इस अधिनियम के प्रयोजन से केन्द्रीय सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट के रजिस्ट्रार के रूप में एक व्यक्ति की नियुक्ति करती है। और 'सेमी कंडक्टर एकीकृत ले-आउट डिजाइन रजिस्ट्री' भी होगी ताकि केन्द्रीय सरकार के विनिर्दिष्ट ऐसी जगहों पर ले-आउट डिजाइन में पंजीकरण को सुकर बनाया जा सके।

■ इस अधिनियम के प्रयोजन के लिए 'ले-आउट डिजाइन का रजिस्टर' कहा जाने वाला रिकार्ड सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन के मुख्यालय में रखा जाएगा जहां नाम, पता और मालिक के विवरण तथा ऐसे मामले जो पंजीकृत ले-आउट डिजाइन से संबंधित हों जैसा निर्धारित किया जाए, सहित सभी पंजीकृत ले-आउट डिजाइन दर्ज किए जाएंगे।

■ ऐसे ले-आउट डिजाइनों का पंजीकरण निषेध किया जाएगा, जो :

- मूल नहीं हैं, या
- जिनका भारत में कहीं भी वाणिज्यिक रूप से दोहन किया जाता है या समझौते वाले देश में, या
- जो स्वाभाविक रूप से विशिष्ट नहीं हैं, या
- जो अन्य पंजीकृत ले-आउट डिजाइन से अलग पहचाने जाने में स्वाभाविक रूप से सक्षम न हों।

■ ले-आउट डिजाइन को तब मूल समझा जाएगा यदि यह सृजक के स्वयं के बौद्धिक प्रयास का परिणाम हो और जो इसके सृजन के समय ले-आउट डिजाइनों के सृजक एवं सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ के विनिर्माताओं की आम जानकारी में न हो। कोई भी व्यक्ति जो ले-आउट डिजाइन का सृजक का होने का दावा करता है, जो इसे पंजीकृत करने के लिए इच्छुक है वह अपने ले-आउट डिजाइन के पंजीकरण के लिए निर्धारित तरीके से पंजीयक को लिखित रूप में आवेदन देगा। प्रत्येक आवेदन को सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ ले-आउट डिजाइन रजिस्ट्री कार्यालय में जिसके क्षेत्रधिकार सीमा में वह है दर्ज किया जाएगा, आवेदन संबंधी कारोबार का मुख्य स्थान भारत में स्थित है।

■ जब ले-आउट डिजाइन के पंजीकरण का आवेदन स्वकीकार कर लिया जाता है, तब पंजीयक, स्वीकार करने के चौदह दिनों के भीतर आवेदन को निर्धारित तरीके से विज्ञापन देने हेतु स्वीकृत करेगा।

■ विज्ञापन की तारीख से तीन माह के भीतर कोई भी व्यक्ति या आवेदन के पंजीकरण हेतु पुन: विज्ञापन दिए जाने या ऐसी और अवधि के भीतर जो एक माह से अधिक न हो, पंजीयक को निर्धारित तरीके से पंजीकरण के विरुद्ध लिखित आवेदन दे सकता है। पंजीयक सूचना की प्रति पंजीकरण के आवेदक को भेजेगा और आवेदक द्वारा विरोध की सूचना की ऐसी प्रति की प्राप्ति से दो माह के भीतर आवेदक उन कारणों का प्रत्युत्तर विवरण पंजीयक को भेजेगा जिनके आधर पर उसे अपने आवेदन पर भरोसा है और यदि वह ऐसा नहीं करता है तो ऐसा माना जाएगा कि उसने अपना आवेदन त्याग दिया है।

■ जहां आवेदक की ओर से चूक करने के कारण आवेदन करने की तिथि से बारह माहों के भीतर पंजीकरण ले-आउट डिजाइन का पंजीकरण पूरा नहीं होता है तो पंजीयक निर्धारित तरीके से सूचना देकर आवेदन को परिव्यक्त मान लेता हे जब तक कि सूचना में निर्धारित समय के भीतर यह पूरा नहीं किया जाता है।

■ ले-आउट डिजाइन का पंजीकरण केवल दस वर्ष की अवधि के लिए होगा जिसकी गिनती पंजीकरण के लिए आवेदन करने की तारीख से या भारत में या किसी भी देश में कहीं पर भी पहला वाणिज्यिक दोहन की तारीख से जो भी पहले हो, से की जाएगी।

■ पंजीकृत ले-आउट डिजाइन का व्यक्ति द्वारा अतिक्रमण किया जाता है जो न केवल पंजीकृत ले-आउट डिजाइन का स्वामी नहीं होता है या उसका पंजीकृत प्रयोक्ता नहीं होता है :-

- जो पुनरोत्पादन का कोई कार्य करता है या तो सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ में सम्पूर्ण रूप से पंजीकृत ले-आउट डिजाइन को सन्निहित करके या अन्यथा, अथवा उसके किसी भाग को जो अधिनियम के आशय के तहत मूल नहीं है।
- आयात करने या बिक्री करने का कोई कार्य करता है या अन्यथा पंजीकृत ले-आउट या सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ का वाणिज्यिक प्रयोजन से वितरण करता है ऐसे पंजीकृत ले-आउट डिजाइन को मिलाता है या सामग्री को मिलाता है जैसे सेमी कंडक्टर एकीकृत परिपथ जिसमें ऐसे पंजीकृत खाका डिजाइन सन्निहित हो, जिसके उपयोग के लिए ऐसा व्यक्ति अधिनियम के तहत हकदार नहीं है।

■ कोई व्यक्ति जो जान बूझकर अपनी मर्जी से अधिनियम के किसी प्रावधान को उल्लांन करता है या फर्जी रूप से पंजीकृत ले-आउट डिजाइन को प्रस्तुत करता है उसको कारावास की सजा पर जुर्माना या दोनों हो सकती है।

पौध किस्म : पौध किस्मों और कृषक अधिकार अधिनियम, 2001 का अधिनियम पौध किस्मों और कृषक और पौध उगाने वालों के अधिकार के संरक्षण के लिए प्रभावी प्रणाली की स्थापना करने और पौधों की नई किस्मों का विकास प्रोत्साहित करने

की व्यवस्था करने के लिए किया गया है। अधिनियम के अनुसार शब्द 'किस्म' का अर्थ है सूक्ष्म अवयव को छोड़कर एक ही वनस्पति वर्ग के निचली कोटि का पौध समूह, जिसको :- (i) दिए गए प्रकार की जाति के पौध समूह के परिणाम स्वरूप व्यक्त विशेषता के रूप में परिभाषित किया जाता है, (ii) जो कम से कम किसी एक उक्त विशेषता की अभिव्यक्ति द्वारा किसी अन्य पौध समूह से अलग पहचाना जाता है और (iii) प्रजनन के लिए इसकी उपयुक्तता के संबंध में एक यूनिक (iv) माना जाता है। जो इस प्रकार के प्रजनन के पश्चात अपरिवर्तित रहता है और इस प्रकार की किस्म, वर्तमान किस्म, परिवर्तित जाति की किस्म, कृषक किस्म और अनिवार्य रूप से व्युत्पन्न किस्म शामिल होती हैं।

केन्द्रीय सरकार ने कृषि मंत्रालय में पौधों की किस्मों और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण की स्थापना अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों को प्रवृत्त करने के लिए और पौधों की नई किस्मों के विकास को संवर्धित करने उपाय एवं कृषकों और पौध उगाने वालों के अधिकारों संरक्षण करने के लिए की है। केन्द्रीय सरकार ने पौध किस्मों की रजिस्ट्री भी स्थापित की है जो प्राधिकरण के मुख्यालय में स्थित होगी। प्राधिकरण को पौध किस्म महापंजीयक और पौध किस्मों के पंजीकरण के प्रयोजन के अन्य पंजीयकों की नियुक्ति करने की शक्ति दी गई है।

अधिनियम के मुख्य प्रावधान निम्नलिखित हैं :-

■ केन्द्रीय सरकार सरकारी राजपत्र में अधिसूचना द्वारा एक प्राधिकरण की स्थापना करेगी जो इस अधिनियम के प्रयोजनों के लिए 'पौध किस्मों और कृषक अधिकार संरक्षण प्राधिकरण' के रूप में जाना जाएगा। और ऐसी जगहों पर जहां प्राधिकारी उचित समझता है वहां किस्मों का पंजीकरण सुकर बनाने के लिए 'पौध किस्मों की रजिस्ट्री' भी है।

■ इस अधिनियम के प्रयाजनों के लिए एक रजिस्टर जिसे पौध किस्मों का राष्ट्रीय रजिस्टर कहा जाता है, रजिस्ट्री के मुख्यालय में रखा जाएगा जिसमें उनके संबंधित उगाने वालों के नाम और पते के साथ सभी पौधों की किस्मों का पंजीकरण किया जाएगा, पंजीकृत किस्मों के संबंध में ऐसे उगाने वालों के अधिकार, प्रत्येक पंजीकृत किस्म के वर्ग का विवरण, इसके बीज और अन्य प्रजननात्मक सामग्री इसकी मुख्य विशेषताओं का विनिर्देशन के साथ और यथा निर्धारित ऐसे विषयों की प्रविष्टि की जाएगी।

■ किसी किस्म के पंजीकरण के लिए पंजीयक के पास आवेदन निम्नलिखित के द्वारा किया जाता है:-

- कोई व्यक्ति जो किस्म का उगाने वाला समझा जाता है, या
- किस्म उगाने वाले का दावा करने वाले का कोई उत्तराधिकारी, या
- कोई व्यक्ति जो किस्म उगाने वाले का ऐसे आवेदन करने के अधिकार के संबंध में आबंटित है, या
- कोई किसान या किसानों का समूह या किसानों का समुदाय जो किस्म उगाने वाले का दावा करता है, या
- कोई व्यक्ति जो निर्धारित तरीके से उपर्युक्त व्यक्ति द्वारा उसकी ओर से आवेदन करने के लिए प्राधिकृत हो, या
- कोई विश्वविद्यालय या सार्वजनिक रूप से निधियन की जाने वाली संस्था जो किस्म उपजाने वाला होने का दावा करती है।

■ नई किस्म का पंजीकरण इस अधिनियम के तहत होगा यदि यह नवीनता, विशिष्टता, एक रूपता और स्थिरता के मापदंडों के अनुरूप है। जबकि वर्तमान किस्म पंजीकरण इस अधिनियम के अधीन विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर होगा यदि यह विशिष्टता, एक रूपता और स्थिरता के ऐसे मानदंडों के अनुरूप होगी जैसा की विनियम के तहत विनिर्दिष्ट होगा।

■ नई किस्म तब मानी जाएगी -

- नया, यदि संरक्षण के लिए आवेदन दर्ज करने की तारीख को ऐसी किस्म का प्रजनन या कटाई सामग्री, उसके प्रजनक के द्वारा या उसकी स्वीकृति से या ऐसे किस्म के दोहन के प्रयोजनों से उसके उत्तराधिकारी की स्वीकृति से न बेची गई हो या अन्यथा दे दी गई हों - (i) भारत में एक वर्ष से पहले या (ii) भारत के बाहर पेड़ या वाईन के मामले में छह वर्ष से पहले या किसी अन्य मामले में चार वर्ष से पहले हो।
- भिन्न, यदि यह कम से कम एक अनिवार्य विशेषता द्वारा स्पष्ट रूप से अन्य किसी किस्म से भिन्न है जिसका अस्तित्व किसी देश में आवेदन देने के समय जन सामान्य को ज्ञात विषय है।

- एकरूपता, यदि अंतर होने के अधीन जो इसके प्रजनन की विशेष विशेषता से आशयित है यह अपनी अनिवार्य विशेषता में पर्याप्त रूप से एकसमान हो।
- स्थिरता, यदि इसकी अनिवार्य विशेषता बारंबार प्रजनन के बाद भी अपरिवर्तित रहती है या किसी विशेष प्रजनन चक्र के मामले में ऐसे प्रत्येक चक्र के अंत में अपरिवर्तित रहती है।

■ नई किस्म का इस अधिनियम के तहत पंजीकरण नहीं होगा यदि ऐसी किस्म को दिया गया वर्ग :-

- ऐसी किस्म को अभिचिन्हांकित करने में सक्षम नहीं है, या
- केवल इसमें आंकड़े ही हैं, या
- यदि उत्पादक किस्म की पहचान के लिए विशेषता, मूल्य पहचान के संबंध में गुमराह करने या दुविधा उत्पन्न करने वाला हो, या
- या ऐसे प्रत्येक वर्ग से भिन्न नहीं है जो इसी वनस्पति गत जाति की किस्म विनिर्दिष्ट करती है, या इस अधिनियम के तहत पंजीकृत प्रजातियों से बहुत अधित मिलती-जुलती हो या।
- यह संभावत: जनता को धोखा दे सकता है ऐसी किस्म की पहचान के संबंध में जनता को दुविधा में डाल सकता है या
- जो भारत के किसी वर्ग या तबके के नागरिकों की धार्मिक भावना को आहत पहुंचाने वाला हो, या
- जो प्रतीक और नाम अनुचित उपयोग निवारण अधिनियम, 1950 में उल्लिखित किसी प्रयोजन के लिए नाम या प्रतीक के रूप में उपयोग के लिए प्रतिसिद्ध हो, या
- जो पूर्ण रूप से या आंशिक रूप से भौगोलिक नाम मात्र हो।

■ विनियमन के अनुसार प्रत्येक आवेदक किस्म का एक ही और भिन्न वर्ग विनिर्दिष्ट करेगा जिसके लिए वह इस अधिनियम के तहत पंजीकरण कराना चाहता है। प्राधिकरण किसी अंतरराष्ट्रीय समझौता या संधि के प्रावधानों का सम्मान करते हुए, जिसका भारत एक पक्ष बन गया है किस्म का वर्ग विनिर्दिष्ट करने को शासित करने के लिए विनियम बनाएगा।

■ पंजीकरण के प्रत्येक आवेदन :-

- किस्म के संबंध में होगा,
- आवेदक द्वारा ऐसी किस्म के लिए विनिर्दिष्ट वर्ग का उल्लेख करेगा,
- इसके साथ आवेदक द्वारा शपथ पत्र होगा, कि ऐसी किस्म में किसी जीन या जीन क्रम अंतर्ग्रस्त नहीं है जिसमें सीमाबद्ध करने वाली प्रौद्योगिकी शामिल हो,
- विनियमन द्वारा विनिर्दिष्ट स्वरूप में होगा,
- जहां से अनुवांशिक सामग्री ली गई है भारत में उसकी भौगोलिक स्थान के साथ पूर्ण जनकीय लाइन का पासपोर्ट डाटा जहां से किस्म व्युत्पन्न की गई है और ऐसी सभी सूचनाएं जो योगदान से संबंधित है, यदि कोई हो, किसी कृषक, ग्राम समुदाय, संस्था या संगठन का उत्पादन में, किस्म विकसित करने या उत्पन्न करने में किसी प्रकार का योगदान का डाटा
- इसकी नवीनता की विशेषता, भिन्नता, एकरूपता और स्थायित्व को परिलक्षित करने वाला किस्म की संक्षिप्त व्याख्या के विवरण के साथ होगा जैसाकि पंजीकरण के लिए अपेक्षित है,
- इसके साथ निर्धारित शुल्क भेजा जाएगा,
- ऐसी घोषणा सन्निहित होगा कि किस्म उगाने या उत्पन्न करने या किस्म विकसित करने के लिए प्राप्त अनुवांशिक सामग्री या जनकीय सामग्री कानूनी रूप से प्राप्त की गई है, और
- यथा निर्धारित विवरण इसके साथ लगा होगा।

■ प्रत्येक आवेदक, इस अधिनियम के तहत पंजीकरण के लिए दिया गया आवेदन के साथ पंजीयक को जिसके लिए पंजीकरण का आवेदन किया जाता है उस किस्म को उस प्रमात्रा में उपलब्ध कराएगा, जिससे कि जनकीय सामग्री के साथ ऐसी

किस्म के बीज का मूल्यांकन करने के लिए परीक्षण किया जा सके ताकि यह जाना जाए कि विनियम द्वारा यथा विनिर्दिष्ट मानकों के यह समनुरूम है। प्रत्येक उल्लिखित परीक्षण करने हेतु यथा निर्धारित शुल्क जमा करेगा।

■ कोई भी व्यक्ति पंजीकरण शुल्क का भुगतान करके पंजीकरण के लिए आवेदन के विज्ञापन की तारीख से तीन माह के भीतर पंजीकरण के अपने विरोध के लिए पंजीयक को निर्धारित तरीके से लिखित रूप में सूचना दे सकता है। निम्नलिखित में से किसी कारण से विरोध किया जा सकता है :-

- कि वह व्यक्ति जो आवेदन का विरोध करता है वह आवेदक के विरूद्ध उत्पादक के अधिकार का हकदार है, या
- कि इस अधिनियम के तहत यह किस्म पंजीकरण योग्य नहीं है, या
- कि पंजीकरण का प्रमाणपत्र प्रदान करना जन हित में नहीं हो, या
- कि किस्म का पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव हो सकता है।

■ पंजीयक पंजीकरण के लिए आवदेक को विरोध की एक प्रति भेजेगा और विरोध की सूचना की ऐसी प्राप्ति को आवेदक द्वारा प्राप्त करने से दो माह के भीतर, आवेदक पंजीयक को निर्धारित तरीके से प्रत्युत्तर में विवरण भेजेगा जिसमें कारण होंगे जिस पर उसे अपने आवेदन पर भरोसा है और यदि वह ऐसा नहीं करता तो ऐसा माना जाएगा कि उसने अपने आवेदन का परित्याग कर दिया है।

■ अधिनियम के तहत जारी पंजीकरण प्रमाणपत्र पेड़ों और वाईन के मामले में नौ वर्षों के लिए वैध होगा और अन्य फसलों के मामले में छः वर्षों के लिए मान्य होगा और इसके लिए निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर शेष अवधि के लिए इसकी समीक्षा और नवीकरण किया जाएगा शर्त यह है कि कुल मान्य अवधि निम्नलिखित से अधिक नहीं होगी :-

- पेड़ों और अंगूर की लता के मामले में किस्म के पंजीकरण की तारीख से अठारह वर्ष,
- वर्तमान किस्म के मामले में, बीज अधिनियम, 1966 के तहत केन्द्र सरकार द्वारा उस किस्म की अधिसूचना की तारीख से पन्द्रह वर्ष, और
- अन्य मामलों में किस्म के पंजीकरण की तारीख से पन्द्रह वर्ष।

■ इस अधिनियम के तहत किस्म का कोई पंजीकरण नहीं किया जाएगा यदि सार्वजनिक व्यवस्था या सार्वजनिक नैतिकता या मानव पशु और पौधों के जीवन स्वास्थ्य की रक्षा करने या वातावरण के प्रति गंभीर पूर्वाग्रह से बचने के लिए ऐसी किस्म का वाणिज्यिक दोहन का निषेध अनिवार्य हो।

■ अधिनियम के तहत कृषकों के अधिकार निम्नलिखित हैं :-

- किसान जिसने नई किस्म उगाया या विकसित किया है वह पंजीकरण और किस्म के उत्पादक के तौर पर उसी तरह संरक्षण का हकदार होगा
- किसान की किस्म पंजीकरण के लिए हकदार होगी,
- किसान जो चयन और संरक्षण के माध्यम से भूमिप्रजाति वन्य को आर्थिक पौधों के सापेक्ष हैं के वांशिक संसाधनों के संरक्षण और उनके सुधार में लगा हुआ है, वह जीन निधि से निर्धारित तरीके से मान्यता और पुरस्कार का हकदार होगा।
- किसान अपना फार्म उत्पाद जिसमें इस अधिनियम के तहत संरक्षित किस्म के बीज शामिल है की बचत, उपयोग, बुआई, पुनर्बुआई, विनिमय, हिस्सा या बिक्री करने के लिए उसी तरह हकदार होगा जैसा कि वह इस अधिनियम के लागू होने के पहले हकदार था।

■ किसी भी समय किस्म के पंजीकरण का प्रमाणपत्र जारी करने की तारीख से तीन वर्ष समाप्त होने के बाद कोई भी इच्छुक व्यक्ति यह दोष लगाते हुए कि किस्म की जनता के लिए बीज की आवश्यकता या अन्रू प्रजनक सामग्री की आवश्यकता पूरी नहीं हुई है या बीज या किस्म की अन्य सामग्री उचित मूल्य पर जनता के लिए उपलब्ध नहीं है और बीज की अन्य प्रजनक सामग्री का उत्पादन वितरण और बिक्री करने के लिए अनिवार्य लाइसेंस प्रदान करने के लिए अनुरोध कर सकता है। अनिवार्य लाइसेंस की अवधि अलग-अलग मामले में अलग-अलग होती है इसमें सगर्भता अवधि और अन्य संगत कारकों को ध्यान में रखा जाता है परन्तु किसी भी मामले में उस किस्म की संरक्षण की शेष अवधि से अधिक नहीं होगी।

■ इस अधिनियम के तहत स्थापित अधिकार का एक व्यक्ति द्वारा उल्लंघन किया जाता है :-

- जो इस अधिनियम के तहत पंजीकृत किस्म का उत्पादक न हो या पंजीकृत एजेंट या उस किस्म का पंजीकृत लाइसेंस धारक न हो और वह इसके उत्पादक की अनुमति के बिना या पंजीकृत लाइसेंस के क्षेत्र के भीतर या रजिस्टर एजेंसी की अनुमति के वगैर किस्म की बिक्री, निर्यात, आयात या उत्पादन पंजीकृत लाइसेंस धारक या पंजीकृत एजेंट के बिना करता है जैसा भी मामला हो,
- ऐसी किस्म का वर्ग देकर जो किसी अन्य किस्म का उपयोग, बिक्री, निर्यात, आयात या उत्पादन करता है जो उस वर्ग की किस्म जो इस अधिनियम के तहत इस तरह से पंजीकृत है कि सामान्य जनता के मन में ऐसी पंजीकृत किस्म को पहचानने में दुविधा उत्पन्न करता है के समान हो या धोखे से एक समान लगता हो।

■ कोई व्यक्ति जो किसी झूठा वर्ग किस्म के लिए देता है और देश का झूठा नाम या जगह का या इस अधिनियम के तहत पंजीकृत किस्म के उत्पादक का झूठा नाम व पता ऐसी किस्म का व्यापार करने के दौरान विनिर्दिष्ट करता है उसका कारावास या जुर्माना या दोनों की सजा हो सकती है।

भौगोलिक चिन्ह : सामानों का भौगोलिक चिन्ह पंजीकरण और संरक्षण अधिनियम,1999 को सामान से संबंधित भौगोलिक चिन्हों के पंजीकरण और बेहतर संरक्षण की व्यवस्था करने के लिए अधिनियमित किया गया है। इस अधिनियम के अनुसार 'भौगोलिक चिन्ह' सामान के संबंध में शब्द का अर्थ है ऐसा चिन्ह जो ऐसे सामान को कृषि सामान, प्राकृतिक सामान अथवा विनिर्मित सामान जैसा देश के राज्य क्षेत्र अथवा क्षेत्र अथवा उस राज्य क्षेत्र में स्थान में उत्पन्न अथवा विनिर्मित हुआ हो, जहां ऐसे सामान की प्रदत्त गुणवत्ता, साख अथवा अन्य विशेषताएं अनिवार्य रूप से इसके भौगोलिक मूल के कारण हैं और उस हालत में जहां ऐसे सामान विनिर्मित सामान हैं तो संबंधित सामान के उत्पादन अथवा प्रसंस्करण अथवा तैयार होने का कोई कार्यकलाप ऐसे राज्य क्षेत्र, क्षेत्र, मोहल्ले में, जैसा भी मामला हो, होता हो'।

इस अधिनियम के अंतर्गत वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के औद्योगिक नीति और संवर्धन विभाग के अंतर्गत पेटेंट, डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक भौगोलिक चिन्हों के पंजीयक' हैं। पेटेंट, डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक भौगोलिक चिन्ह रजिस्ट्री के कार्यकरण का निर्देशन व पर्यवेक्षण करते हैं।

इस अधिनियम के मुख्य उपबंध ये हैं :-

■ ट्रेड मार्क अधिनियम, 1999 के अंतर्गत नियुक्त, 'पेटेंट, डिजाइन और ट्रेड मार्क महानियंत्रक' भौगोलिक चिन्हों का पंजीकरण सुसाध्य बनाने के प्रयोजनार्थ, ऐसे स्थानों पर, जो केंद्र सरकार सरकारी राजपत्र द्वारा निर्दिष्ट करें, 'भौगोलिक चिन्ह रजिस्ट्री' होगी।

■ इस अधिनियम के प्रयोजनार्थ भौगोलिक चिन्ह रजिस्टर नामक अभिलेख को भौगोलिक चिन्ह रजिस्ट्री के प्रधान कार्यालय में रखा जाएगा, जिसमें नाम, पते और विवरण तथा यथा निर्धारित किए जा सकने वाले पंजीकृत भौगोलिक चिन्हों से संबंधित ऐसे अन्य मामले दर्ज किए जाएंगे।

■ पंजीयक द्वारा यथा वर्गीकृत ऐसी श्रेणी के सामान में शामिल और किसी देश के निश्चित राज्य क्षेत्र, अथवा क्षेत्र अथवा उस राज्य क्षेत्र में स्थान, जैसा भी मामला हो, के संबंध में किसी अथवा सभी सामानों के बारे में भौगोलिक चिन्ह पंजीकृत किए जा सकते हैं। पंजीयक सामानों को, जहां तक हो सकेगा, भौगोलिक चिन्ह के पंजीकरण के प्रयोजनार्थ सामान के अंतरराष्ट्रीय वर्गीकरण के अनुसार वर्गीकृत करेंगे।

■ उन भौगोलिक चिन्हों का पंजीकरण निषिद्ध करना :-

- जिनके प्रयोग से धोखा अथवा भ्रांति हो सकती हो, अथवा
- जिसका प्रयोग वर्तमान में प्रवृत्त किसी कानून के विरुद्ध हो, और
- जिसमें घोटालापूर्ण अथवा अश्लील सामान हो अथवा उससे बना हो, अथवा
- जिसमें ऐसा सामान हो अथवा उससे बना हो जिससे भारत के नागरिकों के किसी वर्ग अथवा भाग की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचने की संभावना हो, अथवा
- जिसे न्यायालय में संरक्षण से अन्यथा अधिकार से वंचित किया जा सके, अथवा

- जिन्हें सामान के प्रजातिगत नाम अथवा चिन्ह के रूप में निर्धारित किया गया है और इसलिए उनके उद्गव के देश में संरक्षित नहीं किए जाते अथवा बंद कर दिए गए हैं अथवा उस देश में अनुपयोगी हो गए हैं, अथवा
- जो यद्यपि उस राज्य क्षेत्र, क्षेत्र अथवा स्थान जिसमें ये सामान उत्पन्न हुए हैं, अक्षरश: सत्य है परंतु व्यक्तियों को झूठमूठ यह दर्शाते हैं कि ये सामान किसी दूसरे राज्य क्षेत्र, क्षेत्र अथवा स्थान जैसा भी मामला हो, उत्पन्न होते हैं।

■ संबंधित सामान के उत्पादकों के हित का प्रतिनिधित्व करने वाले व्यक्तियों अथवा उत्पादकों का कोई सां अथवा कोई संगठन अथवा वर्तमान में प्रवृत्त किसी कानून द्वारा अथवा उसके अंतर्गत स्थापित कोई प्राधिकरण जो ऐसे सामान के संबंध में भौगोलिक चिन्ह के पंजीकरण के इच्छुक हैं, ऐसे फार्म और ऐसे तरीके से तथा भौतिक चिन्ह के पंजीकरण हेतु यथा निर्धारित ऐसे शुल्क के साथ पंजीयक को लिखित में आवेदन करेंगे। सामान की विभिन्न श्रेणियों के लिए भौगोलिक चिन्ह के पंजीकरण हेतु एकल आवेदन किया जा सकता है और उस पर अदा किया जाने वाला शुल्क सामान की प्रत्येक ऐसी श्रेणी के संबंध में होगा।

■ इस आवेदन में ये जानकारियां होंगी :-

- इस बात का विवरण कि किस प्रकार भौगोलिक संकेत वस्तुओं को उस विशिष्ट गुणवत्ता, प्रसिद्धि या अन्य विशेषताओं, जो उनके अपने अंतर्हित प्राकृतिक तथा मानवीय कारकों के साथ अनन्य या अनिवार्यत: भौगोलिक पर्यावरण के कारण है, के संबंध में यथा मामला देश के संबंधित भूभाग या देश के क्षेत्र या स्थान से उद्भूत के रूप में निर्दिष्ट करने के काम आते है तथा जिनका उत्पादन प्रक्रियान्वयन या तैयारी यथा मामला ऐस भू-भाग, क्षेत्र या स्थान में होता है,
- सामान की श्रेणी जिस पर भौगोलिक चिन्ह लागू होगा,
- उस देश के राज्य क्षेत्र अथवा क्षेत्र अथवा उस देश में स्थान का भौगोलिक मानचित्र जिसमें सामान का उद्गव हुआ है अथवा विनिर्मित किया जा रहा है,
- भौगोलिक चिन्ह के प्रकटन के बारे में विवरण कि क्या यह शब्दों अन्यथा आंकड़ा तत्वों अथवा दोनों से मिलकर बना है,
- संबंधित सामान के उत्पादकों के ऐसे ब्यौरे वाला विवरण, यदि कोई हो, जो पंजीकरण के साथ आरंभ में पंजीकृत किया जाना प्रस्तावित है, और
- ऐसे अन्य ब्यौरे जो निर्धारित किए जाएं।

■ कोई व्यक्ति जो पंजीकरण के लिए आवेदन के विज्ञापन या पुनरूविज्ञापन की तिथि से तीन के भीतर अथवा कुल मिलाकर ऐसी आगामी अवधि के भीतर जो एक माह से अधिक न हो, पंजीकरण के विरोध के पंजीयक को निर्धारित तरीके से लिखित आवेदन देता है। पंजीयक पंजीकरण के लिए आवेदक को नोटिस की एक प्रति तामिल करेगा तथा आवेदक द्वारा विरोध के ऐसे नोटिस के प्रति के दो माह के भीतर आवेदक रजिस्ट्रार को निर्धारित तरीके से उन आधारों का प्रतिवितरण भेजेगा जो उसके आवेदन पत्र के आधार है तथा यदि वह ऐसा नहीं करता है तो उसके द्वारा अपने आवेदन को छोड़ दिया गया माना जाएगा।

■ भौगोलिक चिन्ह (संकेत) का पंजीकरण दस वर्ष की अवधि के लिए होगा किंतु अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार इसे समय समय पर नवीनीकृत किया जाएगा। प्राधिकृत प्रयोक्ता का पंजीकरण दस वर्ष की अवधि के लिए अथवा ऐसी अवधि के लिए होगा जब उस भौगोलिक चिन्ह का पंजीकरण, जिसके लिए प्राधिकृत प्रयोक्ता पंजीकृत है, समाप्त होता है, जो भी पहले हो।

■ पंजीकृत भौगोलिक चिन्ह का ऐसे व्यक्ति द्वारा उल्लांन किया जाता है, जो उसका प्राधिकृत प्रयोक्ता न होते हुए उसका प्रयोग करता है:-

- वस्तुओं के नामनिर्दिष्टीकरण या प्रस्तुतीकरण में किसी भी तरीके से ऐसे भौगोलिक चिन्ह का प्रयोग करता है जो यह संकेत देता है या सुझाता है कि ऐसी वस्तुओं का उद्भव उनके उद्गव के मूल स्थान से भिन्न किसी अन्य भौगोलिक उद्गम के बारे में व्यक्तियों को भ्रम उत्पन्न होता है, अथवा
- किसी भौगोलिक चिन्ह का प्रयोग इस तरीके से करता है जो अनुचित प्रतिस्पर्धा के कृत्य का संघटन जिसमें पंजीकृत भौगोलिक संकेत के संबंध में प्रयोग किया जाना शामिल है,
- वस्तुओं के किसी अन्य भौगोलिक चिन्ह का प्रयोग करता है जो यद्यपि उस भूभाग, क्षेत्र या स्थान जहां वस्तुओं का उद्गम हुआ है, के लिए सही है, व्यक्तियों के समक्ष मिथ्या प्रदर्शित करता है कि वस्तुओं का उद्गम उस भू-भाग, क्षेत्र या स्थान में हुआ है जिससे ऐसा पंजीकृत भौगोलिक संकेत संबंधित है।

■ कोई भी व्यक्ति जो :- (i) किसी भौगोलिक संकेत का मिथ्या प्रयोग करता है अथवा (ii) मिथ्या रूप से किन्हीं वस्तुओं पर किसी भौगोलिक संकेत का प्रयोग करता है अथवा (iii) किसी ऐसी डाई ब्लॉक, मशीन, प्लेट या अन्य उपकरण के बनाता, समाप्त करता है या अपने पास रखता है जिसका प्रयोजन किसी भौगोलिक संकेत का मिथ्या प्रदर्शन हेतु प्रयोग करता है अथवा (iv) अधिनियम के अंतर्गत वस्तुओं पर प्रयोज्य किए जाने के लिए अपेक्षित प्रयोज्य किए गए किसी उद्‌गम चिन्ह से छेड़छाड़ करता है, परिवर्तित करता है या मिटाता है, तो वह कारावास दंड तथा अर्थदंड द्वारा दंडनीय होगा।

व्यापार गोपनीयता या अप्रकट सूचना : जानकारी बौद्धिक सम्पत्ति का एक दूसरा महत्वपूर्ण रूप है जो अनुसंधान एवं विकास संस्था द्वारा सृजित है उनको पेटेन्ट या प्रतिलिप्याधिकार का लाभ नहीं मिलता है। ऐसी जानकारी को व्यापार गोपनीयता के रूप में गुप्त रखा जाता है। व्यापार गोपनीयता या अप्रकट सूचना, एक सूचना है उसे जानबूझकर गुप्त रखा जाता है और यह आर्थिक हित सहित वाणिज्यिक अनुप्रयोग के लिए सक्षम है। यह ऐसी सूचना को संरक्षित रखता है जो ऐसी सूचना रखता है उन्हें प्रतिस्पर्धात्मक लाभ प्रदान करता है बशर्ते कि ऐसी सूचना प्रतियोगियों को आसानी से उपलब्ध नहीं होती या उनके द्वारा नहीं जानी जाती है। उनमें तकनीकी डाटा, आंतरिक प्रकियाएं, कार्यविधियां, सर्वेक्षण विधियां, नया आविष्कार जिसके लिए अब तक पेटेन्ट का आवेदन दर्ज नहीं किया गया है, ग्राहकों की सूची, विनिर्माण की प्रक्रिया, तकनीकी, सूत्र, आरेखन, प्रशिक्षण सामग्री स्रोत कोड आदि शामिल हैं। इस लिए यह सुनिश्चित करने द्वारा कि संविदात्मक बाध्यता उन प्रक्रियाओं पर प्रवर्तित की जाए जो ट्रेड गोपनीयता के उपयोग के लिए अनुमत है विशेषकर तब जब तृतीय पक्ष को इसका लाइसेंस दिया जाता है, व्यापार गोपनीयता के लिए विश्वसनीयता सुदृढ़ करने हेतु अत्यावश्यक हो जाता है।

चूंकि कोई दस्तावेजी साक्ष्य नहीं है जैसाकि पत्र पेटेन्ट या प्रतिलिप्याधिकार पंजीकरण या ट्रेड मार्ग पंजीकरण, जिससे कि यह साबित किया जा सके कि व्यापार गोपनीयता मूल रूप से स्वामी द्वारा सृजित है, व्यापार गोपनीयता के सृजन भेजकर और डाक चिन्हित और मुहरबंद लिफाफा अपने पास रखकर या सूचना की प्रति तृतीय पक्ष के पास जमा करके जो दिनांकित प्रति का रखरखाव करेगा।

स्वामी की इच्छा अनुसार व्यापार गोपनीयता अनिश्चित काल की अवधि तक गुप्त रहती है बशर्ते कि सुरक्षा और इसकी गोपनीयता का उल्लंघन नहीं किया जाता है। भारत में व्यापार गोपनीयता को विनियमित करने वाला कोई विशिष्ट विधान नहीं है। भारत सामान्य संरक्षण के कानून का पालन करता है और इससे संबंधित सभी मामले साधारणत संविदा अधिनियम, 1872 के अधीन शामिल किए जाते हैं। इसलिए यदि व्यापार गोपनीयता वाली सूचना बाहरी निकलती है तो उन पक्षों के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई की जा सकती है जिन्होंने संविदा कानून के तहत इसे प्रकट किया है। तथापि, ऐसे मामले में व्यापार गोपनीयता का संरक्षण खत्म हो जाएगा और यह जनता के लिए उपलब्ध हो जाएगा।

❖❖❖

रोबोटिक्स

CHRONICLE IAS ACADEMY
A CIVIL SERVICES CHRONICLE INITIATIVE

रोबोट विज्ञान और रोबोट पर एक नजर

रोबोट का डिजाइन करने, उनका निर्माण और प्रयोग करने के विज्ञान को रोबोट विज्ञान कहते हैं। और यह रोबोट क्या है? बहुत लोग रोबोट को ऐसा यांत्रिक मानव समझते हैं जो देख सकता है, सुन सकता है, महसूस कर सकता है, चल सकता है और बात कर सकता है। इस किस्म का रोबोट अभी तक एक दूर का सपना है। आजकल इस्तेमाल होने वाले रोबोट मूलत: कम्प्यूटर चालित मशीनें हैं। आइये कुछ उदाहरणों से समझे कि आखिर रोबोट है क्या?

रोबोट को बहुत से काम करने के लिए बनाया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक रोबोट कई विभिन्न साइजों के छेद बना सकता है। रोबोट सब्जियों की छटाई कर सकता है, भेड़ के बाल काट सकता है, केक बना सकता है और यांत्रिक भागों को एक साथ जोड़ सकता है। रोबोटिक ट्रेन यात्रियों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जा सकती है। यहां तक कि रोबोट नाजुक घड़ियों के विभिन्न भागों को या कम्प्यूटर अवयवों को जोड़ सकता है। कारखानों में रोबोट स्पॉटवेल्डिंग और स्प्रे पेंटिंग कर सकते है।

रोबोट को एक कार्य से हटा कर दूसरे कार्य पर लगाने के लिए भी प्रोग्रामित किया जा सकता है और नये कार्य करना सिखाया जा सकता है। उदाहरण के लिए, एक ही रोबोट छेद भी बना सकता है और साथ ही अपने किए छेदों में बोल्ट भी फिट कर सकता है। एक ही रोबोट पहले एक काम, फिर दूसरा काम और उसके बाद तीसरा काम कर सकता है। उद्योगों में प्रयोग होने वाला रोबोट जिसे ''टी'' (T) कहते हैं, एक अलमारी से अपने लिए औजार चुन सकता है, 0.005 इंच परिशुद्धता के छेद बना सकता है और 250 विभिन्न भागों की परिधि माप सकता है। इसकी सहायता से एफ-16 लड़ाकू विमान बनाए गए हैं।

इन उदाहरणों से स्पष्ट हो जाना चाहिए कि रोबोट एक कम्प्यूटरीकृत बहुप्रयोजनीय और पुन: प्रोग्रामित होने वाली मशीन है जो विभिन्न प्रकार का कार्य कर सकता है।

इनके अतिरिक्त रोबोट का एक गुण और भी है। कृत्रिम बुद्धि के प्रयोग के जरिए रोबोट में बहुत सी मानवीय क्षमताएं आ गई है।

रोबोटिक्स

रोबॉट की अभिकल्पना, निर्माण और अभिप्रयोग के विज्ञान और तकनीकों को रोबोटिक्स कहते हैं। इस क्षेत्र में कार्य करने के लिये इलेक्ट्रॉनिकी, यान्त्रिकी और सॉफ्टवेयर के सिवाय कई अन्य क्षेत्रों में व्यावहारिक ज्ञान की आवश्यकता होती है। हालांकि रोबोट के स्वरूप और क्षमताओं में काफी विविधता हैं पर इन सभी में कई समानताएं भी हैं। उदाहरण के लिए यांत्रिक चलनशील ढांचा और स्वनियंत्रण सभी में होता है। रोबोट के ढांचे की उपमा मानव अस्थिपंजर है, और उसे शुद्ध-गति माला कहा जा सकता है। अधिकांश रोबोट क्रमिक माला रूपी होते हैं, जिसमें एक कड़ी दूसरी से जुड़ती है- इन्हें क्रमिक रोबोट कहते है। और ये मानव हाथ के समान है। अन्य रोबोट सामानांतर शुद्ध-गति मालाओं का प्रयोग करते है। जीव-यांत्रिकी के अंतर्गत मानव या अन्य जीवों की नकल कर ढांचों को बनाने पर अनुसंन्धान चल रहा है। माला की अंतिम कड़ी किसी तरह की प्रवर्तक (Actuation) हो सकती है, जैसे एक यांत्रिक हाथ या वेल्डिंग मशीन।

रोबोटों के घटक

1. प्रर्वतक (**Actuation**): यह रोबोट की पेशी (Muscles) होती है, जो कि संचित उर्जा को चलन में बदलती है। सबसे लोकप्रिय प्रवर्तक विद्युत मोटर है।

- दिष्ट धारा मोटर: अधिकतम रोबोटों में दिष्ट धारा, या डीसी, मोटरों का प्रयोग होता है। इन मोटरों की खासियत यह है कि ये बड़ी आसानी से मिल जाती हैं, इनका प्रयोग आसान है, दोनों दिशा में चलती है, और काफी जल्दी तेजी पकड़ती हैं।
- चरणशः मोटर **(Stepper Motors)**: दिष्ट धारा मोटरों की तुलना में चरणशः (स्टेप्पर) मोटर स्वतंत्रतापूर्वक ना चलकर, कदमों में घूमती है। इसका फायदा यह है कि नियंत्रण सूक्ष्म और पूर्वानुमेय होता है; संकेत की जरूरत नहीं पड़ती कोणीय स्थिति को जानने के लिए। इसलिय इनका प्रयोग अनेक रोबोटों और मशीनों में होता है।
- पीजो मोटर: इन मोटरों को पारस्वनिक मोटर भी कहते हैं। इनका चालन क्षण में हजारों बार पीजोविद्युत सूक्षम ''पाजोसुरामिक तत्वों'' के कंपन से होता है। ये मोटर सीधे या गोलाकार दिशा में चल सकती है। इनकी खासियत है कि ये नैनोमीटर स्तर पर नियंत्रण, गति और अपने माप के लिये अत्यंत शक्तिशाली होते हैं। इन मोटरों का व्यापक प्रयोग हो रहा है, और वाणिज्यिक स्तर पर निर्माण भी चल रहा है।
- कृत्रिम वायु पेशी: हवा के दबाव से यह सरल, किन्तु सशक्त, यंत्र, खिंचने और फैलाने की क्रियाओं से रोबोट की अस्तियों को चलाने का काम करता है। चूंकि यह जीवों के पेशियों से बहुत समरूप व्यवहार को दर्शाता है अतः इनका प्रयोग रोबोट बनाने में किया जा रहा है। उदाहरण के लिए, शैडो रोबोट के हाथ में 40 हवाई पेशियां उसके 24 जोड़ों को चलाती हैं।
- विद्युत-सक्रिय बहुलक: विद्युत शक्ति के लगाने से प्लास्टिक के कुछ वर्ण अपने आकार को बदलने की प्रवृत्ति रखते हैं। हालांकि इनमें मुड़ने, और सुकुड़ने की क्षमता पर ये ना तो कार्यक्षम हैं ना ही पुष्ट- इसलिये इनका प्रयोग नहीं हो पा रहा है। उम्मीद है कि भविष्य में सूक्ष्म रोबोटी अनुप्रयोगों में इनका इस्तेमाल होगा।
- लचीली नैनोनली: नैनोनली पर अनुसंधान प्राथमिक स्तर पर है। इनके लचीलेपन का राज है इनका तकरीबन त्रुटी रहित रहना। इनसे बनी पेशियां इनसानी पेशियों से अधिक सशक्त होंगी।

। दक्षप्रयोग: व्यावहारिक कार्य सक्षमता के लिये रोबोटों को वस्तुओं को उठाने, उन्हें सुधारने या नष्ट करने के लिये 'हाथों' की जरूरत पड़ती है। ये हाथ अकसर आखरी कड़ी होती है, जिन्हें अन्त परिवर्तक (end effectors) कहा जाता है, रोबोटी बाजुओं पर लगती है। अधिकांश तौर पर ये रोबोटी हाथ पृथकानुकुल होती है ताकि कार्यानुसार इन्हें बदला जा सके।

। पकड़: रोबॉटों मे पकड़ (gripper) का प्रयोग सामान्य तौर पर होता है। सबसे सरल स्वरूप में इसमें सिर्फ उंगलियां होती है, जिसका प्रयोग छोटे वस्तुओं को उठाने के लिये किया जाता है।

। निर्वात-पकड़: बड़े वस्तुओं को उठाने के लिए, जब तक कि उनकी सतह चिकनी हो (जैसे की कार का हवारोधी शीशा), निर्वात-पकड़ों का प्रयोग किया जाता है।

। सामान्य प्रयोजन पकड़: कुछ आधुनिक रोबोटों ने तकरीबन इन्सानी हाथ की दक्षता पा ली है, जैसे कि ''शैडो हैंड' (Shadow Hand) और ''शंक हैंड'' (Schunk hand)। इनकी खासियत यह है कि इनमें 10 तक स्वातंत्र्य परिमाण और सैंकड़ों स्पर्श-संकेतक होते हैं। इनका नियंत्रण अत्यंत कठिन होता है क्योंकि कंप्यूटर को अत्याधिक विकल्पों से सही विकल्प ढूंढना होता है।

पहियेदार रोबोट (कुछ उदाहरण)

। सैग्वे: चलने में सक्षम

। चार या उससे अधिक पहिये: नासा द्वारा मंगल पर भेजे मार्स रोवर के रूप में।

। दोपहिया रोबोट: हालांकि सैंग्वे एक रोबोट नहीं है, कई रोबोटों में इसके गतिक संतुलन कलनविधि का प्रयोग हुआ है। सैंग्वे का नासा ने रोबोनॉट में प्रयोग किया है।

। बॉलवॉट: कार्नेगी मैलन विश्वविद्यालय के अनुसंधान कर्ताओं ने रोबोटों के चालन के लिये पहियों की जगह एक गेंद का प्रयोग किया है। इनकी खासियत यह है कि छोटे सीमित जगहों में भी इन्हें घुमा सकते हैं।

© CHRONICLE IAS ACADEMY

परस्पर मानवीय व्यवहार तथा रोबोट

किस्मेट रोबॉट मुख भाव दिखा सकता है। रोबोटों का प्रभावी प्रयोग घरेलू और औद्योगिक परिप्रदेश में होने के लिये यह जरूरी है कि वे इन्सानों से प्रभावकारी रूप में अंत: संचार कर सके। वे लोग जो इन रोबोटों के साथ काम करेंगे, उन्हें इस बात से आसानी होगी कि ये रोबोट उनकी भाषा में बोले, उनकी परेशानियों को चेहरा देखकर समझ सकें। विज्ञान साहित्य में रोबोट भाषा, मुख भाव को बड़ी सहजता से प्रस्तुत करते हैं, पर वास्तविकता यह है कि इन क्षेत्रों में अभी बहुत दूर जाना बाकी है।

- वाक अभिज्ञान: किसी मनुष्य के वचनों की धारा अनुक्रिया समझ पाना कम्प्यूटर के लिये अत्यधिक कठिन है, क्योंकि इसमें कई तरह के घटबढ़ देखे जाते हैं, जैसे कि अर्थवतता, शब्द का उच्चारण, ध्वनि की प्रबलता, पास पड़ोस के ध्वनिकता, वक्ता का मिजाज या तबियत (सर्दी तो नहीं लगी), इत्यादि। आज डेविस, बिड्डुल्फ और बालाशेक के 1942 में बनायी वाक अभिज्ञान प्रणाली, जिसमें 1 से 10 तक की बोली को 100% परिशुद्धता से पहचानने की क्षमता थी, की तुलना में दुनिया काफी आगे जा चुकी है। सर्वोत्तम प्रणालियों में 160 शब्द प्रति मिनट से अधिक की परिशुद्धता को पाया गया है।
- भाव संकेत: अगर किसी रोबोटी पुलिस अफसर से रास्ता पूछा जाये, तो शब्दों की बजाय हाथों के संकेत से ज्यादा आसानी से रास्ता बताया जा सकता है। ऐसी कई प्रणालियों का विकास किया जा चुका है।
- मुख भाव: मुख भाव का इन्सानी सम्पर्क में महत्वपूर्ण है, और इसे रोबोटी सम्पर्क के लिये भी विकसित किया जा रहा है। एक तरफ रोबोट का अपने चेहरे पर मनोभावों को व्यक्त करना (जैसे कि किस्मेट), दूसरी तरफ इन्सानों के मनोभावों को समझना, दोनों ही इस संदर्भ में उपयोगी हैं।
- व्यक्तित्व: विज्ञान साहित्य में कई रोबोटों को मानविक तौर पर व्यक्तित्व के प्रदर्शन करते हुए दिखाया जाता है। ये और बात है कि ऐसे रोबोटों की वांछनीयता पर विवाद है। फिर भी, ऐसे रोबोटों पर अनुसंधान चल रहा है। प्लियो, जो एक रोबोटी खिलौना है, कई तरह के मनोभावों को प्रदर्शित कर सकता है।

नियंत्रण

रोबोट के यांत्रिक ढांचे को चलाने के लिये तीन पृथक विभागों पर ध्यान दिया जाता है- प्रत्यक्ष ज्ञान, प्रक्रमण (Processing) और क्रिया। संकेतों की सहायता से रोबोट अपने आस-पास की जानकारी और अपने ही जोड़ों की स्थिति को हासिल करता है। नियंत्रण नीति के कार्यनीतियों के प्रयोग से, प्रवर्तकों को सही दिशा में घुमाया जाता है। रोबोट के अंगों को घुमाने के लिये पथ नियोजन, प्रतिरूप अभिज्ञान, बाधा परिवर्जन जैसी तकनीकों का प्रयोग होता है। इसमें प्रयुक्त जटिल और अनुकूलनशील नियंत्रण को कृत्रिम बुद्धि कहा जा सकता है।

रोबोट को दृष्टि प्रदान करना

रोबोट को कोई भी वस्तु या दृश्य देखने लायक बनाया जा सकता है। रोबोट में प्रकाशीय संवदेक किसी वस्तु से आने वाले प्रकाश की विभिन्न धुतियों (Brightness) को रिकार्ड करता है। फिर उस वस्तु को पहचानने के लिए कम्पयूटर उसके प्रत्येक बिंदू की धुति की इसकी स्मृति में रखे चित्र के विभिन्न बिंदुओं की द्युति से तुलना करता है। यदि द्युति मेल खाती है तो यह उस वस्तु को 'देख' सकता है और फिर जिस काम के लिए इसे प्रोग्रामित किया गया है वह काम कर सकता है।

रोबोट-दृष्टि को विशिष्ट कार्यों के लिए बनाया जा सकता है। उद्योगों में ऐसी दृष्टि व्यवस्था रोबोट को कार की खिड़की लगाने या चीजों को उठाने और दूसरे पर रखने में मदद करती है। देखने वाले रोबोट का प्रयोग आसान निरीक्षण कार्यों में भी किया जाता है। उदाहरणतार्थ, जांच करना कि बोतले उचित स्तर तक भर गई हैं या नहीं। उत्पाद में रह गई कमियों का पता करने के लिए खराब वस्तुओं को हटाने के लिए रोबोट गुणवत्ता नियंत्रण (Robot Quality Control) का प्रयोग किया जाता है।

प्रत्येक आधुनिक प्रौद्योगिकी की तरह रोबोट का भी हथियारों में प्रयोग किया जाता है। देखने वाले रोबोट का एक उदाहरण है टोमाहॉक समुद्री प्रक्षेपास्त्र जो अनेकों परमाणु अस्त्र ले जा सकता है और बिल्कुल सही निशाने पर गिरा सकता है। इसे अपने लक्ष्य से कई हजार किलोमीटर की दूरी से किसी जलपोत, पनडुब्बी या भूमि से फेंका जा सकता है। कम्प्यूटर की स्मृति में भूदृश्य (Landscape) के प्रतिबिंबों की एक शृंखला के साथ-साथ निर्दिष्ट उड़ान पथ भी रहता है। प्रक्षेपास्त्र भूदृश्य का सर्वेक्षण करता है। अपनी स्मृति में रखे प्रतिबिंब से उसका मिलान करता है। यदि यह अपने मार्ग से हट रहा हो तो वह अपनी गति को ठीक कर सकता है। लक्ष्य की ओर जाने से पहले वह अंतिम रूप से समामेल (Adjustment) करता है।

गतिशील रोबोट भुजाएं

रोबोट का डिजाइन मनुष्य की भुजा की तरह भी किया जा सकता है। भुजाओं वाले रोबोट बनाने के लिए रोबोट विशेषज्ञ, कम्प्यूटर विज्ञान और यांत्रिक इंजीनियरिंग दोनों की कार्यकुशलताओं और अच्छाइयों का सहारा लेते है। कार्य के दौरान रोबोट की भुजाओं को बहुत सी स्थितियों में चलना आश्यक हो सकता है। इन स्थितियों के अनुरूप लाखों संख्याऐं रोबोट की स्मृति में भर दी जाती है। भुजा में स्थित विशेष यांत्रिक-युक्तियां इन संख्याओं को प्रारंभिक गतियों में बदल देती है। खास किस्म की रोबोट भुजाओं में उंगली वाले हाथ नहीं होते। इसके बजाय भुजाओं में विशेष काम करने के लिए युक्तियां लगा दी जाती है। इन युक्यिों की सहायता से वहीं रोबोट स्प्रेगन से जरिए स्प्रे पेंट कर सकता है, धातुओं को वेल्ड कर सकता है और क्रम में लगाने के लिए विभिन्न वस्तुओं को उठा सकता है।

चलते फिरते रोबोट

पहियों की तुलना में आपके पैरों के क्या-क्या लाभ हैं?

पहिऐ सीढ़ियों पर नहीं चढ़ सकते, वे बाधाओं को पार नहीं कर सकते या संकरे रास्ते से होकर गुजर नहीं सकते या नरम या ऊबड़-खाबड़ धरती नहीं चल सकते। मनुष्य और जानवर वह मार्ग अपना सकते हैं, जहां उनके पैरों को सबसे अच्छी पकड़ या सहारा मिलता है, विशेषत: पहाड़ी इलाकों में। वास्तव में, पृथ्वी के पृष्ठ का लगभग आधा भाग ऐसा है जहां पहियों के लिए चलना काफी कठिन होता है। सरकना, पहाड़ों पर चढ़ना, संतुलन रखना, भ्रमण करना और दौड़ना केवल पैरों वाले जीवों के लिए ही संभव है। हमारी टांगे घुटनों पर मुड़ सकती है। जिसके कारण चलना-फिरना सरल हो जाता है। इसलिए रोबोट के टांगे लगा देनी चाहिए ताकि वे सरलता से चल-फिर सकें। रोबोट विज्ञान में पैरदार रोबोट का बनाना एक चुनौती बन गया है। यद्यपि पैरदार वाहनों में कम्प्यूटर बनाए गए है फिर भी संतुलन, समन्वय और ऊबड़-खाबड़ धरती पर चलने की समस्या का हल निकालना कठिन लग रहा है।

आजकल रोबोट विज्ञान में रोबोट की गति के साथ-साथ उसके प्राकृतिक लचीलेपन, उसके शारीरिक स्पर्श और सुनने की सामर्थ्य पर सक्रिय अनुसंधान कार्य चल रहे हैं।

स्वाभाविक है कि मनुष्य की भांति रोबोट की आंखे, कान, हाथ, और पैर बनाना काफी कठिन हो गया है। यदि ऐसा कभी होगा तो उसमें काफी लंबा समय लगेगा। रोबोट में संवेदन और उसकी सोचने की शक्ति का विकास तो अभी प्रारंभिक अवस्था में ही है। यह नहीं भूलना चाहिए कि हम स्वयं जैविक विकास का ही परिणाम है, जिसमें अरबों वर्षों का समय लगा है। रोबोट जरा सा भी एक जीव की तरह दिखाई दे, वह समय आने के लिए काफी अनुसंधान करने की आवश्यकता होगी।

रोबोट के लाभ

विकास के इस स्तर पर जीवों की तुलना में रोबोट के कई लाभ हैं। मनुष्य थक जाता है लेकिन रोबोट एक दिन में 24 घंटें, सप्ताह में सातों दिन बिना थके काम कर सकता है। आप कल्पना कर सकते हैं कि कारखानों के मालिक उनसे कितना प्यार करते होंगे। वे अपना काम बिना किसी गलती के कर सकते हैं। सही प्रोग्रामित रोबोट किसी भी काम को बिना उबे और बिना असावध ान हुए लाखों बार सही ढंग और परिशुद्धता से कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, रोबोट अर्ध चालक चिप पर कई सौ सूक्ष्य संबंधों का निरीक्षण कर सकता है। ऐसे विस्तृत कार्य के लिए मनुष्य को बहुत ध्यान केन्द्रित करने की आवश्यकता होती है।

अधिक गर्मी, धूल, विकिरण और विषाक्त रसायनों को रोबोट पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। वे वहां भी काम कर सकते हैं जहां आक्सीजन न हो या जहां निर्वात (Vaccum) हो। मतलब यह है कि रोबोट वहां भी काम कर सकते हैं जहां मनुष्यों के लिए काम करना खतरे से खाली नहीं है। रोबोट ऐसे काम भी कर सकते है जहां बहुत अधिक शक्ति की आवश्यकता होती है या जहां महंगी पड़ने वाली गलतियों की संभावना अधिक होती है।

रोबोट के लिए तैयारी

ऊपर बताए गए कारणों से रोबोट- चालित फैक्टरी का उत्पादन उत्तम होता है और मानव चालित फैक्टरी के मुकाबले काफी ज्यादा होता है। अत: बाजार में रोबोट फैक्टरी द्वारा बनाए गए माल की साधारण माल की तुलना में मांग अधिक होती है। विकासशील

देशों में यह चिंता का विषय है यही कारण है कि अमरीका, जापान और सोवियत रूस में इन रोबोटों की संख्या बहुत बढ़ गई है और हम भी अपनी अनुसंधान प्रयोगशालाओं में इन का विकास करने के यत्न में लगे हैं।

कुछ लोग चिंतित है कि रोबोट श्रमिकों का स्थान ले लेंगे। लेकिन हम पुनः याद दिलाना चाहते हैं कि कुछ काम तो समाप्त होंगे लेकिन रोबोट के कारण कुछ अन्य नये काम उत्पन्न भी होंगे। विकसित देशों में रोबोट उद्योग पहले से ही रोजगार का एक स्रोत माना जाता है। रोबोट-क्रांति कार्य की प्रकृति में परिवर्तन कर देगी। हालांकि श्रम का बोझ रोबोट भले ही उठाने लगे फिर भी उन सभी कामों के लिए मनुष्यों की आवश्यकता होगी जो मशीनें नहीं कर सकती। कुशल कामगार डेस्क पर बैठ कर सूचनाओं का रख-रखाब करेंगे, सोचेंगे और योजना बनाएंगे और रोबोट कार्य-दल के बड़े भाग के रूप में कार्य करेंगे।

❖❖❖

CHRONICLE IAS ACADEMY